रमणी-रत्न-मालाका ३रा रत्न।



सीता

अपूर्व शिक्षाप्रद सचित्र पौराणिक उपाख्यान।

लेखक

परिडत ईश्वरीप्रसाद शर्म्मा।

प्रकाशक

रामलाल वर्म्मा, प्रोप्राइटर-

"वर्म्मन प्रेस" और "आर० एल० वर्म्मन एण्ड को०,"

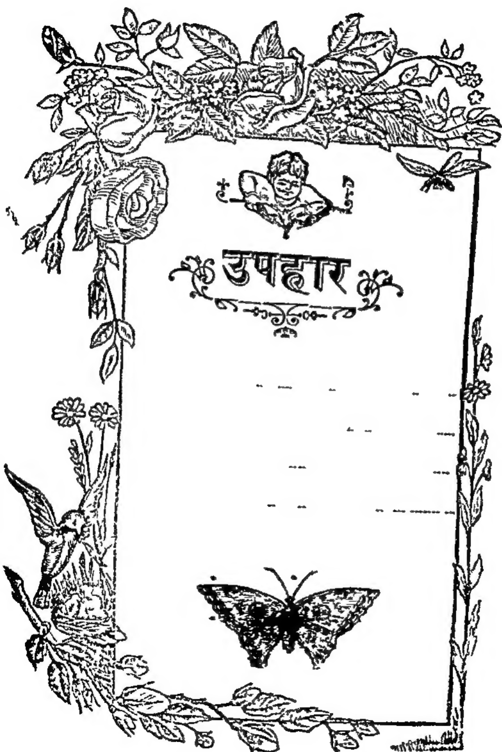
३७१, अपर चीतपुर रोड, कलकत्ता।

आषाढ़, सं० १९७७ वि०

तीय संस्करण—३००० प्रति] [मूल्य २॥) सजिल्द २॥।) रु०

सुनहरी रेशमी जिल्द ३) रुपया।


मुद्रक
राम लाल व
बर्म्मन प्रेस,
कलकत्ता


उपहार

परिचय

अनुरूपके आदर्शसे हमारा हित नहीं हो सकता, यह मानी और जानी हुई बात है. हमारे लिये तो श्रीरामचन्द्रसा पितृ भक्त भरतसा भाई, सीतासी सती स्त्रियाँ, हरिश्चन्द्रसा हठीला त्यागी, भीष्मसा भयानक सत्यवादी, हनुमानसा हठी वीर, दधीचिसा दानीही अनुकरणीय आदर्श है। पर यह आदर्श पुराणोंको पढे बिना प्राप्त नहीं हो सकते। समयके फेरसे पुराणोंका पठन पाठन और कथा कहने-सुननेकी चाल उठती जाती है। इसीसे हम भी अनुकरणीय आदर्शके अभावसे अधोगतिको पहुँचते जाते हैं।

गोस्वामी तुलसीदासने देखा, कि कलिके कुपूतोंको इतना समय कहाँ, जो पुराणोंका पारायण करें ? बस, उन्होंने रामायणकी रचना कर डाली, जिसमें एकही ठौर सब बातें मिल जायें और आदर्शका अभाव न रहे। इसमें कोई सन्देह नहीं, कि गोस्वामीजीको इसमें पूरी सफलता हुई। पर अब विज्ञानी बाबूओंको पूरी रामायण पढ़ना भी पहाड़ हो गया है। ऐसी अवस्थामें धन्यवाद है पण्डित ईश्वरीप्रसाद शर्म्माको, जिन्होंने रामायणका रत्न निकालकर यह 'सीता' नामकी पुस्तक लिखी है। इसमें श्रीसीताजीका चरित्र सुचारु रूपसे लिखा गया है। स्त्रियांही नहीं, पुरुष भी इससे लाभ उठा सकते हैं।

शर्म्माजीने सरल और सुन्दर भाषामें सीताजीका यह संक्षिप्त, पर शिक्षाप्रद, जीवनचरित्र लिखकर स्त्री समाज और साहित्य-संसारका बड़ा उपकार किया है, इसमें सन्देह नहीं। जिन्हें रामायण या और कोई बड़ी पुस्तक पढ़नेका अवकाश न मिलता हो, वह यह छोटीसी पुस्तक पढ़ लाभ उठा सकते हैं।

जिस पुस्तकमें जगज्जननी जानकीजीका जीवनचरित्र हो और रचयिता हों, मनोरंजन-सम्पादक पण्डित ईश्वरीप्रसाद शर्म्मा, उसके लिये लम्बी-चौड़ी भूमिकाकी भला क्या आवश्यकता है ? पर प्रचलित प्रथाका पालन भी परमावश्यक था इसलिये दो शब्द लिख दिये गये।

कलकत्ता,
१५-४-२० ई०। } जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी।



गत दस बारह वर्षों से हिन्दी साहित्यमें बालक-बालिकाओं और स्त्रियोंके पढने योग्य पुस्तकों और पत्रोंका प्रकाशन बडे धडल्लेसे हो रहा है, किन्तु हमारा जहाँतक अनुमान है, इस क्षेत्रमें कलकत्तेकी प्रसिद्ध "आर० एल० बर्म्मन एण्ड कम्पनी" तथा बर्म्मन प्रेसके अध्यक्ष, श्रीयुक्त बाबू रामलालजी वर्म्माका काम सर्वापेक्षा नूतन और प्रशंसनीय है। कुछही दिनोंसे आपने 'रमणी रत्नमाला' नामक एक पुस्तकमाला निकालनी आरम्भ की है, जिसमें आप भारतवर्षकी प्रसिद्ध-प्रसिद्ध प्राचीन और अर्वाचीन सतियों तथा वीरांगनाओंके चरित्र-कुसुमोंका गुम्फन करना चाहते हैं। इस मालाकी 'सावित्री सत्यवान्' और 'नल-दमयन्ती' नामक पुस्तकें सर्वसाधारण और समाचारपत्रों द्वारा मुक्तकण्ठसे प्रशंसित हुई हैं और अपने गुणोंसे हिन्दी ग्रन्थ साहित्यमें रत्न मानी गयी हैं। छपाईकी सफाई, चित्रोंकी सुन्दरता और बहुलताके कारण ये पुस्तकें कोमल-मति बालकों, बालिकाओं और स्त्रियोंका दर्शनमात्रसे चित्ताकर्षण कर लेती हैं।

उक्त बाबू साहबकेही अनुरोधसे, उनकी इस स्त्री-पाठ्य ग्रन्थमालाके लिये हमने भगवती 'सीता'का यह चरित्र लिखा है। इसे लिखनेमें हमने गोस्वामी तुलसीदासके रामचरितमानस, महर्षि वाल्मीकि प्रणीत रामायण और महाकवि भवभूति-रचित उत्तररामचरितसे सहायता ली है; इसीसे यत्र-तत्र इन ग्रन्थोंके भावोंकी झलक इस पुस्तकमें दिखलाई देगी। इस ग्रन्थमें यद्यपि प्रसंगवश रामायणकी सारी कथा आ गयी है, परन्तु प्रधानतः वेही घटनाएँ ली गयी हैं, जिनसे भगवती सीताके लोकोत्तर और पुण्यमय चरित्रपर प्रकाश पड़ता है, अतएव यदि पाठक किसी किसी घटनाका इसमें अभाव अनुभव करें, तो उनसे हम अनुरोध करेंगे, कि वे हमारा लिखा 'श्रीरामचरित्र' नामक ग्रन्थ पढ़ें। उसमें रामायणकी कोई मुख्य घटना छूटने नहीं पायी है और रामायणके सभी प्रधान

परिस्फुट करनेका प्रयास किया गया है। साथही वह वाल्मीकीय रामायणका आधार लेकर लिखा गया है, अतएव आदिकविके अपूर्व भावों और अलौकिक प्रतिभाकी छटा भी उसके पढनेसे भली भाँति झलकती है। 'सीता' विशेषतया स्त्रियों और बालक-बालिकाओंके उपयोगके लिये लिखी गयी है और श्रीरामचरित्रको छोटे बड़े तथा स्त्री पुरुष सबके लिये समान उपयोगी बना देनेका प्रयत्न किया गया है। वह ग्रन्थ सीताकी अपेक्षा अधिक सज धजके साथ प्रकाशित किया गया है।

आर्य-साहित्यमें जितनी सती साध्वी स्त्रियोंकी कथाएं प्रसिद्ध है, जिनके उज्ज्वल आदर्शपर अपना चरित्र सगठन कर सहस्र-सहस्र आर्य-महिलाएं अपना जीवन धन्य कर चुकी हैं, जिनके नाम लेनेसे आज भी प्रत्येक हिन्दूका हृदय पवित्र भावोंसे भर जाता है, उनमें जगज्जननी-स्वरूपा जनक-नन्दिनी राम प्रिया सीताका नाम बडाही गौरव-पूर्ण है। सभी सतियोंकी परीक्षा हुई है, सबने बड बडे कष्टोंके मध्यमें पडकर अपनी धर्म-प्राणताका परिचय दे, अन्तमें सब दु खोंके सिरपर पैर रख, सुखका मुख देखा है, परन्तु भगवती सीताका समस्त जीवन प्राय दु खमेंही बीता—उनका जीवन क्या था, धर्मकी परीक्षाकी मानों जीती-जागती मूर्त्ति थी।

जिस अवस्थामें साधारण कुल-नारियाँ ससार-सुखकी नवीन कल्पनाओं और उच्च अभिलाषाओंमें लीन हो, आनन्द समुद्रकी लोल लहरीमें अपनी देह ढाले, सुख पूर्व्वक बहती चली जाती हैं, उसी अवस्थामें एक दिन सवेरा होतेही सीताने सुना, कि उनके प्राणोंके प्राण, जीवनके सर्वस्व, रामचन्द्र चौदह वर्षो के लिये वन जा रहे हैं। सारे राजसी सुखोंको लात मार, सीता उनके पीछे लगीं। कलतक जिसने पृथ्वीमें पैर नहीं रखे थे। वह कुश-काँटो और कङ्कड़ोंसे भरी राहोंमें जानेके लिये हँसते-हँसते तैयार हो गयी। सीता जङ्गलमें गयीं। पतिका चन्द्रमुख देख,उन्हे वनवासका क्लेश तनिक भी नहीं व्यापा। पर उन्हे दु ख देनेकी तो विधाताने शपथ कर ली थी—उससे उनका यह सुख भी न देखा गया। रावणने उन्हे अन्याय पूर्वक हरकर लङ्कामें ला बिठाया और पति-वियोग कराया। वर्षों के विरहके बाद, लका समरकी समाप्तिके पश्चात्, सीताने स्वामीको फिर पाया, पर शायद यह सुख न देखकर ये मर गयी होतीं, तो अधिक अच्छा होता, क्योंकि मिलतेही पतिने उनके पर गृह-वासपर आक्षेप करते हुए उन्हे ग्रहण करना अस्वीकार किया। जले हुए हृदयपर मरहम न लगाकर नमक छिड़का गया! उस समय जलती चितामें कूद, अक्षत शरीरसे बाहर निकल, उन्होंने जगत्को

दिखला दिया, कि सीताको कलंककी छाया भी नहीं छू सकती। इसके बाद वन-वासके दिन पूरे कर सब लोग घर आये, पर कुछही दिन बीतते न बीतते रामचन्द्रने प्रजाके मुँहसे सीताके चरित्रपर अनुचित और अन्याय-पूर्ण आक्रमण किये जाते देख, उन्हें घरसे निकाल दिया। उस समय वे पूर्ण-गर्भा थीं, पर प्रजा वत्सल रामने प्रजाको प्रसन्न करनेके लिये प्राण-वल्लभाको त्याग दिया! उचित था, कि राम सीताके अपार प्रेमका स्मरण कर, सिंहासन छोड़ देते, पर प्रियाको न छोड़ते, किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। इसके लिये सीताने उन्हें उलाहनातक नहीं दिया। वनमें पहुँचानेके लिये गये हुए अपने देवर लक्ष्मणके मुँहसे अपने पतिकी आज्ञा सुनकर वे बोलीं— "महाराजने मुझे घरसे निकालकर प्रजाको सन्तुष्ट किया है, राजाका कर्तव्य पालन किया है। मैं भी अपने स्वामीके आदेशको सिर आँखोंपर रख, हँसते हँसते सारे कष्ट सहनेको तैयार हूँ। दुःख कैसा?"

बारह वर्ष इसी तरह दुःखका जीवन बीतनेपर, जब मुनिवर वाल्मीकिकी चेष्टासे रामचन्द्र सीताको पुनः ग्रहण करनेको तैयार हुए, तब कुछ दुष्ट प्रजाजनोंके मुँह बिचकानेसे रामचन्द्र फिर भी बिना परीक्षाके, उन्हें घरमें रखनेको राजी न हो सके। सीताकी आसमानमें पहुँची हुई आशा एकाएक धरतीपर गिरकर चूर-चूर हो गयी। यह धक्का सीताका नन्हासा रमणी हृदय न सह सका। बार बार दुःखके झकोरे खाते-खाते दुर्बल बना हुआ शरीर इस अपमानको सहन करनेमें असमर्थ हुआ और उन्होंने करुण हृदयसे अपनी माता पृथ्वीसे प्रार्थना की, कि माता! अब इस दुखियामें दुःख सहनेकी शक्ति नहीं रही—मुझे अपनी गोदमें ले ले। देखते-ही देखते वे पातालमें प्रवेश कर गयीं और उस अलौकिक आत्माका प्रभाव सारे दर्शकोंके ऊपर पड़ा। दुष्टोंको भी अपनी करनीका पछतावा होने लगा। राम, सब स्वान्त होनेपर, कहने लगे, कि देवि! मैं सिंहासन छोड़ देता हूँ, तुम मुझे न छोड़ो। परन्तु उस समय क्या हो सकता था? सब शेष हो चुका था!

इस तरह हम देखते हैं, कि सीताका जीवन, आरम्भसे अन्ततक घोर धर्म परीक्षा और कष्ट-सहिष्णुताका जीवन था। राजाकी बेटी, राजाकी बहू, होकर भी उन्होंने कैसी सरलता, नम्रता, निरभिमानता और सहनशीलता दिखलायी है, वह प्रत्येक कुलाङ्गनाके लिये आदर्श है। पति चरणोंमें निरन्तर तल्लीनता, एकाग्रता और तन्मयता दिखलानेमें कमाल कर दिया है। शुभचरित्र द्वारा यह बात

भाँति प्रमाणित कर दी है, कि नारीका जन्म पति-प्रेम और स्वामि-हित-चिन्तनकेही लिये है। पतिके सुख, सौभाग्य और सुयशकी रक्षा एवं वृद्धिके लिये नारीको किस तरह अपना अस्तित्वतक भूलकर मर मिटना चाहिये, यह बात सीतासे बढ़कर और कौनसी रमणी दिखला सकी है? उनकासा अपूर्व धर्मानुराग, अटल पातिव्रत, अचल धैर्य और अमल चरित्र आर्य साहित्यमें अतीव विरल है। क्या पञ्चवटीकी कुटियामें, क्या लङ्काके अशोकवनमें, क्या वाल्मीकिके आश्रममें, श्रीरामका प्रगाढ़ प्रेमही उनके जीवन पथका ध्रुवतारा था। ऐसी एकाग्रता, ऐसी पतिगत-चित्तताहीके कारण सीता हिन्दू महिलाओंके लिये सर्वोत्तम आदर्श समझी जाती है। जिन सब गुणोंके वर्तमान होनेसे स्त्रीका जीवन पुण्यमय, उन्नत और अनुकरणीय हो जाता है, सीतामें उन सभीका समन्वय दिखलाई पड़ता है। इस ग्रन्थमें हमने अपनी अल्प-मतिके अनुसार उनके उन्हीं उत्तम गुणोंको परिस्फुट करनेका प्रयत्न किया है। इसमें हम कहाँतक सफल हुए हैं, यह हम स्वयं नहीं समझ सकते। हाँ, यदि इस पावन चरित्रके पाठसे हमारी बालिकाओं और महिलाओंको थोड़ा भी लाभ पहुँचा, तो हम अपना समस्त श्रम सफल समझेंगे।

स्त्रियों और बालिकाओंके लिये लिखी हुई पुस्तकोंकी भाषा सरल होनी चाहिये, यह विचारकर हमने रचनाके लालित्यकी रक्षा करते हुए यथा-साध्य सरल भाषा लिखनेकीही चेष्टा की है। इस ओर हमने कहाँतक सफलता पायी है, यह पाठकों और सुयोग्य समालोचकोंके विचारनेकी बात है।

अन्तमें हम हिन्दीके सुप्रसिद्ध लेखक और कवि, श्रीयुत पण्डित जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदीको हार्दिक धन्यवाद देते हैं, जिन्होंने इस ग्रन्थका आद्योपान्त पाठकर हमारा उत्साह बढ़ाया और प्रसन्न होकर परिचय लिखनेकी कृपा की है।

कलकत्ता,
२७ जुलाई, १९२० ई०

विनीत—
ईश्वरीप्रसाद शर्म्मा।

चित्र-सूची



विषय-सूची

विषय—	पृष्ठ।
१—परिचय	क
२—भूमिका	ग
३—सीताका बाल्यकाल	२१
४—सीताका राम दर्शन	२८
५—सीताका स्वयंवर	४४
६—सीताका विवाह	५५
७—राज्याभिषेककी तैयारी	६६
८—सीता-रामकी वन यात्रा	८८
९—सीता रामका वन वास	९७
१०—सीता-हरण	११३
११—सीता सन्देश	१३४
१२—सीता उद्धार	१६२
१३—सीता वनवास	१९५
१४—सीताका पाताल-प्रवेश	२२५
१५—शेष	२४७





सीताका बाल्यकाल



बिहार प्रान्तका उत्तरीय भाग आजकल तिर्हुतके नामसे विख्यात है, परन्तु आजसे बहुत पहले, अत्यन्त प्राचीन कालमें, यह "मिथिला" नामसे प्रसिद्ध था। आज भी वहांके अनेक लोग "मैथिल" कहकर अपना परिचय देते हैं और उनकी भाषा मैथिली भाषा कही जाती है। इस प्रकार इस प्रान्तने आजतक अपने पुराने नामकी रक्षा की है और नाम लेतेही उस युगका इतिहास एकबार सभीके नेत्रोंके आगे चित्रसा घूम जाता है, जिस युगकी कथा लिखनेके लिये हमने इस समय लेखनी उठायी है।

त्रेता युगमें मिथिला-देशमें 'जनक' नामके एक बड़ेही वीर, धीर गम्भीर और प्रतापी राजा राज्य करते थे। उनके सुन्दर और न्याय-पूर्ण शासनके प्रभावसे सारी प्रजा सुखी थी—कहीं भी किसी तरहका रोग-शोक नहीं था। सब ओर आनन्द, सुख और समृद्धिही दिखाई देती थी। राजा जनक कोरे राजा ही न थे। वे सब शास्त्रोंके ज्ञाता, धर्मके रहस्योंसे परिचित और लोक

तथा परलोकके गूढ़ तत्त्वोंके जाननेवाले थे। वे राजा होकर भी महर्षि थे, गृहस्थ होकर भी पूरे वैरागी थे। वे कर्त्तव्य समझ करही सारे काम करते थे और संसारकी विषय वासनाओंमें उनका मन तनिक भी लिप्त नहीं था। इसीसे सब लोग उन्हें "राजर्षि" कहते थे और बड़े-बड़े ऋषि मुनि तथा पण्डितगण धार्म्मिक चर्चा करनेके लिये उनके पास आया करते थे। उनके गम्भीर ज्ञानको देख-देखकर बड़े बड़े ज्ञानियोंके सिर नीचे झुक जाते थे और बड़े-बड़े विद्वान् उनकी अपार विद्वत्ताके आगे अपनी विद्वत्ताका घमएड भूल जाते थे। उनकी विलक्षण विद्या-बुद्धिके कारण, ब्राह्मणोंको भी उनसे उपदेश लेने और उनको अपना गुरु बनानेमें सङ्कोच नही मालूम होता था। अठारहों पुराणके कर्त्ता महर्षि कृष्ण द्वैपायनके पुत्र, बाल-ब्रह्मचारी महर्षि शुकदेवने भी एक बार उनसे ज्ञानकी बातें सीखी थी और उनके आगे शिष्यभावसे उपस्थित हुए थे! यदि सच पूछिये, तो उन दिनों जनककासा विषयवासनासे दूर, संसारकी आसक्तिसे हीन, सब तरहसे योग्य राजा भारतमें दूसरा नहीं था।



किन्तु सब दिन बराबर नही जाते। ऐसे न्यायी और धर्म्मात्मा राजाके राज्यमें भी एक बार बड़ा भारी अकाल पड़ा! चारों ओर वृष्टिके अभावसे घोर हाहाकार मच गया! जीवगण दुःखित हो आर्त्तनाद करने लगे! अन्नकी कमीने अनेक जीव . कालके कराल गालमें जाने लगे! "हा! अन्न! हा! अन्न!"

की कातर-ध्वनि सुन और हड्डी-चमड़ेभर बची हुई ठठरियोंको देख, दर्शकोंके हृदय दहलने लगे।

प्रजाकी यह दुर्दशा देख, राजा जनक बड़ेही दुःखित हुए। वे सोचने लगे,—"राजाकेही पापसे प्रजा कष्ट पाती है। जो राजा अन्यायी और अधर्म्मी होता है, उसीके राज्यमें दुःख, दारिद्र्य, रोग और शोककी वृद्धि होती है। परन्तु अपने जानते तो मैंने कभी किसी तरहका अन्याय नहीं किया, फिर मेरी यह पुत्रवत् प्रजा इस प्रकार कष्ट क्यों पा रही है?" अनेक प्रकारसे चिन्ता करनेपर भी वे अपनी कोई त्रुटि न निकाल सके। तब यह सोचकर, कि "अपना दोष अपने आपको नहीं सूझता," उन्होंने अनेक ऋषि-मुनियों और वेद शास्त्रके जाननेवाले ब्राह्मण-पण्डितोंको बुलाकर परामर्श किया, परन्तु किसीने राजाकी ओरसे किसी तरहका अन्याय होता हुआ नहीं पाया। तब इसे ईश्वरकी माया और पूर्व-जन्मका कर्म्मफल समझकर, सबकी सम्मतिसे यही निश्चय हुआ, कि इस भयङ्कर अनावृष्टिके निवारणके लिये यज्ञ किया जाये।

ऐसा निश्चय होतेही यज्ञकी तैयारियाँ होने लगीं। देश विदेशके पण्डित, ब्राह्मण, साधु, सन्यासी और कर्म्मकाण्डीगण जनकपुरमें आ पहुँचे। बड़ी धूमधामसे वेद विधिके अनुसार यज्ञ होने लगा। प्रजा बड़ी उत्कण्ठाके साथ यज्ञकी पूर्णाहुति की बाट जोहने लगी, क्योंकि सबका यह पूर्ण विश्वास था, कि इस यज्ञके फलसे अवश्यही उनके ऊपर भगवान्की कृपा होगी, जल बरसेगा और उनके दुःख दूर होंगे।



यज्ञ समाप्त होनेपर, ब्राह्मणोंके कहनेसे, राजा जनक स्वयं सोनेका हल हाथमें लेकर खेत जोतनेको तैयार हुए। उस समय वे यह बात भूल गये, कि "मैं क्षत्रिय हूँ, राजा हूँ—कोई कृषक या हलवाहा नहीं, जो हल चलाऊँ।" प्रजाके कल्याणकी कामनासे, मानापमानकी बात भूल, वे खेत जोतनेको प्रस्तुत हो गये! ऐसा करते हुए उनके मनमें तनिक भी लज्जा या संकोच नहीं हुआ! खेतमें पहुँचकर ज्योंही राजाने हल चलाया, त्योंही आकाशमें मेघ छा गये, किसानोंके सूखते हुए प्राणोंमें सजीवनी शक्ति भर गयी और उनकी नष्ट हुई आशा फिर हरी हो आयी!

यह शुभलक्षण देख, राजा बड़ेही आनन्दित हुए और हल चलानेकी विधि पूरी कर घर लौटनाही चाहते थे, कि उन्होंने देखा, कि एक परम सुन्दरी बालिका उसी खेतमें पड़ी हुई हाथ पैर पटक-पटककर आप ही-आप खेल रही है। ऐसी सुन्दर सलोनी बालिकाको उस निर्जन प्रान्तमें पड़ी हुई देख, राजाके आश्चर्यका ठिकाना न रहा! उनके हृदयमें विस्मयके साथ-ही-साथ एक प्रकारकी ममता उत्पन्न हो गयी और वे उस बालिकाको गोदमें लिये बिना न रह सके। न जाने क्यों, उस बालिकाको गोदमें लेतेही राजाके अङ्ग-प्रत्यङ्गमें पुलकावली छा गयी और उनके हृदयमें हर्षकी अपार तरंगें उठने लगीं। वे सोचने लगे,—"यह बालिका किसकी है? कौन ऐसा निठुर था, जो इसे यों खेतमें डाल गया? अथवा स्वयं लक्ष्मीही शरीर

धारणकर मुझे कृतार्थ करनेके लिये बालिकाके रूपमें वैकुण्ठसे उतर आयी हैं ? अहा! इसका रूप कैसा सुन्दर है, इसके अङ्ग-प्रत्यङ्गकी गठन कैसी मनोहर है!" यही सब सोचते हुए राजा, उसे, देख देखकर, आनन्दके मारे सचमुच "विदेह" हो गये।

तब बड़ी प्रसन्नताके साथ उस बालिकाको लिये हुए वे राजमहलमें चले आये और उसे अपनी रानीकी गोदमें देते हुए, उन्होंने उसके पाये जानेका विचित्र-सवाद उन्हें सुना दिया। उस बालिकाके कमनीय रूपने रानीको राजाकी अपेक्षा अधिक आनन्दमें मग्न कर दिया और वे बार-बार उसका मुख-चुम्बन करती हुई भी तृप्त न हुईं। उन्होंने कहा,—"महाराज, इस बालिकाको देखते ही, न जानें क्यों मेरे हृदयमें मातृ स्नेहकी नदी उमड़ आयी है—ऐसा मालूम होता है, मानो यह मेरीही गर्भजात कन्या है। मैं इसका बड़े प्रेमसे पालन-पोषण करूँगी और इसे अपनीही लड़की समझूँगी। आप समस्त राज्यमें इस बातका ढिंढोरा पिटवा दें, कि आजसे सब लोग इसे मेरीही लड़की मानें और इसके जन्मकी बात कोई कभी भूलकर भी मुँहपर न लाये, क्योंकि आजके बाद मैं किसीके मुँहसे यह नहीं सुनना चाहती कि, यह मेरी लड़की नहीं, वरन् खेतमें पड़ी पाई हुई अज्ञात-कुल-शील बालिका है। यह कठोर वाणी सुननेपर मैं प्राणत्याग दूँगी।"

रानीकी इस अलौकिक ममताको देख, राजा मन-ही-मन बड़े आनन्दित हुए और उन्होंने उनकी इच्छाके अनुसार घोषणा

करवा दी। सब कोई उस लड़कीको राजाकीही सन्तान समझने लगे और उसके पाये जानेका इतिहास लोग धीरे-धीरे भूलसे गये। कन्याका बड़े लाड़-प्यारसे लालन पालन होने लगा। जनक और उनकी पत्नीने स्वप्नमें भी यह भावना मनमें न आने दी, कि यह बालिका हमारी अपनी कन्या नहीं है।

हल जोतनेसे भूमिमें जो रेखा पड़ती है, उसे "सीता" कहते हैं। उसी रेखामें प्राप्त होनेके कारण राजाने उस बालिकाका नाम भी "सीता" रखा। राजा जनककी कन्या होनेके कारण अनेक लोग उसे "जानकी" कहकर भी पुकारने लगे। अपने स्वाभाविक वैराग्यके कारण जनकका नाम "विदेह" (अर्थात् जो देहसे परे हैं, जिन्हें दैहिक सुख-दुःखोंसे विकार नहीं प्राप्त होता) पड़ गया था। इसी कारण कोई-कोई सीताको "वैदेही" भी कहा करते थे।



राजकुमारी सीता दिन-दिन शुक्लपक्षकी शशिकलाकी नाईं बढ़ने लगी। माता-पिताके असीम स्नेह और अपार यत्नसे उसका शैशव-काल बड़े सुख और लाड़ प्यारमें बीता।

कुछ बड़ी होनेपर वह पढ़नेके लिये बैठायी गयी। उसने उत्साहसे पढ़ना आरम्भ किया और थोड़ेही दिनोंमें अपनी प्रतिभाका ऐसा चमत्कार दिखाया, कि उसकी गुरुआनियाँ भी मुग्ध हो गयीं। उसे जो कुछ बतलाया जाता, उसको वह झटपट समझ जाती और अपना पाठ शीघ्र याद कर लेती थी।

देखते-ही देखते उसने इतिहास-पुराणोंकी अनेक कथाएँ याद कर लीं और नीतिके सहस्रों वचन उसकी जिह्वापर विराजने लगे। साथही उसने सीना पिरोना सीखा; गृह-कार्य्यमें अभ्यास बढ़ाया और नारी-धर्मका पूरा-पूरा ज्ञान प्राप्तकर लिया छोटीही अवस्थामें उसने अपनी बुद्धिका जो कौशल दिखाया,उसे देख, सब लोग कहने लगे,कि यह बालिका जैसे रूपमें लक्ष्मीके समान है, वैसेही गुणमें भी साक्षात् सरस्वतीका अवतार है। उस महिमामयी बालिकाके मुखमण्डलपर ऐसी विलक्षण ज्योति विराजती रहती थी, जिससे देखनेवाले चकित, विस्मित और स्तम्भित हो जाते थे। प्रबल संस्कारी आत्मा हुए बिना, एक नन्हींसी बालिकामें यह तेज, यह प्रतिभा, यह चमत्कार कैसे दिखलाई पड़ता?

बालिका सीताके गुणोंसे केवल माता-पिता और उसकी अध्यापिकाएँही प्रसन्न रहती हों, सो नहीं—उसके साथ जितनी बालक-बालिकाएँ खेलने आतीं, या जो सखी सहेलियाँ उसके सङ्ग पढ़ती थीं, वे सभी उसके गुणोंसे मोहित हो गयी थीं। सीता कभी किसीको कड़ी बात नहीं कहती, किसीका कोई काम नहीं बिगाड़ती, सबसे हिल-मिलकर रहती थी। फिर बतलाइये तो सही,उसकीसी सीधी सादी,निश्छल और प्रेममयी बालिकासे भला कब किसीका बिगाड़ हो सकता था?

ऐसी सर्व सुलक्षणा और रूप-गुणमें अद्वितीया कन्या पाकर माता-पिताके आनन्दकी सीमा न रही और वे अपनेको परम सौभाग्यशाली समझने लगे।



सीताका राम-दर्शन



१



सीता ज्यों-ज्यों बड़ी होने लगी, त्यों-त्यों उसके रूप और गुणका माधुर्य्य भी बढ़ने लगा। धीरे-धीरे उसकी बाल्य तथा किशोर अवस्थाएँ बीत गयीं और वह यौवनकी ओर अग्रसर होने लगी। अब राजाको उसके विवाहकी चिन्ता पड़ी। वे दिन रात इसी उधेड़-बुनमें पड़े रहने लगे, कि यह सब गुणोंसे युक्त, सारी शोभाओंकी खान, कन्या-रत्न किस सुयोग्य पुरुष-रत्नको सौंपा जाय? उन्होंने एक-एक करके बहुतेरे राजा-राजकुमारोंकी बात सोची, परन्तु कोई भी उन्हें सीताके अनुरूप नहीं जँचा। उन्हें किसीमें एक, किसीमें दो और किसीमें अनेक दोष दिखाई देने लगते और वे आप-ही आप झुँझला उठते थे, क्योंकि कोई ऐसा नहीं दिखलाई देता था, जिसमें दोषों या त्रुटियोंका सर्वथा अभाव हो।

तो फिर क्या किया जाये? बहुत कुछ सोच-समझकर अन्तमें राजाने यही निश्चय किया, कि चाहे जो कुछ हो; परन्तु बिना पूरी परीक्षा किये, बिना सब तरहसे सीताके योग्य वर सिद्ध हुए, मैं किसी ऐसे वैसेके हाथ अपनी कन्या न सौंपूँगा। मणिकी शोभा काञ्चनके ही साथ होती है—काचके साथ नहीं।

क्या परमात्मा मेरी अभिलाषा पूरी न करेगा ? क्या पृथ्वीमें सीताके अनुरूप वर न मिलेगा ?

उन दिनों, कन्याके विवाहके लिये योग्यपात्रोंका अनुसन्धान कई तरहसे किया जाता था। कहीं तो माता-पिता स्वयं नाना स्थानोंमें घूम-फिरकर योग्य वर मिलतेही विवाहका ठीक- ठाक कर लेते और अन्तमें उसीके साथ अपनी कन्याका विवाह कर देते थे। कहीं स्वयंवर रचा जाता और बड़े बड़े राजा तथा राजकुमार न्यौता देकर बुलवाये जाते थे। सबके सामने कन्या हाथमें जयमाल लिये हुए, स्वयंवर-सभामें आती और एक एक करके सब राजाओं और युवराजोंके गुणों और कीर्त्तियोंको सुनकर, जिसे चाहती, उसके गलेमें जयमाल डाल देती थी। इसके सिवा कभी-कभी यह भी देखनेमें आता था, कि विवाहार्थी युवराजोंकी वीरताकी परीक्षा ली जाती और उस परीक्षामें जो उत्तीर्ण होता, वही कन्याका स्वामी होता था।

राजा जनकने भी अपनी कन्याके लिये योग्यवर पानेका यही तीसरा ढङ्ग अच्छा समझा। बहुत दिनोंसे उनके घरमें शिव जीका दिया हुआ एक बड़ा भारी धनुष रखा हुआ था। राजाने प्रतिज्ञा की, कि जो राजकुमार इस धनुषकी प्रत्यञ्चा चढ़ा देगा, उसीके साथ मैं अपनी कन्याका विवाह कर दूंगा। यह विचार स्थिर होतेही उन्होंने स्वयंवरके लिये मण्डप बनानेकी आज्ञा दे दी और तिथिका निश्चयकर, समस्त राजाओंके यहाँ निमन्त्रण भेज दिया। देखते-देखते चारों दिशाओंमें यह संवाद बिजलीकी भाँति फैल गया।



जिस समयकी कथा हम लिख रहे हैं, उस समय अयोध्या-पुरीमें 'दशरथ' नामके एक बड़े प्रतापी और चक्रवर्ती राजा राज्य करते थे। उनके चार बेटे थे—राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न। बुढ़ापेमें चार पुत्र पाकर राजा बड़ेही सुखी थे, क्योंकि उनके तीन पन निस्सन्तान अवस्थामें ही बीत गये थे और उन्होंने इसके कारण बहुत मानसिक क्लेश भी पाया था; परन्तु भगवान्‌की दया, ब्राह्मण-ऋषियोंके आशीर्वाद और यज्ञानुष्ठानके फलसे अन्तमें उनकी मनस्कामना पूर्ण हुई और एककी कौन कहे, चार-चार पुत्र उनके आनन्दको बढ़ाने लगे! राजाके तीन रानियाँ थीं, जिनके नाम क्रमशः कौसल्या, कैकेयी और सुमित्रा थे। राम कौसल्याके, भरत कैकेयीके तथा लक्ष्मण और शत्रुघ्न सुमित्राके गर्भसे पैदा हुए थे। चारों लड़के रूपमें कामदेवकी तरह सुन्दर, और गुणमें साक्षात् देव-बालक मालूम होते थे। अत्यन्त थोड़ी अवस्थामेंही उन्होंने क्षत्रियोंके लिये जो कुछ सीखना-पढ़ना आवश्यक है, वह सब सीख-पढ़ लिया था। चारों ओर उन बालकोंकी बड़ाई सुन पड़ती थी। कोई उनके रूपका बखान करता, तो कोई शील, गुण और वीरताका। कहनेका तात्पर्य यह, कि प्रत्येक मनुष्यकी जिह्वापर उनकी प्रशंसाके गीत थे।*

*रामचन्द्रकी शिक्षाप्रद कथा विस्तार पूर्वक जाननेकी इच्छा हो तो हमारे यहांसे, "श्रीरामचरित" नामक ग्रन्थ मँगा देखिये। इसमें प्रायः ५०० पेज और ३० रंग-बिरंगे चित्र हैं। बड़ाही उत्तम ग्रन्थ है।



महामुनि विश्वामित्र उन दिनों किसी यज्ञके अनुष्ठानमें लगे हुए थे, परन्तु 'सुबाहु' और 'मारीच' नामक राक्षसोंने ऐसा ऊधम मचा रखा था, कि वे यज्ञको किसी तरह पूरा न कर पाते थे। वे राक्षस कभी तो उनकी यज्ञ-वेदीपर मांसके टुकड़े लाकर फेंक देते और कभी रुधिरकी धारा बरसा देते। बस, उनका सब किया धरा मिट्टी हो जाता और यज्ञकी सामग्रियाँ दूषित हो जातीं। बेचारे मुनि उनके उस उत्पातसे घबरा उठे। उन्हें कोई उपाय उन दुष्टोंके दमनका दिखाई न पड़ता था। उन्होंने लोगोंके मुँहसे सुना था, कि अयोध्याके राजा दशरथके पुत्र, रामचन्द्र बड़े वीर हैं और थोड़ी अवस्था होनेपर भी उनमें ऐसी शूरता, ऐसा तेज है, कि बड़े-बड़े वीर उनकी प्रशंसा करते हैं। मुनिने समाधि लगाकर योग बलसे मालूम कर लिया, कि वेही दशरथ-नन्दन इन राक्षसोंका नाश कर सकेंगे। ऐसा विचार कर, वे अयोध्यामें राजा दशरथके पास रामचन्द्रको माँगनेके लिये आये।

महर्षिने जब राजा दशरथसे अपनी विपद्के समाचार सुनाकर, रामको उन राक्षसोंका वध करनेके लिये भेजनेको कहा, तब बूढ़े और पुत्र-वत्सल राजा बहुत डरे। "कहाँ वे प्रबल पराक्रमी राक्षस कहाँ ये कोमल सुकुमार राजकुमार! युद्ध-विद्यामें राम चाहे कितने भी प्रवीण क्यों न हों, पर मारीच और सुबाहुको पराजित करना उनके लिये सम्भव नहीं।"—यह सोच, राजाने महर्षिसे कहा,—"इस बालकको ले जाकर आप क्या

आज्ञा हो, तो मैं ही चलूँ और सब राक्षसोंको मार भगाऊँ!" पर मुनिने न माना और राजाकी सारी युक्तियोंको काटकर कहा,—"आपको राजकुमार रामचन्द्रको मेरे साथ अवश्य भेजना होगा। मेरा यह पूरा विश्वास है, कि अवस्थामें कम होनेपर भी आपके पुत्रमें आलौकिक तेज है—उस तेजके आगे वे राक्षस कदापि ठहर न सकेंगे। आप यदि अनुचित पुत्र-स्नेहके कारण मेरा यह अनुरोध न मानेंगे, तो मैं आपको घोर शाप दिये बिना न रहूँगा।"

मुनिको इस प्रकार क्रोध-मूर्त्ति धारण करते देख, राजा और भी घबराये और इच्छा न होते हुए भी उन्होंने रामको मुनिके हाथमें सौंप दिया। रामके छोटे भाइयोंमें लक्ष्मण उनके परम अनुरागी थे—वे एक क्षण भी रामको छोडकर कहीं न रहते थे। महर्षि और पिताकी आज्ञा ले, वे भी रामके साथ-ही-साथ तपोवनको चले। जिस समय कटिमें पीत-पट पहने और हाथमें धनुर्बाण लिये हुए राम और लक्ष्मण मुनिके साथ पथमें जाने लगे, उस समय सुकुमारता और वीरताका वह सम्मिलन देख दर्शकोंके मनमें तरह-तरहके भाव उठने लगे।

रास्तेमें दो क्षत्रिय-कुमारोंके साथ मुनिको आश्रमकी ओर जाते देख, मारीचकी माता 'ताड़का' नामक राक्षसीने सोचा, कि अवश्यही मुनिराज इन वीर-कुमारोंको राक्षसोंके मारनेके लियेही लिवा लाये हैं, अतएव बडे क्रोधमें आकर उसने उन सब लोगों-पर आक्रमण किया। वह राक्षसी बड़ी वीर थी और उसने तपोवनके लोगोंको बहुतही हैरान कर रखा था, परन्तु रामचन्द्रने एकही बाणमें उसका काम तमाम कर डाला। यह देख, मुनि

बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने सोचा,—"मेरी जो धारणा थी, कि रामसे मेरा काम बन जायेगा, वह बिलकुल ठीक थी। उसका प्रणाम भी मुझे अभीसे मिलने लगा।"

आश्रममें पहुँचकर, मुनिने राम-लक्ष्मणको बड़े आदरसे रखा और उनको तरह-तरहके अस्त्र-शस्त्र प्रदान किये। मुनिके दिये हुए कन्द, मूल और फलोंको दोनों भाइयोंने बड़े प्रेमसे खाया और गङ्गाका निर्मल जल पीकर बड़ेही सन्तुष्ट हुए।

दूसरे दिन, प्रातःकाल होतेही मुनि नित्य-नैमित्तिक कर्मोंसे निवृत्त हो, यज्ञ-भूमिमें आये और यज्ञकी क्रियाएँ करने लगे। राम और लक्ष्मण उनकी यज्ञ-शालाकी चौकसी करने लगे। मुनिके लौट आकर यज्ञ करने और ताड़काके मारे जानेका संवाद सुन, मारीच और सुबाहु, दल-के-दल राक्षसोंको लिये हुए आ पहुँचे और तरह-तरहके उपद्रव मचाने लगे। उस समय दोनों भाइयोंने ऐसी वीरता दिखायी, कि उनके छक्के छूट गये और एक-एक करके सभी उनके बाणोंके प्रहारसे मारे गये। मुनिकी अभिलाषा पूर्ण हुई और उनका यज्ञ निर्विघ्न सम्पूर्ण हो गया।

इन दुष्ट और उपद्रवी राक्षसोंके मारे जानेसे केवल विश्वामित्रकोही प्रसन्नता न हुई, बल्कि आस पासके सभी ऋषि मुनियोंको आनन्द हुआ और उनके झुण्ड-के झुण्ड राम-लक्ष्मणको देखनेके लिये आने लगे। सबने हृदयसे उनको आशीर्वाद दिये और उन्हें बार-बार [illegible] करते हुए भी न अघाये। प्रकार मिलते [illegible] आनन्द लेते हुए

बीत गये। तब एक दिन रामने, बड़े आदर और विनयके साथ, मुनिसे घर लौट जानेकी आज्ञा माँगी।

राजा जनककी कन्या सीताके स्वयंवर और शिवजीके धनुषकी प्रत्यञ्चा चढ़ा देनेवाले वीरकेही साथ कन्याका विवाह करनेकी उनकी प्रतिज्ञाकी बात उस समयतक सर्वत्र फैल गयी थी। तपोवनोंमें भी यह संवाद पहुँच गया था, क्योंकि उन दिनों स्वयंवर सभाओंमें प्रसिद्ध-प्रसिद्ध ऋषि-मुनि और ब्राह्मण पण्डित भी बुलवाये जाते थे। दोनों भाइयोंके विदा माँगतेही मुनिको इस स्वयवरकी बात याद हो आयी और उन्होंने जनककी प्रतिज्ञाका वृत्तान्त सुनाकर उनसे कहा,—"तुम लोग भी मेरे साथ-साथ वहाँ चले चलो, तो बड़ी अच्छी बात हो, क्योंकि यह स्वयंवर अपने ढङ्गका एकही होगा और इसमें बड़े-बड़े क्षत्रिय-वीरोंकी परीक्षा होगी। देखना चाहिये, कि कौनसा वह वीर निकलता है, जो शिवजीके धनुषकी प्रत्यञ्चा चढाकर सीता जैसे रमणी-रत्नको प्राप्त करता है।"

मुनिके इन वाक्योंको सुनकर, रामचन्द्रके स्वाभाविक वीर-हृदयमें बड़ा कौतूहल हुआ और वे मुनिके साथ जानेको तैयार हो गये। अच्छा दिन देखकर, तीनों जने जनकपुरकी ओर चले। अनेक देश, नगर और ग्रामोंको पार करते तथा पर्वत, नदी, वन, बाग, तड़ाग आदिकी प्राकृतिक शोभाओंको देखते हुए वे परम आनन्दका अनुभव करने लगे। अनेक प्रकारकी विलक्षण कथाएँ कह कहकर मुनिने दोनों कुमारोंका रास्तेभर बड़ाही मनोरञ्जन किया और उन्हें पथका श्रम मालूम न होने



आनन्दपूर्वक यात्रा पूरी कर, राम-लक्ष्मण सहित राजर्षि
श्वामित्र जनकपुरमें आ पहुँचे। वह नगर ऐसा सुन्दर बसा
आ था, उसमें जगह जगह ऐसे रमणीय उद्यान, वापी, कूप,
डाग आदि बने हुए थे, कि दोनों भाई उनकी अपार शोभा
ख देखकर बड़े आनन्दित होने लगे। तालाबोंके सुन्दर, निर्मल
और मोती जैसे स्वच्छ जलमें सुहावने हंसों और कमलके फूलों-
र मँडराते हुए मतवाले भौंरोंको देख, उन्हें परम सुख होने
गा। हाट-बाटकी शोभा बड़ी विलक्षण थी। बस्तीको देखकर
ऐसा मालूम होता था, मानों विश्व-कर्माने यहाँके सारे महल-
मकान अपने हाथों बनाये हैं। रहन-सहन, शील स्वभाव,
आचार-व्यवहार और बात चीतसे भी वहाँके लोगोंमें ऐसी
सभ्यता और मिलनसारी देखनेमें आयी, कि उनका हृदय गद्गद
हो गया। बड़े बड़े सेठोंसे लेकर छोटे-छोटे दूकानदारोंतकको
दूकानोंमें अपूर्व सुन्दरता और सजावट दिखाई देती थी।
ऐसा ज्ञात होता था, मानों लक्ष्मीने स्वयं इस नगरको अपने
रहनेके लिये पसन्द कर लिया है। बड़े बड़े विशाल देव मन्दिरोंकी
शोभाही कुछ न्यारी थी और वहाँ इतनी भीड़-भाड़ और चहल-
पहल दिखाई पड़ती थी, कि देखनेवालोंको सहजही मालूम हो
जाता था, कि राजा जनक जैसे धर्मात्मा हैं, उनकी सारी प्रजा
भी वैसीही धर्मके भावोंसे भरी है।

धीरे-धीरे ये लोग राजमहलके पास आ पहुँचे। उनका

वह विशाल और भव्य रूप देखकर दोनों कुमारोंको अपना घर याद आ गया। दुर्गकी चहार-दीवारी बडी भारी थी। उसकी दीवारोंपर चतुर कारीगरोंने ऐसी कारीगरी की थी, कि देखते हुए आँखें तृप्त नहीं होती थीं, द्वारोंमें हीरे-जडे किवाड लगे हुए थे; सोने-चाँदीके पत्रोंसे दीवारें मढ़ी हुई थी, जिन्हें देखकर आँखोंमें चकाचौंध पैदा हो जाती थी। मुनिने दुर्ग-द्वारपर पहुँचकर एक पहरेदार द्वारा अपने आनेका संवाद राजाके पास कहला भेजा।

सुनतेही राजा स्वयं दौडे हुए आये और बड़े आदरके साथ मुनि और राम-लक्ष्मणको अपने साथ भीतर ले गये। वहाँ पहुँचकर, सबको यथायोग्य आसनोंपर बैठाकर उन्होंने कुशल-प्रश्न पूछा। मुनिने राजाको अपने आनेका कारण बतलाया और अपने साथ आनेवाले राजकुमारोंका परिचय भी दिया। सुनकर जनकको बडी प्रसन्नता हुई और उन्होंने उनके ठहरने तथा स्वागत-सत्कारका प्रबन्ध कर बडे आदरसे उन्हें विदा किया। राजकुमारोंके सुन्दर-सलोने रूपने राजाके मनको आकर्षित कर लिया और वे मन-ही-मन दशरथके भाग्यको सराहने लगे।



राजा जनकने जहाँ राम, लक्ष्मण और विश्वामित्रको ठहराया था, वह मकान बडाही रमणीय, सुन्दर और सजा हुआ था। वहाँ उनके लिये सब तरहकी सुविधाएँ कर दी गयी थीं। वे जब जो कुछ चाहते, राजाके नौकर उसी समय लाकर उनके

आगे रख देते थे। उस दिन बडे प्रेमसे स्नान, सन्ध्या और भोजनादि कर उन लोगोंने वहीं विश्राम किया।

दूसरे दिन, प्रातःकालही लक्ष्मणने बडे भाईसे कहा,—"मेरी बडी इच्छा है, कि इस नगरकी सैर अच्छी तरह कर आऊँ। मुझे यह नगर ऐसा कुछ सुहावना लगता है, कि लाख चाहता हूँ तो भी यह इच्छा दबाये नहीं दबती। किन्तु मैं अकेला नहीं जा सकता, आप भी कृपाकर साथ चलें।" यह सुन, रामचन्द्रने मुनिसे आज्ञा माँगी और मुनिने भी उन्हें प्रसन्न-चित्तसे नगर देख आनेकी आज्ञा दे दी।

जिस समय दोनों भाई नगरकी परिक्रमा करने लगे, उस समय जनकपुरके लोगोंको उनके दर्शन कर बडा आनन्द हुआ। उनका रूप ऐसा लुभावना था, चाल-ढाल ऐसी मनोहर थी बातें ऐसी प्यारी थीं, कि बालक, बूढे, स्त्री, पुरुष सभी छेड-छेड कर उनसे बातें करने और मन ही-मन सुखी होने लगे। वह पीतवसन, वह माथेपर चन्दनकी खौर, वह सिहकेसे ऊँचे-ऊँचे कन्धे, वह बडी-बडी बाँहें, वह बाँकी भौंहें, वह हृदयपर झूलती हुई मोतियोंकी मालाएँ, वह कमलकेसे नेत्र, चन्द्रमाकेसे मुख देखतेही सब-के-सब मोहित और विस्मित होने लगे। एक दूसरेसे उनकी बडाई सुन, दल-के-दल लोग आकर उन्हें देखने लगे, मानों नगरवासियोंके दरिद्र नेत्रोंको शोभा और सौन्दर्य दर्शनकी भिक्षा देनेहीके लिये उन कोटि-कोटि कामको लज्जित करनेवाले कुमारोंका आना हुआ हो!

घरोंके झरोखोंपर बैठी हुई स्त्रियाँ, उनका वह सुभग रूप देख आपसमें प्रसन्न होकर तरह-तरहके प्रीति भरे वचन बोलती थीं

बातों-ही बातोंमें एकने अपने पास बैठी हुई एक दूसरी स्त्रीसे कहा,—"सखी! यह गोरे और साँवले रङ्गकी जोड़ी कैसी सुन्दर है! धन्य हैं वे माता-पिता, जिनके ऐसे सुन्दर पुत्र हुए। ठीक मालूम होते है, जैसे देवताओंके बालक हों, नहीं तो ऐसा मनमोहन रूप मनुष्यमें कहाँसे हो सकता है?" दूसरी बोली,—"सखी! मैंने सुना है, कि यह दोनों अयोध्याके राजा दशरथके लडके हैं। जिनका शरीर साँवले रङ्गका है, उनका नाम राम है और छोटे तथा गोरे रङ्गवालेका नाम लक्ष्मण है। देखो, कितनी थोडी अवस्था है, पर इसी अवस्थामें इन्होंने बडे-बडे राक्षसोंको मार डाला है। राक्षसोंको मार, मुनिके यज्ञकी रक्षा कर, ये अब यहाँ सीताका स्वयंवर देखने आये हैं।" यह सुन पहली स्त्रीने कहा,—"राजकुमारी सीता जैसी परम सुन्दरी है, यह साँवला सलोना भी वैसाही परम सुन्दर है। परमात्मा करे, यही सीताका वर हो। फिर तो उस सोनेकी अँगूठीमें यह साँवला नगीना ऐसा सजेगा, कि क्या बताऊँ?"

यह सुन, दूसरी बोली,—"परन्तु राजाका प्रण जो बडा भारी है! वे तो उसीके साथ सीताको व्याहेंगे, जो शिवजीके उस विशाल धनुषकी प्रत्यञ्चा चढायेगा। कहाँ यह कोमल कमनीय किशोर और कहाँ वह कठिन कठोर कोदण्ड*!"

उनकी इस अप्रिय आशङ्कासे झुँझलाकर पहलीने कहा,—"तू यह कैसी बात कहती है? देखनेमें छोटे होनेपर भी इनका प्रभाव बडा भारी है। अभी तूनेही तो कहा है, कि इन्होंने बडे बडे

*कोदण्ड—धनुष।

राक्षस मार गिराये हैं। परमात्माने चाहा, तो मेरी ही बात सच होकर रहेगी। विधना सदा अनमिल जोड़ी मिलाता है, परन्तु इस बार वह अपना यह कलङ्क धो देगा। देखना, यही श्याम सुन्दर सीताके स्वामी होंगे।"

इसी तरह जिसे देखो, वही इस युगल-जोड़ीकी चर्चा करता और अपने मनमें तरह-तरहकी कल्पनाएँ कर रहा था। पर एक बातमें सबका मन मिल जाता था। न जाने क्यों, सभीके मनमें यही बात बार-बार आती थी, कि राजा जनककी कन्याका विवाह यदि इसी साँवले राजकुमारके साथ हो जाये, तो अच्छा हो।

इस प्रकार नगरकी सैर कर, आप आनन्दित हो और अपने दर्शनोंसे सबको आनन्दितकर, दोनों भाई अपने निवास-स्थानको लौट आये और सायङ्काल सन्ध्यावन्दनसे छुट्टी पा, भोजन कर ऋषिके पैर दबाने लगे। दोनों भाइयोंको नाना प्रकारके मनोरञ्जक इतिहास सुनाते-सुनाते मुनि निद्रा देवीकी गोदमें विश्राम करने लगे। उनके सो जानेपर ये दोनों भाई भी शयन करने चले गये।



प्रातःकाल उठतेही दोनों भाइयोंने नित्यकर्मकर, पुष्प-वाटिकासे पूजाके लिये फूल लानेकी आज्ञा माँगी। मुनिने बड़ी प्रसन्नतासे उन्हें फूल ले आनेकी आज्ञा दे दी। आज्ञा पाकर वे दोनों भाई आनन्दित मनसे फूल लाने चले। उनके निवास भवनसे कुछही दूरपर राजाजनककी सबसे प्रसिद्ध और बड़ी फुलवारी थी। दोनों भाई उसीमें फूल लेनेके लिये आये

उन्होंने वाटिकामें प्रवेश करतेही देखा, कि वसन्त-ऋतुके प्रभावसे वाटिकाके वृक्ष-वृक्षमें नवीन शोभा, नये फूल-पत्ते और नयी बहार छायी हुई है। रङ्ग-बिरङ्गे फूलों और पत्तोंवाले वृक्ष, मलय-पवनके सञ्चारसे झूम-झूमकर, मानों इनका स्वागत कर रहे हैं। तोता, मैना, कोयल, मोर, पपीहा आदि नाना प्रकारके पक्षी इस पेडसे उस पेडपर जाते हुए तथा अपनी मनोहर बोलियोंसे कानोंमें अमृत टपकाते हुए, मानों इनकी स्तुति कर रहे हैं। बागके बीचमें एक मनोहर तालाब बना हुआ था, जिसकी सङ्गमर्मरकी सीढियोंमें तरह तरहकी मूल्यवान् मणियाँ जडी हुई थीं। उनके निर्मल जलमें रङ्ग-बिरङ्गके कमल खिल रहे थे, जिनपर जलके पक्षी और रसिया भौंरे टूटे पडते थे। उस तालाबको देख और प्रकृतिके हाथों सिरजे हुए उस मनोहर उद्यानकी शोभाका अवलोकन कर, उन दोनों भाइयोंको अपार आनन्द हुआ और मालीसे पूछकर वे इच्छानुसार फूल तोडने लगे।

इसी समय, संयोगवश, राजा जनककी कन्या सीता भी अपनी सखी-सहेलियोंके साथ, माताकी आज्ञा लेकर, पार्वती-पूजनके निमित्त इसी बगीचेमें आयी। जिस तालाबका हमने ऊपर वर्णन किया है, उसके पासही पार्वतीजीका एक बडा विशाल और मनोहर मन्दिर था। आतेही सबने उस सरोवरमें स्नान किया और बडे प्रेमसे गिरिजाकी पूजा करनेके लिये मन्दिरमें गयीं। सीताके साथ जो सब सखियाँ आयी हुई थीं, वे सब-की-सब बडी सुन्दर, चतुर और मिठबोल थीं। पर उनमें एक बडीही चञ्चल और सबसे अधिक चतुर थी। वह सबको मन्दिरमें

पूजा करते हुए छोड, आप फुलवारीकी शोभा देखने चली गयी। इधर सबने बड़े भक्ति-भावसे पार्वतीकी पूजा की और जिसके मनमें जो अभिलाषा थी, उसे देवीके आगे निवेदनकर पृथ्वीमें माथा टेका। इसी समय वह पूर्वोक्त सखी बड़ी हँसती-इतराती हुई मन्दिरमें आयी। सबने देखा,—कि हर्षसे उसके अङ्ग-प्रत्यङ्गमें पुलकावली छा गयी है,नेत्रोंमें आनन्दके आँसू उमड आये हैं और चेहरेसे हँसी फूटी पडती है। यह देख, सबने पूछा,—"क्यों? सखी! तू क्या देख आयी, जो इस प्रकार मारे हर्षके बावली हुई जाती है? तनिक हम लोगोंको भी तो सुना।"

यह सुन, पहले तो उसने ऐसी आना-कानीकी जिससे कि, सबका कौतूहल बेतरह बढ गया और वे आग्रहके साथ बार-बार उससे पूछने लगीं, अन्तमें जब उसने देखा, कि अब ये सब कौतूहलके मारे पगली हुई जाती हैं, तब बोली,—"सखियो! क्या पूछती हो? बागमें दो राजकुमार फूल लेनेको आये हैं। उनकी अपूर्व सुन्दरता देख, मेरे तो नेत्र सफल हो गये। उनमें एकका रङ्ग साँवला और दूसरेका गोरा है। दोनोंके अङ्ग-प्रत्यङ्गकी गठन ऐसी मनोहर है, वे बातें ऐसी मीठी-मीठी करते हैं कि क्या बताऊँ? सखियो! उस राजहंसके जोड़ेका क्या बखान करूँ? वह सौन्दर्य्य आँखोंसे देखनेकीही वस्तु है—उसका वर्णन नहीं हो सकता। जिन आँखोंने उस शोभा और सौन्दर्य्यकी खानको देखा है, उनके जिह्वा नहीं और जिह्वाके आँखें नहीं—फिर मैं कैसे उसका ठीक-ठीक वर्णन कर सुनाऊँ?"

उसकी ये बातें सुन, सखियाँ

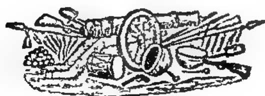
हो गयीं और बड़े हर्षसे मन्दिरसे निकल, घर जानेकी तैयारी करने लगीं। रास्तेमें जाते-जाते सखियाँ उसी सलोने-साँवरेके सुभगरूपका वर्णन करने लगीं, जिसे सुन-सुनकर सीताके मनमें अनायास प्रीति, आनन्द और उत्कण्ठाकी तरगें उठने लगीं।

इसी समय ककण-किंकिणी और नूपुरोंकी झनकार सुन, राम और लक्ष्मणने चकित होकर जो मन्दिरकी ओर देखा, तो सखियों-समेत सीता मन्दिरसे बाहर निकलती हुई दिखलाई पड़ी। सीताका वह सुन्दर रूप देख, रामके नेत्र शीतल हो गये—वे एकटक चकोरकी तरह उस मुख-चन्द्रका अमृत पान करने लगे। उन्हें ऐसा मालूम हुआ, मानों इस रूपकी रचना करनेमें चतुर चतुराननने अपनी समस्त निपुणता खर्च कर दी है। यह देख, उन्होंने लक्ष्मणसे कहा,—"भाई! देखो, मुझे तो ऐसा जान पड़ता है, कि यह वही राजा जनककी कन्या है, जिसके लिये स्वयंवर रचा जा रहा है। विधाताने क्याही सुन्दर सुडौल मूर्त्ति गढ़ी है! भाई! हम रघुवंशी हैं, हम कभी परायी बहू-बेटियोंकी ओर नहीं देखते, परन्तु मेरी दृष्टि आपही-आप इस बालिकापर जा पड़ी है और इसकी विलक्षण सुन्दरता देख, हटाये नहीं हटती।"

इधर दोनों भाइयोंमें इस तरह बातें हो रही थीं, उधर सखियोंने लताकी ओटसे सीताको राम और लक्ष्मणके दर्शन कराये। शरत्कालके मनोहर चन्द्रमाको देखकर जैसे चकोरी आनन्दमें मग्न हो जाती है, रामका रूप देख, सीताकी भी वैसीही अवस्था हुई। सखियाँ भी वह रूप बार बार निहारने और मन-

ही मन सराहने लगीं। घरसे आये हुए बहुत देर हो गयी थी, अतएव सब-की सब इच्छा न होते हुए भी शीघ्रताके साथ महलकी ओर चलीं, पर वह श्याम-सुन्दर रूप सीताके हृदयपर अङ्कित हो गया और बार-बार नेत्रोंके आगे घूमने लगा। रामचन्द्र भी सीताकी वह सहज सुकुमार मूर्त्ति हृदयमें धारण किये हुए, लक्ष्मणके साथ डेरेपर आये और मुनिसे वाटिकामें सीताके देखनेका सारा हाल कह सुनाया। रामके मनमें कुछ छल, कपट और बुरी वासना तो थी नहीं, जो कहनेमें सकोच करते, क्योंकि जिसमें पाप और बुराई होती है, वही बातें छिपाता है।

फूल पाकर मुनिने सन्ध्या पूजा की और दोनों भाइयोंको आशीर्व्वाद दिया, कि तुम्हारे सब मनोरथ सफल हों। इसके बाद वे लोग भी सन्ध्या वन्दनमें लगे। आजका दिन भी बड़ेही आनन्दसे बीत गया।



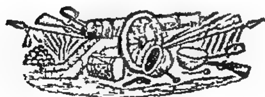
हो गयीं और बड़े हर्षसे मन्दिरसे निकल, घर जानेकी तैयारी करने लगीं। रास्तेमें जाते-जाते सखियाँ उसी सलोने-साँवरेके सुभगरूपका वर्णन करने लगीं, जिसे सुन-सुनकर सीताके मनमें अनायास प्रीति, आनन्द और उत्कण्ठाकी तरंगें उठने लगीं।

इसी समय कंकण-किंकिणी और नूपुरोंकी झनकार सुन, राम और लक्ष्मणने चकित होकर जो मन्दिरकी ओर देखा, तो सखियों-समेत सीता मन्दिरसे बाहर निकलती हुई दिखलाई पड़ी। सीताका वह सुन्दर रूप देख, रामके नेत्र शीतल हो गये—वे एकटक चकोरकी तरह उस मुख-चन्द्रका अमृत पान करने लगे। उन्हें ऐसा मालूम हुआ, मानों इस रूपकी रचना करनेमें चतुर चतुराननने अपनी समस्त निपुणता खर्च कर दी है। यह देख, उन्होंने लक्ष्मणसे कहा,—"भाई! देखो, मुझे तो ऐसा जान पड़ता है, कि यह वही राजा जनककी कन्या है, जिसके लिये स्वयंवर रचा जा रहा है। विधाताने क्याही सुन्दर सुडौल मूर्त्ति गढ़ी है! भाई! हम रघुवंशी हैं, हम कभी परायी बहू-बेटियोंकी ओर नहीं देखते, परन्तु मेरी दृष्टि आपही-आप इस बालिकापर जा पड़ी है और इसकी विलक्षण सुन्दरता देख, हटाये नहीं हटती।"

इधर दोनों भाइयोंमें इस तरह बातें हो रही थीं, उधर सखियोंने लताकी ओटसे सीताको राम और लक्ष्मणके दर्शन कराये। शरत्कालके मनोहर चन्द्रमाको देखकर जैसे चकोरी आनन्दमें मग्न हो जाती है, रामका रूप देख, सीताकी भी वैसीही दशा हुई। सखियाँ भी वह रूप बार बार निहारने और मन-

ही मन सराहने लगीं। घरसे आये हुए बहुत देर हो गयी थी, अतएव सब-की सब इच्छा न होते हुए भी शीघ्रताके साथ महलको ओर चलीं, पर वह श्याम-सुन्दर रूप सीताके हृदयपर अङ्कित हो गया और बार-बार नेत्रोंके आगे घूमने लगा। रामचन्द्र भी सीताकी वह सहज सुकुमार मूर्त्ति हृदयमें धारण किये हुए, लक्ष्मणके साथ डेरेपर आये और मुनिसे वाटिकामें सीताके देखनेका सारा हाल कह सुनाया। रामके मनमें कुछ छल, कपट और बुरी वासना तो थी नहीं, जो कहनेमें सकोच करते, क्योंकि जिसमें पाप और खुटाई होती है, वही बातें छिपाता है।

फूल पाकर मुनिने सन्ध्या-पूजा की और दोनों भाइयोंको आशीर्व्वाद दिया, कि तुम्हारे सब मनोरथ सफल हों। इसके बाद वे लोग भी सन्ध्या वन्दनमें लगे। आजका दिन भी बड़ेही आनन्दसे बीत गया।



सीताका स्वयंवर



आज सीताका स्वयंवर है—जनककी प्रतिज्ञाके अनुसार आज जो वीर हर-धनुषकी प्रत्यञ्चा चढा देगा, उसीके गलेमें सीता जयमाल डाल देगी। स्वयंवर-सभा आज नाना देशोंसे आये हुए राजाओं, राजकुमारों, ब्राह्मणों, पण्डितों, ऋषियों और आत्मीय-स्वजनोंसे खचाखच भरी है। नगर-निवासी दर्शकोंकी भी भारी भीड लगी हुई है। सबके मनमें कौतूहल और उत्कण्ठा भरी है, कि देखें, आज भगवान् किसे बडाई देते हैं। विश्वामित्रके साथ-साथ दोनों भाई राम-लक्ष्मण भी रङ्ग-भूमिमें आ पहुँचे। उनके आतेही सभामें जितने आदमी बैठे हुए थे, सबकी दृष्टि एकाएक उनकी ओर खिंच गयी। देखतेही लोगोंके मनमें नाना प्रकारके भाव उदय होने लगे।

राजा जनकने उनके आतेही बडे प्रेमसे उनका स्वागत किया और उन्हें एक ऊँचे मञ्चपर मुनिके साथ ही-साथ बैठाते हुए मुनिके चरणोंमें शीश नवाया। विश्वामित्रने आशीर्व्वाद देते हुए कहा,—"राजन्! आपने बडी उत्तम सभा-रचना करवायी

है। ऐसी सभा देवलोकमें भी हैं, कि नहीं, इसमें सन्देह है।" यह सुन, जनकने शिर झुकाकर मुनिके वचनोंका आदर किया।

इसके बाद राजाने उपयुक्त समय जान, सीताको बुलाया। अङ्ग-प्रत्यङ्गमें मणि-मुक्ता-जड़े मनोहर और बहुमूल्य गहने पहने सुन्दर साड़ीसे शरीर ढके, जिस समय सीता रङ्ग-भूमिमें आयी, उस समय देखनेवालोंकी आँखें झँप गयीं। जो शोभा त्रैलोक्यमें दुर्लभ है, उसे देख, भला किसकी सामर्थ्य थी, जो आँखें मिलाता? सीताकी सखियाँ चारों ओरसे उसे घेरे और मङ्गलके गीत गाती हुई यथा-स्थान जा खड़ी हुईं। रामका वह अलौकिक रूप और सीताकी वह अनुपम सुन्दरता देख, सब यही चाहने लगे, कि राजा यदि अपना प्रण तोड़कर भी रामके साथ सीताका ब्याह कर दें, तो अच्छा हो! न जाने क्यों, सबके हृदयसे यही निकलता था, कि यह श्याम सलोनाही सीताके योग्य वर है।



राजाकी आज्ञा पा, भाटोंने राजा और सब उपस्थित सज्जनोंको प्रणामकर, राजा जनकके पूर्व्व-पुरुषोंकी कीर्त्ति बड़े अच्छे और मनोहर भाव भरे शब्दोंमें सुनाते हुए, उनके प्रणकी बात सबको बतला दी। शिवजीका वह विशाल धनुष सभाके बीचमें रखा हुआ था। बहुतोंके तो उसे देखतेही होश उड़ गये और बहुतेरे पास जाकर भी उसे उठानेका साहस न कर सके और देख भालकर लौट आये। परन्तु कुछ ऐसे भी उत्साही निकले, [illegible] हाथ लगाया, पर प्रत्यञ्चा

दूरकी बात है,वे उसे टस-से-मस भी न कर सके। इसी तरह एक-एक करके सभी हार गये—कोई माईका लाल प्रत्यञ्चा न चढ़ा सका।

यह देख, राजा जनकको बड़ा दुःख हुआ। वे हथेलीपर सिर रखकर खेदके साथ बोले,—"भगवन्! यह क्या हुआ? क्या पृथ्वी वीरोंसे शून्य हो गयी? क्षत्रिय-सन्तानोंमें क्या कुछ भी बल पराक्रम न रह गया? क्या ब्रह्माने सीताका विवाह होनाही नहीं लिखा है? भाइयो! अब आप लोग अपने-अपने घर जाइये। मेरी लड़की क्वाँरीही रहेगी—यह मैं अच्छी तरह समझ गया। जब मैं एकबार प्रण कर चुका, तब उसे तोड़ तो नहीं सकता, क्योंकि क्षत्रियका प्रण अटूट होता है और बिना प्रण पूरा हुए मैं कन्याका विवाह नहीं कर सकता। हा! यदि मैं जानता, कि पृथ्वीमें अब वीरता नहीं रही है, तो क्यों ऐसा कठिन प्रण कर संसारमें अपनी हँसी कराता? मैं तो अब कहींका न रहा। इधर प्रण है, उधर कन्या कुमारीही रहना चाहती है! नाथ! तुमने मुझे क्यों ऐसे सङ्कटमें डाला? मेरी बुद्धिपर ऐसा क्या पत्थर पड़ा था, जो मैंने ऐसी अनहोनी प्रतिज्ञा की?" यह कहते-कहते राजा ग्लानि और दुःखसे कातर हो गये,—उनके नेत्रोंमें आँसू भर आये।



राजाके इन करुणाभरे वचनोंको सुन, सभामें जितने लोग बैठे थे, सब सीताकी ओर देख-देखकर मन-ही-मन बड़े दुःखी हुए। सीताकी सखियाँ मारे खेदके अधीर हो गयीं; किन्तु

सरला सीताके मनमें कुछ भी नहीं था,—उसके चेहरेसे किसी तरहका भावान्तर प्रकट नहीं हुआ।

परन्तु वीर लक्ष्मणके हृदयमें जनककी बातें तीरकी तरह चुभीं। उन्होंने बड़े क्रोधके साथ लाल-लाल आँखें कर रामचन्द्रसे कहा,—"भैया! अभीतक आप बैठे-बैठे सुनही रहे हैं? रघुवंशियोंके सामने कोई यह बात नहीं कह सकता, कि पृथ्वी वीरोंसे शून्य हो गयी। आपके रहते हुए, आपके मुँहपर, राजा जनकने ऐसी अनुचित बात कह डाली—यह मुझसे नहीं सहा जाता। यदि आपकी आज्ञा हो, तो यह पुराना और सड़ासा धनुष क्या वस्तु है—मैं सुमेरु पर्व्वतको भी गेंदकी तरह उठा ले सकता हूँ। आपके प्रतापसे मैं सारे ब्रह्माण्डको कच्चे घड़ेकी तरह तोड़ दे सकता हूँ। इन्होंने समझ क्या रखा है? आप कहें, तो मैं अभी इस धनुषको तृणकी तरह उठाकर फेंक दूँ, यदि ऐसा न करूं, तो आजसे धनुष हाथमें लेनेका नाम भी न लूँ।"

लक्ष्मणकी ये क्रोध भरी बातें सुन, शान्त स्वभाव रामचन्द्रने उन्हें चुपचाप बैठ जानेका सङ्केत किया। तब समय अनुकूल जान, विश्वामित्रने कहा,—"अच्छा, रामचन्द्र! तुम उठो और धनुषपर प्रत्यञ्चा चढ़ाकर राजा जनकका दुःख दूर करो। मैं आशीर्व्वाद करता हूँ, तुम्हारा श्रम सफल होगा।"

मुनिकी आज्ञा पा, उनके चरणोंमें सिर झुका रामचन्द्र धनुषकी ओर चले। उस समय एक बार सबके हृदय समुद्रमें खलबली मच गयी। उस सूर्य्यके समान तपते हुए सूर्यवंशीय कुमारके उठतेही, सब राजा-राजकुमार ऐसे तेजहीन हो गये, जैसे

सूर्य्यके उदय होतेही तारागण छिप जाते हैं। गजकी तरह मन्द-मन्द गतिसे चलते हुए राम धनुषके पास आये और मन-ही मन गुरु और माता-पिताको प्रणाम कर, उन्होंने बात-की-बातमें धनुष उठा लिया। जैसे बिजली देखते-देखते चमककर मेघोंमें लीन हो जाती है, वैसेही रामने कब धनुष उठाया और कब प्रत्यञ्चा चढ़ायी, यह किसीने नहीं देखा, परन्तु प्रत्यञ्चा चढ़ातेही धनुष जब चरमराकर दो टुकड़े होगया, तब सब लोग आश्चर्य्यसे चकित हो, उधर देखने और उन फूलसे हाथोंकी वज्रसी शक्तिकी बार-बार प्रशंसा करने लगे। चारों ओर आनन्द फैल गया! राजा जनक, उनकी रानी, सीता और उसकी सखियोंको तो ऐसा अपार हर्ष हुआ, मानों चातकको स्वातिका जल मिल गया! जितने राजा राजकुमार सीताको पानेकी आशासे आये हुए थे, उनके मुँहका रङ्ग फीका पड़ गया। वे ऐसे मालूम होने लगे, मानों चन्द्रमाके आगे क्षीण-ज्योतिवाले तारे। लक्ष्मणके हृदयमें सुखका जो समुद्र उमड़ पड़ा, उसका कौन वर्णन कर सकता है?

तब जनकके पुरोहित शतानन्दने राजकुमारी सीताको रामके गलेमें वर-माल पहनानेकी आज्ञा दी। यह सुन, सङ्कोच, प्रेम और लज्जासे हृदयको लबालब भरे हुई सीता अपनी सखी-सहेलियोंके साथ रामके पास आयी। मारे सङ्कोचके उसके हाथ नहीं उठते थे, हृदय उमड़ रहा था, आँखें झपी जाती थीं। जब सखियोंने बार-बार माला पहनानेके लिये कहा, तब सुमुखी सीताने सकुचाते सकुचाते रामके गलेमें माला डाल दी। आनन्दके बाजे बजने लगे, स्त्रियाँ मङ्गलके गीत गाने लगीं और सब

लोग सीताके सौभाग्यकी सराहना करने लगे। सबके जयवाद और आशीर्वाद लेती हुई सीता अपनी माताके पास चली आयी।



इधर दुष्टोंको दुष्टताकी सूझी। जो राजा-राजकुमार धनुषकी प्रत्यञ्चा न चढ़ा सकनेके कारण लज्जित और विफल-मनोरथ हुए थे, वे राजा जनकको व्यर्थही खरी-खोटी सुनाने और लड़ाईमें दोनों भाइयोंको परास्त कर सीताको छीन ले आनेके मन-मोदक उड़ाने लगे। पर उनकी उछल कूद थोड़ीही देरमें शान्त हो गयी। राजा जनकके धिक्कारने और लक्ष्मणजीके क्रोध-पूर्ण नेत्रोंको देखनेसे उनका सारा सङ्कल्प मनके मनहीमें लीन हो गया। सब सिटपिटाकर बैठ गये।

इसी समय न जाने किधरसे मुनिवर परशुराम बड़े क्रोधके साथ लाल-लाल आँखें किये, राजा जनकके सामने चले आये और गरजकर बोले,—"क्योंरे मूर्ख जनक! हमारे परम पूज्य इष्टदेव शिवका यह धनुष किसने तोड़ा? शिवका भक्त होकर भी तूने अपने आप उनका पिनाक तुड़वा डाला—यह क्या तूने अच्छा किया? उस धनुष तोड़नेवालेको अभी बुला, नहीं तो मैं इसी क्षण अपने शापसे तेरा सर्वनाश कर डालूँगा।" यह कह, मुनि क्रोधसे शरीर कँपाने और बार-बार अपनी खड़ाऊँ पृथ्वीपर पटकने लगे।

बनी बातको इस तरह बिगड़ते देख, सबके हृदयमें बड़ी चिन्ता उत्पन्न हुई। स्त्रियाँ तो भयके मारे विह्वल हो गयीं और

उन्हें एक-एक क्षण कल्पके समान मालूम होने लगा।

इस प्रकार सबको चिन्तित और राजा जनकको मुनिके क्रोधके आगे चुप्पी साधे देख, रामचन्द्र आगे बढ आये और हाथ जोडकर कहने लगे,—"महाराज! आप राजाके ऊपर क्यों वृथा क्रोध करते हैं? आपके इसी सेवकने धनुष तोडनेका अपराध किया है, कहिये—क्या आज्ञा है?"

रामके इन नम्रता भरे वचनोंसे मुनिका क्रोध कुछ कम न हुआ बल्कि और भी अधिक हो गया। वे बोले,—सेवकका क्या यही काम है? जो शत्रुकासा आचरण करे, वह कभी सेवक नहीं हो सकता। शिवजीका यह धनुष जिसने तोडा है, वह यदि मेरा सगा भाई हो, तोभी क्षमा नहीं कर सकता। उसे मैं अपने परम शत्रु सहस्रबाहुकेही समान समझता हूं"। राजाओ! तुम लोग यहांसे चले जाओ, मैं अभी इसे इसकी करनीका फल चखाए देता हूं। तुम लोग यहां रहोगे, तो वृथा मेरे क्रोधमें पड़कर तुम भी भस्म हो जाओगे।"

परशुरामको इस तरह बढ-बढकर बातें करते देख, लक्ष्मणसे न रहा गया। वे उनका निरादर करते हुए कहने लगे,—"महाराज! हम लोगोंने लडकपनसे लेकर आजतक न जाने कितने धनुष तोड डाले, पर आप तो कभी उनकी खोज-पूछ करने नहीं आये। इस धनुषपरही आपकी ऐसी क्या ममता है, जो इसे टूटा देख, आप अपने आपेको भूले जा रहे हैं?"

यह सुन, परशुरामने बिगडकर कहा,—"रे दुष्ट क्षत्रिय बालक! तुझे मुंह सम्हालकर बोलना नहीं आता? यह धनुष भी क्या

और धनुषोंकी तरह है ? यह भगवान शङ्करका पिनाक है, इसे कौन नहीं जानता ? इसे तोडकर तुम लोगोंने जो उनका अपमान किया है, उसका दण्ड दिये विना मैं कदापि नहीं मान सकता ।"

लक्ष्मणने मुनिको चिढ़ानेके लिये कहा,—"विप्रजी ! देखिये, बहुत लाल-पीले नहीं हूजिये । मेरी समझसे तो सब धनुष बराबर हैं, फिर इस सड़ेसे पुराने धनुषमें रखाही क्या था ? यह तो मेरे भाईके हाथ लगातेही आप-से-आप धागेकी तरह टूट गया, इसमें उनका क्या अपराध है ? उन्होंने इसे नया समझा था, यदि ऐसा सडियल जानते तो कभी छूते भी नहीं ।"

परशुरामका क्रोध अब सीमा पार कर गया । उन्होंने हाथके फरसेको तानकर कहा,—"रे दुष्ट छोकरे ! तेरी वाल-अवस्था देख दया आती है, नहीं तो इसी फरसेसे तेरे शिरके दो टुकडे कर देता । नही जानता, कि मैं क्षत्रिय वशका पुरान वैरी हूँ ? क्यों माता-पिताको पुत्र-शोकका दु ख देनेको तैयार हुआ है ?"

लक्ष्मण बोले,—महाराज ! आप ब्राह्मण हैं, लड़ाई-भिड़ाई आपका काम नहीं । वे क्षत्रिय, जिनके आप वैरी बनते हैं, कोई ऐसेहों-वैसे रहे होंगे । अभी आपने रघुवशियोंका हाल नहीं जाना है । ऐसे ऐसे धनुष-बाण और फरसेको हम समझते क्या हैं ? आप ब्राह्मण हैं, इसीसे जो कुछ कहें, सब सुन लूँगा, सह लूँगा , क्योंकि हमारे कुलकी यह रीति है, कि देवता, ब्राह्मण, गौ और ईश्वर-भक्तोंपर हाथ नहीं उठाते । कारण, यदि ये अपने हाथों हारें तोभी पाप है और मारे जायें तो भी पाप है । आपकी वज्र है, फिर यह हथियार

आप व्यर्थही बांधे चलते हैं। यदि मैंने कुछ अनुचित कहा हो, तो क्षमा कीजियेगा, पर मैंने तोभ्र राजतक ब्राह्मणोंको शाप देतेही सुना है, अस्त्र चलाते नहीं देखा—इसीसे ऐसा कहा है।"

यह सुन, परशुरामका क्रोध सौगुना अधिक होगया और वे कुछ अनर्थ करनेहीको थे, कि रामने संकेतकर लक्ष्मणको चुप करा दिया और आप बडी विनयके साथ हाथ जोडकर मुनिसे कहने लगे,—"द्विजदेव! आप क्यों वृथा इस बालकके मुँह लग-रहे हैं? इसके तो अभी दूधके दाँत भी नहीं टूटे। भला इसपर आपको क्रोध करना चाहिये? यह आपका प्रभाव नहीं जानता, इसीसे इतना बक गया। पर आप तो सर्वदर्शी हैं, बूढ़े हैं, परम ज्ञानी हैं, आपकी ऐसी चञ्चलता उचित नहीं। अपनी स्वाभाविक चपलताके कारण बालक यदि कोई अपराध कर बैठते हैं, तो बड़े-बूढ़े उनपर क्रोध नहीं करते। आप धीर, गम्भीर, शील-निधान हैं, इसे बालक जान क्षमा कीजिये।"

रामकी इन विनय-भरी बातोंसे मुनि कुछ ठण्डे हुए, पर लक्ष्मणको धीरे-धीरे मुस्कराते देख, उनका मन फिर चञ्चल हो उठा और वे कहने लगे,—"देखो, तुम्हारा यह भाई तुम सरीखा सुशील नहीं—बडा ही कुटिल, नीच और परले सिरेका पापी है। यह नहीं जानता कि मैं साक्षात् यमकी तरह हूँ। इसका शरीर गोरा, पर मन काला है। तुम कहते हो, कि अभी इसके दूधके दाँत भी नहीं टूटे, परन्तु यथार्थमें यह दुध-मुँहा नहीं, बडा विष-मुँहा है। देखनेमें इतना सुन्दर, पर मनका कैसा कुटिल है! मानों सोनेके घड़ेमें विष घोला हुआ शरबत हो।"

इसपर लक्ष्मणजीने और दो-एक ताने तुर्रे छोड़े, जिन्हें सुन, मुनिका मुँह मारे क्रोधके अँगारेकी तरह लाल हो आया। रामचन्द्र बार-बार विनय-वाक्योंसे उन्हें प्रबोध देने लगे, पर परशुराम किसी प्रकार सन्तुष्ट होते न दिखाई दिये। उन्होंने कहा,—"तुम दोनों भाई सिद्ध-साधक हो। वह कड़वे वचन बोलता है और तुम ऊपरसे शान्ति भरे वचनोंके छींटे डालते हो। तुम्हारी-उसकी एकमति न होती, तो वह क्योंकर ऐसी बातें कहता? देखो, मुझे कोरा ब्राह्मणही न जानना, मेरा क्रोध साक्षात् अग्नि है और इसमें मैं इकीस बार क्षत्रिय-सन्तानोंकी आहुति दे चुका हूँ। अबके और सही। मेरा इसमें क्या बनता-बिगड़ता है? तुम अपना भला-बुरा देख लो।"

यह सुन, रामचन्द्रने कहा,—"भगवान्! आप ब्राह्मण हैं, अतएव क्षत्रियोंके पूज्य हैं। आपकी-हमारी बराबरी क्या? आपके चरणोंकी सेवा करना ही हमारा धर्म है, आपसे लड़ना हमारा कर्म नहीं। इस बालककी बातोंपर न जाइये, सन्त लोग बालकों और मतवालोंकी बातका बुरा नहीं मानते। आपका असल अपराधी तो मैं हूँ। मुझे जो दण्ड देना हो, दीजिये। लीजिये, यह शिर आपके सामने झुका है, कुठारका प्रहारकर अपना क्रोध शान्त कीजिये।" यह कह, रामने अपना शिर झुका दिया।

रामकी इस नम्रतासे परशुरामकी परुषता (कठोरता) परा जित हो गयी। उनका सारा क्रोध जाता रहा। भला, कौनसा ऐसा वज्र हृदय है, जो नम्रतासे न नवे?

कुछ देर सोचकर कहा,—"अच्छा, तुम मेरा यह धनुष लेकर इसकी प्रत्यञ्चा चढाओ—मैं तुम्हारी परीक्षा लूंगा। यदि तुम इस परीक्षामें उत्तीर्ण हो गये, तो मैं समझूँगा, कि शिव-धनुष तुमने अनजानसे तोड डाला है, निरादर करनेके लिये जान-बूझ कर नहीं तोडा और यदि प्रत्यञ्चा नहीं चढ़ा सके, तो मैं किसी तरह तुम्हारा अपराध क्षमा न करूँगा।

यह कह, उन्होंने अपना धनुष रामके आगे रख दिया। रामने उसे उठाकर तुरन्त प्रत्यञ्चा चढा दी, जिसे देखकर परशुरामके सारे सन्देह मिट गये और वे समझ गये, कि राम कोई अलौकिक महापुरुष हैं—साधारण मनुष्य नहीं। ऐसा समझ, उन्होंने रामको गले लगा लिया और हृदयसे आशीर्वाद दिया। यह परिवर्त्तन होते देख, सभाके सभी लोग गद्गद होकर जय जयकार करने लगे! नर-नारी, पुरजन-परिजन, सबके भयसे व्याकुल प्राणोंमें आनन्दके अमृतकी धारासी बह चली। मङ्गलके गीत गाये जाने और बधाईके बाजे बजने लगे!



सीताका विवाह





था-समय राजा दशरथके पास दूत भेजकर, रामके साथ जनक-दुलारी सीताका विवाह निश्चित होनेका सवाद दे दिया गया। सुनकर राजाको इतना सुख हुआ, कि वे आनन्दसे फूले अङ्ग न समाये। कौसल्या, कैकेयी और सुमित्राको जिस समय यह सवाद राजा दशरथने सुनाया, उस समय वे प्रेम और आनन्दसे अधीर हो गयीं। बार-बार जनकके पत्रको पढ़नेपर भी उनका जी न भरता था। भरत और शत्रुघ्नने जब यह समाचार सुना, तब वे भाईको घर-वेशमें देखनेकी उत्कण्ठाके मारे व्याकुलसे हो गये। स्वयंवर-सभामें राजा-राजकुमारोंको लज्जितकर रामने जो अद्भुत पराक्रम दिखलाया, उसका वृत्तान्त सुनकर रामके ऊपर सबकी स्वाभाविक श्रद्धा भक्ति और भी बढ़ गयी। कब बरात जाये और रामको हम दूल्हा बना देखें —यही धुन सबके सिरपर सवार हो गयी। राज-पुरीमें बधा-इयाँ बजने लगीं, मङ्गल गाये जाने लगे और दीन मुँह माँगो भिक्षा पा... हो गये। राजाने

उत्सव-आमोद मनाये जानेकी आज्ञा दे दी। फिर तो स्वाभाविक सुन्दर अवधपुरी इन्द्रकी अमरावतीको भी लज्जित करने लगी। घर-घर तोरण-द्वार बने और वन्दनवारें लटकने लगीं। प्रतिदिन गृह-गृहमें दीपमालिकाकी भाँति सहस्र-सहस्र प्रदीप एक साथ जगमगाने लगे। जहाँ देखो, वहीं राम और सीताका नाम ले-लेकर स्त्रियाँ गीत गा रहीं हैं—मानों राम सबके अपनेही घरके हों। वास्तवमें सबको ऐसाही आनन्द हो रहा था, मानों उनके अपनेही बेटे या भाईका ब्याह होने जा रहा हो।

बारात जानेका दिन स्थिर हो गया। हाथियोंके शृङ्गार होने लगे, घोड़ोंकी सजावट होने लगी, तरह-तरहके वाहन, वसन और भूषण तैयार होने लगे। नियत तिथिको हाथी-घोड़ोंपर क्षत्रिय-बालक तथा नाना प्रकारकी पालकी, रथ और सुखपाल आदि सवारियोंपर वृद्ध और ऋषि-मुनि बैठे हुए चले। मागध, सूत, भाट आदि गुण गानेवालों तथा खच्चरों, ऊँटों और बैल-भैंसोंपर लदी हुई अनन्त सामग्रियोंको साथ लिये हुए राजा दशरथ, हाथीपर अपने दोनों पुत्रों, भरत शत्रुघ्नको अगल-बगल बैठाये हुए बरातियोंके मध्यमें होकर चले। आनन्दके बाजे बजते हुए कान बहरे कर रहे थे, हाथी घोड़ोंकी हिनहिनाहट और चिग्घाड़से बादलोंके गरजनेका धोखा हो रहा था और सबके अङ्ग अङ्गपर चमकते हुए हीरे-मोती जड़े चटक-मटकदार वस्त्रा-भूषणों और अलङ्कारोंको देख देखकर आँखोंमें चकाचौंध पैदा हो रही थी। जिस रथपर राजाके गुरु वसिष्ठ मुनि बैठे हुए थे, वह कुछ ऐसी सजावटका था, कि देवराज इन्द्रने भी कभी अपने

गुरु बृहस्पतिको ऐसे रथपर बैठाया था, कि नहीं, इसमें सन्देह है। साधारण नगर-निवासियोंकी वेश-भूषा भी ऐसी बहुमूल्य थी, कि ज्ञात होता था, मानों अयोध्यामें कोई दीन दुःखी नहीं। सबपर लक्ष्मीकी समान कृपा है। फिर भला उस बरातकी शोभाका क्या वर्णन हो सकता है? उसकी एक एक वस्तु ऐसी सुन्दर ऐसी अनमोल थी, कि आँखें पहरों देखा करें और हटनेका नाम न लें।



धीरे-धीरे महा आनन्द-कोलाहल करती हुई बरात आयोध्यसे बाहर निकली। महीनोंकी यात्रा सानन्द बिताकर बारात जब जनकपुर पहुँची, तब सवाद पाकर जनकने, उनके स्वागतके लिये, अनेक हाथी, घोडे, रथ और पैदल सिपाहियोंकी सेना तैयारकर सोनेके कलशों, मणि खचित चाँदीके थालों और अनेक प्रकारके बहुमूल्य पात्रोंमें भर-भरकर खाने-पीनेके सामान तथा तरह-तरहके अपूर्व्व उपहार भेजे। बडी धूमधामसे बरातका स्वागत हुआ। जनकने अपने सम्बन्धीको अपनी आदर-अभ्यर्थनासे मोहित करना आरम्भ कर दिया। रास्तेके सब स्थानोंमें मखमलके पाँवडे बिछे हुए थे, उन्हींपर पैर रखती हुई सारी बरात आनन्द-पूर्व्वक उस भवनमें पहुँची, जो बरातियोंके ठहरनेके लिये बनाया गया था।

उस नव निर्मित भवनकी सुन्दर बनावट और मनोहर सजावट देख, सबको बडी प्रसन्नता हुई। उसके हर कमरेमें आराम और मन बहलानेके लिये यथेष्ट [illegible] वर्त्तमान थीं। यहाँ जैसी [illegible]

बरातियोंको हुई, उसे देख, वे अपने घरकी सुध भूल गये। वह रोशनी, वह सुन्दर गुदगुदे बिछौने, वह खाने-पीने, खेलने और दिल बहलानेवाले हजारों तरहके सामान देख, लोगोंने सोचा, कि शायद इन्द्रलोकमें भी इससे अधिक सुख नहीं होता होगा। ऐसा मालूम होता था, मानों सारी ऋद्धि-सिद्धियाँ अवधवासियों के स्वागतके लिये राजा जनकके जनवासेमें ही उतर आयी हैं।

पिताके शुभागमनका सवाद पा, राम और लक्ष्मण विश्वामित्रके साथ-साथ जनवासेमें आये। दशरथने विश्वामित्रको प्रणामकर महीनोंसे बिछुड़े हुए दोनों प्यारे पुत्रोंको बड़ी उमङ्गके साथ हृदयसे लगाया और प्रेम-पूर्व्वक उनके माथेपर हाथ फेरते हुए, कोटि-कोटि आशीर्व्वाद दिये।

पितासे मिलनेके अनन्तर दोनों भाई बरात-भरके आदमियोंसे मिले और अपने दर्शनोंसे सबको आनन्द दिया। सबसे मिल-मिलाकर दोनों जने, भरत और शत्रुघ्नके पासही, पिताके निकट आ बैठे। उस समय राजा अपने चारों पुत्रों सहित ऐसे शोभायमान हुए, मानों उनके पुण्यके प्रतापसे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष—ये चारों ही फल शरीर धारणकर उन्हें आ मिले हों। बरातके लोगोंका भली भाँति आदर सत्कारकर अगवानी करनेवाले लोग गुरु शतानन्दके साथ जनकके पास लौट आये।

बरात लग्नसे बहुत पहले आ गयी थी। अतएव, सब लोग आनन्दसे इधर-उधर घूमने फिरने, नगरकी अपूर्व्व शोभा देखने, तरह-तरहके आनन्द उत्सवोंकी बहार लूटने और सुखके समुद्रमें डुबकियाँ लगाने लगे। जनकपुरके लोग बरातियोंके सुभग...

रूप, सभ्य और सौजन्य पूर्ण व्यवहार, मीठे वचन तथा निर्दोष रहन सहनको देख, राजा दशरथकी भूरि भूरि प्रशंसा करने लगे।



देखते-देखते लग्नका दिन आ पहुँचा। उस दिन राजा जनकने गुरु शतानन्दको बुलाकर कहा,—"महाराज! अब क्या देर है? अब तो विवाहकी रीतियाँ होनी चाहियें।" गुरुने हामी भरी, साथ ही शङ्ख, मृदङ्ग, ढोल, नगाड़े आदि बाजे बड़े उच्च स्वरसे बजने लगे। गुरुने विप्रोंको कर्म्म-काण्ड प्रारम्भ करनेकी आज्ञा दे दी। यज्ञ-धूम्र और वेद-ध्वनिसे वायु-मण्डल व्याप्त हो गया। स्त्रियोंके कोमल और मधुर कण्ठसे निकले हुए मङ्गलके गीत कानोंमें अमृत निचोड़ने लगे।

इसके बाद गुरुने मङ्गल कलश सज्जित करवाये और मन्त्रियों-को बुलाकर उन्हें जनवासेसे बरातवालोंको मण्डपमें बुला लानेकी आज्ञा दी। उनके जनवासेमें पहुँचतेही नगाड़ेपर चोट पड़ी और तरह-तरहके बाजे बज उठे। मन्त्रियोंने राजा जनककी ओरसे नम्रभावसे निवेदन किया,—"महाराज! समय हो गया, लग्न आ पहुँचा है, अब आप लोग मण्डपमें पधारें।"

यह सुन, राजा दशरथ उनके साथही चलनेको तैयार हो गये चारों भाई, चार चञ्चल और सजे-सजाये घोड़ोंपर सवार हो, अपने नेत्रानन्द-दायक मनोहर रूपसे लोगोंके नेत्र शीतल करते हुए चले। सुन्दरतामें कामदेवको भी लजानेवाले रामके कमनीय रूपको देख, सब लोग मानों मन ही मन कह रहे थे —

देखि द्वैक नैननि ते नेक ना अघैये इन,
ऐसी झुकाझुक पै झपाक झाखियाँ दई।
कीजै कहा राम-श्याम-आनन विलोकिवेको,
विरचि विरंचि ना अनन्त अँखियाँ दई

उस समय मानों शिवके तीन, ब्रह्माके आठ और इन्द्रके सहस्र नेत्रोंपर उन्हें बडी भारी ईर्ष्या उत्पन्न हो रही थी। राम और भरतकी वह मरकत-मणिके समान श्याम और लक्ष्मण तथा शत्रुघ्नकी वह सुवर्णके समान गौर कान्ति देखकर, भला कौन मुग्ध नहीं होता!

बाजे-गाजेके शब्दसे बरातका आना जान, जनककी रानी सुहागिनोंको बुलाकर आरतीकी सामग्री सजाने लगीं। तरह-तरहके माङ्गलिक द्रव्य सोनेके थालोंमें लिये गजगामिनियाँ रानीको आगे किये, दूल्हेकी आरती उतारने चलीं। दोनों ओरके बाजे इस बार अधिक उमङ्गके साथ घोर गर्जन कर उठे। मारे कोलाहलके कान बहरे होने लगे।

रानीने बड़े प्रेमसे दूल्हेकी आरती उतारी। उस समय रामका सुन्दर रूप और मनोहर वेश देखकर उनके हृदयमें अवर्णनीय सुख हुआ। उन्होंने सीताके भाग्यको सौ-सौ बार सराहा और उनके नेत्रोंमें आनन्दके आँसू उमड आये। आरतीकी विधि पूरी हो चुकनेपर राम मण्डपमें आये। उस समय घण्टा शङ्ख, बाँसुरी, नगाडे, ढोल आदि तरह-तरहके बाजे फिर बडे जोरसे बज उठे। ब्राह्मणोंने वेद ध्वनिसे आकाशको गुँजाते हुए घरकी मङ्गल-कामना की। स्त्रियाँ अपने कोयल जैसे कण्ठसे

मङ्गलके मधुर गीत गा-गाकर हृदयका हर्ष प्रकट करने लगीं। मण्डपकी विचित्र रचना तथा निराली शोभा देख-देखकर बरातियोंने बड़ा सुख पाया और सब लोग जनकके वैभवकी बड़ाई करने लगे।



४

सबके मण्डपमें पधारनेपर राजा जनकने सबको यथा-योग्य आसनोंपर बैठाया और वरके पिता तथा अन्यान्य गुरु-जनोंकी पूजाकर आशीर्वाद ग्रहण किया। इसके बाद राजाने जामाताका विधिवत् आदर किया—अर्घ्य दिया और उनकी पूजा की। तदनन्तर कन्या दानका उपयुक्त काल आनेपर राजाने सीताको बुलवाया। सीताका वधू-वेशमें मनोहर, शृङ्गार किये चतुर और सुन्दरी सहेलियाँ उसे लिये हुए मण्डपमें आयीं। सहेलियोंके बीचमें उस समय सीता ऐसी ज्ञात होती थी, मानों सुन्दरता स्वयं रूप धारणकर सुन्दरियोंको अपनी शोभा दिखा रही है।

अबके दोनों ओरके पुरोहितोंने वेद-विधि और कुलाचारके अनुसार विवाहके सब कार्य्य कराये। तदनन्तर राजा जनकने रीतिके अनुसार रामके चरण धो, माथेमें रोरीका तिलक लगा, कन्या दान किया। जैसे हिमालयने पार्वती शिवको दी, समुद्रने लक्ष्मी नारायणको दी, वैसेही जनकने भी आज अपनी प्यारी पुत्री रामके हाथमें सौंप दी। चारों ओरसे वेदकी ऋचाओंकी ध्वनि उठने लगी, बाजे बजने लगे, वर-कन्या और उनके माता-पितापर अशीर्व्वादके अक्षत् पुष्प बरसने लगे।

रीतिके अनुसार भांवरे फेर,वर और वधू दोनों एक आसनपर बिठाये गये। उस समय अपने पुण्यरूपी वृक्षके इन सुन्दर फलोंको देख-देखकर जनक और दशरथ मारे आनन्दके अपनी देहकी सुध भूल गये!

इसके बाद राजा जनकने अपनी और तीन पुत्रियोंको भी साथ-ही-साथ रामके तीन छोटे भाइयोंके सङ्ग ब्याह देनेकी इच्छा प्रकट की। जनकने तो अपने मनमें पहलेसेही यह सङ्कल्प कर लिया था, परन्तु राजा दशरथको उनके इस विचारका कुछ भी पता नहीं था। इस प्रकार आनन्दमें और भी आनन्द मिलते देख, दशरथ हर्षसे विह्वल हो गये और उन्होंने बड़े प्रसन्न-चित्तसे इसपर अपनी सम्मति दे दी। फिर तो राजा जनकने अपनी उन तीनों लड़कियोंको भी बुलवाया और 'उर्मिला' लक्ष्मणको, 'माण्डवी' भरतको तथा 'श्रुतकीर्त्ति' शत्रुघ्नको ब्याह दी। उस समय इतना आनन्द-कोलाहल हुआ, कि पृथ्वीसे आकाशतक कम्पित हो उठा। राजाने यद्यपि यौतुकमें (दहेज़में) नाना प्रकारके रत्नालङ्कार, अनेक हाथी-घोड़े, दास-दासियाँ और गौएँ आदि दीं, तो भी राजा दशरथका उस ओर बिलकुल ध्यान नहीं था, वे तो अपने पुत्रोंके योग्य वधुएँ पाकरही कृतार्थ हो गये थे। उन्होंने प्रसन्न होकर, जिसने जो माँगा, उसे वही दिया और बड़े आनन्दसे पुत्र और पुत्र-वधुओंको लिये हुए जनवासेमें जानेकी तैयारी प्रारम्भ की। तब सब बरातियोंका यथा योग्य आदर-सत्कारकर जनकजीने राजा दशरथसे कहा —

"राजन्! आजसे मैं भी आपका सेवक हुआ। आपकी

बड़ाई मैं कहांतक करूँ ! आपने जो कृपाकर मेरे कुलसे सम्बन्ध किया, उससे मैं धन्य-धन्य हो गया। मैं आपको और क्या उपहार दूँ ? मेरे पास हैही क्या ? मुझमें आपको कुछ भी देनेकी सामर्थ्य नहीं है। तो भी मैंने आज जो ये चार दासियाँ आपकी सेवाके लिये दी हैं, इनको पुत्रीके समान जान, इनका उचित लालन पालन कीजियेगा। इनके द्वारा उभय-कुलोंकी मान मर्यादा बढ़ेगी, ऐसा मेरा विश्वास है, क्योंकि इन्होंने भली भाँति गृह-धर्मकी शिक्षा अपनी माता और अध्यापिकाओंसे पायी है और सास-ससुरकी सेवा करते हुए स्वामीकी छायाके समान अनुगामिनी और किङ्करी बनी रहनेका महत्त्व समझा है।"

राजा जनकके इन मीठे वचनोंसे सन्तुष्ट हो, प्रेम-पूर्वक गले-गले मिल, राजा दशरथ सब पुत्रों, वधुओं और बरातियोंके साथ जनवासेमें चले आये।



जनवासेमें आनेपर खाने पीनेकी ठहरी। राजा जनकने पहलेसे ही बरातके भोजनकी व्यवस्थाकर रखी थी। सबने बड़े प्रेमसे भोजन किया और राजा जनककी ओरसे जो लोग बरातको जिमानेके लिये आये थे, उनके आदर-पूर्ण वचन, विनयभरे भाव तथा उत्साह-सहित काम करनेकी रीति देख-सुनकर सब बरातियोंके केवल पेट ही नहीं, जी भी अच्छी तरह भर गये।

रात्रिके समय जब वर-वधूका प्रथम मिलन हुआ, तब फुल-वारीकी पहली देखा-देखीमें जो प्रीतिकी लता अङ्कुर रूपमें

थी,वह मानों एक साथही फल-फूलवाली हो गयी। सङ्कोच और लज्जाका पूरा-पूरा अधिकार होते हुए भी सीता रामके, उस लुभावने रूपको बार-बार देखने और मन-ही-मन परम सुख अनुभव करने लगी। करोड़ों कामको लज्जित करनेवाले शरीरकी वह श्याम-शोभा, वह ब्याहका वर-वेश, महावरसे युक्त वे चरण-युगल, वह पीतपट, वह पीले जनेऊ, वह चौड़ी छाती, वह उन्नत ललाट, वे कमलकीसी बड़ी-बड़ी आँखें, उनके ऊपर वे बाँकी भौंहें, वह सुएकीसी नासिका, अङ्ग-अङ्गके वे रत्न-जड़े आभूषण देख, सीताके नेत्र सुखी हो गये। उसने देवता रूपसे अपने स्वामीको अपने हृदय-मन्दिरमें जन्म-जन्मान्तरके लिये प्रतिष्ठित कर लिया।

इधर रामने भी सीताकी सर्वाङ्ग-सुन्दर शोभा देख, इतना सुख पाया, कि जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। उसका वह सुडौल शरीर, अङ्ग प्रत्यङ्गकी वह कमनीय कोमलता, वह सरल-सलज्ज व्यवहार—संक्षेपतः, वह देवीकीसी सर्वाङ्ग-सुन्दर मूर्त्ति उनके नयनोंमें बस गयी। जिस आदरके साथ रामने उस समय सीताको अपने हृदयमें स्थान दिया, वह जीवनके अन्ततक ज्योंका त्यों बना रहा। क्या सोते, क्या जागते, क्या स्वप्नमें, क्या सुखमें, क्या दुःखमें, क्या घरमें, क्या वन में, क्या पास, क्या दूर—रामकी आँखोंके आगे वह देवी-मूर्त्ति सदा विराजमान रही। बड़े, आनन्दके साथ प्रथम मिलनकी उस मङ्गलमयी रजनीका सुखमय प्रभात हुआ!

दूसरेही दिन राजा दशरथने राजा जनकसे बिदा माँगी।

जिसे सुन, वे बड़े उदास हो गये। उन्होंने कुछ दिन और ठहरने तथा आतिथ्य-ग्रहण करनेके लिये उनसे बड़ा आग्रह किया। लाचार दशरथको कई दिनोंतक और ठहरना पड़ा। जनक अपने आदर-आतिथ्यसे सब बरातियोंका मन मोहित करने लगे। अन्तमें वह दिन आही गया, जब कि जनकके घरसे जन्म-भरके लिये कन्याओंको विदा होना पड़ा! माताका हृदय कन्याओंके बिछोहको स्मरणकर दो टुकड़े हुआ जाता था, पर समाजका नियम, विधाताका विधान! बेटी सदा बापके घर नहीं रह सकती। वह तो परायी धरोहर—चार दिनकी अतिथि है। पति-गृहही उसका चिर-निवास है। इसीलिये लाख मोह माया होनेपर भी, वियोगजनित दु:खके वेगको दबाकर, माता-पिताने कन्याओंको प्रेमके साथ विदा किया। जाते समय माता कहने लगी,—"बेटियो! तुम स्वनाम-धन्य राजा निमिके कुलकी कन्याएँ हो और परम प्रतापी सूर्य्यवंशीय राजाके घर बहुएँ बनकर जाती हो। सदा इन दोनों वंशोंकी मानमर्यादाका ध्यान रखते हुए, अपनी रहन-सहन, आचार-व्यवहार और शील-स्वभावसे सबको प्रसन्न करना। पतिको इहलोकके ईश्वर, परलोकके परमेश्वर, स्वर्गापवर्गके दाता और अपना सर्व्वस्व समझना। आजसे तुम्हारे पिता राजा दशरथ और मातायें उनकी रानियाँ हुईं। उनकी परम श्रद्धा-भक्ति करना। उनकी सेवा करनेसे तुम्हारे लोक परलोक दोनों बनेंगे। पास पड़ोसियों-से हिल-मिलके बोलना, दास दासियोंको भी कभी कड़वे वचन न कहना। ऐसे अच्छे ढङ्गसे सबसे बरतना, कि तुम्हारे ऊपर

सभी अनुराग करने लग जायें। मैं आशीर्व्वाद करती हूँ, तुम्हारा सौभाग्य अचल हो, तुम पतिव्रताओंमें शिरोमणि बनो, केवल गृह लक्ष्मीही नहीं—पतिकी यथार्थ सहधर्मिणी होओ।"

यह कह, माताने बारी-बारीसे सब कन्याओंको गले लगाकर स्नेह और आशीर्व्वादके आंसू गिराते-गिराते विदा किया। जिस समय वे रोती हुई पालकियोंपर सवार हुईं, उस समय रानि पानी बिना मछलीकी भाँति छटपटाने लगीं—मानों दशरथ आज उनका सर्व्वस्व छीन लिया! यह त्याग, यह विसर्जन, या वियोग भी कैसा अद्भुत, कैसा सुख-दुःखमय, कैसा अमृत गरलमय और कैसा एक सङ्गही अच्छा और बुरा है!

जनकने इस बार और भी अनेक वस्तुएँ बेटियोंकी विदाईमें दीं। असंख्य हाथी-घोड़े, अपरिमित मणि-माणिक्य, अनगिनत काम-धेनु-स्वरूप गौएँ और संसार दुर्लभ वस्त्राभूषणोंको लाखों पेटियाँ भर-भरकर दहेजमें दी गयीं। इस प्रकार अलौकिक कन्या-रत्नों और अनमोल-धन रत्नोंको साथ लेकर राजा दशरथ, अपने संगी-साथियोंके साथ, अयोध्याको चले। जनकने, सबको अपना पूज्य समझ, प्रणाम किया औरकुछ दूरतक बरातके साथ-साथ गये। लौटते समय उनके नेत्रोंसे अश्रुकी धारा बह चली। उन्होंने घर आकर देखा, कि वह आँगन, जो चार-चार लक्ष्मी सरीखी बालिकाओंके क्रीड़ा-कौतुकसे सुशोभित रहा करता था, सूना पड़ा है! अभी-अभी कन्याओंके विवाहके उपलक्ष्यमें लाखों अतिथियोंके आमोद-प्रमोद, चहल-पहल और विवाह सम्बन्धी रीति-रस्मोंकी धूम धामसे जहाँ तिल धरनेको भी स्थान नहीं

मिलता था, उस आँगनकी सारी शोभा, सारी श्री, समस्त सुषमा लुप्त हो गयी है। माता, जल बिना मीन, मणि बिना फणी, और प्राण बिना देहकी भाँति श्री-हीन हो, पृथ्वीपर पड़ी हुई हैं। समाजके मङ्गलके लिये, ईश्वरीय नियमकी रक्षाके लिये, यह त्याग एक दिन सभी कन्याओंके माता-पिताको करना पडता है। अपने उज्ज्वल गुणोंसे, अनुपम पातिव्रतसे, मानवी होकर भी जो कन्या देवी पदके योग्य बन जाती है, उसीके माता-पिताका यह त्याग सफल होता है।

जनकका यह त्याग किस प्रकार सफल हुआ? उनकी कन्याने किस प्रकार उनकी, पति-कुलकी, अपनी, और स्त्री जातिकी मर्यादा बढ़ायी, वह इस उपाख्यानके अगले पृष्ठोंका पाठ करनेसे आपही ज्ञात हो जायेगा।

अस्तु, उधर जनकका घर सूना हुआ, इधर दशरथका घर हराभरा हुआ। अयोध्या भरमें आनन्दका समुद्र उमड पड़ा। वे समस्त नगर-निवासी, जो विवाहके समय जनकपुर न आ सके थे और जिनमें रोगी, वृद्ध, बाल और वनिताओंकीही संख्या अधिक थी, वर वधुओंको देखनेके लिये दौड पडे। स्थान-स्थानपर ध्वजा पताका और तोरण द्वार सजाये गये थे, उनकी शोभा निरखते, पथके दोनों पार्श्वमें खडी हुई असख्य नर नारियोंके कण्ठसे निकली हुई आशीर्वाद और जयजयकी ध्वनियाँ सुनते हुए सब लोग राजद्वारपर आये। रानियाँ बडे आनन्द-उल्लासके साथ मङ्गल गीत गाती हुई आरती उतार, वर-कन्याओंको महलोंके भीतर ले गयीं। पुत्र-वधुओंके चन्द्रमाके समान

दम्पतीने अपना विवाहित जीवन बड़े आनन्दसे बिताया। कहींसे भी कलह, विशृङ्खला और राग-द्वेषका नाम नहीं सुनाई देता था! जैसे रामचन्द्र मातृ-पितृ सेवा, गुरु भक्ति, प्रजा-रञ्जन और अपनी नव-विवाहिता पत्नीके मनोरञ्जनमें मन लगाते तथा उन्हें पूर्ण गृहलक्ष्मी बनानेके लिये निरन्तर गृह धर्मकी शिक्षादिया करते थे, उसी प्रकार सीतादेवीने भी पति-सेवा, सास-ससुर और बड़ी-बूढ़ियोंके सम्मान तथा सेवा शुश्रूषा करते हुए अपने अच्छे गुणोंसे सबका मन अपनी मुट्ठीमें कर लिया। सब यही कहते, कि यह रमणी रूपमें साक्षात् लक्ष्मी और गुणमें सरस्वतीके समान है। रूप और गुणका ऐसा सम्मिलन संसारमेंबहुत कम पाया जाता है।

रामचन्द्र, ऐसी सुशीला और सर्व-गुण आगरी पत्नी पाकर, मन ही मन अपनेको परम भाग्यवान् समझते थे। जिस समय उनकी माताएँ अपनी बड़ी बहूकी बड़ाई करने लगतीं, उस समय रामचन्द्रके हृदयमें हर्षकी अपार तरङ्गें उठने लगती थीं। वे जब सुनते और जिससे सुनते, सीताकी केवल प्रशंसाही सुननेमें आती! वे देखते—सीतादेवी उनको प्रसन्न रखनेके लिये, उनको सदा सुखी करनेके लिये, सौ-सौ तरहके यत्न किया करती हैं। उनकी एक-एक बात उनके लिये वेद-वाक्य है और उनकी आज्ञा उनके लिये देव-राजकी आज्ञासे भी बढ़कर है। वे जो शिक्षाएँ उन्हें देते, वे उनके हृदय-पटपर अमिट अक्षरोंमें सदैवके लिये लिख जाती हैं। युवराजकी पत्नी, भावी पटरानी होकर भी सीता अपने हाथों पतिके पूजनीय चरणोंको दबातीं और उनकी नाना भाँतिसे सेवा-टहल करती हैं। अनेकानेक दास-दासी और

पाचक-पाचिकाओंके रहते हुए भी वे अपने हाथों पतिके लिये भाँति भाँतिके भोजन बनातीं और बडे प्रेम-पूर्वक पङ्खा झलते हुए खिलाने बैठती हैं। सीताके इस व्यवहारसे रामको कितना आनन्द होता, सो कहा नहीं जा सकता।

इधर राज कार्यमें रामको बडा भाग लेना पडता था, क्योंकि पिताकी अवस्था दिन-दिन अधिक होती जाती थी, और बुढापेके कारण उनमें काम करनेकी वैसी सामर्थ्य न रह गयी थी। अत्यन्त अल्प अवस्थासेही रामने बडी निपुणता और नीतिज्ञताके साथ पिताके राज्य सम्बन्धी कामोंमें हाथ बँटाया और अपने अलौकिक न्याय, गम्भीर नीतिमत्ता और अनुपम प्रजा-रञ्जकतासे सारी प्रजाका मन मुग्ध कर लिया। राज-कार्य समाप्त कर जब वे अपने महलोंमें आते, तब उनके मुँहसे प्रतिदिनकी कार्य्यावली सुन, सीता बडी प्रसन्न होतीं और ऐसा देव-तुल्य स्वामी पानेके लिये विधाताको बार-बार धन्यवाद देती थीं। साथही रामचन्द्र सदा सर्वदा उनके साथ शुद्ध, सरस और सरल व्यवहार कर आदर्श पति होनेका जो परिचय देते, उससे भी उनके हृदयमें प्रेमका सागर उमड आता था। इन बारह वर्षों के निरन्तर ऐसे प्रेममय व्यवहारके कारण, दोनों पति-पत्नीका प्रेम दिन दिन बढता गया और वे सचमुच "एक प्राण दो देह" हो गये।



इसी समय एक दिन राज-सभामें बैठे हुए महाराज दशरथने अपने गुरु वसिष्ठजीसे कहा,—"गुरुवर! अब मैं बहुत ..."

गया, राज्यका यह गुरुतर भार अब मुझसे नहीं सम्हाला जाता, इसलिये मेरी बड़ी इच्छा हो रही है, कि अपने सामने रामको राजगद्दी दे, आप वानप्रस्थका अवलम्बन करूँ ; क्योंकि वे बहुत दिनोंसे राज-काज देखने लगे हैं और सारी प्रजा उनसे प्रसन्न भी है। इस जीवनमें मेरी जितनी भी अभिलाष-आकांक्षाएँ थीं, सब आपके चरणोंकी दयासे पूरी हुईं, अब यही एक शेष रह गयी है। इसे भी पूरा कर लूँ तो निश्चिन्त होकर मरूँगा, नहीं तो पछतावाही रह जायेगा। कारण, इस नश्वर शरीरका क्या ठिकाना ? अभी है, अभी नहीं है।"

यह सुन, मुनिवर वसिष्ठने कहा,—"राजन्! आपका यह विचार अति उत्तम है। रामचन्द्र सब तरहसे योग्य हैं। वे नीतिमें पूरे दक्ष हैं और प्रजाका शासन तथा रञ्जन दोनोंही भली भाँति कर सकते हैं। आप इसके लिये एक दिन दरबार कीजिये और प्रजाके सब मुखियोंको बुला, उनकी सम्मति तथा मन्त्रियोंके परामर्शसे, सब कार्योंकी ठीक ठीक व्यवस्था कर दीजिये। आपके इस नवीन प्रबन्धके विषयमें लोक-मत क्या है—यह जानना अत्यन्त आवश्यक है।"

मुनिकी आज्ञा शिरोधार्य्य कर राजाने अपनी इस इच्छाका सर्वत्र प्रचार करा दिया और एक नियत तिथिको सब लोगोंको दरबारमें आकर अपना मत प्रकट करनेके लिये निमन्त्रित किया।

आज संसारमें प्रजातन्त्र शासन-प्रणालीकी * सर्वत्र धूम है और प्राय सभी देशोंमें अब इसी तरहका शासन प्रचलित भी हो

* प्रजाके इच्छानुसार राज्य शासन करनेकी रीति।

गया है, किन्तु भारतके लिये यह नीति कुछ लोग असम्भव बतलाते हैं और कहते हैं, कि यहाँ न तो कभी प्रजातन्त्र-शासन रहा और न यह रीति यहाँवालोंको कभी पसन्द ही आ सकती है, क्योंकि भारतवासी सदासे "राजा करे सो न्याव"—वाली नीति-कोही मानते आये हैं। ऐसे लोगोंको लाखों वर्ष पहलेके भारतमें महाराज दशरथके इस दरबारकी बातपर ध्यान देना चाहिये। वे अपने सर्व-गुण सम्पन्न पुत्रको भी तबतक राजगद्दीपर बैठानेके लिये तैयार नहीं थे, जबतक सारी प्रजा उनके कार्यका अनुमोदन न करले। वास्तवमें प्राचीन भारतके राजागण केवल प्रजा-पालक और शासकही नहीं थे,वरन् प्रजा-रञ्जक भी थे। तभी तो आजतक उनका नाम वैसोही प्रतिष्ठाके साथ लिया जाता है और उनका नाम लेनेसे आत्मा पवित्र होती है, मन सुखी होता है, तथा हृदयमें आदर और श्रद्धाके भाव लहराने लगते हैं।

अस्तु, नियत तिथिको बड़े ठाटबाटसे दरबार लगा। प्रजा-पक्षके बड़े-बड़े नेताओंसे लेकर छोटे-छोटे गाँवोंके मुखियेतक दरबारमें आये और यथायोग्य आसनोंपर बैठे। मन्त्रियों और सामन्त-सरदारोंके आनेके बाद महाराज भी अपने दो पुत्रों, राम और लक्ष्मणको साथ लिये हुए आ विराजे, क्योंकि भरत और शत्रुघ्न इन दिनों अपने ननिहाल गये हुए थे। तदनन्तर राजाने सबके सामने अपना विचार प्रकट करते हुए कहा,—"यदि राम योग्य न हों—उनमें यदि आपको कोई दूषण दिखाई देता हो, तो आपलोग निस्सङ्कोच दूसरे किसी योग्य व्यक्तिका नाम लें—मैं यह राज्य भार उसे ही दे डालूँगा।"

परन्तु सबने, एक स्वरसे रामचन्द्रका जयजयकार करते हुए कहा,—"महाराज! रामचन्द्र सब तरहसे योग्य हैं। उनके गुणोंका वर्णन कहाँतक किया जाये? बालकसे लेकर बूढ़ेतक, सब उनकी प्रशंसा करते हैं। आप अवश्य उन्हींको राज्यका भार सौंप दीजिये। हमलोगोंको पूर्ण विश्वास है, कि वे आपकीही तरह न्याय-सहित प्रजाका पालन करेंगे।"

सबको इस प्रकार एक मुँहसे रामकी प्रशंसा करते देख, राजा दशरथ बड़ेही प्रसन्न हुए और उन्होंने आनन्दमें मग्न होकर कहा,—"प्यारे प्रजावर्ग और उपस्थित सज्जनवृन्द! आप लोगोंने जो रामचन्द्रकोही युवराज बनानेकी सम्मति प्रदान की है, उससे मैं कितना पुलकित हुआ हूँ, सो कह नहीं सकता। राम मेरे प्राणोंके प्राण हैं, उनके गुणोंपर मैं स्वयं मुग्ध हूँ, परन्तु यदि आप लोग मेरे इतने प्यारे रामको भी गद्दीपर बैठाना न चाहते, तो मैं कदापि आपकी सम्मतिके विरुद्ध कार्य न करता। आपका और मेरा मत एक हो गया, यह देख, मैं बड़ाही सुखी हुआ। अब मैं कलही उनका अभिषेक कर डालूँगा, आप लोग प्रसन्न चित्तसे इसके लिये आनन्दोत्सवकी व्यवस्था कीजिये।"

यह सुनकर सब लोग बड़े आनन्दित चित्तसे अपने-अपने घर गये और थोड़ीही देरमें घर-घर कदली स्तम्भ, मङ्गल-कलश स्वर्ण-दीप और बन्दनवारें दिखाई देने लगीं। बात-की बातमें अयोध्याकी वह न्यारी शोभा हो गयी, जिसे देख इन्द्रपुरी भी लज्जित होने लगी। गुरुने रामचन्द्रको रातभर व्रतोपवास और देवाराधनमें बितानेका उपदेश दिया। तदनुसार राम और सीता दोनोंहीने

रात्रि जागरण करनेका सङ्कल्प किया। कल भोर होतेही जो कठिन राज्य-भार—लक्ष लक्ष प्रजाओंके रक्षण, पालन और शासनका उत्तरदायित्व—उनको सौंपा जायेगा, उसे ग्रहण करनेके पहले मनके साथ शरीरकी शुद्धि करना भी अत्यन्त आवश्यक है, यही समझकर उन्होंने देवार्चन और साथ-ही व्रतोपवासमेंही समय बिताना अच्छा समझा।

इधर माता, पिता, भाई, पत्नी, प्रजा—सबके मनमें आनन्द और उत्साहकी लहरें उठ रही थीं, उधर कुटिल विधाता इस सारे आनन्दको देख-देखकर घृणाकी हँसी हँस रहा था। एकाएक रसमें विष मिला—विधाताकी कुटिलता काम कर गयी और सारे आनन्द, सारे उत्सव और समस्त उत्साहपर पाला पड़नेका सूत्रपात हो गया! सबको आनन्दमें पड़े हुए कल्पनाके लड्डू खाने दीजिये, आइये पाठको और पाठिकाओ! हमलोग उस स्थानपर चलें, जहाँसे वह भयानक ज्वालामुखी पर्वत-फूटनेवाला है, जो कल भोर होते-होते सारे रङ्गमें भङ्ग डाल देगा।



हम पहले ही कह चुके हैं, कि राजा दशरथके तीन रानियाँ थीं—कौसल्या, कैकेयी और सुमित्रा। मँझली रानी कैकेयीके पित्रालयसे एक दासी उनके साथ दहेजमें आयी थी। उस दासीपर उनका बड़ा अनुराग था, कारण, उसने लड़कपनसेही उन्हें पाल पोसकर बड़ा किया था। वह दासी बूढ़ी और कुबड़ी थी—उसका कुत्सित रूप देखकरही सबको उसपर अकारण घृणा

होती थी, परन्तु जैसाही उसको भयावना रूप मिला था, वैसा-ही उसका कुटिल हृदय भी था। उसने कैकेयीको तरह-तरहसे सिखा-पढ़ाकर ऐसा पक्का कर दिया था, कि उन्होंने राजाको अपनी मुट्ठीमें कर लिया था। राजा अपनी अन्य रानियोंकी अपेक्षा कैकेयीकोही अधिक मानते और सच पूछिये तो, उनसे डरते भी थे। मन्थराके मन्त्रकी इसी शक्तिको देखकर रानी प्रत्येक विषयमें उसका परामर्श लेतीं और वह जैसा कहती, वैसाही करती थीं।

इस कपटी, कुटिल, अपयशकी पिटारी मन्थराने जब रामचन्द्रके अभिषेकका संवाद सुना और अयोध्याभरमें आनन्द उत्सवोंका समुद्र उमड़ते देखा, तब तो मारे ईर्ष्याके वह जल भुनकर राख हो गयी, क्योंकि दुष्टोंका तो यह स्वभावही है, कि वे बिना प्रयोजनके भी दूसरेको बुराई देखकर प्रसन्न और भलाई देख, दुःखी होते हैं। उसने मन-ही-मन सोचा,—"यदि रामचन्द्रको गद्दी मिलेगी, तो कौसल्या-रानीका एकाधिपत्य हो जायेगा फिर कैकेयीको कौन पूछेगा? फिर तो भरत दासकी तरह रामकी सेवा करते फिरेंगे।" इन्हीं बातोंको सोचती विचारती और मन-ही-मन करोड़ों कुटिल कल्पनाएँ करती हुई वह रानी कैकेयीके पास आयी।

उस समयतक कैकेयीको रामचन्द्रके अभिषेककी बात ज्ञात नहीं थी। मन्थराने आतेही कहा,—"पड़ी-पड़ी क्या सोच रही हो, कुछ वसन्तकी भी खबर है? रामको कल राजगद्दी मिलेगी! सारी अयोध्या आनन्द-उत्सवसे भर उठी है! तुम्हें अभीतक कुछ मालूमही नहीं?"

यह सुन, कैकेयीने मारे प्रसन्नताके गद्गद होकर कहा,—"मन्थरा ? तेरे मुँहमें घी-शक्कर पड़े, क्या यह सत्य है ? क्या सचमुच कल रामका राज्याभिषेक होगा ? ले, यह शुभ-समाचार सुनानेके लिये, मैं तुझे अपने गहने उतारकर इनाममें देती हूँ ।" यह कह, रानीने अपने समस्त आभूषण उतार कर मन्थराके आगे डाल दिये और कहा,—"इन्हें उठा ले, पीछे और भी पुरस्कार दूँगी ।"

रानीके गहनोंको बड़े जोरसे एक कोनेमें फेंककर कुटिला दासी बोली,—"तुम सदा भोलीही रहोगी ! मैं तो बूढ़ी हुई मेरा कहा अब काहेको मानोगी ? देखतीं नहीं, कि यह तुम्हारे सर्वनाशकीही तैयारी हो रही है ? तुम तो इस समाचारसे इतना सुख मानती हो, पर जरा उनकी कुटिलताको तो देखो ! उन्होंने तुमसे छिपाकर अभिषेकका सारा प्रबन्ध कर लिया ! कौसल्याके पेटमें बड़ी बड़ी आँतें हैं, रानी ! तुम क्या समझोगी ? तुम तो गायकी तरह सीधी, दूधकी सँवारी हो—इतना छल कपट तुम्हें कहाँसे आने लगा ? तुम्हारा बेटा भरत यहाँ नहीं है, ऐसे समयमें रामचन्द्रको गद्दीपर बैठानेका क्या मतलब ? तुमसे यह समाचार गुप्त रखनेका क्या तात्पर्य्य ? यह सब चाल है, रानी ! सरासर चाल है !"

पहले तो रानीने मन्थराको इस कपट-मन्त्रणापर बहुत कोसा-दुत्कारा और रामके अभिषेकको अपने सुख-सौभाग्यका कारण बताया, परन्तु मन्थराके बार-बार विष उगलनेसे उनके मनमें सौतियाडाह उत्पन्न हो ही गया और उन्हें यह बात भली-

जँच गयी, कि सौतके बेटेको गद्दी मिलनेसे उनका कल्याण नहीं है। फिर तो वे मन्थराके गले लग गयीं और बार-बार पूछने लगी,—"मन्थरा! तेरीसी हितकारिणी मेरी और कोई नहीं है। कोई ऐसा उपाय सोच, जिससे रामको राज्य न मिलकर मेरे पुत्र, भारतको मिले।"

कैकेयीको इस प्रकार अपने मतपर आयी देख, मन्थरा बोली, "रानी! उपाय क्या पूछती हो? उपाय तो तुम्हारे हाथमें है। क्या तुम्हें उस युद्धकी बात याद नहीं है, जब शम्बरके साथ लड़ाई करते हुए राजा बहुत घायल हो गये थे? उस समय एकमात्र तुमने ही उनकी सेवा-टहल की थी और तुम्हारे यत्नसे आरोग्य लाभ कर राजाने तुम्हें दो वर देनेका वचन दिया था। तुमने उस समय कहा था, 'और कभी माँग लूँगी।' फिर इसी समय वे दोनों वर क्यों न माँग लो? राजाको उस प्रतिज्ञाकी याद दिलाते हुए तुम पहला वर तो यह माँगो, कि राम चौदह वर्षतक तापस-वेशसे वनवास करें और दूसरा यह, कि भरतको राजगद्दी दी जाये। रामको चौदह वर्षतक राज्यसे दूर रखनेमें बड़ा काम निकलेगा। इतने अवसरमें भरत अपनी बुद्धिमानीसे सब सैन्य-सामन्तों और प्रजाजनोंको अपने वशमें कर लेंगे।" यह सुनते ही कैकेयी प्रसन्न हो गयीं और मन्थराके परामर्शके अनुसार कोप-भवनमें जा, गहने-कपड़े फेंक, मैली साड़ी पहन कुत्सित वेश बनाकर ज़मीनपर पड़ रहीं।

नगरमें वैसाही आनन्द-आमोद चलता रहा। वही चहल-पहल, वही शोभा-सौन्दर्य, वही घर-घरमें रामके गुणोंका कीर्त्तन,

—जहाँ देखो, वहीं अभिषेककीही चर्चा ! परन्तु यह किसीने भी न जाना, कि क्षुद्र मानवके मनोरथोंकी निस्सारता, उसके सारे सुख सौभाग्यकी क्षणभङ्गुरता दिखलानेके लिये ईश्वरीय चक्र चल गया है और वह कुछही देरमें सबपर पाला डाल देगा ! सच है, मनुष्य नहीं जानता, कि विधाताकी तनिकसी क्रूर-दृष्टि उसकी गगन स्पर्शी अभिलाषाओंको पलक मारते मिट्टीमें मिला देती है। परन्तु वह जानकर भी नहीं जानता, समझकर भी नहीं समझता। अबोध मनुष्यका मनही जो ठहरा ! नहीं तो आनन्दके अवसरपर वह हँसता और शोक दुःख आ पड़नेपर रोता क्यों ? जिसे हर्ष-विषाद नहीं व्यापते, वही तो देवता है—इसीसे तो हम जिसे इनके प्रभावसे परे पाते हैं, उसे परमेश्वरका अवतार मानते हैं।



सभामें रामचन्द्रके राज्याभिषेकके विषयमें सबकी सम्मति स्थिर होतेही महाराज दशरथने शुभ कार्य्यमें विलम्ब करना अच्छा न समझ, उसी समय सारे प्रबन्ध करनेके लिये मन्त्रियोंको आज्ञा देदी, प्रजाने भी अपने-अपने घर जाकर उत्सवकी तैयारियाँ करनी आरम्भ कर दीं और यह निश्चय होगया, कि कलही यह मङ्गलमय कार्य्य हो जायेगा। इधर धड़ल्लेसे तैयारी होने लगी, उधर रनिवासमें किसीको सवाद मिला, किसीको नहीं भी इन प्रबन्धोंमें व्यस्त होनेके कारण अन्तःपुरमें उ ठीक समयपर न सुना सके। कैकेयीके मनमें म बैठ जानेका यह भी एक प्रधान कारण हो गया। उ

समुद्रकी परम शान्ति अथवा सर्वनाशके पहले मङ्गल मूर्त्तिका आविर्भाव! जैसे मृगको मारनेके लिये व्याध सुरीले स्वरसे गीत गाता है, उसी प्रकार कैकेयीने, राजाके हृदयपर वज्र गिरानेके पहले अपना स्वर कोमल और भाव मनोहर बना लिया। सर्व नाशकी इस मधुर मूर्त्तिको देखकर राजा भूल गये, इसीलिये इतनी बड़ी प्रतिज्ञाके बन्धनमें फँस गये।

चतुर व्याधा जैसे निशाना ताककर तीर मारता है, उसी तरह कैकेयीने भी राजाको वचन-जालमें पूरी तरह जकड़े देख, अपने सुतीव्र वचन बाण छोड़े। वे बोली,—"देखिये, आपने वरदानकी प्रतिज्ञा की है, कहकर पीछे मुकर न जाइयेगा। मेरा पहला वर तो यह है, कि कल जो रामचन्द्रके राज्याभिषेककी तैयारी हो रही है, उसे रोक, भरतके राज-तिलककी व्यवस्था कीजिये और दूसरा यह, कि रामको चौदह वर्षके लिये तपस्वी वेशमें वनको भेज दीजिये। यदि आपको अपने वचनोंका कुछ भी विचार हो तो मेरी यह प्रार्थना स्वीकृत कीजिये, नहीं तो मैं बिना खाये पिये प्राण त्याग दूँगी।"

जैसे बिजली गिरनेसे ताल वृक्ष टूटकर पृथ्वीपर गिर पड़ता है, वैसेही कैकेयीके ये वज्र-वचन सुनतेही राजा धड़ामसे धरतीपर गिर पड़े, उनकी चेतना लुप्त हो गयी, किन्तु कैकेयीका कठिन हृदय तनिक भी न पिघला। जब राजाको कुछ चेतनता हुई, तब वे रो-रोकर कहने लगे,—"हाय! आज मैं स्त्रीके धोखेमें पड़कर बेतरह ठगा गया। कैकेयी! तुमपर विश्वास करनेका क्या मुझे यही फल मिलना चाहिये था? मेरे फूलते-फलते हुए हरे-भरे-

वृक्षको आज क्यों इस प्रकार समूल उखाड फेंकनेको तैयार हो गयीं? रामने तुम्हारा क्या बिगाडा, जो तुम इस प्रकार उनके सर्वनाशके लिये उतारू हो गयी हो? अभी कलतक तो तुम्हारा उनपर बडा प्यार था, आज एकही दिनमें वह प्रेम वात्सल्य कहाँ चला गया? कैकेयी! आज तुमने मुझे बडे कुठौर मारा!"

यह कह, राजा अबोध बच्चेकी नाईं रोने लगे। उन्होंने कैकेयीका हाथ पकडा, ठोडी पकडी, यहाँतक, कि पैर भी पकडे पर, वे काहेको मानने लगीं? अपनी बातपर अडी रहीं। ऊपरसे कटेपर नोन छिडकती हुई कहने लगीं,—"जब इतनी ममता थी, तब क्यों वचनपर दृढ रहनेकी डींग मारते थे? क्यों सत्य-सत्य चिल्ला रहे थे? कह दीजिये न, कि वर नहीं देते, बस, छुट्टी हो गयी। कोई आपसे बलपूर्व्वक तो ले नहीं लेगा? बात कहकर पूरी करनेवाले तो वे शिवि दधीचि और हरिश्चन्द्र ही थे, जिन्होंने प्राण दे दिये, पर बात न जाने दी। सारा ससार उनके समान थोडेही हो सकता है?'

कुबुद्धि-रूपी सानपर चढ़ी हुई कैकेयीकी इस वचन-रूपी तलवारने राजाके हृदयको दो-टुकडे कर डाला। उन्होंने पागल-की तरह व्याकुल भावसे कहना आरम्भ किया,—"प्यारी कैकेयी! राम और भरत मेरे लिये समान हैं। आदमीको अपनी आँखें दोनोंही प्यारी होती हैं—एकका रहना और दूसरीका फूटना उसे कब सुहायेगा? वैसेही वे दोनों भाई मेरी दोनों आँखें हैं। तुम कहती हो, तो बड-छोटेका विचार त्यागकर मैं भरतकोही राज्य दे डालूँगा पर तुम रामके वन-वासवाले वरके स्थानमें और

माँग लो। रामको राज्यका लोभ नहीं है, भरतपर उनकी प्रीति भी सबसे अधिक है, अतएव उन्हें अपने छोटे भाईके गद्दीपर बैठनेसे प्रसन्नताही होगी, अप्रसन्नता नहीं। पर वे मेरे नेत्रोंके सामने रहें ,बस, मैं यही चाहता हूँ। तुम उन्हें साधारण प्रजाकी भाँति अयोध्यामें ही, रहने दो।"

पर कैकेयी पक्के गुरुकी पढ़ायी हुई थीं। मन्थराकी कुटिल मन्त्रणासे तनिक भी इधर-उधर होना उन्हें कब स्वीकार होता वे बार-बार राजाको अपने विष-बुझे बाणकेसे वचनों द्वारा व्यथित करने लगीं। जब सब तरहके उपाय करके राजा हार गये तब "हा राम! हा राम!" कह, मूर्च्छित हो गये।

जब-जब राजाकी मूर्च्छा टूटती, तब-तब वे आशाकी निर्बल डोरी पकड़कर उठनेकी चेष्टा करते—कैकेयीसे लाख-लाख तरह से निहोरे करते, पर जब आशाका वह क्षीण तन्तु बात-की-बातमें टूट जाता, तब वे फिर मूर्च्छित हो जाते। इसी तरह सारी रात बीत गयी।



राजा प्रति दिन बड़े तड़के कुछ रात रहतेही उठ, प्रात कृत्य समाप्तकर सूर्य्योदयके पहलेही सुमन्त्रको बुलाकर दिनभरका कार्यक्रम ठीक कर लेते थे। आज ऐसा आवश्यक और महत्वपूर्ण अवसर होनेपर भी राजा अभीतक सोकर नहीं उठे,यह सुन,सुमन्त्र कुछ चिन्तित हुए—उन्होंने अन्त पुरके द्वारपर आकर राजाको सम्मान जनाते हुए पुछवाया, कि "अभीतक महाराजकी

निद्रा क्यों नहीं टूटती ? कहीं उनके शरीरमें कोई व्याधि तो नहीं हुई ? महारानीका स्वास्थ्य तो ठीक है न ?" इसपर कैकेयीने कहला भेजा,—"महाराज रात-भर रामके राज-तिलककी बात सोचते विचारते हुए जगते रहे, भोरको उन्हें थोड़ी नींद आगयी है, इसीलिये अबतक नहीं उठ सके। तुम अभी जाकर रामचन्द्रको यहाँ भेज दो।"

सुमन्त्रने वहाँसे चलकर रामके पास यह सवाद भेज दिया। सूचना पातेही, राम अपने पिताके पास चले आये और वहाँका हाल देख, दुःख और आश्चर्यके साथ मातासे राजाकी मूर्च्छाका कारण पूछने लगे।

कैकेयीने कहा,—"राम ! तुम्हारे पिताने मुझे दो वर देने कहे थे, वेही मैंने आज इनसे माँगे हैं, परन्तु तुम्हारी सहायताके बिना ये अपना वचन पूरा करनेमें असमर्थ हैं। यदि तुम चाहो, तो इनका यह कठिन क्लेश अभी दूर हो जा सकता है"।

यह सुन, रामचन्द्रने कहा,—"माता ! शीघ्र कहो, वह कौनसी बात है, जिसे पिताजी मेरी सहायता बिना नहीं कर सकते ? तुम्हारे मुँहसे वचन निकलते न-निकलते मैं उसे पूरा कर डालूँगा। माता ! पिताकी आज्ञापर मैं कठिन-से-कठिन काम करनेका सदा, सर्वदा, प्रस्तुत रहता हूँ। वे यदि कहें तो मैं अभी हलाहलका कटोरा हँसते हँसते पी जाऊँ, अगाध समुद्रमें कूद पड़ूँ, सिंहकी माँदमें चला जाऊँ। मैं पिताके सत्यकी रक्षाके लिये सब कुछ कर सकता हूँ। माता ! विलम्ब न करो। उनकी जो कुछ इच्छा हो, शीघ्र कह सुनाओ।"

यह सुन, कैकेयीने कठोर हृदयसे सब बातें कह सुनायीं। सुनतेही रामने कहा,—"माँ! यह भला कौनसी बडी बात है! भाई भरत राज्य पायें, इसमें मुझे दु:ख काहेका है, जो पिताजी इतने व्याकुल होते हैं? स्वयं राजा होनेसे मैं केवल अयोध्या नरेशही कहलाता, परन्तु भरतके राज सिंहासनपर बैठनेसे तो मैं, अयोध्या नरेशका बडा भाई कहलाऊँगा। यह तो मेरी गौरव-वृद्धिकीही बात है? इसके लिये सोच कैसा? रही बन वासकी बात! सो ऋषि मुनियोंके निरन्तर सहवासको तो मैं स्वर्गसे भी बढ़कर समझता हूँ। इतने दिनोंतक मुझे उनके सत्सङ्गका लाभ उठानेका अवसर प्राप्त होगा, इससे मेरी आत्मा कितनी सुखी होगी, सो क्या बतलाऊँ? इतनीसी बातके लिये पिताजी क्यों इतने दुःखी हो रहे हैं? वे मुँहसे बोलते क्यों नहीं? अच्छा, तुम्हारी बातको भी मैं उनकी बातसे कम नहीं समझता। लो, मैं अभी माता कौसल्या और सुमित्राको प्रणामकर तथा सीताको समझा-बुझाकर वनके लिये प्रस्थान करता हूँ।"

यह कह, रामचन्द्र वहाँसे बाहर चले आये। राजा दशरथ अधखुले नेत्रोंसे रामचन्द्रका वह चन्द्र-वदन देख और उदार वचन सुन रहे थे, पर मारे दु:खके वे ऐसे विह्वल और अर्द्धमृत हो रहे थे, कि उनके मुँहसे एक बात भी नही निकली। रामचन्द्रके बाहर जातेही उन्होंने नेत्र बन्द कर लिये। फिर उन नेत्रोंने नयनाभिराम रामका कोटिकाम-ललाम रूप नहीं देखा! उनके प्राण उसी दरिद्रकी भाँति छटपटाने लगे, जिसकी जन्म-भरकी कमाई क्षण भरमें लुट गयी हो। जिस बूढेके सहारेकी

लकड़ी कोई दुष्टात्मा छीन ले जाये, महाराजकी विकलताका अनुभव कुछ उसीका दु:खी हृदय कर सकता है। पुत्र-वत्सल राजाके नेत्रोंसे सौ सौ धार छोड़कर आँसू गिरने लगे। उन्होंने रोते-रोते सारी पृथ्वी भिंगो दी।

कैकेयीके भवनसे बाहर आनेपर किसीने रामचन्द्रके मुखड़ेपर विषादकी एक पतली रेखा भी खिंची हुई नहीं पायी, किसीने नहीं जाना, कि अभी कैसा वज्रपात हो गया है। भला, जिस मुखमण्डलपर कल राज-तिलककी बात सुनकर प्रसन्नताकी झलक भी न दिखाई दी, उसपर वन-वासकी बात सुन, चिन्ताकी छाया क्यों पड़ने लगी?

अपने हृदयकी इसी महत्ताके कारण, राम! तुम मर्यादा पुरुषोत्तम, और परमेश्वरके अवतार माने जाते हो।



सीता-रामकी वन-यात्रा



वहाँसे चलकर रामचन्द्र अपनी माता कौसल्याके पास पहुँचे। वे उस समय देव पूजा कर रही थीं। पुत्रको आते देख, वे उठ खडी हुईं और उन्हें बडे प्रेमसे पास बैठा, आशीर्वाद करती हुई कुशल पूछने लगीं। रामचन्द्रने क्षणभर सोचकर सारा हाल कह सुनाया। सिंहका गर्जन सुनकर डरी हुई हरिणीकी भाँति कौसल्या यह वज्र समान वाणी सुनतेही जडसे उखडी हुई लताकी भाँति पृथ्वीपर गिर पडी। रामने उन्हें बहुतेरा समझाया और वन जानेकी आज्ञा माँगी। कौसल्या बड़े उच्चस्वरसे रोदन करने लगीं! उनका वह हृदय-विदारक रोना सुन, दास-दासियों-की भारी भीड इकट्ठी हो गयी और सब समाचार सुन, लोग कैकेयीको भली बुरी कहने लगे। कौसल्याने कहा,—"पुत्र! जब तुमने पितृ-वचन पालन करनेका पूरा सङ्कल्प करही लिया है, तब चलो, मैं भी तुम्हारे साथ चलूँ। मैं एक क्षण भी तुम्हें नयनोंकी ओट न कर सकूँगी। मेरे लाल! कहीं गाय अपने बछडेको छोडकर रह सकती है?"

यह सुन, रामचन्द्र बोले,—"माता! तुम सती शिरोमणि और नीति-कुशला होकर भी ऐसी विकल क्यों होती हो? तुम्हारे आशीर्व्वादसे चौदह वर्ष सुख-पूर्वक बिताकर मैं फिर तुमसे आ मिलूँगा। तुम्हारा यहाँ रहना बहुतही आवश्यक है, क्योंकि पिताजीकी इस समय बड़ी क्षीण अवस्था है। उनकी सेवा करना तुम्हारा सबसे पहला धर्म है। जब कभी वे मेरी याद कर दुःखी हुआ करें, तब तुम्ही उन्हें धीरज धराना और मेरे लिये आशीर्व्वाद करती रहना।"

इसी तरह वे माताको समझा-बुझा रहे थे, कि इसी समय कहींसे यह दुःसंवाद सुन, व्याकुल हो, सीता वहाँ आ पहुँची। वे अभी सासके चरणोंमें सिर नवाकर बैठीही थीं, कि उन्हें देख, कौसल्याके नेत्रोंसे चौधारे आँसू गिरने लगे। वे झट समझ गयीं, कि सीताका यहाँ आना किस निमित्त हुआ है! वे अच्छी तरह जानती थीं, कि यह पतिव्रता, आदर्श सती और स्नेहकी प्रतिमा कभी अपने प्राण-प्यारेसे पृथक नहीं रह सकती। यही सोच और सीताका यह सुकुमार शरीर देख, उनके दुःखरूपी नदीका बाँध टूट गया! यह देख, सीताके नेत्रोंसे भी श्रावणकी जल धाराकी भाँति अश्रु-धारा प्रवाहित होने लगी और दोनों स्नेहकी नदियोंके सङ्गममें रामचन्द्रका सरल हृदय डूब गया; परन्तु वे अपनी मर्यादापर स्थिर रहे। उन्होंने कहा :—

"प्रिये! तुम्हें ज्ञात है कि पिताकी आज्ञासे मैं आजही वनको जाता हूँ। पिताकी आज्ञा है,इसलिये उसका पालन तो करनाही होगा! तुम मेरी [illegible] हो—मेरे धर्मकी रक्षा करना

कर्त्तव्य है! तुम यहीं रहकर मेरे माता पिताकी सेवा करना, जिसमें वे कभी मेरा अभाव अनुभव न करें और जब कभी वे मेरा स्मरणकर दुःखित हों, तब प्राचीन ग्रन्थोंसे महात्माओं और महीयसी महिलाओंके पुण्य-चरित सुनाकर उन्हें धीरज देना। मेरे पीछे मेरे भाइयोंसे सदा स्नेहका व्यवहार करना, उन्हें कभी कड़ी बात न कहना और सदा सब तरहसे प्रसन्न रखना। समझी? पिताका वचन पूराकर मैं फिर तुमसे आ मिलूँगा।"

रामको इस प्रकार अपने मनके अनुकूल बातें करते देख, कौसल्याने कहा,—"हे पुत्र! यदि सीता घरमें रहेगी, तो तुम्हारे वियोगका दुःख मैं किसी न-किसी तरह पत्थरकीसी छाती बनाकर सहन कर लूँगी। पर मैं देखती हूँ, कि यह तो तुम्हारे साथ जानेको तैयार होकर आयी है। हाय! जिसके पिता मिथिलाके महीपाल—बड़े-बड़े राजाओंमें श्रेष्ठ हैं, जिसके ससुर सूर्यवंशियोंमें सूर्यके समान हैं और जिसके पति रघुकुल रूपी कुमुदवनके चन्द्रमाकी भाँति हैं, वही सीता क्या वनको जायेगी? मान-सरोवरकी सुधा पानकर पली हुई राजहंसिनी क्या तलैयामें रहेगी? यह सञ्जीवनी-लता क्या विषकी वाटिकामें विराजेगी? नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। जो सीता कभी पृथ्वीपर पैर नहीं देती, वह वनमें क्योंकर पाँव-प्यादे भ्रमण कर सकेगी? वनमें रहने-योग्य तो वे तापस-कुमारियाँही हैं, जिनके लिये भोग-विलास सपनेकीसी वस्तु है, अथवा वे कोल-किरात-किशोरियाँ हैं, जिन्हें ब्रह्माने वहीं रहनेके लिये पैदा किया है। पुत्र! तुम क्या कहते हो? तुम जो कहो, वही मैं जानकीसे कह दूँ।"

यह सुन, रामचन्द्रने सीतासे कहा,—"राजकुमारी! यदि सच-मुच तुम वन जानेके विचारसे आयी हो, तो इससे मैं जितना सुखी हुआ, उससे अधिक दुःखी हुआ हूँ। तुम अपने मनमें यह कदापि न जानना, कि मैं किसी और आशयसे यह बात कह रहा हूँ। नहीं, मैं जो कुछ कहूँगा, वह उसी उद्देश्यसे, जिसमें मेरा और तुम्हारा दोनोंका भला हो। तुम मेरी बात मानकर घरपरही रहो और सास-ससुरकी सेवा करो, क्योंकि इससे बढ़कर तुम्हारे लिये और कोई धर्म्म नहीं है। दिन जाते देर नहीं लगती। ये दिन भी चलेही जायेंगे, रहेंगे नहीं। मैं पिताका वचन पालनकर फिर तुम्हारे पास आ जाऊँगा। यदि तुम प्रेम-वश हठ करोगी, तो क्लेश पाओगी। वनमें भाँति भाँतिके कष्ट उठाने पड़ते हैं। एक तो कुश-काँटोंके मारे राह चलना कठिन है, दूसरे बड़े-बड़े पर्वतों, नदी-नालों और गुफाओंको पारकरके जाना पड़ेगा। जब तुम चित्रमें लिखे हुए सिंह-व्याघ्रोंको देखकर डर जाती हो, तब तो वहाँ बड़े-बड़े सिंह, व्याघ्र, भालू और भेड़िये दिन-रात भयङ्कर गर्जन करते फिरते हैं, जिसे सुनकर बड़े-बड़े वीर पुरुषोंका भी धीरज छूट जाता है। सीते! तुमसी सरला, सुकोमला और ऐश्वर्य्यकी गोदमें पली हुई नारीका काम जङ्गलोंमें रहनेका नहीं है। मान सरोवरमें विहार करनेवाली हंसिनी खारी समुद्रमें रहकर प्राणधारण नहीं कर सकती, नयी नयी आम्र मञ्जरियोंमें विलास करनेवाली कोकिला कँटीले करीलके वनमें शोभा नहीं पाती।"

पतिके ऐसे मनोहर वचन सुन, सीताके नेत्रोंमें आँसू उमड़ आये। रामचन्द्रने वनके जो भयानक कष्ट सीताको सुनाये,

सुन, दूसरी कोई स्त्री होती, तो अवश्यही डर जाती—स्त्रियोंकी तो बातही न्यारी है, पुरुषका कलेजा भी काँप जाता, परन्तु सीताको वे कष्ट पति-विरहके कष्टसे कहीं कम मालूम हुए। उन्होंने पहले तो सासके सामने सङ्कोचके मारे कुछ नहीं कहा था, केवल अपने नयन-जलसेही हृदयके भावों और सङ्कल्पोंका परिचय दे दिया था, परन्तु रामचन्द्रकी यह लम्बी-चौड़ी वक्तृता सुन, उनसे चुप न रहा गया। उसके उत्तरमें उन्होंने जो कुछ कहा, वह कवि कुल-शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदासजीके अमर शब्दोंमेंही सुनिये। हमारी इस निर्बल लेखनीमें वह शक्ति और सहृदयता कहाँ, जो सीताके भावोंका चित्र, उस उत्तमताके साथ उतार सकें, जो गुसाँईजीकी अमृतमयी लेखनीमें वर्त्तमान है!—

"प्राणनाथ करुणायतन, सुन्दर सुखद सुजान।
तुम बिनु रघु-कुल-कुमुद बिधु, सुरपुर नरक समान॥
मात-पिता भगिनी प्रिय भाई ❀ प्रिय परिवार सुहृद समुदाई॥
सासु ससुर गुरु सुजन सहाई ❀ सुत सुन्दर सुसील सुखदाई॥
जहँ लगि नाथ! नेह अरु नाते ❀ पिय बिनु तियहिं तरनिहुँ ताते॥
तन धन धाम धरनि पुर-राजू ❀ पति-विहीन सब शोक समाजू॥
भोग रोग सम भूषण भारू ❀ यम-यातना सरिस संसारू॥
प्राणनाथ! तुम बिनु जगमाहीं ❀ मोकहँ सुखद कतहुँ कोउ नाहीं॥
जिय बिनु देह नदी बिनु बारी ❀ तैसहिं नाथ! पुरुष बिनु नारी॥
नाथ! सकल सुख साथ तुम्हारे ❀ शरद-विमल विधु वदन निहारे॥
खगमृग परिजन, नगरबन, बलकल बसन दुकूल।
नाथ साथ सुरसदन सम, पर्णशाल सुखमूल॥
बन दुख नाथ! कहे बहुतेरे ❀ भय विषाद परिताप घनेरे॥
प्रभु-वियोग लवलेश समाना ❀ होंहि न सब मिलि कृपा निधाना॥

मोहिं मगु चलत न होइहि हारी ॥ छिन छिन चरण सरोज निहारी ॥
सबहिं भाँति पिय सेवा करिहौं ॥ मारग-जनित सकल श्रम हरिहौं ॥
पाँय पखारि बैठि तरु छाहीं ॥ करिहौं बायु मुदित मनमाहीं ॥
श्रम-कन सहित श्यामतनु देखे ॥ कहँ दुख रहहिं प्राणपति पेखे ? ॥
सम महि तृण तरुपल्लव डासी ॥ पायँ पलोटिहि सब निशि दासी ॥
बार बार मृदु मूरति जोही ॥ लागहिं ताप बयारि न मोही ॥
को प्रभु सँग मोहिं चितवनिहारा ॥ सिंहवधुहिं जिमि शशकसियारा ॥
मैं सुकुमारि नाथ बन योगू ॥ तुमहि उचित तप मोकहँ भोगू ? ॥
अस जिय जानि सुजान शिरोमनि ॥ लेइय संग मोहिं छाड़िय जनि ॥"

सीताके पतिप्रेमसे परिपूर्ण इस पवित्रता और दृढता भरे वचनोंके आगे रामकी सारी युक्तियाँ कट गयीं। वे समझ गये, कि यह प्राण दे देगी, पर मुझे छोड़कर एक दिन भी अकेली न रहेगी। अतएव, उन्होंने सीताको साथ ले जानेके लिये मातासे अनुमति माँगी। माताका रहा-सहा अवलम्ब भी कच्चे धागेकी भाँति टूट गया! वे पछाड़ खाकर गिर पड़ीं और "हा राम! हा सीते!" कहकर मूर्च्छित हो गयीं। जब उन्हें कुछ-कुछ चैतन्य हुआ, तब उनके चरणोंमें मस्तक नवा, दोनों पति-पत्नीने विदा माँगी। कौसल्याकी छाती इस दारुण वियोगका स्मरणकर फटी जाती थी, तो भी राम-सीताको अपने-अपने धर्मोंपर आरूढ देख, उन्होंने आज्ञा दे दी और बार बार दोनों लाडलोंका आलिङ्गन करते हुए, गद्गद कण्ठसे आशीर्वाद और उपदेश देने लगीं।

अन्तमें उन्होंने सीतासे कहा,—"पुत्री! तेरा सौभाग्य अचल हो। तूने पति-प्रेमकी जो पराकाष्ठा दिखायी है, वही सोते

सब समय तेरी सहायक होगी। स्त्रियोंके लिये पतिही सब कुछ है। तूने इस महामन्त्रको अच्छी तरह समझ लिया है। अतएव अपनी सेवासे, यत्नसे, प्रेमसे सदा अपने पतिको प्रसन्न रखना, जिसमें प्यारे रामचन्द्रको वन-वासका क्लेश न व्यापे।"

सीताने सासके चरणोंको छूकर कहा,—"माता! मैंने शास्त्र-पुराणोंसे, पति देवसे और आपके मुखसे वार-वार पातिव्रत-धर्मका माहात्म्य सुना, समझा और उसका अनुशीलन किया है। माता! मेरे स्वामी साक्षात् ईश्वर हैं, उनके चरणोंकी दासी भली-भाँति जानती है, कि उन चरणोंका क्या महत्व है!"

माताकी आज्ञा पा, दोनों पति-पत्नीने उसी समय राजसी गहने-कपड़े उतार, तपस्वियोंकी तरह चीर-वल्कल धारण कर लिये। उनका वह वेश-परिवर्त्तन देख, उस दिन वज्रका हृदय भी पिघलकर पानी हो गया और आबाल-वृद्ध-वनिताके नेत्रोंके नीरने अयोध्यामें आँसुओंकी नयी सरयू बहा दी!



बात फैलते-फैलते सुमित्रानन्दन लक्ष्मणके कानोंमें भी पहुँची। प्राणोंसे भी प्रिय भाई और भाभीके वन जानेकी बात सुनतेही वे शोकसे विह्वल हो, उनके पास चले आये और रोते रोते साथ चलनेके लिये प्रार्थना करने लगे। रामने उन्हें लाख समझाया, कि "तुम्हारे चले जानेसे अयोध्या सूनी हो जायेगी, क्योंकि पिता बीमारसे हो रहे हैं और भरत-शत्रुघ्न मामाके घर गये हुए हैं। ऐसी दशामें यदि तुम भी हमारे साथ चले चलोगे,

तो यहांका काम कैसे चलेगा ?" पर लक्ष्मणने एक न सुनी। आजतक जिन्हें एक दिनके लिये भी आँखोंकी ओट न होने दिया, सदा जिनकी सेवामें जीवन बिताया, उन्हें वे एकदम चौदह वर्षोंके लिये क्योंकर छोड सकते थे ? लक्ष्मणका वह प्रबल अनुराग देख, रामचन्द्रने कहा,—"जब तुम मानतेही नहीं, तब जाओ, अपनी मातासे आज्ञा ले आओ।"

लक्ष्मणने उसी समय माताके पास पहुँचकर उनसे समस्त वृत्तान्त कह सुनाया। उनके मुँहसे यह सारा हाल सुन, सुमित्राको दुःख तो बडा भारी हुआ; परन्तु सचमुच वे "वीर माता" थीं—वे स्वयं भी वीराङ्गना थीं और उनका पुत्र भी वीरपुरुष था। अतएव यह नाम उनके सम्बन्धमें बिलकुल सार्थक हो गया था। पुत्रके इस भ्रातृ-प्रेमको देख, वे ऐसी कुछ मुग्ध हुईं, कि उन्होंने सारे वात्सल्य तथा करुणाके भावोंको हृदयसे निकाल फेंका और पुत्रको हृदयसे लगाकर बोलीं,—

"राम दशरथ विध्दि मा विद्धि जनकात्मजाम्।
अयोध्यामटवीं विध्दि गच्छ तात ! यथासुखम् ॥"

अर्थात्—"प्यारे पुत्र! आजसे तुम रामकोही पिता, सीताकोही माता और वनकोही अयोध्या समझो। मैं आज्ञा देती हूँ, कि तुम आनन्दके साथ उनके सङ्ग चले जाओ।"

पाठक पाठिकाओ! देखा, आपने ? सब विमाताएँ कैकेयी जैसी नहीं होतीं। कितनीही ऐसी उदार सुमित्राएँ आज—इन गये-बीते दिनोंमें—भी भारतके किसी-किसी गृहमें दिखाई पडती हैं, जो अपने पेटके जायेसे बढकर सौतकी सन्तानका

प्यार करती हैं और संसारको सुमित्रा * तथा कौसल्याका स्मरण कराती हैं।

तदनन्तर राम, सीता और लक्ष्मण—तीनोंने एक-एक कर सबसे विदा ली। सुमन्त्रने रथ तैयार-कर रखा था, उसीपर तीनों जने आ सवार हुए। अयोध्याकी सारी प्रजा हाहाकार कर उठी। सब-के-सब—क्या वृद्ध, क्या बालक—रथके साथ-साथ दौड़ते हुए पीछे-पीछे चले। रामचन्द्रने उन्हें कितनाही लौटनेके लिये कहा, पर वे न लौटे। अपनी प्रजाका अपने ऊपर यह प्रेम देख, रामके साहसी हृदयमें भी करुणा उमड़ आयी। वे अपने नेत्रोंके आँसू न रोक सके। उन्होंने सुमन्त्रको शीघ्रतासे रथ हाँकनेके लिये कहा, क्योंकि वह करुण-दृश्य—प्रजाका वह हृदय-विदारक हाहाकार—उनसे देखा नहीं जाता था। जब सब लोग रथके साथ दौड़ते-दौड़ते थक गये, तब एक जगह खड़े हो, ऊँचे स्वरसे विलाप करने लगे। यह देख, राम और भी व्याकुल हुए और तीनों जने रथसे नीचे उतरकर पैदलही चलने लगे। इस प्रकार सन्ध्या होते-होते अयोध्या-नगरी उनकी आँखोंकी ओट हो गयी।



*यदि आप सुमित्राकी महृदयता और वीरताका यथेष्ट परिचय पाना और साथही खड़ी बोलीमें वीर-रसके काव्यका अनोखा स्वाद लेना चाहते हों, तो हमारे यहांसे "वीर-पञ्चरत्न" नामक सचित्र और वृहत् पुस्तक मगा देखिये। इसमें सुमित्रा तथा अन्यान्य वीर माताओं, वीर-बालकों और वीर क्षत्राणियोंके २९ काव्यमय चरित दिये गये हैं। स्थान-स्थानपर सुन्दर इकरंगे और तिनरंगे २२ चित्र पुस्तककी शोभा बढ़ा रहे हैं। मूल्य बिना जिल्दका २॥) जिल्ददार ३) सुनहरी रेशमी जिल्द ३।) रु०

सीता-रामका वन-वास



साँझ होते-होते जब सब लोग तमसा नदीके तीरपर आ पहुँचे, तब रामचन्द्रने कहा, कि हमारे वन वासकी पहली रात यहीं व्यतीत होनी चाहिये, क्योंकि जब हम अयोध्याके बाहर होही गये, तब कहीं भी विश्राम करनेमें हानि नहीं है।

बड़े भाईके ऐसे विचार सुन, लक्ष्मणने भाई और भाभीके लिये कोमल पत्तोंकी शय्या बनायी, जिसपर सीता सहित रामने विश्राम किया। सुमन्त्र और लक्ष्मण रातभर जागते रहे। सारे पुरवासी, जो उनके प्रेम-वश यहाँतक आ पहुँचे थे, थके-माँदे और दुःखी होनेके कारण शीघ्रही सो गये। उस रातको सबने उपवास किया, क्योंकि जब राम और सीतानेही कुछ नहीं खाया, तब और कौन खाता?

कालकी यह विचित्र गति देखिये। कलतक सोनेके पलङ्ग और पुष्पोंकी शय्यापर भी जिन्हें नींद नहीं आती थी, सौ सौ सेवक-सेविकाएँ हर घड़ी जिनकी आज्ञाकी प्रतीक्षामें हाथ जोड़े सामने खड़ी रहती थीं, आज वेही निर्जन वनमें पत्तोंकी सेजपर सुख-पूर्वक सो रहे हैं! अयोध्यामें सुकुमारताकी मूर्त्ति सीताका यह हाल था, कि "कोमल कमलके गुलाबनके दलके सु

प्यार करती हैं और संसारको सुमित्रा * तथा कौसल्याका स्मरण कराती हैं।

तदनन्तर राम, सीता और लक्ष्मण-तीनोंने एक-एक कर सबसे विदा ली। सुमन्त्रने रथ तैयार-कर रखा था, उसीपर तीनों जने आ सवार हुए। अयोध्याकी सारी प्रजा हाहाकार कर उठी। सब के-सब—क्या वृद्ध, क्या बालक—रथके साथ-साथ दौड़ते हुए पीछे पीछे चले। रामचन्द्रने उन्हें कितनाही लौटनेके लिये कहा, पर वे न लौटे। अपनी प्रजाका अपने ऊपर यह प्रेम देख, रामके साहसी हृदयमें भी करुणा उमड़ आयी। वे अपने नेत्रोंके आँसू न रोक सके। उन्होंने सुमन्त्रको शीघ्रतासे रथ हाँकनेके लिये कहा, क्योंकि वह करुण-दृश्य—प्रजाका वह हृदय-विदारक हाहाकार—उनसे देखा नहीं जाता था। जब सब लोग रथके साथ दौड़ते-दौड़ते थक गये, तब एक जगह खड़े हो, ऊँचे स्वरसे विलाप करने लगे। यह देख, राम और भी व्याकुल हुए और तीनों जने रथसे नीचे उतरकर पैदलही चलने लगे। इस प्रकार सन्ध्या होते-होते अयोध्या-नगरी उनकी आँखोंकी ओट हो गयी।



*यदि आप सुमित्राकी सहृदयता और वीरताका यथेष्ट परिचय पाना और साथही खड़ी बोलीमें वीर-रसके काव्यका अनोखा स्वाद लेना चाहते हों, तो हमारे यहांसे "वीर-पञ्चरत्न" नामक सचित्र और बृहत् पुस्तक मंगा देखिये। इसमें सुमित्रा तथा अन्यान्य वीर माताओं, वीर-बालकों और वीर क्षत्राणियोंके २६ वाङ्मय चरित दिये गये हैं। स्थान-स्थानपर सुन्दर इकरंगे और तिनरंगे २७ चित्र पुस्तककी शोभा बढ़ा रहे हैं। मूल्य बिना जिल्दका २।।।) जिल्ददार ३) सुनहरी रेशमी जिल्द ३।) रु०

पहुँचे। निषादोंका राजा 'गुह' रामचन्द्रका लड़कपनका मित्र था। उसने बड़े ही हर्षसे आकर इनका स्वागत किया, पर जब उसने सब समाचार सुने, तब वह एकबारगी शोकसे अधीर हो गये। उस दिन वे लोग वहीं रहे। गुहने बार बार विनती की, कि महाराज! यह भी तो वनही है, आप चौदहों वर्ष यहीं बिता दें, हम लोग आपके दर्शनोंसे कृतार्थ होते हुए 'ईंधन-पात किरात मिताई' करते रहेंगे, परन्तु रामचन्द्रने एक न मानी, क्योंकि वे जानते थे, कि "विपति परे पै द्वार मित्रके न जाइये।" लाचार गुहने दूसरे दिन एक सुन्दर नाव इन लोगोंको गङ्गाके उस पार पहुँचा देनेके लिये मँगवायी।

अबके सुमन्त्रके बिदा होनेकी भी बारी आयी। अयोध्याके अन्य अधिवासियोंके सौभाग्यका अन्त तो कभीका हो गया था, परन्तु सुमन्त्रका भाग्य अबतक जगा था—वे अबतक इन विदेवोंके साथ थे—पर अबके उनका सौभाग्य भी सो चला। रामचन्द्रने कहा,—"सुमन्त्र! अब तुम भी जाओ। हमें यहींतक रथकी आवश्यकता थी, अब हम पैदलही चलेंगे। जाकर पिता और माताओंसे हमलोगोंके प्रणाम कहना तथा मामाके यहाँसे जब भरत-शत्रुघ्न आयें, तब उनसे हमलोगोंके यथोचित प्रणामा शीर्व्वाद कह देना। सारी प्रजाको धीरज धराना और कहना, कि वे भरतमें भक्ति रखते हुए हमलोगोंको कभी कभी याद करते रहेंगे।"

यह सुन, सुमन्त्र फूट-फूटकर रोने लगे। रामचन्द्रने उन्हें धैर्य्य धराया और बार-बार आलिङ्गन कर प्रेम-पूर्व्वक बिदा किया। वे शून्य प्राण होकर शून्य अयोध्या नगरीमें

गडि पाँयन बिछौना मखमलके", परन्तु आज इस खर-पातकी सेजपर पीठ देते भी उन्हें तनिक वेदना नहीं होती। रामचन्द्रके साथ उनकी ऐसी एकाग्रता थी, कि वे उन्हें देखकर अपने आपको भूल जाती थीं। जैसे नदियाँ सागरमें मिलकर उसके साथ एक हो जाती हैं, उनका अलग रूप नहीं रह जाता, सच्ची पतिव्रताएँ भी अपना जीवन उसी प्रकार स्वामीके साथ एक कर देती हैं। स्वामीका दुःख-सुखही उनका दुःख सुख है, स्वामीका चन्द्रमुख दर्शनही उनके प्राणोंकी सबसे प्रिय सामग्री है। उन्हें अपने तुच्छ शरीरके सुख-दुःखकी चिन्ता नहीं व्यापती। सचही सीताने कहा था,—"नाथ! तुम्हारे नयन-सुखकर श्यामशरीरको देखकर मेरे दुःख न जाने कहाँ भाग जायेंगे? तुम मुझे साथ ले चलनेमें तनिक भी न हिचकिचाओ।" सीताने पहलीही रातको यह दिखला दिया, कि वास्तवमें उन्होंने जो कुछ कहा था, वह सोलहो आने ठीक था। धन्य सीते! धन्य तुम्हारी स्वामि-भक्ति!!



कुछ रात रहतेही रामकी निद्रा भङ्ग हुई। उन्होंने देखा, कि अभीतक सब लोग सोही रहे हैं। यह देख, उन्होंने सुमन्तसे कहा, कि शीघ्रही रथको भगा ले चलो, नहीं तो हम लोगोंके पीछे पीछे ये लोग न जानें कहाँतक जायेंगे और कितने क्लेश उठायेंगे। सुमन्तने वैसाही किया। रथ बडी तेजीसे हाँक दिया गया और वे कुछही देरमें निषादोंके राजा गुहकी राजधानी शृङ्गवेरपुरमें आ

पहुँचे। निषादोंका राजा 'गुह' रामचन्द्रका लड़कपनका मित्र था। उसने बड़ेही हर्ष से आकर इनका स्वागत किया, पर जब उसने सब समाचार सुने, तब वह एकबारगी शोकसे अधीर हो गये। उस दिन वे लोग वहीं रहे। गुहने बार बार विनती की, कि महाराज! यह भी तो वनही है, आप चौदहों वर्ष यहीं बिता दें, हम लोग आपके दर्शनोंसे कृतार्थ होते हुए 'ईंधन-पात किरात मिताई' करते रहेंगे, परन्तु रामचन्द्रने एक न मानी, क्योंकि वे जानते थे, कि "विपति परें पै द्वार मित्रके न जाइये।" लाचार गुहने दूसरे दिन एक सुन्दर नाव इन लोगोंको गङ्गाके उस पार पहुँचा देनेके लिये मँगवायी।

अबके सुमन्त्रके विदा होनेकी भी बारी आयी। अयोध्याके अन्य अधिवासियोंके सौभाग्यका अन्त तो कभीका हो गया था, परन्तु सुमन्त्रका भाग्य अबतक जगा था—वे अबतक इन निर्वासितोंके साथ थे—पर अबके उनका सौभाग्य भी सो चला। रामचन्द्रने कहा,—"सुमन्त्र! अब तुम भी जाओ। हमें यहाँतक रथकी आवश्यकता थी, अब हम पैदलही चलेंगे। जाकर पिता और माताओंसे हमलोगोंके प्रणाम कहना तथा मामाके यहाँसे जब भरत-शत्रुघ्न आयें, तब उनसे हमलोगोंके यथोचित प्रणाम आशीर्वाद कह देना। सारी प्रजाको धीरज धराना और कहना, कि वे भरतमें भक्ति रखते हुए हमलोगोंको कभी कभी याद करते रहेंगे।"

यह सुन, सुमन्त्र फूट-फूटकर रोने लगे। रामचन्द्रने उन्हें धैर्य्य धराया और बार बार आलिङ्गन कर प्रेम-पूर्वक विदा किया। वे शून्य प्राण होकर शून्य अयोध्या नगरीमें लौट आये



तब गुहने अपने देव-तुल्य अतिथियोंके पैर प्रेमसे पखारे और नावपर चढ़ाकर उन्हें उस पार पहुँचा दिया। दो दिन लगातार चलते रहनेके बाद वे तीर्थोंके राजा, प्रयागमें आ पहुँचे। पासही मुनिवर भरद्वाजका आश्रम था। मुनिके दर्शनोंकी उत्कण्ठासे वे उधरही चल पड़े। मुनिने ज्योंही उनको आते देखा, त्योंही दौड़े हुए आये और उन्हें बड़े आदरसे अपने आश्रममें ले गये। उस दिन उन लोगोंने वहीं विश्राम किया और दूसरे दिन मुनिके परामर्शके अनुसार यमुनाके उस पार चित्रकूटमें कुटी बनाकर रहनेकी इच्छासे चल पड़े। कई दिन पाँव-प्यादे चलकर वे चित्रकूट पहुँचे। वहाँ पहुँचकर लक्ष्मणने पत्तोंकी एक कुटी बनायी और सब लोग उस पर्वतकी उसी सामान्य कुटियामें रहने लगे।

सीताने आजतक कभी यात्रा नहीं की थी—यात्रा तो यात्रा, महलोंमें भी अधिक न चली-फिरी थीं। परन्तु वे आज कोसोंकी यात्रा पाँव प्यादे कर रही हैं। कहीं विश्राम भी हुआ, तो पत्तोंकी सेजपर या किसी वृक्षके नीचे खुरदरी भूमिपर! जिनके आगे सुधा-समान अन्न व्यञ्जनोंके थाल परोसे जाते थे, आज वे सामान्य कन्द-मूल फल पाकरही क्षुधा मिटाती हैं, परन्तु पतिके मुखकी ओर भर-आँखें देखतेही उनके सारे श्रम-कष्ट हवा हो जाते थे। वे सोचतीं,—"स्वामी चाहे जिस अवस्थामें हों, उनका सङ्गही स्त्रीके लिये मङ्गलकारी है। उनके चरणोंकी सेवाही उसकी सारी रोग व्यथाकी दिव्य ओषधि है।" चित्र-

में कुटी बनतेही वे उसमें प्रेमसे आनन्दके साथ रहने लगीं,

जिसे देख, सबको आश्चर्य होता। उन्होंने मन-ही-मन विचार किया,—"यह वनही मेरी अयोध्या और यह कुटीही मेरा महल है! जहाँ मेरे प्राण-नाथ हैं, वही मेरे लिये इन्द्रपुरी है!"

जिस समय इन तीनों व्यक्तियोंने चित्रकूटपर आकर रहना आरम्भ किया, उस समय चारों ओर वसन्त विराजमान हो गया। फूलों और फलोंके भारसे वृक्ष-लताएँ झूमने लगीं। नाना जाति और भिन्न-भिन्न सुगन्धोंवाले फूलोंके सुवाससे सारा वायुमण्डल आमोदित होने लगा। वृक्षोंकी वह सघन श्रेणी; झरनोंका वह मनोहर कलरव करते हुए झरना, सरोवरमें खिले हुए कमलोंकी वह प्यारी शोभा, वृक्षोंके आश्रयसे फैली हुई लताओंकी वह सुन्दर श्री, कोयल, मोर, चकोर, चातक, चक्रवाक, चण्डूल आदि चिड़ियोंका वह चहकना और हिरनके बच्चोंकी वह उछल-कूद देख-देखकर नये आनेवालोंका हृदय आनन्दसे भर उठा। सीता अपने प्राणपतिके साथ-साथ चारों ओर घूम घूमकर वनकी शोभा देखने और प्रसन्न होने लगीं। लक्ष्मण माता पिताके समान अपने बड़े भाई और उनकी स्त्रीकी सेवा करते हुए अपना जन्म सफल करने लगे।



महाराज दशरथका प्रेम अपने पुत्रपर इतना था, कि वे उनके वियोगको अधिक कालतक सहन न कर सके। उस दिन वे जिस व्याधिसे पीड़ित हो शय्यापर गिर पड़े, उसने उनको फिर उठने नहीं दिया। रामके निर्वासनके ठीक छठे दिन रातको

उसपर पैर नही रख सकता। जहाँ स्वामीके चरण पड़े, वहाँ सेवकका सिरही शोभा पाता है। फिर मैं किस मुँहसे आपके आसनपर बैठूँगा? न हो तो आप लौट जाइये। आपके बदले मैं ही वनवास करूँ और पिताका प्रण पालन करूँगा। आपके न जानेसे अयोध्या और भी अनाथ हो जायेगी।"

परन्तु रामचन्द्र अपने प्रणसे तनिक भी विचलित होने वाले नहीं थे। उन्होंने भरतको समझा-बुझाकर शान्त कर दिया। बोले,—"जिस सत्यकी रक्षाके लिये पिताने प्राण त्याग दिये, उसकी रक्षा मैं अवश्य करूँगा इसमें मैं कोई बाधा-विघ्न नहीं मान सकता।"

लाचार हो, भरत रामचन्द्रको खडाऊँ लेकर सब साथियों सहित खिन्न मनसे लौट आये। आते समय उनका हृदय भाईके वियोगसे इतना कातर हो रहा था, कि वे पथमें रह-रहकर ऐसे विकल हो जाते थे, कि लोगोंको उनका सम्हालना कठिन हो जाता था।

अयोध्या आकर भरतने रामकी खड़ाऊँको राजसिंहासनपर पधराया और आप तपस्वी वेशसे नन्दी-ग्राममें रहकर रामके आनेके दिन गिनने लगे। शत्रुघ्न राज-काज देखने और यथा-योग्य भरतजीसे सम्मति लेकर आज्ञापालन करने लगे। उस दिनसे रामके लौटनेतक भरतने अयोध्यामें पाँव नहीं दिये।



सीता और लक्ष्मणकी सेवासे प्रसन्न हो रामचन्द्र यद्यपि बड़े सुखसे चित्रकूटमें अपने वनवासके दिन बिता रहे थे, तथापि

यह सुन, सीताने कहा,—"देवी! आपने जो कुछ कहा, वह अक्षर-अक्षर सत्य है। मैंने बालकपनमें माता-पितासे, यौवनमें पति और सासुओंसे सदा सुना है और आज आपसे भी सुन रही हूँ, कि पतिही स्त्रीका सर्व्वस्व है—उसकी सेवाही नारी जन्मकी सार्थकता है। माता! जिसका पति कुरूप दुश्चरित्र और क्रोधी हो, उसे भी उसकी सदा आज्ञा माननी और टहल करनी चाहिये, फिर जिसका पति गुणी रूपवान संयमी और सच्चरित्र हो उसका तो कहनाही क्या है? मैंने भी इसी लिये पति-सेवाकी तपस्या करनी आरम्भ की है। माँ! आशीर्व्वाद करो, जिससे यह निष्ठा युग-युगान्तर और जन्म जन्मान्तरमें भी ऐसीही बनी रहे।"

सीताके इन धर्म-मय वचनोंको सुनकर अनसूया परम आनन्दित हुईं और उन्होंने तरह-तरहके वस्त्र आभूषण और अङ्गरागादि सीताको उपहारमें दिये। उनके उन आशीर्व्वादी उपहारोंको पाकर सीता परम सुखी हुईं और उन्होंने ... सादर अङ्गीकार किया। रामचन्द्रने उन म... पत्नीका यह प्रेम-भाव देख, अपने मनमें ...

दूसरे दिन प्रातःकाल होतेही सब... होकर भयानक वनकी ओर चल... और उसका भयङ्कर रूप देखकर ... आता, पर ये लोग क्यों डरने ... नहीं, हिंसा-घृणा नहीं ... किसका डर है?

एक वनसे दूसरे वनमें पहुँचकर, ऋषि-मुनिसे मिलते हुए, वे लोग बड़े आनन्दसे दिन बिताने लगे। किन्तु एकबार एक वनमें उन्हें बड़ी भारी विपत्तिका सामना करना पड़ा। उस दिन उन लोगोंके पास 'विराध' नामक एक दुष्ट राक्षस न जाने किधरसे चला आया और दोनों भाइयोंके बीचसे सीताको कन्धेपर उठाकर ले भागा। यह देख, लक्ष्मणने उसे बाणोंसे इतना घायल किया, कि उसने लाचार होकर सीताको नीचे उतार दिया और प्रबल वेगसे उनकी ओर दौड़ा; किन्तु उन दोनों भाइयोंने उसे वहीं ढेरकर दिया और विपत्तिके बादल पल भरमें उड़ गये। उसके मर जानेपर दोनों भाइयोंने उसके शवका भली भाँति संस्कारकर अपने बड़प्पनका परिचय दिया। यद्यपि सीता इस घटनाके कारण बहुत भयभीत हुई, तथापि उन्होंने अपने मनको बहुत धीरज दिया और स्वामीके सहवासके कारण सब शङ्काएँ, सारे सन्देह और समस्त भय भूल गयीं।

यहाँका रहना भयसे भरा हुआ देख, वे लोग किसी शान्ति-दायक स्थानकी खोजमें चल पड़े। जाते-जाते वे लोग शरभङ्ग-ऋषिके आश्रममें पहुँचे। वहाँ उनका बड़ा आदर-सम्मान हुआ। तब रामचन्द्रजीके यह पूछनेपर, कि आस-पासमें कोई शान्ति-पूर्ण स्थान है या नहीं, शरभङ्ग-ऋषिने उन्हें अगस्त्य-ऋषिके चेले सुतीक्ष्ण-मुनिके आश्रममें जानेकी सम्मति दी। वे लोग वहाँसे चलनेवालेही थे, कि शरभङ्ग-ऋषिका शरीर छूट गया और वे परलोक सिधारे। तब सारे मुनि-तपस्वियोंने आकर राम चन्द्रको घेर लिया और कहा,—"आप तो चले, अब हमलोगोंकी

रक्षा कौन करेगा ? हमलोग राक्षसोंके उत्पात और उपद्रवके कारण धर्म-कर्म करनेसे वञ्चित हो रहे हैं। आप राजा हैं, आप नहीं बचायेंगे तो हमें और कौन बचायेगा ?" यह सुन रामचन्द्रने प्रतिज्ञाकर कहा,—"मैं अवश्यही आप लोगोंकी आज्ञा मानूँगा, क्योंकि इस दीर्घकालके वनवासमें मुझे आपलोगोंकाही सहारा है। आपलोगोंने जैसा कुछ हमलोगोंका आदर-आतिथ्य किया है, उसके लिये मैं आपलोगोंकी कृतज्ञताके पाशमें बँध चुका हूँ। उससे मुक्त होनेके लिये मुझे भी आपकी सेवा करनी उचित ही है। परन्तु इस समय तो मैं अपने रहनेके लिये शान्तिमय स्थानकी खोजमें जाता हूँ। समय आतेही मैं अपनी प्रतिज्ञाका पालन करूँगा।"

यह कह, रामचन्द्र सीता लक्ष्मणके साथ मुनिवर सुतीक्ष्णके पास चले आये। उन्होंने इनलोगोंकी बड़ी आवभगत की और इन्हें अपने गुरु अगस्त-ऋषिके पास ले गये। अगस्त ऋषिने भी इनका सम्मान करनेमें कोई कमी न की और उन्हींकी सलाहसे ये लोग गोदावरी-नदीके किनारे पञ्चवटीमें चले आये।



पञ्चवटीमें पहुँचते ही वे लोग आनन्दसे पुलकित हो उठे। वह स्थानही ऐसा कुछ रमणीय था, कि उनकी आत्माएँ उसकी सुन्दरतापर मोहित हो गयीं। पासही गोदावरी नदी मधुर कल कल शब्द करती हुई निरन्तर बह रही थी। उसका मीठा और स्वादिष्ट जल पीनेके साथही अमृतके समान प्राणोंमें नयी

शक्तिसी भर देता था। उसके स्वच्छ सलिलमें हंस, सारस चक्रवाक आदि जलचर पक्षी सदा क्रीडा करते हुए दिखलाई पडते थे। किनारे-किनारे वृक्षोंकी सघन श्रेणी खडी थी, जिसपर विहार करनेवाली कोयलोंकी कुहू-कुहू,पपीहोंकी पी-पी और कलापी-कलापिनियोंकी * केका ध्वनि सुनकर प्राणोंको अकथनीय आनन्द प्राप्त होता था। पास ही पर्वत पहरेदारकी तरह सिर ऊँचा उठाये खड़ा था। उस स्थानकी मनोहर शोभाने सचमुच उनलोगोंका मन हर लिया। सीताको वह स्थान बहुत-ही प्रिय विदित हुआ। उनकी इच्छा वहीं ठहरनेकी देख, राम-चन्द्रने लक्ष्मणको एक कुटी बनानेकी आज्ञा दी और कुछ दिन वहीं ठहरनेका निश्चय कर लिया।

बात-की बातमें लक्ष्मणने पर्णशाला तैयारकर ली और ये लोग आनन्दसे उसमें रहने लगे। पति-पत्नी और भाई-भाईमें कभी शास्त्र और धर्मके रहस्योंकी चर्चा छिडती और कभी संसारमें मनुष्य-जीवनके कर्त्तव्योंपर मधुर वार्त्तालाप होते। लक्ष्मणने अपनी सेवा और आज्ञाकारितासे अपने बड़े भाई और भाभीके मनमें क्षणभरके लिये भी चिन्ता और क्लेशको स्थान न पाने दिया। इधर स्वामीकी बात-बातमें अपनी अलौकिक अनुकूलता सदा, सब समय, स्वामीका मनोरञ्जन करनेकी चेष्टा और देवर तो देवर, वनके पशु पक्षियोंपर भी हार्दिक अनुराग दिखलाकर, सीता रामचन्द्रके हृदयमें आनन्द और प्रेमकी

थीं। भला ऐसी सहधर्मिणी, सुख-दुःखकी स

* 'कलापी' मोर और 'केका' उसकी

छोड़कर भी अलग न होनेवाली स्त्री तथा प्यारा आज्ञाकारी भाई पाकर कौन नहीं अपने भाग्यको सराहेगा ? उसे वनका वास काहेको अखरने लगा ? राज्य नहीं था, अपना गाँव-नगर नहीं था, संसारके सुखोंके साधन नहीं थे, परन्तु जिन दो स्नेही हृदयोंके ऊपर रामचन्द्रका अखण्ड साम्राज्य था, उसके आगे त्रिलोकीका राज्य क्या वस्तु है ?

इधर सीतादेवी सोचतीं,—"पञ्चवटीका यह पुण्य प्रदेश, प्राणोंसे भी प्रिय पति-परमेश्वरकी छायामें निवास, पुत्र-समान वात्सल्यके भाजन छोटे देवरकी सेवा-सहायता और सदा हाथ बाँधे आज्ञाकी प्रतीक्षामें टक लगाये देखते रहना—अयोध्याकी पटरानी होनेसे क्या इससे अधिक सुख होता ? अयोध्याकी तो बातही न्यारी है, स्वर्गमें भी यह आनन्द दुर्लभ है।"

इसी तरह सुखसे दिन बीत रहे थे, किन्तु कुटिल कालसे उनका यह सुख भी न देखा गया। एकाएक विपत्का सोता फूट पड़ा और वह एक प्रकारसे सीताके अन्तिम जीवनतक जारी रहा। किन्तु इन्हीं विपत्तियोंने सीताके चरित्रकी जो उत्कृष्टता, महत्ता और नारी-धर्म का गौरव प्रदर्शित किया, वह शायदही इनके बिना इतनी उज्ज्वलतासे चमकता हुआ दिखाई पड़ता सच है—

"सोना-सज्जन कसनको विपति कसौटी कीन।"



एक दिन ये तीनों मूर्त्तियाँ सानन्द अपने आश्रममें बैठी हुई थीं, कि इसी समय कहींसे शूर्पणखा नामकी राक्षसी इनके पास

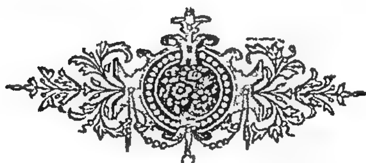
आ पहुँची। आतेही दोनों भाइयोंकी अनुपम सुन्दरता देख, उसके मनमें पापकी प्रबल वासना पैदा हो गयी। उसने झटपट रामके पास आकर कहा,—"देखो, आजतक मैंने विवाह नहीं किया,क्योंकि मेरे योग्य कोई अच्छा वर मिलाही नहीं। परमात्माकी दयासे तुम आज मिल गये हो। तुममें मैं उन सारे गुणोंको पाती हूँ, जिनका होना मैं अपने पतिके लिये परम आवश्यक समझती थी। बड़े भाग्यसे भगवान्ने यह जोड़ी मिलायी है, अतएव चलो, मेरे साथ विवाह कर लो।"

यह सुन, रामने उसे बड़ा दुतकारा और हँसते हुए कहा,—"मेरे तो एक स्त्री हैही, मैं क्यों दूसरी स्त्रीकी इच्छा करूँ? हाँ, वह मेरा छोटा भाई है, उससे पूछ, यदि उसकी इच्छा हो, तो वह तेरे साथ विवाह कर लेगा।" यह सुन, ज्योंही उसने लक्ष्मणके पास आकर अपनी पाप-भरी इच्छा प्रकट की, त्योंही वे उसे मारने दौड़े, परन्तु जब रामने कहा, कि स्त्रीका वध करना शास्त्रोंमें बड़ा पाप माना है, तब उन्होंने केवल उसके नाक कान काट लिये। तत्क्षण उसके नाक-कानसे रुधिरकी धारा बहने लगी और वह रोती हुई वहाँसे खर-दूषण नामक अपने भाइयोंके पास जाकर अपना दुखड़ा सुनाने लगी।

अपनी बहनकी यह दुर्दशा देख, खर-दूषणको बड़ा क्रोध उत्पन्न हुआ और उन लोगोंने उसी क्षण उन वनवासियोंको मारनेके लिये चौदह सहस्र राक्षसोंकी सेना भेजी। जब सेना पास आ पहुँची, तब उसका वह समुद्रकासा अनन्त विस्तार देख, रामचन्द्रने लक्ष्मणको सीता-समेत एक पर्वतकी कन्दरामें जाकर छिप

रहनेके लिये आज्ञा दी और आप धनुर्बाण लेकर उस सेनाका सामना करनेके लिये तैयार हो गये। फिर तो अकेले रामने अपनी अपूर्व्व बाण-विद्याके प्रभावसे राक्षसोंका ऐसा संहार किया, कि एक-एक करके वे सभी मारे गये, कोई जीता न लौटा।

संग्राम जीतकर जब रामचन्द्र सीता और लक्ष्मणके पास आये, तब वे परस्पर बड़े आनन्दसे मिले। सीताके नेत्रोंमें तो आनन्दके आँसू उमड़ आये। भला ऐसे विकट शत्रुओंसे पाला पड़नेपर भी जिसका स्वामी हँसता-खेलता उसके पास आ जाये, उस वीर-पत्नीकी प्रसन्नताका क्या ठिकाना है!



सीता हरण



खर-दूषण और उसके सङ्गी साथियोंका संहार होगया, परन्तु इसीसे विपत्तिके बादल हट नहीं गये, बल्कि वे धीरे-धीरे और भी घने होते गये। कुछही दिन बीतते-बीतते उन बादलोंने ऐसा वज्रपात किया, कि इन बेचारे शान्त तपस्वियोंकी सारी शान्ति नष्ट हो गयी!

जब खर-दूषण अपने समस्त हित-कुटुम्बियों और सैन्य-सामन्तोंके साथ मार डाले गये, तब निराश और दुःखित शूर्पणखा अपने बड़े भाई रावणके पास पहुँची और अपने नाक-कान काटे जाने और खर-दूषणके समूल संहार किये जानेका हाल रो-रोकर सुनाने लगी। सुनते-सुनते रावणका हृदय शोक, दुःख और क्रोधसे उन्मत्त हो उठा। वह मारे क्रोधके दाँत पीसने और होंठ काटने लगा। रावणको इस तरह अपने अनुकूल होते देख, शूर्पणखाने और भी माया फैलायी—उसने अपने रोनेका स्वर और भी ऊँचा कर दिया। बहुत बार देखा गया है, कि सहस्रों उपदेशकों और करोड़ों व्याख्यानदाताओंके कथनका जहाँ –

भी प्रभाव नहीं होता, वहाँ स्त्रीका एक बार रो देना बड़ा काम कर जाता है। यहाँ भी ऐसाही हुआ। ज्यों-ज्यों शूर्पणखाका रोना चढ़ता गया, त्यों-त्यों रावणका रोष चढ़ता गया। इस तरह जब रावण क्रोधमें बिल्कुल अन्धा हो गया। तब शूर्पणखाने कहा,—"भैया! उन दुष्ट तपस्वी-कुमारोंके साथ एक बड़ीही रूप-लावण्यवती स्त्री है— उसकी सुन्दरताके आगे कदाचित् स्वर्गकी देवियाँ भी पानी भरेंगी। तुम उसे लाकर अपनी रानी बनाओ-उसे उनसे बिछुड़ाओ, तभी मेरा मन शान्ति पायेगा। सच जानना, भाई उस सुन्दरीके समान एक भी स्त्री तुम्हारे अन्तःपुरमें नहीं है। तुम जाकर देखो, देखतेही मोहित हो जाओगे। उसे लानेसे एक साथ कई काम हो जायेंगे। तुम्हें तो एक सुन्दरी नारी मिल जायेगी, वैरियोंसे वैर सधेगा और वे बिना मारे ही मर जायेंगे। परन्तु देखना, वहाँ बलका प्रयोग न करना, क्योंकि जिन्होंने खर-दूषण जैसे विख्यात वीरोंको बात-की-बातमें सैन्य-सहित मार गिराया, वे कोई साधारण जीव नहीं हैं। छलका प्रयोग करनाही सब तरहसे ठीक होगा, छलसे उनके यहाँसे उस नारी-रत्नको उड़ालाओ और मेरे मनकी लगी बुझाओ।"

शूर्पणखाकी बातें सुन, पापी रावणके मनमें पापकी वासना जग पड़ी और सीताके रूप-लावण्यमें उसका मन डूब गया। उसने झटपट कहा,—"बहन! शान्त होओ। जिन दुष्टोंने तुम्हारी ऐसी दुर्दशा की है, वे अवश्य अपनी करनीका फल भोगेंगे।"

यह कह, वह मारीचके पास गया और बोला,—"मित्र! तुम्हें एक काममें मेरी सहायता करनी होगी। मैं एक स्त्रीको हर

लाना चाहता हूँ, तुम उसके पति और देवरको भ्रममें डालनेके लिये सुन्दर सुनहले मृगका रूप बनाओ। इधर वे तुम्हें मारने आयेंगे, उधर मैं उनकी उस स्त्रीको ले भागूँगा।" पर लाख दुष्ट होते हुए भी मारीच आना-कानी करने और ऐसा कुकर्म करनेके लिये रावणको रोकने लगा। अन्तमें जब रावणने उसे बहुत डराना-धमकाना शुरू किया, तब वह तैयार हो गया और ये दोनों दुष्ट क्रमशः पञ्चवटीके पास आ पहुँचे।



उस दिन तीनों वनवासी अपनी पर्णकुटीमें बैठे हुए तरह तरहके मनोहर वार्त्तालापमें उलझे हुए थे। इसी समय थोडीही दूरपर उन्हें एक सुन्दर सोनेका हरिण चरता हुआ दिखाई दिया। सबसे पहले सीताकीही दृष्टि उसपर पडी। उसकी वह सोनेकीसी दपदपाती हुई कान्ति, वह उछल-कूद, वह दौड-धूप देख, सीताका मन मोहित हो गया। उन्होंने अपने स्वामीसे बडे विनीत और कोमल वचनोंसे कहा,—"आर्यपुत्र! देखिये यह कैसा सुन्दर सुनहला मृग है! इसे पकडकर आश्रममें बाँध रखना चाहिये। यदि जीता न मिले, तो मराही ले आइये, क्योंकि इसकी छाल बडी सुन्दर होगी और उसपर बैठकर मुझे परम आनन्द होगा।"

रामको भी उस मृगका मनोहर रूप भा गया था, अतएव वे अपनी प्रियतमाके अनुरोधको सुनतेही झटपट तैयार हो गये। जाते-जाते उन्होंने लक्ष्मणसे कहा,—"भाई! मैं तो इस मृगका पीछा करता हूँ। देखना, तुम बडी सावधानीके साथ सीताकी

रखवाली करना, क्योंकि वनमें तरह-तरहके मायावी राक्षस फिरा करते हैं। कहीं सीताको किसी तरहकी विपत्ति या कष्ट न उठाना पड़े! विराधवाली बात तो तुम भूले न होगे? उस बार हमलोग कैसे सङ्कटमें पड़ गये थे?"

यह कह, राम चले। मृग उन्हें देखतेही दौड़कर भागा। भागते-भागते वह उन्हें बहुत दूर ले गया। वह कभी दृष्टिके सामने आता और कभी बड़ी देरतक छिपा रह जाता था। इस तरह उसने रामको अच्छी तरह खेल खिलाया। उसका यह व्यवहार देख, रामका माथा ठनका। वे सोचने लगे,—"यह तो कोई साधारण मृग नहीं मालूम होता। यह निश्चयही कोई राक्षसी माया है। पर चाहे राक्षस हो या वास्तविक मृग, मैं तो इसे अवश्य ही मारूँगा।" यही सोच, उन्होंने इस बार उसको देखते ही निशाना ताककर तीर छोड़ा, जिसके लगतेही वह दुष्ट "हा लक्ष्मण! हा सीता!!" कहकर पृथ्वीपर गिरपड़ा और तुरतही मर गया।

इधर माया-मृगका रूप धारण किये मारीच मारा गया, उधर उसके मरते समयके "हा लक्ष्मण! हा सीता!!" आदि वचनोंने उस शून्य वनस्थलीमें गूँजते हुए पर्णशालामें बैठी हुई सीता और लक्ष्मणके प्राण कम्पित कर दिये। लक्ष्मण तो तुरतही सम्हल गये, क्योंकि उनको अपने विश्व-विजयी भ्राताके वीरत्वमें अटल विश्वास था, परन्तु सीताका कोमल स्त्री-हृदय इससे अधीर हो उठा। उनके नेत्रोंमें नीर भर आया। उन्होंने व्याकुल होकर कहा,—"देवरजी! शीघ्र जाओ, देखो—तुम्हारे पूज्य भैयापर

कोई सकट आया ज्ञान पड़ता है, क्योंकि आजसे पहले मैंने कभी उनके मुँहसे ऐसा आर्त्तनाद निकलते नहीं सुना था। शीघ्र जाओ, विलम्ब न करो।"

यह सुन, लक्ष्मणने कहा,—"माता! तुम व्यर्थ क्यों घबराती हो? भैयाके ऊपर कभी किसी तरहका सङ्कट नहीं, आ सकता। उनके मुँहसे ऐसी दीनता-भरी बातें कदापि नहीं निकल सकतीं। हमें भ्रममें डालनेके लिये किसी राक्षसने ही यह चाल खेली है। ठहर जाओ, वे अभी मृगको मारकर आतेही होंगे। मैं तुम्हें अकेली छोड़कर कहीं नहीं जा सकता।"

परन्तु प्रेमी हृदय सदा अशुभकीही आशङ्का करता रहता है, यह सौ-सौ तरहसे अपने प्रीति पात्रके काल्पनिक दु खोंके चित्र अङ्कितकर दु खित, व्यथित और चिन्तित होता रहता है। क्या स्वामी, क्या स्त्री, क्या पिता, क्या माता, क्या पुत्र—ससारमें जिस किसीपर हमारा अधिक स्नेह होता है, हम सदा उसकी बुराईकी आशङ्का करके घबराया करते हैं। उसके कुछही देर आँखोंकी ओट होनेसे, हम सोचने लगते हैं, कि राम जानें, हमारा प्रिय इस समय कैसे कष्टसे समय बिता रहा होगा। वह सुखी होगा, निश्चिन्त होगा—यह बात तो हमारे मनमें कदाचितही पैदा होती है, हमको केवल उसके कष्टहोकी सूझती है। एक तो प्रेमका यह साधारण नियम है; तिसपर मायावी राक्षसका कौशल हो गया। फिर भला सीताका मन कैसे धीरज धरता? वे लक्ष्मणपर बहुत बिगड़ उठीं और उन्हें लाखों बुरी-भली कह गयीं। उन्होंने उनकी ऐसी लाञ्छना की, कि लक्ष्मण

लाचार होकर सीताकी आज्ञा सिरपर चढ़ा, रामके अनुसन्धानमें चल पड़े। जाते-जाते उनके मनमें भय, आशङ्का और ग्लानिकी आँधीसी बहने लगी। एक तो उन्हें रामका डर था, दूसरे सीताको अकेली छोड़ जानेका सोच था, तीसरे उनके तानेभरे वाक्योंकी मर्म-वेदना थी। वे बार-बार पीछे फिर-फिरकर आश्रमकी ओर देखते जाते थे। उस समय लक्ष्मणके हृदयमें कुछ वैसेही भाव थे, जैसे भावोंसे भरकर गौका बछड़ा अपनी मातासे बिछुड़ते समय, उसे बार बार पीछे फिरकर देखता जाता है।



इस तरह दोनों भाई जब कुटीके बाहर चले गये, तब रावण, जो वहीं छिपा हुआ अवसरकी प्रतीक्षाकर रहा था, सन्यासीका वेश बनाये, कुटीके द्वारपर आया और भीख माँगी। सीताने उस कपटी संन्यासीका कपट न पहचाना और बाहर निकलकर भिक्षा देने आयीं। उस बने हुए सन्यासीने भीखकी बात तो किनारे रख दी और लगा प्रेमका गीत गाने। उसने सीताके रूपकी बड़ाई करते हुए उन्हें तरह-तरहकी प्रेम-कथाएँ सुनानी आरम्भ कीं। अन्तमें उसने कहा,—"सुन्दरी! जिसके नामसे देव, दानव, गन्धर्व, किन्नर, मनुष्य—सभी भयसे काँप उठते हैं, मैं वही लङ्का-पति रावण हूँ। मुझे कोरा भिखारीही न जानना। हाँ, तुम्हारे रूपका भिखारी अवश्य हूँ। अब, सीधे मनसे मेरे साथ चली चलो और लङ्काका राज्य सुख भोगो, इस झोपड़ेमें क्या रखा है!"

उसके इन दुष्टता-भरे वचनोंको सुनतेही सीताके भय और विस्मय तो हवा हो गये, उनके स्थानमें सतीत्वका तेज और अपमान जनित क्रोध पैदा हो आये। तनिक भी डरे या सकुचाये बिना, बड़ी धीरता और गम्भीरताके साथ सीताने कहा,—"रे मूर्ख! तू ये कैसी बातें कर रहा है? क्या तेरे सिरपर काल सवार है, जो स्यार होकर सिंहकी स्त्रीकी ओर दृष्टिपात करता है? तू कितना भी है तो राक्षस है और मैं मनुष्योंमें श्रेष्ठ रामकी भार्या हूँ! तेरी क्या सामर्थ्य, जो मेरे ऊपर कुदृष्टि करे! अपना भला चाहता है तो अभी अपना मुँह यहाँसे काला कर, नहीं तो देवर सहित मेरे स्वामी आतेही तेरी बोटी-बोटी चील-कौओंको भेंट कर देंगे। तू वामन होकर चाँद पकड़ने आया है? जा-जा, एक बार आइनेमें अपना मुँह तो देख आ, पापी!"

सीताकी यह फटकार सुन और उनके मुखमण्डलपर झलकते हुए सतीत्वके अपूर्व तेजको देख, पहले तो रावण बहुत सकपकाया, परन्तु जो आदमी भले-बुरेके विचारसे रहित हो, अपने परिणामकी बात भूल जाता है, वह लाख बाधा विघ्नोंकी उपेक्षा करते हुए भी आपके पथमें पैर रखे बिना नहीं मानता। रावण भी इस समय विचार शून्य, अपरिणामदर्शी और धर्माधर्मके ज्ञानसे रहित हो रहा था। अतएव जब उसने देखा, कि यह सती झूठे प्रेमके प्रलोभनकारी वचनोंके फन्देमें न आयेगी, तब उसने बल-प्रयोग करनेकी ठानी और उन्हें झटपट पकड़कर अपने पासही खड़े हुए रथपर बैठा लिया। अब तो सीता बड़ी विवश हो गयीं और गिड़-गिड़ाकर उससे प्रार्थना करने लगीं

कि मुझे छोड दे , अकेली अबलाको न सता । पर वहाँ कौन धर्मकी कहानी सुनता था ? रावणने रथको हाँकही तो दिया, अब सीता धीरज छोड़कर रोने लग गयीं, जिसे सुनकर वनके पशु-पक्षियोंके प्राण भी व्याकुल हो गये । वे सिसक-सिसक-कर कहने लगीं—

"हा पृथ्वीके श्रेष्ठ वीर ! रघुकुलके अलङ्कार ! तुम कहाँ हो ? कैसे असमयमें तुम मुझसे न्यारे हुए ! हा, लक्ष्मण ! तुमको मैंने व्यर्थही कडी-कडी बातें कही, तुम्हें जान बूझकर आश्रमसे बाहर भेजा । अब समझी, कि यह सारा प्रपञ्च इसी दुष्टने रचा था । क्षमा करना, देवर ! मैं तुमसे सच्चे, ब्रह्मचारी और भ्रातृ-वत्सल देवरको कटु-वचन कहनेकाही फल पा रही हूँ । हा ! आज कैकेयीकी छाती ठडी हुई—उनकी सोची पूरी हुई । आज मैं, मर्यादा-पुरुषोत्तमकी पत्नी होकर, इस अधम पापीके पञ्जेमें आ पडी हूँ ! प्राण ! अब भी क्यों नहीं निकल जाते ? हा ! क्या इस संसारसे धर्म्म उठ गया ? एक निरपराधिनी अकेली अबला-पर इस दुष्टने इतना अत्याचार किया और अबतक छाती अकडाये खडा है ! मर क्यों नही जाता ? इसके हाथ पैर गल नही जाते ? हे पञ्चवटीके पशु-पक्षियो ! दोनों भाइयोंके आतेही तुम लोग इस अत्याचारकी कथा उन्हें सुनाना और इस दुष्टके पञ्जेसे इस दुःखिनी अबलाका उद्धार करनेको कहना । माता गोदावरी ! तुम उन पुरुष पुङ्गवसे कहना, कि होमकी खीर आज गधा लिये जाता है । हे वनके देवी-देव ! तुम मेरे स्वामीसे लङ्कापतिको अन्यायका दण्ड देनेके लिये अवश्य कहना । हाय ! मेरा विलाप क्या किसीके कानोंमें नहीं पडता ? सतीके आर्त्त-

ादपर क्या किसीका हृदय विदीर्ण नहीं होता ? आइयो ! जो कोई जीव-जन्तु यहाँ हो, मेरे इस घोर दुःखकी बात सुन रखो, स्वामीके आतेही उनसे इस दुखियारीको दुर्गतिका वर्णन करो।"

सीताका यह विलाप अन्ततक वनके शून्य वयुमण्डलमें हवासे टकराता हुआ उड जाता था। कोई ऐसा जीव नहीं था, जो सीताकी सहायताको आगे आता। रावण, स्वच्छन्द-भावसे सीताको विमान-पर बैठाये हुए आकाश-मार्गसे लङ्काकी ओर ले चला।

इसी समय आकाशको अपने पंखोंके झकोरे और चीत्कारसे गुंजाते हुए, गीधोंका राजा जटायु, सीताका विलाप सुन व्याकुल हो, बडे वेगसे उडता हुआ रावणके विमानके पास आ पहुँचा और सीताको आश्वासन देता हुआ रावणसे घोर युद्ध करने लगा। उसने मारे चोंचोंके रावणकी देह लहूलुहान कर दी और उसका विमान चूर-चूर कर दिया। विमान टूट जानेसे रावण पृथ्वीपर आ गिरा और दोनोंकी घमासान लडाई होने लगी। जब रावण बहुत घायल हो चुका, तब उसने मारे क्रोधके तलवार निकाल, गृध्रराजके दोनों पङ्ख काट डाले। पङ्ख कटतेही वह जड कटे वृक्षकी तरह अधमरा होकर पृथिवीपर गिर पडा। रावण किसी तरह अपने रथकी मरम्मतकर सीताको फिर आकाश-मार्गसे ले चला। एक बार फिर सीता जालमें फँसी हुई मृगीकी तरह आर्त्तस्वरसे विलाप कर उठीं। उस आर्त्त-ध्वनिसे सारी वनस्थली काँप उठी। जब कोई उपाय न बन पडा, तब सीता रास्ते-भर अपने शरीरके गहने एक एक करके डालती गयीं, कि कदाचित् मेरे गहनोंको

चानकर दोनों भाइयोंको यह जाननेमें सुविधा होगी, कि मैं किस रास्ते गयी हूँ। रावण अपनी दुष्ट इच्छा और क्रूर कामनाकी सफलतापर फूलकर कुप्पा हुआ जाता था। अतएव उसने सीताको इस प्रकार गहने उतार-उतारकर फेंकते नहीं देखा।

विमान-बलसे वायुमण्डलमें विचरण करता हुआ पापी रावण जालबद्ध हिरनीकी नाईं तड़पती हुई सीताको लिये-दिये अल्पकालमें लङ्कामें आ पहुँचा। कई बातोंका विचार कर उसने सीताको अपने अन्तःपुरमें न रखकर 'अशोक-वाटिका' नामकी अपनी फुलवारीमें ला उतारा और उनपर विकट राक्षसों और भयावनी राक्षसियोंका पहरा बैठा दिया।



मृगरूपी राक्षसको मार उसके मरते समयके 'हा! लक्ष्मण हा सीते!' कहकर चिल्ला उठनेकी बातपर तरह तरहके तर्क-वितर्क करते हुए रामचन्द्र लौट चले। चलते-चलते वे भयाकुल चित्तसे सोचते थे, कि कहीं इस झूठी पुकारको सुन, घबराकर लक्ष्मण मेरी खोजमें सीताको अकेली छोड़कर न चल पड़ें! यही सोचते हुए वे जल्दी-जल्दी पैर बढ़ाते चले जारहे थे, कि आधेही रास्तेमें लक्ष्मण मिल गये। उनकी वह बावलीसी मूर्त्ति देखनेही रामचन्द्रका हृदय काँप गया। उन्होंने लक्ष्मणको देखते ही घबराहटके साथ [illegible] "लक्ष्मण! [illegible] क्या किया? मेरे इतना चेता [illegible] चले आये? भाई! [illegible]

खर-दूषणके मारे जाने और शूपणखाके नाक-कान कटनेसे सारे राक्षस हमारे वैरी हो गये हैं। ऐसी अवस्थामें तुम यह क्या कर आये? प्यारे भाई! मेरी बायीं आँख न जाने क्यों फड़क रही है? मालूम होता है, कि सीतापर कोई विपद अवश्य आयी। जल्दी चलो। तुमने मेरी आज्ञा उल्लङ्घन कर, अच्छा काम नहीं किया।"

तब लक्ष्मणने सीताके घबराने और उसी घबराहटमें आकर, शङ्का-भरे कटुवचन कहनेका सारा हाल रामसे कह सुनाया और आँखोंमें जल भर लाये। यह सुन, रामने सोचा,—"अवश्यही, आज हमपर कोई भारी विपद् आनेवाली है, नहीं तो जिन सीताके मुखसे आजतक कभी किसीके प्रति कटु-वचन नहीं निकला, वेही आज इस प्रकार लक्ष्मण जैसे आज्ञाकारी देवरपर वाक्य बाणोंकी बौछार क्योंकर करतीं? अवश्यही राक्षसोंकी माया काम कर गयी और उन्होंने हम दोनोंको भ्रममें डालकर आश्रमसे अलग कर दिया। सीताको सूनी कुटीमें अकेली पा, न जाने उन दुष्टोंने कौनसा उपद्रव कर डाला होगा!" यही सब सोचते विचारते, मलिन मुख किये, दोनों भाई कुटीमें आये।

शङ्का व्यर्थ न गयी। उन्होंने कुटीमें प्रवेश करतेही देखा, कि वह तो सूनी पड़ी है—सीता नहीं है। देखतेही दोनों भाइयोंकी सारी सुध-बुध जाती रही। रामचन्द्रने, अपनी प्राण-समान प्यारी भार्य्याको न देख, ऊँचे स्वरसे, "सीता! सीता!! जानकी! जानकी!!" कहकर कितनी बार पुकारा, परन्तु सिवाय प्रतिध्वनिके किसीने उनकी पुकारका उत्तर नहीं दिया। अब

प्रवल वेगके कारण रामचन्द्रका धीर हृदय अधीर हो गया और वे बालककी भाँति पुक्का फाड़कर रोने लगे। लक्ष्मण उनके दुःखसे सौगुने अधिक दुःखी हुए, परन्तु उन्होंने देखा, कि दोनोंके अधीर होनेसे बड़ा भारी अनर्थ हो जायेगा, अतएव बड़े साहसके साथ अपनेको सम्हालकर तरह-तरहसे बड़े भाईको समझाने लगे; परन्तु रामचन्द्रको किसी तरह धैर्य्य नहीं हुआ। वे रोते-रोते मूर्च्छित हो गये। किसी-किसी तरह उनको होशमें लाकर, लक्ष्मणने उनसे धैर्य्य धारण करने और सीताकी खोज करनेके लिये कहा और यह भी कहा, कि सम्भव है, कि वे कहीं पुष्प आदि लेने चली गई हों, अभी आ जायेंगी—अधीर होनेकी कोई बात नहीं। परन्तु रामचन्द्रके शोकका वेग बढ़ताही गया। उनका हृदय कह रहा था, कि लक्ष्मण यह झूठी आशा दिला रहे हैं?

हमारे कुछ नव-शिक्षित, कुसंस्कार-पूर्ण मित्र रामचन्द्रकी इस विकलतापर हँसी उड़ाते हुए कह सकते हैं, कि 'उनकी यह घबराहट, उनके हृदयका महत्व नहीं, वरन् निर्बलता, प्रकट करती है। पुरुषका स्त्रीके लिये इतना विलाप करना उसके पुरुषत्वको कलङ्कित करना है।' परन्तु जिसने कभी प्राणोंका समस्त प्रेम देकर एक-मात्र अपनी पत्नीकोही प्यार किया होगा, जिसने अपनी पत्नीके अतिरिक्त समस्त संसारकी स्त्रियोंको मातृ-भावसे देखा होगा, जिसने अपनी पत्नीको छोड़, परायी नारीकी ओर दृष्टि भी न दी होगी, जिसे सतीत्वकी जाज्वल्यमान मूर्त्तिके समान सहधर्म्मिणी पानेका सौभाग्य प्राप्त हुआ होगा तथा जिसे एक-पत्नीव्रतकी महिमाका कणा मात्र भी ज्ञान हुआ होगा, वही

सीता जैसी आदर्श सती, आदर्श गृहिणी, और आदर्श नारीके स्वामीके वियोग-विकलित प्राणोंकी विकलताका कुछ कुछ अनुमान कर सकता है।

बड़ी देरतक विलाप कर, भर-पेट आँसू बहा, रामचन्द्रने, लक्ष्मणको साथ ले, वनमें सर्वत्र सीताको ढूँढना आरम्भ किया, पर उनका रोना किसी तरह कम न हुआ। वे जब खोजते-खोजते हार जाते और सीताको न पाते, तब उच्चस्वरसे रो उठते। उन्होंने वनके पेड़ों, पत्तों, फूलों, फलों और पशु-पक्षियोंसे भी रो-रोकर सीताका पता पूछा—पर हाय! कोई उनके हृदयकी अग्निको बुझानेके लिये शान्ति-जलका एक छींटा डालनेमें भी समर्थ नहीं हुआ!



इसी तरह खोजते-खोजते वे बहुत दूर चले गये और वनके कोने-कोनेमें घूम आये, पर सीताको पाना तो दूर रहा—उन्होंने उनका पता भी न पाया! वे निराश होकर लौटाही चाहते थे, कि उन्होंने देखा, कि थोड़ी दूरपर गीधोंका राजा, जटायु, रक्तसे तराबोर और पङ्खसे हीन होकर, पृथ्वीमें पड़ा हुआ, मारे पीड़ाके छटपटा रहा है। उसकी यह दशा देख, रामचन्द्र थोड़ी देरके लिये अपना दुःख भूल गये और उस गृध्रकी सेवाके लिये अग्रसर हुए। उस समय रामचन्द्रने जैसी उदारता, जैसी प्रीति और जिस उत्साह-भरे आग्रहके साथ उस दीन पक्षीकी सहायताके लिये हाथ बढ़ाया, उसकी कौन प्रशंसा न करेगा? दूसरेका दुःख देखकर, जो

दु ख भूल जाते हैं, वास्तवमें वेही महान् पुरुष हैं,—उन्हींका नाम युग-युगान्तरके लिये अमर हो जाता है! अस्तु, रामचन्द्र लपके हुए गृध्रराजके पास आये और उसे गोदमें ले, जलके छींटे देकर उसे स्वस्थ करनेकर चेष्टा करने लगे। गृध्र उस समय अचेत था, मारे व्यथाके उससे बोला नहीं जाता था। उसकी यह दशा देख, रामचन्द्र खिन्नस्वरसे रोने लगे। उन्हें अपना दु ख भूल गया। केवल उस दीन पक्षीके प्रति दयासे उनका हृदय भर उठा। उनकी इस दयालुताका चित्र अङ्कित करता हुआ कवि कहता हैं,—

दीन मलीन अधीन ह्वै अग, विहंग पर्‍यो छिति छीन दुखारी।
राघव दीनदयाल कृपालको, देखि दशा करुणा भई भारी॥
गृद्धको गोदमें लेइ दयानिधि, नैन सरोजनिमे भरि वारी।
वारहि वार सुधारत पख, जटायुकी धूरि जटानसो झारी॥

बड़े सेवा-यत्नके बाद परोपकारी गृध्रराजको चैतन्य हुआ। उसने, रामचन्द्रकी यह करुणा देख, कृतज्ञता प्रकट करते हुए कहा,—"तुम लोग आ गये? अच्छा हुआ, जो तुमसे मिलनेके पहलेही मेरे प्राण शरीरसे नहीं निकले। तुमको संवाद दिये बिना मेरे प्राण निकलते हुए भी नहीं निकलते थे। तुम आ गये, अब मैं शान्तिपूर्वक अनन्त निद्रामें शयन करूँगा।"

जटायुकी ये बातें रामके कोमल हृदयमें तीरकी तरह चुभ गयीं। "हाय! न जाने, यह मरता हुआ वीर-पक्षी कैसा दु सवाद सुनायेगा?" यही सोचकर वे दु खित और अधीर होने लगे। इसी समय जटायुने रुक रुककर, धीरे-धीरे, सीताहरण और

अपने युद्धका सारा हाल रामचन्द्रको कह सुनाया ! सुनतेही वे हथेलीपर सिर रख, पत्थरकी मूर्त्तिकी नाईं बैठ रहे।

अबतक वे जिसे दुःखी समझकर करुणा-भरे हृदयसे उसकी सेवा-शुश्रूषा कर रहे थे, वह तो उनके दुःखका साथी, गाढे दिनोंका मित्र, निःस्वार्थ परोपकारी निकला ! कृतज्ञताके मारे रामका हृदय भर आया और वे बार-बार उसका आलिङ्गन करने लगे ! परन्तु उपकारीके उपकारका बदला वे न दे सके—वीर जटायुकी आयु पूरी हो चुकी थी, उसके प्राण देहको छोड, अनन्तमें जा मिले थे—केवल शस्त्रोंसे छिदा हुआ नश्वर शरीर उनकी गोदमें पडा था ! मानों रामचन्द्रको उनकी प्रियतमाका पता देनेहीके लिये उसके प्राण अबतक नहीं निकले थे। किन्तु खेद, कि वीरवर प्रत्युपकार ग्रहण करनेके लिये जीवित न रहा !

जटायुकी मृत्युसे रामचन्द्रको बडा दुःख हुआ, परन्तु कालके आगे किसीका कोई वश नहीं—यह सोच, उसकी देहका विधि-पूर्वक संस्कार कर, दोनों भाई आगे बढे। हृदयमें घोर झञ्झावायु प्रवाहित हो रही थी, मस्तिष्क चञ्चल था, पैर सीधे नहीं पडते थे। केवल एकही धुन लग रही थी—सीताको किसी प्रकार खोज निकालना। जटायुने पता बतलाही दिया था, कि वह दुष्ट दक्षिणकी ओर गया है अतएव वे सीधे दक्षिण ओर पैर बढ़ाये चले जाते थे।

रास्तेमें अनेक मनोहर दृश्य मिलते थे, बहुतेरे ऋषि मुनियों और सयम शील, संसार-त्यागी, भगवद्भक्तोंके आश्रम दिखाई पडते थे, परन्तु उनका ध्यान किसी ओर न था। वियोगकी

साक्षात् मूर्त्ति राम और सेवाके भावोंसे भरे, सहानुभूति और सहृदयताकी खान लक्ष्मण, एकमात्र सीताको ढूँढ निकालनेकीही चिन्तामें लवलीन हो, जल्दी-जल्दी पैर बढाये हुए चले जा रहे थे।

इसी तरह जाते-जाते वे लोग 'पम्पा' नामक एक प्रसिद्ध सरोवरके पास आ पहुँचे। उसके निकटही एक बडा सुन्दर आश्रम बना हुआ था। न जाने क्यों, रामचन्द्रसे वहाँ ठहरे बिना न रहा गया। उस आश्रममें 'शबरी' नामकी एक बुढ़िया भीलनी बहुत दिनोंसे रहती और रात-दिन ईश्वरके भजन-पूजनमें मन लगाये जीवनके दिन पूरे कर रही थी। नीच-वंश और स्त्री-कुलमें जन्म पाकर भी वह साधु-सन्तोंके सत्सङ्गके प्रभावसे भक्ति-मार्गमें परम प्रवीण हो गयी थी। उसके इसी धर्म्म-भावने रामचन्द्रको आकर्षित किया और प्रियतमाके विरहसे व्याकुल हृदयको क्षणभर शान्ति देनेके लिये वे वहाँ ठहर गये। शबरीने इन तेजस्वी अतिथियोंका बडे प्रेमसे आदर स्वागत किया। उसके ज्ञान-पूर्ण वार्त्तालाप, सदाचार-पूर्ण जीवन और हृदयसे किये हुए अतिथि सत्कारने दोनों भाइयोंके मनको मुग्ध कर लिया। जब उन्होंने शबरीसे विदा माँगी, तब उसने कहा,—"आपलोग ऋष्यमूक-पर्व्वतपर चले जायें, वहाँ आप किष्किन्धाके राजाके छोटे भाई, सुग्रीवसे मित्रता कर ले। उससे आपको सीताका उद्धार करनेमें बडी सहायता मिलेगी। संसारमें मित्रों और सहायकोंकी सख्या बढानेसे बडा काम चलता है। मिल-जुलकर जो काम किया जाता है, वह अच्छा और जल्दी होता है। आप मोह-शोकका तो त्याग कीजियेऔर दृढ होकर अपने

कर्त्तव्यमें लग जाइये।" यह कह, शबरीने बड़े प्रेमसे दोनों भाइयोंके चरण छुए और उन्हें ऋष्यमूक-पर्व्वतकी राह दिखला दी।



शबरीके आश्रमसे विदा हो, वे और भी घने जङ्गलोंकी राह होकर जाने लगे। वनकी शोभा देख-देखकर रामचन्द्रका हृदय फटा जाता था, उनकी आँखोंमें रह रहकर आँसू उमड आते थे। मृग-मृगियोंका वह मिल-जुलकर चरना, वृक्षोंके साथ नन्हीं-नन्हीं लताओंका वह लिपटना, वृक्ष-वृक्षमें नयी नयी पत्रावली, फूल फूलमें नया विकास, भौंरे-भौंरियोंका वह मधुर गुञ्जार, मोर-चकोर कीर आदि पक्षियोंका अमृत-समान कलरव देख-सुनकर उनकी वियोगाग्नि और भडक उठती थी तथा वे अधीर होकर विलाप करने लग जाते थे।

धीरे-धीरे ऋष्यमूक पर्व्वत निकट आ गया। उसकी ऊँची चोटियोंको देखते ही वे समझ गये, कि यही वह पर्वत है जिसका पता शबरीने दिया था। पासही सुन्दर सरोवर था। उसमें स्नानकर दोनों भाइयोंने अपना पथ-श्रम दूर किया। तदनन्तर वे पर्व्वतपर आरोहण करने लगे।

इसी पर्व्वतपर उन दिनों किष्किन्धाके कपि कुलके राजा बालीका छोटा भाई सुग्रीव, अपने मन्त्रियों और अनुचरोंके साथ रहता था। बाली बड़ा दुष्ट, पापी और अत्याचारी था। उसीके डरसे सुग्रीव यहाँ छिपा रहता था। राम और लक्ष्मणका वह वीर वेश, वह तेज पुञ्ज शरीर देख उसने मनमें सोचा, कि

ये भी वालीके भेजे हुए आ रहे हैं और कुछ-न कुछ उत्पात अवश्य करेंगे, परन्तु बिना निश्चय किये अपने जीसे किसी सिद्धान्तपर पहुँच जाना नीतिके विरुद्ध समझकर उसने अपने मन्त्री, हनुमान्‌को बुलाकर कहा,—"हनुमान्! ये जो दो बटुरूप कुमार पर्व्वतर चढ़े आ रहे हैं, उनके पास जाकर उनका परिचय प्राप्त करो। देखो, यदि ये उदासीन हों, तो उन्हें मित्र बना लेना और शत्रु हों, तो वहीं ठिकाने लगा देना।"

आज्ञानुसार हनुमान् उनके पास आये और पूछने लगे,—"आपलोग कौन हैं? किस कामसे और कहाँ जा रहे हैं?" उत्तरमें रामचन्द्रने उन्हें अपना पूर्ण परिचय देते हुए अपने विपत्तिकी बात सुनायी। सुनकर हनुमान्‌का हृदय दयासे भर गया और वे बोले,—"आप लोग अभी हमारे राजा सुग्रीवके पास चलिये, उनसे मिलकर मित्रताका नाता जोड़िये, वे अवश्यही सीता-माताका उद्धार करनेके लिये इधर-उधर दूत भेजेंगे और वे जहाँ कहीं होंगी, वहाँका पता लगवा लेंगे।"

रामचन्द्र तो यह चाहतेही थे—इसीलिये तो उनका यहाँ आना हुआ था। अतएव अपने मनके अनुकूल बातें सुनतेही वे चटपट हनुमान्‌के साथ चलनेको प्रस्तुत होगये। सुग्रीवने आतेही उन लोगोंका बड़ा सम्मान किया और कहा,—"मैं राज्यसे निकाला हुआ, अपनी स्त्रीसे दूर किया हुआ, बड़े दुःखसे अपने दिन यहाँ बिता रहा हूँ। कोई सङ्गी नहीं, साथी नहीं, सहायक नहीं—केवल कुछ थोड़ेसे मेरे अनुरक्त भक्त मेरे पास पड़े हुए मेरे दुःखोंके साझीदार बन रहे हैं। ऐसी अवस्थामें आपका यहाँ

आना मैं अहोभाग्य समझता हूँ। आप भी दु:खी हैं, मैं भी दु:खी हूँ—दोनोंकी अवस्था मिलती-जुलती है। आइये, हमलोग मित्रता कर लें। आप यदि मेरी सहायता करें, तो मैं प्राण देकर आपकी पत्नीको खोज निकालूँ और आपसे मिला दूँ।" यह कह, सुग्रीवने दोनों भाइयोंके आगे अपना सिर झुका दिया।

उसी क्षण अग्निको साक्षी देकर, राम और सुग्रीव दोनों जने परस्पर मित्रताके बन्धनमें बँध गये। तब सुग्रीवने रामचन्द्रसे सीता हरणका सविस्तार वृत्तान्त पूछा। उनके बतलानेपर उसे एक भूली-भुलायी बात याद हो आयी। उसने कहा,—"महाराज! कुछ दिन हुए, मैं अपने मन्त्रियों सहित एक दिन यहीं बैठा हुआ परामर्श कर रहा था, कि ऊपर आकाश-मण्डलमें बड़ा भयानक शब्द होता हुआ सुनाई दिया। मैंने ज्योंहीं ऊपर आकाशकी ओर देखा, त्योंही एक विमान बड़ी तेजीसे जाता हुआ दिखाई दिया। मैंने बड़े ध्यानसे कान लगाकर सुना, तो ऐसा मालूम हुआ, मानों कोई स्त्री रो रही है। ज्ञात होता है, वही सीतादेवी थीं और जहाँतक मेरा अनुमान है, वह विमानचारी लङ्काका राजा रावण रहा होगा, क्योंकि इन दिनों उसीके यहाँ विमान आदिकी अधिकता हो रही है। उसी विमानपरसे कुछ गहने भी जहाँ-तहाँ गिरे हुए पाये गये थे। उन्हें हमलोगोंने उठा कर रख दिया था। मैं उन्हें अभी मँगवाकर आपको दिखलाता हूँ। पहचानिये तो सही, कि वे सीतादेवीकेही हैं या नहीं?"

यह कह, सुग्रीवने वे आभूषण मँगवाये। देखतेही रामचन्द्र धीरज छोड़कर रोने लगे—उन्होंने एकही दृष्टिमें पहचान लिया

कि वे गहने सीताकेही शरीरकी शोभा बढ़ानेवाले थे। यद्यपि उनकी आँखोंको धोखा हो ही नहीं सकता था, तो भी शोकाकुल हृदयकी अधीरतामें भ्रमका हो जाना कुछ आश्चर्य-जनक नहीं, अतएव उन्होंने पास बैठे हुए लक्ष्मणसे कहा,—"भाई! तनिक तुम भी देखो, कि ये गहने सीताकेही हैं या किसी औरके?"

लक्ष्मणने आज्ञानुसार उन आभूषणोंको उलट-पुलटकर भली भाँति देखा और कहा,—

"नाहं जानामि केयूरे नाहं जानामि कुण्डले।
नूपुरे त्वभिजानामि नित्यं पादाभिवन्दनात्॥

अर्थात्—"पूज्य भाई साहब! मैं इन बाजूबन्दों और कानोंके कुण्डलोंको तो नहीं पहचानता। हाँ, इन नूपुरोंको अवश्यही पहचानता हूँ, कि ये भाभीके हैं, दूसरी किसीके नहीं, क्योंकि नित्य प्रणाम करते समय मेरी दृष्टि इनपर पड़ती थी।"

पाठक-पाठिकाओ! देखा आपने? लक्ष्मणके इस उत्तरका कितना गूढ़ अर्थ है, तनिक विचारिये तो सही। वर्षों साथ रहकर भी आजतक लक्ष्मणने माता-तुल्य भाभीके शरीरके गहनोंको भी नहीं देखा था! हाय भारतके वे दिन कहाँ चले गये, जब बड़े और छोटे भाईमें ऐसी भक्ति, ऐसी अलौकिक प्रीति, ऐसा स्वर्गीय सम्बन्ध था? आजकल तो लड़कपनसे देवर अपनी भाभियोंसे ऐसी फूहड़ दिल्लगियाँ करना सीख जाते हैं, जिन्हें सुनकर भावुक हृदयको बड़ा आघात पहुँचता है और कानोंको बन्दकर लेनेकी इच्छा होती है। जहाँ भाभीकी चरण-सेवाके अतिरिक्त उसके अङ्गोंकी ओर देखना भी पाप

समझा जाता था, उसी भारतमें राम और लक्ष्मणको आदर्श माननेवाले हिन्दू-बालक होलीके दिनोंमें भाभीके साथ होली खेलते, पिचकारी भरकर अङ्ग अङ्गमें रङ्ग डालते और भलेमानसों-के न सुनने योग्य परिहास करते हैं! कितनी लज्जाका विषय है! इस कथाके पढनेवालोंमेंसे यदि एक भी देवर अबसे अपनी भाभियोंसे दिल्लगी करना और होली खेलना बन्द कर दें, तो हम समझेंगे, कि उन्होंने लक्ष्मणके आदर्शसे शिक्षा ग्रहण की और हमारा यह लेखनी-घर्षण सफल हो गया। बडा भाई पिता तुल्य है, उसकी पत्नी माताकी बराबर हुई, फिर उससे परिहास! कितनी बडी नीचता, कैसी घृणित बात है!

अस्तु, लक्ष्मणकी बातोंसे रामचन्द्रको निश्चय हो गया, कि सचमुच ये आभूषण सीताकेही हैं और वे इन्हें इसीलिये डाल गयी हैं, जिसमें हमें उन्हें खोज निकालनेमें सुविधा हो। ऐसा निश्चय होतेही रामचन्द्र, प्रियतमाकी याद कर बडे विकल हो गये और अधीर होकर विलाप करने लगे। यह देख, सुग्रीवने उन्हें समझाना आरम्भ किया और सीताका पता लगाकर उन्हें फिर रामचन्द्रसे मिला देनेकी प्रतिज्ञा की। इससे उन्हें धीरज हुआ और दोनों मित्र एक दूसरेकी सहायता करनेके लिये प्रतिज्ञाबद्ध हुए।



सीता-सन्देश



पाठक पाठिकाओंने सीताकी सुध बहुत देरसे नहीं ली है
अतएव, आइये, आपलोगोंको हम उस अशोक-वाटिका
लेचलते हैं, जहाँ शोककी मूर्त्ति सीता बैठी हुई अपने दुःखके दि
बिता रही हैं।

कहा जा चुका है, कि रावणने सीताको अशोक-वाटिकाम
ला रखा है और उनकी रक्षाके लिये वहाँ राक्षसियोंके झुण
नियुक्त कर दिये हैं। जिस दिन वे वहाँ आयी उसी दिनसे वे
दुष्ट राक्षस और राक्षसियाँ सीताको तरह-तरहसे फुसलानेकी
चेष्टा करतीं और उन्हें सुना सुनाकर रावणके बल, पराक्रम और
ऐश्वर्य्यकी लाख-लाख प्रशंसाएँ किया करती थीं। उनके वे
तीरकैसे वचन पतिप्राणा सीताके हृदयमें चुभ जाते थे, पर वे
करही क्या सकतीं थीं? जब सुनते-सुनते उनके कान वाक्य विषकी
ज्वालासे जल उठते थे, तब वे छाती पीट पीटकर इस प्रकार
विलाप करने लगती थीं —

“हा प्राणनाथ! जानकी-जीवन! तुम कहाँ हो? इस अभागी

नेत्रोंको फिर कभी तुम्हारे दर्शन न होंगे ? तुम्हारे क्षणभर वियोगमें मैं कितनी अधीर हो जाती थी, वह क्या तुम भूल गये ? फिर क्यों नहीं शीघ्र आकर इस सङ्कटसे मेरा उद्धार करते ? क्या अभी तक तुमलोगोंने मेरी सुध नहीं पायी ? किसीने इतनी दया न की, जो मेरा पता तुम दोनोंको देता ? क्या मेरे उन अभूषणोंने भी नहीं बतलाया, कि मेरे ऊपर कितना बडा अत्याचार किया गया है ? नाथ ! मैं अबतक इन पाप-भरे वचनोंको सुननेके लिये कदापि जीती न रहती, अवश्यही प्राण-त्याग कर देती, पर केवल तुम्हारे उस अनुपम सुन्दर देवभाव पूर्ण मुख-मण्डलको देखनेकेही लिये प्राण त्याग नहीं किया जाता। हाय ! कौन मेरा यह आर्त्तनाद प्राणेश्वरके कानोंतक पहुँचा देगा ? कौन उन्हें इस पापीको पूरा दण्ड देनेके लिये यहाँ बुला लायेगा ? जनककी पुत्री, दशरथकी पुत्रवधू और महावीर रामकी पत्नी होकर भी क्या मेरे भाग्यमें यही लिखा था ? चाहे जो हो, मैं मरूँगी—अवश्य अपने हाथों अपनी हत्याकर डालूँगी प्राणपतिके वियोगमें मैं अधिक कालतक कदापि जीवन धारण नहीं कर सकती। पर हाय ! मृत्युका द्वार भी तो बन्द है ! ये पहरेदार और पहरेदारिनें तो पलभर भी मुझे आँखोंकी ओट नहीं होने देतीं ! करूँ तो क्या करूँ ? हा ! मुझसी हतभागिनी और कौन होगी ?"

इस प्रकार रोते-रोते वे मूर्च्छित हो जातीं और राक्षसियाँ उन्हें बड़े यत्नसे होशमें लाती थीं। जितनी देर मूर्च्छा रहती, उतनीही देरतक मानों उनके प्राणोंको कुछ शान्ति मिल जाती

थी, नहीं तो मुर्च्छा भङ्ग होतेही फिर वही दारुण शोकका प्रवा
जारी हो जाता और वे आँसुओंसे पृथ्वी भिगोने लगती थीं।



एक तो, अपने स्वामीके विरहमें सीता योंही दुःखसे घु
जाती थीं, दूसरे इन रक्षक-रक्षिणियोंके उपद्रवसे तो उनके प्रा
और भी सङ्कटमें पड़े हुए थे। बीच-बीचमें दुष्टोंका सरदा
पापका अवतार, रावण भी आकर सीताको अपनी दुर्वास
और दुष्टता-भरे वचनोंसे पीड़ित किया करता था। उस कामी
न जाने कितनी अबलाओंका सतीत्व नाश किया था, कितनी
उसके डराने-धमकाने और प्रलोभन दिखानेसे उसके वशमें
गयी थीं—परन्तु सीताके आगे उसकी एक न चलने पाती थी
भला ज्ञान वैराग्यके भण्डार, राजा जनक जिनके जनक थे, सत्य
लिये प्राणोंको त्याग देनेवाले सत्यसन्ध राजा दशरथ जिनके सस
थे, पिताके वचनोंकी रक्षाके लिये अयोध्याके चक्रवर्त्ती राज्य
लात मारनेवाले पुण्य-जीवन रामचन्द्र जिनके प्राणोंके प्राण, इ
लोक-परलोकके देवता और जीवन-मरणके सहचर थे, उन सी
देवीपर उस कामनाके दास, दुष्प्रवृत्तियोंके अनुचर और दुष्ट मन
के उपासककी कोई कला कैसे लग सकती थी? रावण सोचत
—"यह अबला होकर भी आत्मिक बलसे महा प्रबला है। यह
तेजोमण्डल इसके मुखचन्द्रको प्रकाशमान कर रहा है, वह क
साधारण सौन्दर्य्य है? यह तो हाड-माँसकी क्षणिक सुन्दरता नह
बल्कि सतीत्वकी कभी मलिन न होनेवाली उज्ज्वल ज्योति है

सचमुच उस ज्योतिके आगे वह क्षणभरके लिये निस्तेज हो जाता था, परन्तु फिर भी अपनी वही अटपटी चालें चलने लगता था। जो संसार दुर्लभ सौन्दर्य्य उसके नेत्रोंके सम्मुख लहरा रहा था, उनका मोह उससे छुडाये नहीं छूटता था—दीपककी ज्योतिमें जल मरनेवाले पतङ्गकी तरह वह भी इस रूप ज्योतिपर मर मिटनेको तैयार था, परन्तु सीताकी अलौकिक दृढता देख और उनकी बार-बारकी फटकारसे लज्जित हो, अपना मुँह ले, लौट जाता था।

एक दिनकी बात सुनिये। सीता अपने स्वामीकी चिन्तामें मलिन मुख किये वृक्षकी छायामें बैठी हुई थीं। चारों ओरसे विकराल वदना राक्षस रमणियाँ उन्हें घेरे हुई थीं। इसी समय दुष्टात्मा रावण वहाँ आ पहुँचा। उसे देखतेही सीताने, लज्जा, घृणा, क्रोध और आत्म-ग्लानिके भावोंसे प्रेरित हो, सिर नीचा कर लिया। वह आतेही बोला,—"सुन्दरी! देखो, मैं तुम्हें इतना समझाता हूँ, पर तुम एक नहीं सुनती। निश्चय जानो, मैं तुम्हारे ऊपर मर रहा हूँ। तुमसी सुन्दरी मैंने कभी नहीं देखी थी। इसीसे मैं प्रतिज्ञा करता हूँ, कि यदि तुम मेरे ऊपर प्रसन्न हो जाओ, तो मैं अपना सर्व्वस्व तुम्हारे चरणोंमें न्यौछावर कर दूँगा। मन्दोदरी मेरी प्रधान महिषी है, पर तुम कहो, तो मैं उसे भी दासी बना दूँ। जो कहो, करनेको तैयार हूँ, परन्तु एक बार मेरी इस विकलताकी ओर देखो। मेरे प्राण तुम्हारे लिये ऐसे व्याकुल हो रहे हैं, जैसे पानी बिना मछली तड़पती रहती है।"

सीताका अङ्ग-अङ्ग लज्जासे भर गया। हृदयमें घोर घृणा और क्रोधके भाव पैदा होगये। उन्होंने वज्रकी भाँति गर्जन करते हुए कहा,—"दुष्ट! तू फिर यहाँ आया? आया मेरा जी जलाने, हृदय दुखाने? नीच! कमल सूर्यकोही देखकर खिलते हैं, लाख जुगनुओंके प्रकाशसे भी उनका विकाश नहीं होता। सती स्वामीसेही प्रेमकी बातें करती है, पराये पुरुषसे बातें करनेमें वह अपमान समझती है। दुष्ट! तू चोरीसे, मेरे स्वामीके अनजानमें बल-पूर्वक मुझे हर लाया, नहीं तो तेरा शिर उनके बाणोंकी मारसे सौ टुकड़े होकर वहीं, उसी क्षण, गिर पड़ा होता। धर्ममें जो धुरन्धर हैं, नीतिमें जो निपुण हैं, सुन्दरताकी जो खान हैं, वीरतामें जो महान् हैं, उन भगवान् रामचन्द्रकी पत्नी होकर मैं तेरी कुटिलता, नीचता और घृणा-भरी बातें सुनती हूँ—यही मेरे लिये रौरव-नरककी यातनाके समान है। तू किस विरते-पर मुझसे अधर्मकी आशा करता है? सच जानना, इस कण्ठमें या तो प्राण-प्यारे रामकीही भुजा शोभा पा सकती है या तेरी तलवार। तीसरेका हाथ मेरे शरीरमें प्राण रहते इसपर पड़ नहीं सकता। तू बारम्बार मुझे डराता है, पर क्यों नहीं एक बार मुझे तलवारके घाट उतार देता? इस विरह-समुद्रसे पार तो हो जाती? तेरी इन नीचता भरी बातोंके सुननेसे तो बच जाती!"

सीताके इन तेज, दर्प और अभिमान भरे वचनोंको सुन, रावण कुछ देरके लिये काठका पुतलासा खड़ा रह गया, किन्तु कुछही क्षण बाद भयानक क्रोधसे उन्मत्त हो, तलवार लेकर सीताको मार डालनेके लिये झपटा।

यह देख, सीता न तनिक डरीं, न अपने स्थानसे रत्तीभर इधर उधर हुईं—क्योंकि वे तो मन ही मन उस मृत्युकी सह-चरी रूपिणी चमकती हुई तलवारसे कह रही थीं—

चन्द्रहास ! हरु मम परितापू ।
रघुपति विरह अनल सन्ताप ॥

परन्तु हाय ! उनकी वह आशा पूरी न हुई। तलवारने उनके प्राणोंको शरीरसे पृथक नहीं किया, विरहका अन्त नहीं हुआ ! मन्दोदरीने बीचमेंही रावणका हाथ थाम लिया और कहा,—"नाथ ! स्त्रीको न मारो। यह सबसे बड़ा पाप है और अबलापर हाथ छोड़ना तुमसे वीरोंके लिये बड़े कलङ्ककी बात है।"

लाचार बारह महीनेकी अवधि देकर वह चला गया और बोला,—"सीता! देखना, इतने दिनोंमें अपनी मति गति ठीक करले, नहींतो तुझे कच्चाही पकाके खा जाऊँगा।"

परन्तु फिर भी वह अपने मनको रोकनेमें असमर्थ हुआ। बारह महीनेकी अवधि दे चुकनेपर भी वह बीच बीच बीचमें बराबर वाटिकामें आता और सीताके कटेपर नोन छिड़क जाया करता था। परन्तु प्रत्येक बार वह देखता, कि उस सतीका हृदय पर्वतसे भी अचल, उसके विचार वज्रसे भी दृढ़ और उसका पति प्रेम सागरसे भी अथाह है !

सीता अपने दुःसमय जीवनके ये दिन किस कष्टसे बिता रही थीं, उसकी कल्पना करनी भी कठिन है। आज हम जब उनकी दुःख कथा पढ़कर इतने शोकाकुल हो जाते हैं, तब उस

साक्षात् उन दुष्टोंके भँवरजालमें पड़ी हुई सीताकी क्या अवस्था रही होगी, उनपर कैसी बीतती होगी—यह अनुमानमें आना असम्भव है। परन्तु शरीर और मनके इन सारे कष्टोंको वे पतिके स्मरण-चिन्तन और धर्मकी दृढ़ताके बलपर सह लेती थी तथा पतिदेवके दर्शनोंकी आशासे प्राणधारण किये हुई दिन पर दिन बिताये चली जाती थी। धन्य सीते! धन्य तुम्हारा पातिव्रत!! धन्य तुम्हारी धर्म्म-निष्ठा!!!

इस स्थानपर पाठक-पाठिकाओंको सीताके दिव्य चरित्रकी कैसी उज्ज्वल छटा दिखाई देती है! राजाकी लड़की राजाकी पुत्र-वधू और राजाकी रानी होकर भी उनकी अवस्था आज कैसी हीन है! उन्होंने अयोध्याकी राज्यलक्ष्मीको स्वामीके साथ रहनेके लिये पैरोंसे ठुकरा दिया और स्वामीके साथ रह, उनके दर्शन और सेवनसे अपनी आत्माको सुखी बनाये हुई थीं, परन्तु कुटिल विधातासे उनका यह सुख भी नहीं देखा गया। जिन प्राणेश्वरके वियोगके भयसे उनको सब छोड़ना पड़ा—कदाचित् जिनसे अलग होकर वे स्वर्गके राज्यको भी अपमानके साथ पैरोंके नीचे कुचल देतीं और उसकी उपेक्षा करतीं, उन्हीं प्राण पतिसे भाग्यने एक क्षणकी कौन कहे महीनों बिछुड़ाये, पर तोभी वे जीती रहीं! कौनसी आशा, किस आकाक्षाने उन्हें मरनेसे रोका? किस सौभाग्यको देखनेके लिये उनका जीवन बना रहा? दिन-रात पाप, सन्ताप और त्रासके वे भीषण शब्द उन्हें सुनने पड़ते थे, जिनका एक-एक अक्षर तीरकी तरह उनके कलेजेमें चुभ-चुभ जाता था, परन्तु उनका हृदय नारी-सुलभ कोमलतासे

भरा हुआ होनेपर भी किसी तरहके कुविचार कुसंस्कार और कुवासनाके लिये वज्रसे भी कठिन था और इनका उनमें प्रवेश होना अतीव कठिन, अत्यन्त असम्भव था। जिस सतीने पतिको छोड़ और किसीको न पहचाना, जिसने हँसते-हँसते पतिके साथ चक्रवर्ती राज्यको लात मार दी, जिसके नयनोंमें एकमात्र पतिका अभिराम रूप रम रहा था, जिसके रोम-रोममें 'राम' रमे हुए थे, वह महाप्राणा देवी भला रावणके ऐश्वर्य्यको देखकर कब भूल सकती थी? उसके प्रलोभनों और धमकियोंमें क्योंकर आ सकती थी? कदापि नहीं। सीता उत्तम सती थीं वे इस वाक्यके महत्त्वको भली भाँति समझती थीं, कि—

उत्तमके अस बस मन माहीं
सपनेहु आन पुरुष जग नाहीं॥

धर्म्मके इन्हीं गुरुतर विचारोंने सीताको बलवान् बना रखा था। इसीसे वे उस त्रिलोक-विजयी वीरको सहस्रों बार अपमानित करते हुए भी न डरी। वह भी सिंहिनीके गर्जनसे दुम दबाकर भाग जानेवाले स्यारकी तरह चुपचाप उनके आगेसे चला जाता था, परन्तु आशा नहीं छोड़ता था। यह सोचता,—"नित्यके कान भरने और अनेक दिनोंतक पतिसे न मिलनेसे काल पाकर, यह कुछ न-कुछ नरम होही जायेगी।" इसीसे बारह महीनोंकी अवधितक आशा न छोड़नेका उसने सङ्कल्पकर लिया था। परन्तु उसे यह नहीं मालूम था, कि सीताका शरीरमात्र ही वियोगी है।—उनके मनमें, हृदयके सिंहासनपर, रामकी देव-मूर्त्ति सदा एक भावसे विराज रही है। रावण उनकी देह

हो प्राण-प्यारेके सहवाससे पृथक् कर सका है,प्राणोंकी एकाग्रता-को तो उसके जैसे करोड़ों रावण भी दूर नहीं कर सकते।

शारीरिक बलमें स्त्रियाँ स्वाभाविक कोमल होती हैं, परन्तु जिस समय उनके सतीत्वका तेज प्रकाशित होता है, उस समय बड़े-बड़े बलवानोंको भी उनके सामने पराजित होना पड़ता है। कौन ऐसा माईका लाल है, जो सतीके सामने आँखें मिलाता हुआ खड़ा रह सकता है? जो उस जलती हुई अग्निशिखाका स्पर्श करने जायेगा, उसे निश्चयही प्राणोंसे हाथ धो बैठना होगा।

रावणका भी यही हाल हुआ, सीताके सतीत्वके आगे उसे बुरी तरह हार माननी पड़ी और उसका कोई छल, बल और कौशल काम न आया।



सुग्रीवके साथ मित्रता कर, रामचन्द्र और लक्ष्मणको बड़ी शान्ति मिली। उन्हें आशा हुई, कि सुग्रीवकी सहायतासे सीताका पता लगाकर हम उनका उद्धार कर सकेंगे।

एक दिन सुग्रीवने रामसे अपने बड़े भाईके अत्याचारोंका वर्णन करते हुए कहा,—"मित्र! वालीके हाथसे किष्किन्धाके राज्यका अधिकार छीन लिया जाये, तो अपने सङ्गी-सहायकोंकी संख्या बहुत बढ़ जायेगी और तब हमलोग अपना काम बड़ी शीघ्रतासे कर सकेंगे।"

यह सुन, रामचन्द्रने कहा,—"मित्र! तुम्हारा कहना यथार्थ है। राज्यका सारा धन, सारी सेना इस समय वालीके हाथमें

है, तुम्हारे पास कुछ भी नहीं है। साथही उसने तुम्हारी स्त्रीको भी अन्याय-पूर्वक रोक रखा है, इसलिये तुम्हारा मन भी सुखी नहीं है। ऐसा टूटा हुआ मन लेकर इतना बड़ा काम नहीं किया जासकता, अतएव मैं भी सोच रहा हूँ, कि वालीको ललकारकर, उसे युद्धमें परास्त करना चाहिये। पहले तुम्हारा काम हो, पीछे मेरा। तुम अभी जाकर वालीसे युद्धकी घोषणा कर दो।"

सुग्रीवने ऐसाही किया। उसके ललकारतेही वालीने सोचा,—"यह एकाएक सुग्रीवके सिरपर काल क्यों नाचने लगा, जो मुझसे लड़नेके लिये उतारू हो रहा है? उसके पास रखाही क्या है, जिसके भरोसेपर वह इतना कूद रहा है?" यह सोच, वह अकेलाही सुग्रीवसे भिड़नेको चला आया। दोनों भाइयोंमें खूब लड़ाई हुई, पर अन्तमें सुग्रीवकीही हार हुई और वह रोता हुआ रामके पास आया। यह देख, रामने कहा,—"मित्र! तुम घबराओ नहीं, अबकी बार जाकर फिर लड़ो। मैं तुम दोनों भाइयोंका एक-समान रूप देखकरही इस बार तुम्हारी सहायताके लिये बाण न छोड़ सका, कि कहीं मेरा छोड़ा हुआ बाण भ्रमवश तुम्हारे न लग जाये। पर अब मैंने, तुम दोनोंमें जो भेद है, उसको अच्छी तरह ध्यानमें रख लिया है, अतएव अबके न चूकूँगा।"

यह सुन, सुग्रीव फिर वालीसे आ भिड़ा। रामचन्द्रने सुग्रीव-को फिर भी विकल होते देख, दूरहीसे निशाना तककर ऐसा बाण मारा, कि वाली कटे वृक्षकी तरह भूमिमें गिर पड़ा। कुछ देरतक इस प्रकार छिपकर वार करनेके लिये रामचन्द्रकी भरपेट निन्दा करनेके बाद वालीने अपनी जीवन लीला समाप्त की।

वालीका विधिवत्-दाह-कर्म और श्राद्धादि क्रिया कर चुकने पर सुग्रीवने राजसिंहासनपर आरोहण किया। लक्ष्मणने अपने हाथों सुग्रीवको राज-तिलक दिया। वालीका पुत्र, अङ्गद, युवराज बनाया गया। राज्यमें बड़ा भारी आनन्द उत्सव मनाया गया। सब लोग सुग्रीवका जय गान करने लगे। सुग्रीवने उन दोनों भाइयोंसे अपने राज्यमें चलनेका बहुत अनुरोध किया, परन्तु वे यही कहकर न गये, कि चौदह वर्षतक हम किसी नगरमें वास नहीं कर सकते।



सुग्रीवके राज्य पाकर राजधानीमें चले जानेपर राम-लक्ष्मण भी वहाँसे डेरा-डण्डा उठा, प्रस्रवण-गिरिपर चले आये। उन दिनों वर्षा-ऋतु थी। वनमें चारों ओर हरियाली छायी हुई थी। विरहियोंके लिये वर्षा काल बड़ा बुरा होता है। कहते हैं, कि इस ऋतुमें प्रेमियोंका बिछुड़ना एकबारगी असहनीय हो जाता है। रामचन्द्रका भी वही हाल हुआ। पावसने उनपर भी अपना प्रभाव दिखलाया। उनकी विकलता दिन-पर-दिन बढ़ने लगी।

एक दिन दोनों भाई पर्वतकी एक शिलापर बैठे, नाना प्रकारकी चर्चाएँ करते हुए दुःखी मनको बहला रहे थे, कि इसी समय एकाएक आकाशमें बादल छा गये और वर्षा होने लगी। यह देख, रामचन्द्रने लक्ष्मणसे जो बातें कहीं, वे एक विरहीके मुँहसे कदापि नहीं निकल सकतीं—पर उस विरह-विकल अवस्थामें भी रामने जैसे पाण्डित्यसे वर्षाका वर्णन

लक्ष्मणसे किया, उसे देख, रामके हृदयकी उच्चाशयताकी बार-बार प्रशंसा किये बिना रहा नहीं जाता। उन्होंने कहा,—

"लक्ष्मण! देखो, आकाशमें कैसा घोर मेघ गर्जन हो रहा है। इसे सुन, सीताके विरहका स्मरण कर, मेरा हृदय काँप रहा है। देखो, मेघकी गोदमें बिजली कैसी चञ्चलतासे चमक रही है! ठीक इसी तरह खल मनुष्योंकी प्रीति भी स्थिर नहीं रहती। बरसनेवाले बादल ऐसे झुक पड़ते हैं, जैसे विद्या पाकर पण्डित-गण नम्र हो जाते हैं। यह पर्वत वर्षाकी बूँदोंका आघात कुछ वैसीही धीरतासे सहनकर रहा है, जैसी सहिष्णुतासे सज्जन दुर्जनोंके वाक्य बाणोंके प्रहारको सह लेते हैं। इन छोटी-छोटी नदियोंको तो देखो, कि थोड़ेही जलसे ये कैसी उमड़ रही हैं! ओछे जन भी इसी तरह थोड़ासा धन पाकर पागल हो जाते हैं,—अपने आगे संसार भरको कुछ नहीं गिनते। आकाशसे कैसा स्वच्छ जल गिरता है और भूमिपर पड़तेही मैला हो जाता है। इसी तरह परमात्माने सभी जीवोंकी आत्माएँ बड़ी शुद्ध बनायी हैं, परन्तु वे मायाके स्पर्शसे कलुषित हो जाती हैं। जिस प्रकार अच्छे लोग अच्छे अच्छे गुणोंका धीरे-धीरे संग्रह करते हैं, वैसेही इन ताल तलैयोंको भी देखो, कि वर्षाका उपकारी जल जमा करते चले जाते हैं। सारी नदियोंका जल जब समुद्रमें जाकर मिल जाता है, तब उनका भेद मिट जाता है, वे शान्तभाव धारण कर लेती हैं, यह हाहा कार नहीं रह जाता, जो इस समय देख रहे हो। इसी प्रकार जीव भी ईश्वरके चरणोंमें लीन होकर सारे भेद-भाव, अशान्ति और दुःखोंसे छुटकारा पा जाता है।

चारों ओर हरी-हरी जङ्गली घासोंने रास्तोंको ऐसा ढक रखा है, कि वे दिखाई नहीं देते। मत मतान्तरोंके झगडे भी इसी तरह धर्मके असली तत्त्वोंको ऐसा छिपा देते हैं, कि वे दिखाईही नहीं पडते और लोग कोरे थक-वादमें धँसे रहते हैं। चारों ओर मेढकोंकी ध्वनि ऐसी मालूम हो रही है, मानों विद्यार्थियोंका समूह वेदध्वनि कर रहा हो। आक और जवासा पानी पडतेही सूख गये—अच्छे राज्यमें दुष्टोंका भी यही हाल होता है—उनकी कोई दाल नहीं गलने पाती। जैसे क्रोध उत्पन्न होकर धर्मके सारे भावोंको दूर भगा देता है, उसी तरह वर्षाने भी ऐसा कीचड़-कादों मचा रखा है, कि धूल तो कहीं खोजे भी नहीं मिलती। उपकारी जीवोंकी सम्पत्ति जैसे 'दिन दूनी रात चौगुनी' बढती रहती है, वैसेही इस समय पृथ्वी शस्यसे हरी-भरी हो रही है। वर्षाकी रातमें जब घोर अँधेरा छा जाता है, तब जुगनू अपनी चमक दिखाने लगते हैं, इसी तरह कोरी अकड दिखानेवाले मूर्ख मण्डलीमें अपनी हैंकडी भरने लगते हैं। चतुर किसान घासको निकालकर अपने नाजको वैसेही निरा रहे हैं जैसे पण्डित लोग मोह और मदको दूरकर मनको शुद्ध कर लेते हैं। जैसे कलियुगके आतेही धर्म दूर भाग जाता है, वैसेही वर्षा आतेही चकवे-चकवीका पता नहीं लगता।

"लक्ष्मण! इतना पानी बरस रहा है, परन्तु ऊसरमें एक तिनका भी नहीं लगता। इसी तरह लाख प्रलोभनोंके होते हुए भी सन्तोंके मनमें काम वासना नहीं पैदा होती। पृथ्वी अनेक प्रकारके जीव-जन्तुओं, घास-पत्तों और नाजोंसे कैसी

शोभामयी दिखाई दे रही है। यह वर्षाकी अमलदारीका प्रभाव है। इसी प्रकार अच्छे राजाके राज्यमें प्रजा भी खूब फलती-फूलती है। मेघोंका घटाटोप कभी-कभी हवाका झकोरा पाकर ऐसा उड़ जाता है, जैसे एक कपूतके पैदा होनेसे कुलका कुल नष्ट हो जाता है। कभी तो सूर्य्य मेघमें छिप जाता है और कभी उसके हटनेही अपनी विमल प्रभासे संसारमें चमकने लगता है। यही हाल मनुष्योंका भी है। वे दुष्टोंकी सङ्गति पाकर बिगड़ और भलोंकी सङ्गति पाकर सुधर जाते हैं।"

इसी प्रकारकी नाना रत्नोंसे भरी हुई बातोंमें दोनों भाई दिन बिता देते थे। देखते-देखते वर्षा ऋतु बीत गयी और निर्मल शरद्-ऋतु आ पहुँची। आकाश स्वच्छ हो गया, रास्ते पथिकोंके आने-जाने योग्य हो गये, नदियोंका वह भीषण रूप भी नष्ट हो गया। सरोवरोंमें कमल खिले, चकवा-चकवी विहार करने लगे, चकोरको चन्द्रमाकी निर्मल चाँदनी मिलने लगी, सब लोग सुखी हो गये, परन्तु रामचन्द्रको सीताके विरहमें किसी तरह कल नहीं आयी। उनकी बेकली बराबर बढ़तीही गयी।



एक दिन रामचन्द्रने लक्ष्मणको बुलाकर कहा,—"भाई! देखो तो इस सुग्रीवको, अपना काम निकालकर बिलकुल चुप हो बैठा! कहाँ तो उसने मेरी सहायता करनेकी शपथ की थी और कहाँ राज्य पाकर अभिमानमें भूल गया! तुम जाकर

दुष्टको डाँटो। सीधी राह न चलेगा, तो मैं उसे भी उसी बाणसे मार डालूँगा, जिसने उसके भाईको संसारसे विदा कर दिया था।"

यह सुन, लक्ष्मण बड़े क्रोधके साथ किष्किन्धाको चले। जाते-जाते उन्होंने सोचा,—"यदि सुग्रीव मित्रताके नियमोंका उल्लङ्घन करेगा, तो भाईसे पूछनेके लिये न ठहरकर मैं उसे वहीं का वहीं ढेर कर दूँगा।"

लक्ष्मणको इस तरह क्रोधमें भरकर आते हुए सुन, सुग्रीव तो हक्का-बक्कासा हो गया, परन्तु चतुराईमें वह कम न था, अतएव आप लक्ष्मणके सामने न आ, उसने अपनी भाभी, ताराको लक्ष्मणका क्रोध शान्त करनेके लिये भेज दिया। तारा बड़ी बुद्धिमती स्त्री थी, उसने बातों ही-बातोंमें लक्ष्मणको शान्त कर दिया और वे प्रसन्न-मनसे राजपुरीमें आये।

सुग्रीवके सामने आतेही लक्ष्मणने उसे लताड़ना शुरू किया और मित्रद्रोही, स्वार्थी, विश्वासघातक आदि विशेषणोंसे सम्मानित किया, परन्तु सुग्रीव चुपचाप सब अपमान सह गया। यह देख, लक्ष्मणको पीछे अपने इन कड़े शब्दोंपर आपही पछतावा हुआ और वे भाईके मित्रकी प्रशंसा करते हुए उससे बातें करने लगे। सुग्रीवने, अपने विलम्बन और विस्मरणके लिये क्षमा माँगते हुए, उसी समय चतुर मन्त्रियोंको चारों दिशाओंमें दूत भेजनेकी आज्ञा दे दी और कहा, कि चाहे सफलता हो या विफलता, पर महीने-भरके भीतर सबको लौट आना और सीतादेवीका समाचार सुनाना होगा। यह व्यवस्था कर, सुग्रीव

लक्ष्मणके साथ-ही रामचन्द्रके पास आया और उनसे अपने अपराधके लिये क्षमा माँगते हुए दूतोंके भेजे जानेका संवाद सुनाया। सुनकर रामने बड़े प्रेमसे सुग्रीवको गले लगाया और उसे हर्ष-पूर्वक विदा किया।



सुग्रीवके दूत दल के दल इधर-उधर जाने-आने लगे। सबके मनमें यही उत्साह था, कि अपने राजाके मित्रका काम, जहाँ-तक जल्दी हो सके, पूरा कर डालना चाहिये। सुग्रीवके भेजे हुए और लोग तो जहाँ तहाँ गये, पर हनुमान् दक्षिण समुद्रकी ओर चले। उन्हें विश्वास हो गया था, कि सीता अवश्यही लङ्का नरेश रावण द्वाराही हरी गयी हैं, अतएव वे अपने साथियोंके साथ लगातार दक्षिणकी ओर बढ़ते चले गये। जाते-जाते वे लोग समुद्रके किनारे पहुँचे। वहाँ उन्हें जटायुका बड़ा भाई, सम्पाती मिला। उसने लोगोंको सीताके रावणद्वारा हरी जानेका संवाद दिया और कहा,—"मैं बहुत बूढ़ा हो गया हूँ, नहीं तो तुम्हारा काम अकेला मैंही कर देता ; परन्तु तुममेंसे जिस किसीके हृदयमें साहस और भुजाओंमें बल हो, वह समुद्र पारकर लङ्का जाये, तो अवश्यही सीताका पता लग जायेगा।"

समुद्र पार जानेकी बात सुन, सबके देवता कूच कर गये। उन लोगोंने समझ लिया, कि "बलो हो चुका काम! न हमसे समुद्र लाँघा जायेगा और न सीताकी सुध मिलेगी!" परन्तु महावीर हनुमान्ने सङ्कल्प किया, कि "प्राण भलेही चले जायें,

परन्तु मैं समुद्रपार जाकर सीताकी सुध अवश्य लाऊँगा। जिसे लौटना हो, लौट जाओ मैं तो नहीं लौटता।"

ऐसा मनमें विचार, परमात्माका नाम ले, हनुमान् समुद्र तीरके एक पर्वतकी चोटीपर चढ़ गये और समुद्रका ऊपर-ही ऊपर लाँघ जानेके लिये बड़े वेगसे आकाश-मार्गमें उछल पड़े। थोड़ीही देरमें वे अपने साथियोंकी दृष्टिके परे हो गये।

महाप्रतापी हनुमान् यथासमय लङ्कामें आ पहुँचे। नगरमें प्रवेश करतेही उन्होंने देखा, कि लङ्कापुरी बिलकुल सोनेके मकानोंसे अलङ्कित है, दुर्ग ऐसा विशाल और सुदृढ बना हुआ है कि पृथ्वीभरमें उसकी समता करनेवाला दूसरा दुर्ग न होगा एक तो वह द्वीप चारों ओर समुद्रसे घिराही हुआ है, जिससे बाहरी शत्रुओंके आक्रमणका कोई भय नहीं है, दूसरे, दुर्गके चारों ओर जो गहरी खाई खुदी हुई है, उससे वह और भी दुर्गम हो रहा है। खाईके चारों ओर तोपें लगी हुई हैं और बडे-बडे विकट राक्षस पहरा देते हुए दिखाई पडते हैं। सडकों और हाट-बाटोंकी चहल पहल और सजावट देखनेही योग्य है। वन, उपवन, वापी कूप, सरोवर आदिकी शोभाही न्यारी है। कहीं देश-देशकी सुन्दरी स्त्रियाँ दिखाई देती हैं, तो कहो बडे-बडे दिग्गज पहलवान लडते और भाँग बूटा छानते दिखाई पडते हैं। एक ओर सेनाकी छावनी कोसोंतकके मैदानमें फैली हुई है। उसकी अपार संख्या देखकर एक बार वीर हनुमान्का हृदय भी काँप गया।

वे अलक्षित भावसे, पहरेदारोंकी दृष्टि बचा, लङ्काके समस्त वैभवको देखते हुए, धीरे-धीरे उस अशोक-वाटिकामें आ पहुँचे

जहाँ सीतादेवी अपना दुःख-भरा जीवन बिता रही थीं। हनुमान् वहाँ अनेक राक्षस-राक्षसियोंको देख, बड़ी सावधानीके साथ उनकी दृष्टि बचाते हुए, चुपकेसे एक वृक्षपर जा चढ़े और पत्तोंकी आड़में छिपकर बैठ रहे।



रात दिन 'राम-राम' जपते-जपते सीताने दस मास बिता दिये। रामके विरह और रावणके बाणके समान चुटीले दुर्वचनोंने उनको सुखाकर काँटा बना दिया। उनको कभी तो यह चिन्ता होने लगती, कि कहीं प्राणपतिने मेरा पता न पाकर प्राण-त्याग तो नहीं कर दिया! कभी सोचती—"नहीं, मैंने कौन ऐसा पाप किया है, जो मेरे प्राणेश्वर मुझे पृथ्वीपर रोती बिलखती छोड़ परलोक सिधारेंगे? वे अवश्यही फिर मुझसे आ मिलेंगे! पर यहाँ तो दोही महीने और रह गये हैं। इन दो महीनोंके बाद रावण न जाने क्या उत्पात खड़ा करेगा। चाहे जो कुछ हो, पर उस पापीकी कामना तो कभी पूरी होनेकी नहीं। मैं दो महीना और आशाका पथ देखूँगी, इसके बाद प्राण परित्यागकर प्राणेश्वरको याद करती हुई, मृत्युको सानन्द आलिङ्गनकर लूँगी।"

इन्हीं चिन्ताओंमें उलझी हुई सीता मन ही-मन बड़ी दुःखित हो रही थीं। उन्हें एक-एक क्षण जीना कठिन हो रहा था। अन्तमें निराश हो, वे गलेमें फाँसी लगा, आत्महत्या करनेको तैयार हो गयीं। फाँसी लगानेका और कुछ साधन पास न

था, तो सिरकी वेणी तो थी ! उन्होंने सोचा, इसीसे गला दबा कर प्राण दे दूँगी। मन-ही-मन यह स्थिर कर वे एक वृक्षकी शाखा पकड़कर खड़ी हो गयी और बालोंसे गलेमें फाँसी लगानेका सुयोग ढूँढने लगीं।

इसी समय रावण वहाँ आया और भाँति भाँतिके प्रलोभन देता हुआ उनसे रामको भूलकर लङ्केश्वरी बननेके लिये अनुरोध करने लगा। उसके इन दुर्वाक्योंको सुन, मृत-तुल्य सीताके शरीरमें सिंहिनीकासा बल आ गया। वे गरजकर बोलीं,—"रे पापी! तू इतनी बार मेरी फटकार सुनकर भी मेरे सामने अपनी पाप-पूर्ण बातें सुनाने आया ? तू मुझे भी क्या उन्हींकीसी स्त्री समझता है, जो पर पुरुषको अङ्गीकार कर, अपने दोनों लोक बिगाड़ डालती हैं ? यदि हाँ, तो अपनी इस धारणाको दूर कर दे। मैं राजा जनककी बेटी, राजा दशरथकी पुत्रवधू तथ उनके ज्येष्ठ पुत्रकी सहधर्म्मिणी हूँ—मुझसे तू किसी तरहके पापकी आशा न कर। तू मुझे राज्यका क्या लोभ दिखाता है ! जो आपही अपने राज्यको लात मार आयी है, वह तेरे राज्य और वैभवको लाख-लाख बार लानत भेजती है। मैं तेरे चेहरेपर थूकूँगी भी नहीं। तू ये बढ़ बढ़कर बातें क्योंकर रहा है ? यदि अपना भला चाहता है, तो मुझे मेरे स्वामीके पास पहुँचा दे। वे क्षमाके सागर हैं, तू दीन बनकर उनके चरणोंमें गिरेगा, तो वे तेरे सारे अपराध क्षमा कर देंगे। अब भी चेत जा, नहीं तो मेरे शरीरके ये रोएं जितनेही दुःखी हो रहे हैं, उतनाही तेरा सर्वनाश समीप आता जाता है। अत्याचारी ! ले मैं तुझे शाप देती

हूँ, कि मेरे शापसे तेरा कुलका कुल नाश हो जायेगा—देख लेना यह सोनेकी लङ्का राखका ढेर हो जायेगी।"

इन तिरस्कार-भरे वचनोंको सुन, रावणने सीताको मारनेके लिये तलवार उठायी, परन्तु स्त्रियोंने इस बार भी स्त्री हत्याके दोषसे उसे बचा दिया। "अच्छा, दो महीने और देख लूँ, फिर तो तेरी बोटी-बोटी नोचकर खा जाऊँगा। प्रेमको हिंसामें बदलते क्या देर लगती है?" यह कहता हुआ, रावण वहाँसे चला गया और पहरेवालोंको अच्छी तरहसे पहरा देने तथा सीताका मन फेरनेके लिये चेतावनी देता गया।



हनुमान् दो दिनोंसे सीताकी खोजमें लङ्काके घर-घर घूम रहे थे, परन्तु जो वर्णन सीताके रूपका उन्होंने सुना था, उस रूप-रङ्गवाली एक भी स्त्री उन्हें कहीं न दिखाई दी। उन्हें सन्देह होने लगा, कि कहीं रावणने उन्हें मार तो नहीं डाला? अथवा स्वामीका वियोग न सह सकनेके कारण उन्होंने अपने प्राण तो नहीं त्याग दिये? यह सोच, वे बड़े दुःखी हो रहे थे। आज अनायास इस वाटिकामें पहुँचनेपर उन्होंने जो कुछ देखा-सुना, उससे उन्हें एकही साथ हर्ष, शोक और विस्मय तीनोंही हुए। हर्ष अपनी सफलतापर, शोक सीताके दुःखोंपर और विस्मय इस बातपर, कि लोगोंने सीताका अनुपम रूप-लावण्यही उनसे वर्णन किया था; परन्तु यहाँ आकर उन्होंने देखा, कि सीताका हृदय उनके शरीरकी अपेक्षा सहस्रगुण सुन्दर है। उनके हृदय—

पवित्रता, वचनोंकी दृढता और पति-प्रेमकी प्रगाढता देख, हनु-मान्‌के मनमें बडी श्रद्धा-भक्ति उत्पन्न हुई और उन्होंने मन ही मन उनके चरणोंमें प्रणाम किया।

रावणके चले जानेपर उदास मनसे नाना प्रकारकी चिन्ताएँ करती हुई सीता टहलने लगीं। टहलते-टहलते वे उसी वृक्षके नीचे आ पहुँचीं, जिसपर बैठे हुए हनुमान् यह सारी लीलाएँ देख रहे थे। उस वृक्षके पास पहुँचतेही उनका बायाँ नेत्र नजाने क्यों एकाएक फडकने लगा। उन्होंने सोचा,—"बस, अबके मैं अवश्य फाँसी लगाकर मर सकूँगी और मेरे सारे दुःख-कष्ट दूर हो जायेंगे, इसीसे यह शुभ शकुन हो रहा है। मेरी पहरेदारिनें भी इस समय दूर हैं। कोई मेरा यह काम न देख सकेगा।" वे यह सोचही रही थीं, कि हनुमान्‌ने उनके सामनेही रामचन्द्र-की दी हुई अँगूठी टपसे गिरा दी। अपने प्राण-प्रियतमकी अँगूठी देख, सीता हर्षसे बावली हो गयी—पर पीछे इस सन्देहमें पड़ गयीं, कि कहीं यह भी राक्षसोंकी मायाही तो नहीं है? उनके भावको इस प्रकार बदलते देख, डालपरही बैठे-बैठे हनुमान् रामचन्द्रके रूप, गुण और वर्तमान विकलताका वर्णन करनेलगे। सुनते-सुनते सीताके अङ्गोंमें पुलकावली छा गयी और उन्हें ठीक विश्वास हो गया, कि कोई रामका प्यारा आ पहुँचा।

ऐसी भावना मनमें उत्पन्न होतेही वे उत्कण्ठासे अधीर हो बोलीं,—"भाई तुम कौन हो? मेरे प्राणप्रियके पुण्य-चरित्र सुनानेवाले! मरी हुईको अमृत पिलानेवाले! तुम कौन हो? मेरे सामने आओ, जिसमें मैं तुम्हारे दर्शन कर अपने दुखिया

प्राणोंको तनिक शीतल करूँ। देव! विलम्ब न करो, जल्दीही दिखाई दो, मैं बड़ी अधीर हो रही हूँ।"

यह सुन, हनुमान् वृक्षसे नीचे उतर आये और सीताके आगे शिर नवा, विनय सहित बोले,—"माता! मैं भगवान् रामचन्द्रका भेजा हुआ दूत हूँ। आपको ढूँढ़ता हुआ यहाँतक चला आया हूँ। बड़े भाग्यसे मैंने आपके दर्शन पाये हैं।"

हनुमान्‌की यह विचित्र मूर्ति देख, पहले तो सीता कुछ डरीं, परन्तु पीछे अँगूठीकी बात सोच और उसे अच्छी तरह पहचानकर, कि यह अवश्य रामकीही है, आनन्दके साथ आँखोंमें आँसू भरकर कहने लगीं,—"तुम्हारा रूप देख, मैं पहले कुछ शङ्कामें पड़ गयी थी; परन्तु अब यह जानकर, कि मेरी वह शङ्का बिलकुल बेजड़ थी, मैं परम सुखी हूँ। दूत! कहो देवरजीके साथ मेरे प्राणनाथ सकुशल तो हैं? वे कभी इस दुखिनीका स्मरण तो करते हैं? आजतक उन्होंने मेरी सुध भी नहीं ली—क्या उनका सहज कोमल हृदय कुछ निठुर हो गया है? अपने सेवकों और आश्रितोंपर उनकी सदा अपार कृपा रहती है, फिर इस दासीको उन्होंने इतने दिनोंसे कैसे बिसार रखा है? हाय! अब मैं न जाने कब उस साँवली मूर्त्तिके दर्शन करूँगी? कब मेरे सोये हुए भाग्य जग उठेंगे?" कहते-कहते सीता उच्चस्वरसे रोदन करने लगी।

यह देख, हनुमान्‌ने कहा,—"माता! आप कुछ चिन्ता न करें। अपने छोटे भाईके साथ भगवान् रघु कुल-तिलक बड़े आनन्दसे हैं। केवल आपके बिछुड़नेसे उन्हें दिनको खाना

और रातको सोना दूभर हो रहा है। माता! आप यह स्वप्नमें भी न सोचियेगा, कि आपसे उनका प्रेम कम है। जिन कोमल किसलयोंपर वे पहले सुखसे सोया करते थे, अब वे उन्हें आगके समान जलाते हैं, चन्द्रमाकी शीतल किरणें उनपर अँगारे बरसाती हैं, प्रत्येक रात्रि काल रात्रिके समान भयदायिनी मालूम होती है, कमलके वन आँखोंमें काँटे चुभाते हैं, वर्षाके बादल निर्मल नीरके बदले तत्ता तेल छिड़कते हैं। जहाँ कहीं वे विश्रामके लिये जाते हैं,वही स्थान उन्हें काट खानेको दौड़ता है। माता! उनकी विकलताका मैं कहाँतक वर्णन करूँ? आपके विरहमें उनका मन किसी भाँति चैन नहीं पाता। उनके दु:खसे उनके छोटे भाईको भी इतना कष्ट है, कि क्या बताऊँ?"

यह जानकर, कि मेरे स्वामी भी मेरे विरहमें उतनाही दु:ख अनुभव कर रहे हैं, जितना कि मैं, सीताको इस विपत्तिमें भी बड़ा धैर्य्य हुआ। वे बार-बार रामचन्द्रके सम्बन्धमें सैकड़ों प्रकारके प्रश्न हनुमान्‌से करने लगीं। सच है, अपने प्राण-समान प्रेमीकी बातें सुननेसे कब किसीको तृप्ति होती है?

हनुमान्, उनको यथासाध्य सन्तोषजनक उत्तर देकर, प्रसन्न करने लगे। इसी समय उन्हें कुछ भूख मालूम हुई। उन्होंने कहा,—"माता! बालक जब क्षुधार्त्त होता है, तब मातासेही खानेको माँगता है, अतएव मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ, कि यदि आपकी आज्ञा हो, तो मैं इस बगीचेके सुन्दर फलोंको खाऊँ; क्योंकि इन्हें देख मेरे मुँहमें पानी भर आया है।" सीताने पहले तो उन्हें ऐसा साहस करनेसे रोका; परन्तु जब उन्होंने कहा,

कि 'माता! मैं इन दुष्टोंको कुछ नहीं समझता, इन चरणोंके आशीर्वादसे मैं सारी विघ्न-बाधाओंको बात-की बातमें पारकर जा सकता हूँ,' तब उन्होंने उन्हें सहर्ष आज्ञा दे दी।

फिर तो फल-मूल खानेके बहाने हनुमान् उस वाटिकाके वृक्षोंको उखाड़-उखाड़कर फेंकने लगे और देखते ही-देखते उन्होंने उस वाटिकाका रूपही बिगाड़ डाला। वहाँ जितने राक्षस पहरेपर थे, सबको उन्होंने एक-एक करके पछाड़ मारा। जो कोई उन्हें रोकनेके लिये आगे बढ़ा, उसीकी उन्होंने लात-घूसोंसे खूब अच्छी तरह मरम्मत की। लाचार, वे सब रोते गाते रावणके पास पहुँचे और उसे इस उत्पातका सम्वाद सुनाने लगे। रावणने, यह सम्वाद सुनतेही भयानक क्रोधमें आकर, एक बड़ीसी सेना अपने बेटे मेघनादके अधीन भेजी। हनुमान्ने बड़ी वीरताके साथ उस सेनाका सामना किया। पर अन्तमें वे पकड़कर रावणके सामने लाये गये।



रावणके दरबारमें उपस्थित हो, हनुमान्ने कहा,—"लंकेश! मैं रामचन्द्रका दूत हूँ। तुम्हारी वाटिकामें आ, मैं फलोंको तोड़कर खाही रहा था, कि इसी समय तुम्हारे रक्षकोंने आकर मेरा अपमान किया, इसीलिये मैंने उन्हें मारा—अब तुम्हारी जो इच्छा हो, करो; परन्तु मैं दूत हूँ, रामचन्द्रजीकी ओरसे जो संवाद लाया हूँ, पहले उसे सुन लो। उन्होंने कहा है, कि 'यदि तुम अपना भला चाहते हो, तो आदरके साथ मेरी पत्नीको

पास पहुँचा दो।' निश्चय जानना, अब उनको तुम्हारी दुष्टताका पता लग गया है और वे बिना तुम्हारा सर्वनाश किये न छोड़ेंगे। अतएव उनकी बात मानकर माता सीताको उनके पास भेज दो।"

यह सुनतेही रावण रोषसे जल उठा और बोला,—"कोई है? अभी इस दुष्ट बन्दरको ले जाकर निर्दयतासे मार डालो।"

यह सुन, रावणके छोटे भाई, विभीषणने कहा,—"भाई! राजनीतिका उल्लङ्घन क्यों करते हो? कहीं दूत भी मारा जाता है? ऐसा न करो, इसे छोड़ दो और जो कुछ कहना हो, कह सुनकर इसे विदा कर दो।" अन्यान्य सभासदोंने भी विभीषणकी इस बातको पसन्द किया, परन्तु वह पापी हनुमान्‌को बिना दण्ड दिये छोड़नेको प्रस्तुत न हुआ। अन्तमें सबकी सलाहसे उनकी पूँछमें तेलसे तर किये हुए कपड़ोंकी तहें बाँध कर आग लगा दी गयी और वे दरबारसे बाहर निकाल दिये गये। फिर तो हनुमान्‌ने उसी आगसे प्रायः सारी लङ्का जला दी—एक-एक करके सैकड़ों महल-मकान राखके ढेर हो गये। उस अग्नि काण्डमें केवल विभीषण और कुम्भकर्णके घरही बचे, क्योंकि विभीषण तो हनुमान्‌के पक्षपाती हो गये थे और बेचारा कुम्भकर्ण सोया हुआ था तथा उसकी स्त्रीने हनुमान्‌के बहुत हाथ-पैर जोड़े थे। जब भली भाँति लङ्का दहन हो चुका, तब समुद्रके तीरपर जा, उसके जलमें आग बुझा, पूँछसे जले-अध जले कपड़ोंको दूर कर, वे फिर सीताके पास आ पहुँचे। सीताने उनको कुछ करनी तो वहीं देख ली थी, शेषका वृत्तान्त उनके मुँहसे सुन, वे बड़ीही प्रसन्न हुईं। तब हनुमान्‌ने कहा,—

"माता! अब आप आज्ञा दीजिये, तो मैं भगवान् रामचन्द्रके पास शीघ्र पहुँचूँ और आपका संवाद सुनाकर उनसे यथोचित उपाय करनेके लिये कहूँ। नही तो, यदि आपको स्वीकार हो, तो मैं आपको अपनीही पीठपर चढाकर अभी बात-की बातमें वहाँ पहुँचा दे सकता हूँ।

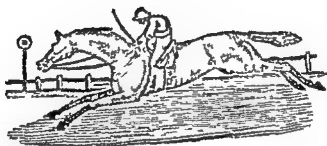
यह सुन, सीताने कहा,—"मैं पराये पुरुषका शरीर स्पर्श नही कर सकती, अतएव मैं तुम्हारी दूसरी बात माननेमें असमर्थ हूँ। तुम कह सकते हो, कि रावणका तो मैंने स्पर्श किया ही था? परन्तु उस समय मैं विवश थी; वह मुझे बल पूर्वक पकड ले आया था। फिर मैं क्या कर सकती थी? तुम जाते हो, तो जाओ। मेरी ओरसे स्वामीको कहना, कि दोही महीने और हैं। यदि इतने समयके भीतर वे आकर मुझे छुडा न ले जायँगे, तो मुझे कदापि जीती हुई न पायेंगे। तुम्हारे आनेसे मेरे विकल प्राणोंको बडा सन्तोष हुआ था, अब तुम भी चले जा रहे हो, फिर तो मेरे वेही दिन और वेही रातें होंगी। अच्छा तुम जातेही हो, तो जाओ। मेरे कष्टोंका स्मरण कराते हुए स्वामीसे कहना, कि वे शीघ्र आकर इस दुष्टको दण्ड दें, मेरे प्रण और अपने प्रणयको पूरा करें। मैं इसी नीच पापीका सर्वनाश और स्वामीके पुनर्वार दर्शन करनेके लिये जीती हूँ, नही तो कभीकी मर गयी होती—ऐसा मृत्युसे भी बढकर दुःखद जीवन-भार एक दिनके लिये भी न उठाती। मेरी एक एक घडी कल्पके समान बीत रही है।, केवल उनके नामको जपती हुई मैं इन सारी आपदाओंको सह रही हूँ।"

यह सुन, हनुमान्‌ने कहा,—"माता! अपनी कोई निशानी मुझे दे दो, जिसमें भगवान्‌को इस बातका विश्वास हो जाये, कि वास्तवमें मैं आपके पाससे होकर आया हूँ। आप निश्चय जानें, वे शीघ्रही आकर आपके सारे कष्ट दूर कर देंगे।"

हनुमान्‌के इन वचनोंसे सीताको परम सुख हुआ। उन्होंने अपने माथेसे चूड़ामणि उतारकर हनुमान्‌के हाथमें दी और कहा,—"बेटा! जिस तरह तुमने मुझ सूखती हुई लतापर स्वामी-का सन्देश-रूपी सलिल सिञ्चन किया है, उसी तरह प्राण-प्रिय-को मेरे दुःखकी कथा सुनाकर धीरज धराना और जल्दीही अपने सङ्ग ले आना। आज मैंने मरनेका सङ्कल्प किया था, पर अब न मरूँगी—स्वामीसे मिलनेकी आशाके बलपर जीती रहूँगी और तुम्हारे अबकी बार स्वामीके सग आनेकी बाट देखती रहूँगी। यह चूड़ामणि ले जाकर नाथके चरणोंमें डाल देना और कहना, कि मेरी जनक-नगरी छूटी, अयोध्या छूटी, इतने दिन आपका साथ भी छूटा, पर धर्म्म अबतक नहीं छूटा है। धर्म्मही सबका सिरमौर है, वही लोक-परलोकमें साथ देता है—इस बातको मैं अच्छी तरह जानती हूँ। जबतक मेरा पातिव्रत बना हुआ है, जबतक उनके चरणोंमें मेरी अचल प्रीति बनी हुई है, तबतक मेरा सब कुछ है। सबको छोड़कर मैंने धर्म्मकोही अपना सगा माना है। गहने तो मैं सारे शरीरके उतार आयी थी, पर आजतक यह शिरका भूषण पासमें था, स्वामीके चरण-कमलोंमें आज इसे भी भेजे देती हूँ। बेटा! प्राणेशसे कह देना, कि जैसे इस शिरोभूषणको मैंने अबतक अलग नहीं किया

था, उसी तरह धर्मको भी मैंने सोते, जागते, स्वप्नमें, कभी हृदयसे बाहर नहीं जाने दिया है।"

यह सुन, हनुमान, चूडामणि ले, उनके चरणोंमें बारम्बार प्रणामकर, समुद्रके किनारे पहुँचे और पुन उसी प्रकार आकाश-मार्गसे समुद्र-पार हो गये।



सीता-उद्धार



ठीक एक एक करके सुग्रीवके भेजे हुए सभी दूत लौट आये, पर कोई अपने कार्यमें सफल न हुआ। एक मात्र हनुमान् ही नहीं लौटे। उनके आनेमें जितनीही देर होने लगी, उतनाही सबके मनमें भय, चिन्ता और आशङ्का पैदा होने लगी। रामचन्द्रके मनमें बडी भारी उत्कण्ठा होने लगी। लक्ष्मण, अपने बडे भाईकी विकलता बढती देख, दिन-दिन दुबले होने लगे।

इन्ही चिन्ता-पूर्ण दिनोंमें एक दिन हनुमान् अकस्मात् आ पहुँचे। रास्तेमेंही और-और कपियोंने उनसे सारा हाल पूछ लिया, अतएव सब लोग बडा आनन्द कोलाहल करते हुए रामचन्द्रके पास पहुँचे। यह देखतेही दोनों भाइयोंके मनकी कली खिल गयी, आँखोंमें आनन्दके आँसू उमड आये। वे समझ गये, कि हनुमान् अपने काममें पूरी सफलता प्राप्त कर आये।

हनुमान्‌ने पास आते ही रामचन्द्रके चरणोंमें साष्टाङ्ग प्रणाम कर कहा,—"भगवन् ! आपके पद-पद्मके प्रसादसेमैं भगवती सीताका पता लगा लाया। हमलोगोंका सन्देह पक्का था—

लङ्कापति रावणही उनको बलपूर्वक पकड ले गया है। आज दस महीनोंसे वे जो कष्ट पा रही हैं, वह देखतेही छाती फट जाती है। उन्होंने मेरे मुँहसे आपका नाम निकलतेही जो विलाप आरम्भ किया, जैसी दु खभरी कहानी सुनायी, वह सुनते-सुनते मैं पागलसा हो गया। नाथ! अब शीघ्र दल-बल सहित लङ्का चलिये और दुष्टको दण्ड दे माता सीताका दु ख मेटिये। उन्होंने चलते समय यह चूडामणि आपको देनेके लिये दी है और रो-रोकर कहा है, कि मैं अबतक अवश्य प्राण देदेती, परन्तु प्राणेश्वरके एक बार दर्शन किये विना प्राण शरीरको छोडना नहीं चाहते। रावण जैसे दुष्टात्मा और पराक्रमीके पञ्जे में पडकर भी उन्होंने जिस प्रकार अपने धर्मकी रक्षा की है, सतीत्वकी जो पराकाष्ठा दिखायी है, मानवी रूपमें देवीत्वका जो स्पष्ट उदाहरण दिया है, वह उनका ही काम है। नाथ! ऐसी नारी पृथ्वीमें और नहीं। उनका एक-एक क्षण-कल्पके समान बीत रहा है पर आपके चरणोंकी दर्शन-लालसासे ही वे अबतक जीवित हैं। अधिक क्या कहूँ! उनकी विकलता देख, क्षणभरका विलम्ब भी मुझे बहुत अखर रहा है।"

इसके बाद हनुमान्‌ने सीताजीकी कही हुई और बातें भी रामसे कह सुनायी। सुनते-सुनते उनका हृदय विदीर्ण हो गया और अश्रुधारासे पृथ्वीको सींचने लगे।

तदनन्तर कृतज्ञताभरे हृदयके साथ हनुमान्‌को छातीसे लगाते हुए रामने कहा,—"भाई! तुमपर मेरी प्रीति भरतसे कम नहीं। तुम्हें मैं आजसे अपना छोटा भाई समझता हूँ।

मेरे लिये जो काम किया है, कदाचित् उससे अधिक मेरे भाई नहीं करते।"

परन्तु हनुमान्ने यह भाईचारा पसन्द नहीं किया। उन्होंने कहा,—"नाथ! मैं आपकी सेवा करनेवाला,आज्ञाकारी दास हूँ। आपका छोटा भाई बनूँ, मुझमें ऐसी न तो योग्यता है, न गुण हैं, न महत्त्व है। आप केवल इतनीही दया रखें, कि इन चरणोंके प्रेम और सेवासे मुझे वञ्चित न करें।" यह कह, उन्होंने लङ्का दहनका वृत्तान्त सुनाते हुए कहा,—"नाथ! जिस समय आप लङ्कापर चढाई करेंगे, उस समय मैं भी प्राण-पणसे आपकी सहायता करूँगा—केवल प्रार्थना यही है, कि अब इस जन्ममें मुझे इन चरणोंसे न्यारा न कीजिये। देव! हमने इसी बहाने आपके चरण कमलोंके दर्शन पाये, यह भी हमलोगोंके सौभाग्य हैं, नहीं तो कहाँ आप पुरुषोत्तम और कहाँ हम बन्दरोंकी अधम जाति!"

उनके इन प्रेम-रस-सने अमृतमय वचनोंने रामचन्द्रको इतना मुग्ध कर दिया, कि वे बारम्बार 'सखा! मित्र! भाई!' आदि नाना प्रिय सम्बोधनोंसे उन्हें पुकारते हुए, अपनी हार्दिक ममता प्रकट करने लगे।

उस दिनसे हनुमान्ने प्रीतिकी ऐसी बेड़ी रामचन्द्रके चरणोंमें डाल दी, कि वे उन्हें फिर कभी अपनी पद-सेवासे पृथक् न कर सके। हनुमान्ने भी उनकी जो अनन्य-भक्ति की, वह संसारमें आदर्श है और 'सेवा' किस पदार्थका नाम है, इसका मर्म्म कुछ उन्होंनेही समझा था।

धन्य हनुमान्! तुमसा ज्ञानी, ध्यानी, भक्त, धर्म्मात्मा और

विनयी होनेके लिये कौन कपि होना नहीं चाहेगा ? छल कपट भरे, पाप-वासना पूर्ण, क्रोधी, दुष्ट और संसारकी भलाईके लिये अग्रसर न होनेवाले निकम्मे मनुष्योंको तो तुमसे बन्दरोंके जीवनपर ईर्ष्या होनीही उचित है !



बात की-बातमें सुग्रीवने वानर-भालुओंकी बडी भारी सेना तैयार कर ली और लङ्कापर चढाई करनेके लिये यह सारा दल चल पडा। जब ये लोग समुद्रके किनारे पहुँचे, तब वह अथाह जलराशि देख, सबके हृदय काँप गये, कि कैसे इतनी बडी सेना उस पार पहुँचेगी! लेकिन चेष्टा, उद्योग और अध्यवसायके आगे कोई काम असाध्य नहीं होता। दिन-रातके निरन्तर परिश्रमके पश्चात् समुद्र पर पुल बँध गया और सारी सेना लङ्काकी छातीपर उतर पडी।

जिस समय पुल बँध रहाथा, उसी समय रावणके छोटे भाई विभीषणने आकर उससे कहा,—"भाई ! बहुत वैर-विरोध बढानेसे क्या लाभ ? देखो, उसबार एकही बन्दर आकर सारी लङ्काकी शोभा बिगाड गया, अबके यह पलटन की-पलटन आ रही है। ये लक्षण अच्छे नहीं। अब भी मेल-मिलापका समय है—सन्धि कर लो। मेरी राय तो यही है, कि तुम व्यर्थका युद्ध न ठानो।" परन्तु रावण इस अच्छे परामर्शको मान लेनेके स्थानमें विभीषणपर क्रुद्ध हो गया और उसने उसे लात मारकर घरसे बाहर निकाल दिया।

विभीषण बेचारा सीधा, सादा और धर्म्मात्मा व्यक्ति था। उसने इस तरहकी शिक्षाएँ अनेक बार रावणको दी थीं,

आजतक सब ऊसरकी वर्षाही हुई। अतएव वह पहलेसे दु:खी थाही, इस बार अपमानकी अन्तिम सीमा आ जानेके कारण बिल्कुलही रावणसे फिरन्ट हो गया और रामके पास चला आया। रामचन्द्रने उसे अपना मित्र बना लिया और उसे इस बातका विश्वास दिलाया, कि 'हमलोगोंका उद्देश्य लङ्काका राज्य हड़प कर लेनेका नहीं है। हम केवल दुराचारीको दण्ड देना और सती सीताको बन्धनसे छुड़ाना चाहते हैं। रावणको पराजित कर हम यह राज्य तुम्हारेही हाथोंमें सौंप देंगे। अतएव तुम किसी प्रकार भय न करो।' विभीषण इस तरहकी उदार वाणी सुन, प्रसन्न हो गया और रामके दलके साथ परम सुख पूर्वक रहने लगा। उसने रामचन्द्रको लङ्काका राई-रत्ती हाल बतला दिया। यहाँतक, कि उनसे वहाँकी कोई बात छिपी न रही। विभीषणके अपने दलमें आ मिलनेसे रामचन्द्रको बड़ा भारी सहारा मिला। वे और भी उत्साहके साथ युद्धकी तैयारियाँ करने लगे।

रावणकी रानी, मन्दोदरी, बड़ी सती और शुद्धमतिवाली स्त्री थी। भाग्य दोषसे उसने ऐसा अन्यायी और दुराचारी पति पाया था। परन्तु उसे भी पूज्य समझकर वह सदा उसकी आज्ञाका पालन और सेवा किया करती थी। किन्तु वह केवल पतीकाही काम नहीं करती थी, वरन् सहधर्मिणीका भी कर्त्तव्य पालन करती थी। जब कभी रावण अधिक अन्याय करनेपर उतारू होता, तब वह उसे वैसा करनेसे मना करती। पर वह उसकी कब सुनता था? लाचार, उसे स्वामीके हठके आगे अपनी इच्छाका विसर्जनकर देना पड़ता

सीता जबसे लङ्का आयीं तबसे मन्दोदरीने बीसियों बार रावणको समझाया, कि "प्राण-पति! अब भी चेत जाओ, एक सतीको इतना न सताओ, नहीं तो सतीके अपमानसे हमलोगों-का बड़ा भारी अमङ्गल होगा।" परन्तु यह पापी तो इसके लिये तैयारही बैठा था, उसकी बुद्धि विनाश काल आ जानेके कारण फिरी हुई थी; अतएव वह मन्दोदरीकी सारी कही-सुनी इस कानसे सुनकर उस कानसे बाहर कर देता था।

रामचन्द्रकी सेनाके आने और विभीषणके उनसे जा मिलनेकी बात सुन, वह और भी घबरायी। उसने रावणसे जाकर कहा,—"नाथ! अब अन्तिम समय है!! इस समय यदि सन्धिकी चेष्टा न करोगे, तो न जाने भाग्यमें क्या लिखा है?" यह सुन, रावणने उसे डाटते डपटते हुए कहा,—"प्रिये! तुम स्त्री हो, तुम्हारा हृदय सहजही कोमल और शङ्काशील है। भला, जिसके आगे त्रिलोकीमें कोई वीर न ठहर सका, उसे दो छोकरे बन्दर-भालुओंकी सेना लेकर क्या कभी हरा सकेंगे? असम्भव बात है! तुम चुपचाप देखती रहो। युद्ध करने आये हैं, तो आने दो।" लाचार, मन्दोदरी चुप हो चली गयी।

इधर दोनों ओरके सैनिक अस्त्र शस्त्रोंसे सज-धजकर अपनी-अपनी मोरचाबन्दी करने लगे। दोनों सेनाओंके ज्वारसे लङ्का-समुद्र उथल-पुथल होने लगा।



यथा समय सीताको सवाद मिला, कि उनके प्राणोंके प्राण जीवनके सर्व्वस्व, तन-मनके स्वामी, इहलोकके सहचर



परलोकके उद्धारक, श्रीरामचन्द्र, दल-बल सहित आ पहुंचे हैं और उनकी सेना सकुशल समुद्र पारकर लङ्कामें उतर आयी है। यह सुनतेही हर्षकी अधिकता और दर्शनोंकी उत्कण्ठाके कारण उनकी विचित्र अवस्था हो गयी। विभीषणकी स्त्री, सरमा और कन्या, कलाही इन दिनों उनकी परम सङ्गिनी और दु:खकी साझीदार थीं। उन लोगोंने सीता देवीको आशा और आश्वासनके वचनोंसे सदा सन्तुष्ट और प्रसन्न रखना आरम्भ किया और उनका अन्धकारमय जीवन इस हलकीसी ज्योतिसे थोड़ा बहुत प्रकाशित हो उठा था।

इधर रावणने सोचा, कि अब तो युद्ध होगाही, पर मैं जिस लिये सीताको हर लाया था, वह काम तो खटाईमेंही पड़ा रह गया! अतएव उसने अपने एक मायावी राक्षससे ठीक रामचन्द्रकी आकृतिका एक कटा मुण्ड बनवाकर मँगवाया और उसे सीताको दिखलानेके लिये ले चला। उसकी धारणा थी, कि सीता पतिका मरना जान, मेरा कहना मान लेगी और उधर रामचन्द्रको जब यह सवाद मिलेगा, तब असतीके लिये इतनी जीव हत्या करनेको वे कभी तैयार न होंगे और घर लौट जायेंगे। फिर तो साँप भी मरे और लाठी भी न टूटे!

दुष्ट रावण वह माया-मुण्ड लिये हुए सीताके सामने आया और बोला,—"लो, जिसके लिये तुम मरी जाती हो, उसका यह कटा सिर देखकर जी ठंडा कर लो। कहो, अब किसके बलपर उछलोगी? अब भी मान जाओ, एक बार अपने मुँहसे मुझे प्रेमकी भिक्षा दान कर दो। बस मैं कृतार्थ हो जाऊँगा।"

यह सुन और उस मुण्डको सचमुच अपने स्वामीकाही सिर जान, सीता हाहाकार करने लगीं। वे बड़ी विकलताके साथ रोती रोती मूर्च्छित हो गयीं। बड़ी देरतक उनकी मूर्च्छा न टूटी और वे ज्यों की-त्यों पड़ी रहीं। राक्षसियोंने बड़े उपचार किये, परन्तु उन्हें किसी तरह चेतना नहीं हुई। यह देख, वहाँ ठहरना आवश्यक न समझ, रावण चला गया।

बड़ी देर बाद जब सीताकी मूर्च्छा भङ्ग हुई, तब वे घबराहट और शोक-भरी दृष्टिसे चारों ओर देखती हुई आप-ही-आप कहने लगीं,—"हाय! अन्तमें क्या मेरे भाग्यमें यही बदा था? रावण! तू इस पापका फल तिल-तिल करके पायेगा। तूने आज मेरे ऊपर जैसा वज्र गिराया है, वैसा एक नहीं, सौ बार तेरे ऊपर गिरेगा। पापी! तू मुझे अनाथिनी बना, मनमानी करना चाहता है? यह आशा ताकपर रख दे। मैं अभी अपने स्वामीके पास जाती हूँ। आर्य्य-नारीका पतिसे जन्म-भरकाही नाता नहीं होता—जन्म-जन्मान्तरतक बना रहता है। तेरे जैसे करोड़ पापात्मा भी इस सम्बन्धके बन्धनको नहीं तोड़ सकते। मैं जीवनमें स्वामीके दर्शन न कर सकी, तो क्या हुआ? मरकर तो उनके पास पहुँचूँगी? हा! क्या कोई ऐसा पुण्यात्मा नहीं है, जो उनके सयोगी शरीरके पास मुझे पहुँचा दे, जिसमें मैं उनके साथही चितापर जलकर सती हो जाऊँ?"

सीता इस तरह हाहाकार करही रही थीं, कि विभीषणकी स्त्रीने आकर उन्हें ढाढस बँधाते हुए कहा,—"सीता! धैर्य्य धरो, शोक न करो। तुमसी सती नारीका कोई बाल भी बाँका नहीं

परलोकके उद्धारक, श्रीरामचन्द्र, दल-बल सहित आ पहुँचे हैं और उनकी सेना सकुशल समुद्र पारकर लङ्कामें उतर आयी है यह सुनतेही हर्षकी अधिकता और दर्शनोंकी उत्कण्ठाके कारण उनकी विचित्र अवस्था हो गयी। विभीषणकी स्त्री, सरमा और कन्या, कलाही इन दिनों उनकी परम सङ्गिनी और दुःखकी साझीदार थीं। उन लोगोंने सीता-देवीको आशा और आश्वासनके वचनोंसे सदा सन्तुष्ट और प्रसन्न रखना आरम्भ किया और उनका अन्धकारमय जीवन इस हलकीसी ज्योतिसे थोड़ा बहुत प्रकाशित हो उठा था।

इधर रावणने सोचा, कि अब तो युद्ध होगाही, पर मैं जिसके लिये सीताको हर लाया था, वह काम तो खटाईमेंही फूलता रह गया! अतएव उसने अपने एक मायावी राक्षससे ठीक रामचन्द्रकी आकृतिका एक कटा मुण्ड बनवाकर मँगवाया और उसे सीताको दिखलानेके लिये ले चला। उसकी धारणा थी, कि सीता पतिको मरा जान, मेरा कहना मान लेगी और उधर रामचन्द्रको जब यह सवाद मिलेगा, तब असतीके लिये इतनी जीव हत्या करनेको वे कभी तैयार न होंगे और घर लौट आयेंगे। फिर तो साँप भी मरे और लाठी भी न टूटे!

दुष्ट रावण वह माया-मुण्ड लिये हुए सीताके सामने आया और बोला,—"लो, जिसके लिये तुम मरी जाती हो; उसका यह कटा सिर देखकर जी ठंडा कर लो। कहो, अब किसके बलपर उछलोगी? अब भी मान जाओ, एक बार अपने मुँहसे मुझे प्रेमकी भिक्षा दान कर दो। बस मैं कृतार्थ हो जाऊँगा।"

यह सुन और उस मुण्डको सचमुच अपने स्वामीकाही सिर जान, सीता हाहाकार करने लगीं। वे बड़ी विकलताके साथ रोती रोती मूर्च्छित हो गयीं। बड़ी देरतक उनकी मूर्च्छा न टूटी और वे ज्यों की-त्यों पड़ी रहीं। राक्षसियोंने बड़े उपचार किये, परन्तु उन्हें किसी तरह चेतना नहीं हुई। यह देख, वहाँ ठहरना आवश्यक न समझ, रावण चला गया।

बड़ी देर बाद जब सीताकी मूर्च्छा भङ्ग हुई, तब वे घबराहट और शोक-भरी दृष्टिसे चारों ओर देखती हुई आप ही-आप कहने लगीं,—"हाय! अन्तमें क्या मेरे भाग्यमें यही बदा था? रावण! तू इस पापका फल तिल-तिल करके पायेगा। तूने आज मेरे ऊपर जैसा वज्र गिराया है, वैसा एक नहीं, सौ बार तेरे ऊपर गिरेगा। पापी! तू मुझे अनाथिनी बना, मनमानी करना चाहता है? यह आशा ताकपर रख दे। मैं अभी अपने स्वामीके पास जाती हूँ। आर्य्य-नारीका पतिसे जन्म-भरकाही नाता नहीं होता—जन्म-जन्मान्तरतक बना रहता है। तेरे जैसे करोड़ पापात्मा भी इस सम्बन्धके बन्धनको नहीं तोड़ सकते। मैं जीवनमें स्वामीके दर्शन न कर सकी, तो क्या हुआ? मरकर तो उनके पास पहुँचूँगी? हा! क्या कोई ऐसा पुण्यात्मा नहीं है, जो उनके सयोगी शरीरके पास मुझे पहुँचा दे, जिसमें मैं उनके साथही चितापर जलकर सती हो जाऊँ?"

सीता इस तरह हाहाकार करही रही थीं, कि विभीषणकी स्त्रीने आकर उन्हें ढाढ़स बँधाते हुए कहा,—"सीता! व्यर्थका शोक न करो। तुमसी सती नारीका कोई बाल भी बाँका नहीं

कर सकता। इतनी बुद्धिमती और धर्मात्मा होकर भी तुम क्यों इन राक्षसी मायाओंमें आ जाती हो? यह सब झूठी माया है। तुम्हारे स्वामी सानन्द हैं। उनकी दीर्घ आयु हो, तुम्हारा सौभाग्य अचल हो। ऐसी अमङ्गल आशङ्काको कदापि हृदयमें स्थान न दो।"

यह सुन, सीता चुप हुईं और बोली,—"रावण! मैं तुझे क्या शाप दूँ? तेरा कार्य्यही तेरे लिये शाप है। उस कर्म-रूपी वृक्षमें जो विष फल फल रहा है, उसीसे तेरा सर्वनाश होगा। तेरा एक निरपराध, निरीह और निर्बल अबलाको इस तरह पीडित करना कभी निष्फल नहीं जायेगा। क्या तू नहीं जानता, कि प्रबल राजा होकर निर्बलपर बल-प्रयोग करना तथा गौ, ब्राह्मण और स्त्रीको कष्ट पहुँचाना, अपने ध्वंसको आपही निमन्त्रण देकर बुलाना है?"

तदनन्तर सीताने सरमासे कहा,—"बहन! तुम्हारे गुण मैं जीवनके अन्तिम साँसतक गाऊँगी और भगवान् यदि फिर अच्छा दिन दिखायेंगे, तो मैं तुम्हारे इन उपकारोंका अवश्य बदला चुकाऊँगी।"



युद्ध होने लगा। राक्षसों और वानरोंकी सेनाएं परस्पर भिड़ने लगीं। रावणके बेटे, पोते, भाई, बन्धु—एक-एक करके सभी युद्धमें काम आने लगे। रामचन्द्रकी बली भुजाओंने शत्रुओंको इस तरह काटकर रणमें बखेर दी, जैसे किसान पके हुए

मन्नके पौधोंको हँसियासे काट-काटकर बिछाता चलाजाता है।

थोड़ेही दिनोंके युद्धमें राक्षसोंके समस्त गिने-चुने वीरोंका संहार हो गया। कुम्भ, निकुम्भ, अतिकाय, मकराक्ष, वीरबाहु कुम्भकर्ण आदि महावीर सदाके लिये समर-सेजपर सो गये। प्रति दिन युद्ध होता, दोनों ओरसे जी-तोड़ चेष्टा की जाती, परन्तु सब दिन रामकीही जीत होती। होती भी क्यों नहीं? रामका पक्ष धर्म्म और न्यायका था तथा रावणकी ओर पाप अधर्म्म, अन्याय और कलुषताही काम कर रही थी। बानरोंने इस युद्धमें ऐसी वीरता दिखायी, कि रामचन्द्र सौ सौ मुँहसे भी उनकी बड़ाई करके नहीं अघाते थे।

इसी तरह लङ्का प्राय वीर-शून्य हो गयी; केवल रावणका पुत्र मेघनाद किसी तरह किसीके वशमें नहीं आता था और अपने पराक्रमके आगे सबको तेजहीन किये हुए था। उसने तो एक बार दोनों भाइयोंको नागपाशमें बाँध भी लिया था, पर बानरोंने बड़ी चेष्टा करके उन्हें छुड़ा लिया। बहुत हैरान करनेके बाद वह भी कालका कौर हुआ। रावणको महान् शोक हुआ, क्योंकि उसके पुत्रके समान बली उसकी सेनामें और कोई न था। उसका वध होते देख, उसने अच्छी तरह समझ लिया, कि बड़ी बुरी घड़ीमें मैं सीताको हर ले आया था, जो इस प्रकार वंश-समेत मारा गया! उसने सोचा,—"अब क्या करूँ? क्या इतनी दूरतक आकर लौट जाऊँ? ऐसी अभिमान-भरी बातें कहकर, अब क्या अपमानसे सिर नीचा करूँ? नहीं अब मरनेके कोई उपाय नहीं। प्राण

करके ही अपने पापका प्रायश्चित करूँगा ! भाई-बन्धुओं औ पुत्र-पौत्रोंको कालको भेंट कर, अपने सुखके लिये, इन तुच्छ प्राणोंको बचानेके निमित्त, शत्रुओंके आगे सिर झुकाऊँ ? नहीं ऐसा त्रिकालमें भी नहीं हो सकता।"

यही सोच-विचारकर वह अबकी बार स्वयं युद्ध-भूमि आया और जी होमकर लड़ने लगा। थोड़ीही देर युद्ध क उसने लक्ष्मणके हृदयमें ऐसी साँग मारी, कि वे मूर्च्छित होक गिर पड़े और रामचन्द्र उनके प्राणोंकी आशङ्कासे घबरा उठे वे बच्चे से बिछुड़ी हुई गायकी तरह ऊँचे स्वरसे विलाप करने लगे। भाइके प्रेम प्रवाहमें—नारीकी चिन्ता, युद्धका कर्त्तव्य, क्षत्रियका धर्म्म—सब कुछ डूब गया। उनका करुणा भरा क्रन्दन सुन, पत्थरका हृदय भी विदीर्ण होने लगा। विभीषणने यह विपद् आयी देख, एक वैद्यको बुलवाकर लक्ष्मणकी परीक्षा करवायी। देख-भालकर वैद्यने गन्धमादन-पर्वतपरसे सञ्जीवनी बूटी लाकर पिलानेकी व्यवस्था दी। परन्तु कठिनाई तो यह थी, कि उतनी दूरसे बूटी लाये कौन ? निदान, जिन अद्वितीय वीरने अनायास समुद्र-लंघन किया था, इस बार भी वेही आगे बढ़े। हनुमान् झटपट गन्ध-मादन-पर्वतपर जानेके लिये तैयार हो गये। उन्होंने, रामका नाम ले, शीघ्रही यात्रा कर दी।

रात बीत चली। वैद्यने कहा था, कि यदि रातों-रात ओषधि पेटमें न पड़ी, तो लक्ष्मणके प्राण कदापि न बचेंगे परन्तु अबतक हनुमान् नहीं आये ! यह देख, रामचन्द्र भ्रातृ-शोकसे व्याकुल हो, धीरज छोड़कर रोने लगे —

"सकहु न दुखित देखि मोहि काऊ ❀ बन्धु ! सदा तव मृदुल सुभाऊ ॥
मम हित लागि तजउ पितु-माता ❀ सहेउ विपिन हिम आतप वाता ॥
सो अनुराग कहाँ अब भाई ! ❀ उठहु न सुनि मम बच-बिकलाई ॥
जो जनितेउँ बन बन्धु-बिछोहू ❀ पिता-बचन मनिता नहिँ ओहू ॥
सुत वित नारि भवन परिवारा ❀ होहि जाहिँ जग बारहिँ बारा ॥
अस विचारि जिय जागहु ताता ❀ मिलहिँ न जगत सहोदर भ्राता ॥
यथा पंख बिनु खगपति दीना ❀ मनिबिनु फणि करिवरकर हीना ॥
अस मम जीवन बन्धु बिनु तोही ❀ जो जड़ दैव जियावहि मोही ॥
जैहौं अवध कवन मुँह लाई ❀ नारि हेतु प्रिय बन्धु गँवाई ॥
सौंपेउ मातु मोहि गहि पानी ❀ सब विधि सुखद परमहित जानी ॥
उतर काहि दैहौं कह जाई ❀ उठि किन मोहि समुझावहु भाई ॥"

इसी समय एकाएक टूटी हुई आशा बँध गयी, चातकके पिपासित कण्ठमें अमृत समान स्वातीकी बूँद टपक पड़ी। सजीवनी-बूटी लिये हुए हनुमान् आ पहुँचे। वैद्यके बतलाये अनुसार बूटी लक्ष्मणको पिला दी गयी। उसके दो-एक घूँट गलेके नीचे उतरतेही लक्ष्मणने आँखें खोल दीं। रामकी सेनामें आनन्द-ध्वनि और जय-घोष होने लगा। रावणके कानोंमें भी वह जय-ध्वनि पहुँची और उसने भी सुना, कि लक्ष्मण मरकर फिर जी उठे, अब तो उसे पूरा विश्वास हो गया, कि इस युद्धमें उसका निस्तार नहीं है।

मरता क्या न करता ? रावण अबकी बार बड़े क्रोधमें भरकर मैदानमें उतरा और विकट युद्ध करने लगा। वह एक प्रसिद्ध वीर था, उसने देवताओंतकको समर-भूमिसे भगा दिया था। उसका युद्ध कौशल देख, रामकी सेनामें खलबली मच गयी, परन्तु अन्तमें धर्म्मने अधर्म्मपर विजय पायी। रामके विष-समान बाणों

रावणको धराशायी करही दिया ? पृथ्वीका एक बड़ा भारी भार उतर गया—अधर्मका साम्राज्य लुप्त हो गया।

रावणके गिरतेही राक्षस-वंशका मानों दीपक बुझ गया। विभीषणको ऐसे दुष्ट भाईके मरनेका भी बड़ा शोक हुआ। सच है, लाख बुराई हो ; परन्तु रक्त अपना प्रभाव दिखाये बिना नहीं रहता। तदन्तर रामकी आज्ञाके अनुसार विभीषणने यथा-विधि उसका मृतक संस्कार किया।

वानर-सेना युद्ध-विजयके आनन्दमें मग्न हो गयी। चारों ओर 'श्रीरामचन्द्रकी जय'का उल्लास-पूर्ण स्वर गगन-मण्डलको विदीर्ण करता हुआ सुन पडने लगा। इसी समय रामचन्द्रने हनुमान्‌को बुलाकर कहा,—

"भाई! तुम्हारेही द्वारा मैंने पहले-पहल खोयी हुई सीताका संवाद पाया था। तुम्हारीही वीरता, धीरता, चतुराई और दयाके कारण हमलोग इस युद्धमें विजयी हुए हैं, अतएव तुम्हीं सबसे पहले सीताके पास जाकर युद्धमें जय होनेका समाचार कहसुनाओ और उनका कुशल-सवाद ले आओ। इस सेनामें और किसीको वे जानती-पहचानती भी तो नहीं हैं ? इसलिये देर न करो।"

आज्ञानुसार हनुमान् अशोक-वनकी ओर चले।



सीताके पास पहुँच, हनुमान्‌ने उनसे रावणके मारे जानेका हाल कह सुनाया और यह भी कहा, कि भगवान् रामचन्द्रने आपको कुशल पूछी है। यह सब, सीता कहने लगीं

"बेटा ! स्वामीने मेरी कुशल पूछी है ? उन्होंने वीरकी तरह संग्राममें प्रवृत्त हो, प्रबल शत्रुपर विजय पायी है, क्षत्रियका कर्त्तव्य-पालन करनेमें समर्थ हुए हैं—उनकी दासीके लिये यही सबसे बड़ी कुशलकी बात है, और नहीं, तो जबतक मेरे ये नेत्र उनके चरण-कमलोंके दर्शन नहीं करते, तबतक मेरी कुशल कहाँ है ? तुम जल्द जाकर उन्हें बुला लाओ। विलम्ब न करो। हाँ, तुमने मुझे पहले भी स्वामीका सन्देश पहुँचाकर कृतार्थ किया था और इस बारभी यह महा आनन्ददायक समाचार आ सुनाया है, पर पहलेमें मैं न तो उस बारही तुम्हें कुछ दे सकी थी, न इस बारही कुछ दे सकती हूँ। केवल जी खोलकर आशीर्वाद देती हूँ। अशोक-वन वासिनी दुखिनी सीताके पास और रखाही क्या है ?" यह कहते कहते सीताके नेत्र सजल हो गये।

हनुमान्‌ने कहा,—"माता ! आपके इन आशीर्वादोंका मोल क्या कुछ कम है ? आपकीसी सती साध्वी देवीके आशीर्वचनससागरा पृथ्वीके राजत्वसे भी अधिक सुखकर हैं। यही आशीर्वाद दें, कि आपलोगोंके चरणोंमें मेरी प्रीति सदा बनी रहे और आप लोगोंकी सेवाही करते-करते मैं जीवनके शेष दिन बिता दूँ।"

यह कह, हनुमान् रामके पास चले आये। उन्होंने रामसे सीताकी उत्कण्ठाकी बात कह सुनायी। सुनकर रामचन्द्रने विभीषणसे कहा,—भाई विभीषण ! तुम्हीं जाओ और जानकीको अच्छे-अच्छे वस्त्रालङ्कार पहिनाकर यहाँ बुला लाओ। मैं तो प्रतिज्ञासे बँधा हूँ, चौदह वर्ष पूरे हुए बिना किसी नगरके भीतर जानेमें असमर्थ हूँ। अतएव मैं नहीं जा सकता।"

यह बात कहते-ही-कहते रामचन्द्रका मुख-मण्डल शोककी हलकी छायासे युक्त हो गया। सबने समझा, कि बहुत दिनोंके विरहकी यादनेही उनको इतना चिन्तित कर दिया है, परन्तु उस समय उनके मनके भीतर कैसा अन्धड-तूफान जारी था, वह कौन जानता था ? सच बात तो यह थी, कि एक विचित्र चिन्ताने उस समय उनके हृदय-सागरको मथित करना आरम्भ कर दिया था। महीनोंके विरह दुःखके बाद प्राण-समान पत्नीके पुनर्मिलन-की आशा जहाँ उत्कण्ठा, आनन्द और आग्रह उत्पन्न कर रही थी, वहाँ एक नयी आशङ्कासे उनकी नस-नसमें अग्निकी चिन-गारियाँसी प्रवेश कर रही थीं। अमृतसे भरे हुए घड़ेमें विष मिल रहा था।



अच्छे-अच्छे वस्त्रों और अलङ्कारोंसे सुसज्जित तथा प्रिय-मिलनकी आशासे आनन्दित हो, सीता पालकीपर चढी हुई विभीषणके पीछे पीछे चली। कुछ दूरपरही वे पालकीसे नीचे उतर पड़ी और उत्कण्ठाके प्रबल वेगसे व्याकुल हो, चञ्चल चरणोंसे स्वामीके समीप पहुँच उनके पैरोंपर आ गिरीं। उनके आनन्दकी उस समय अवधि नहीं थी, प्रेमका अथाह समुद्र उनके हृदयमें लहरें मार रहा था, परन्तु उन्हें इस बातकी कल्पना भी नहीं थी, कि क्षणभर बादही उनके सिरपर बिना बादलके वज्रपात होनेवाला है !

उन्हें चरणोंसे उठा, रामचन्द्रने बड़े धीर-गम्भीर भावसे

कहा,—"देवी! कर्त्तव्यके अनुरोधसे कठिन युद्ध कर मैंने तुम्हारा उद्धार किया है। जिस दुरात्माने मेरी सहधर्मिणीका हरण किया था, उसे ठिकाने लगाकर मैं अपना कर्त्तव्य पूरा कर चुका। पापी अपने पापों और मेरे अपमानका पूरा पूरा बदला पा गया—उसका सवंश नाश हो गया। क्षत्रियके पराक्रमका हाल संसारको मालूम हो गया। गाढ़े दिनोंके मित्र, सुग्रीव और विभीषण तथा प्राणप्रिय सखा, हनुमान्‌की सारी चेष्टाएँ सफल हो गयी। बहुत दिनों बाद आज मैं तुम्हें अपने सामने पाता हूँ। तुम भारी सङ्कटोंसे छुटकारा पाकर यहाँ आयी हो, परन्तु देवी! निश्चय जानना, कि मैंने यह सारा झञ्झट तुम्हारेही लिये नहीं झेला। यह सब मैंने धर्म्म और कर्त्तव्यके विचारसेही किया है। तुम सालभरके लगभग राक्षसोंके घरमें रहीं। वहाँ कोई तुम्हारा अपना-सगा नहीं था; वहाँ तुम रात दिन केवल शत्रुओंसे घिरी रहती थीं। पराये घरमें तीन रातोंतक जो स्त्री रह जाये, उसे पुन ग्रहण करनेमें साधारण आदमी भी आपत्ति करते हैं, फिर इतने दिन शत्रु-पुरीमें रही हुई तुमको मैं किस प्रकार सङ्ग ले चलूँ? तुम्हारा जहाँ जी चाहे, चली जाओ। तुम्हारा उद्धार करना, वैरियोंसे बदला लेना, अधर्म्मका राज्य पृथ्वीसे उठा देना, मेरा धर्म्म था, मैंने उसका पालन किया; परन्तु तुम्हें ग्रहण करनेमें मुझे आपत्ति है—ऐसा लोक-विरुद्ध कार्य मैं नहीं कर सकता।"

वज्रकी मारी हुईसी सीता ये कुलिशके समान कठोर बातें सुनती रहीं। बारह वर्षके वनवास, वर्ष-भरके विरह तथा रावणके दारुण उत्पीडनसे उन्हें जो कष्ट हुआ था, उससे

वर्षाकालकी प्रबल वेगवती नदीकी भाँति मेरे हृदयसे निकलकर आपके चरणोंके प्रति निरन्तर प्रवाहित हो रहे हैं। राजन्! यही दण्ड मेरे लिये मृत्यु से बढ़कर है। किन्तु इतनेपर भी मैं मरती नहीं हूँ, इसका कारण यह नहीं है, कि मैं आपसे क्षमा पानेकी आशा करती हूँ। क्षमा माँगना क्षत्राणीका धर्म नहीं, इसमें रामचन्द्रकी पत्नीका कोई गौरव नहीं। मैं आपको इस बातका प्रमाण देना चाहती हूँ, कि मैं वैसीही निश्छल, निष्पाप और सती हूँ, जैसी नारायणकी लक्ष्मी और शिवकी पार्वती हैं।'

यह कह, सीता क्षणभरके लिये चुप हो रहीं। उनका मिलन-आनन्द तो कभीका नष्ट हो चुका था, अबके उनके चेहरेसे इस दारुण अपमानकी कृष्ण छाया भी लुप्त हो गयी। रह गयी, केवल देवीकी मूर्त्तिपर विराजनेवाली स्वर्गीय ज्योति—सतीत्वका सूर्यप्रभासे भी अधिक चमकीला तेज! रामचन्द्र चुप चाप उनकी बातें सुनते रहे, उनके मुँहसे कोई बात नहीं निकली। सीताने उन्हें चुप देख, फिर कहना आरम्भ किया —

"राजन्! आपने इतने लोगोंके सम्मुख मेरे सतीत्वपर सन्देह और मेरे चरित्रपर आशङ्का की है। यह कलङ्क लिये हुए मैं मरनेको भी तैयार नहीं। मैं आपको इस बातका प्रमाण देना चाहती हूँ, कि मैं असती नहीं, सती—कलङ्किनी नहीं, निष्कलङ्क हूँ। कुँअर लखनलाल! आओ, भैया! मैंने तुम्हें एक दिन बहुत कड़ी-कड़ी बातें कही थीं—उसका फल मैंने इन बारह महीनोंमें भली भाँति भोग लिया है, परन्तु देखती हूँ, कि उस पापका मुझे और भी प्रायश्चित्त करना पड़ेगा। अतएव

तुम अभी मेरे लिये चिता बनाओ। मैं उसमें प्रवेश करूँगी। यदि मैं सती न होकर असती हूँगी, तो उसी चितामें जल मरूँगी ; पितृ-कुल और श्वशुर-कुलके कलङ्कका जीता जागता उदाहरण जलकर भस्म हो जायेगा और यदि सदा, सब समय, पति परमेश्वरके चरणोंमेंही मेरा मन रहता होगा, तो अग्नि मेरा कुछ भी बिगाड़ न सकेगी, मैं उस अग्निमें न जलूँगी, वरन् स्वामीके आगे और भी दण्ड पानेके लिये जीती हुई खड़ी रहूँगी।"

यह सुनतेही लक्ष्मणकी आँखें डबडबा आयीं। वे कभी सीता और कभी रामकी ओर क्षोभ और दुःखके साथ देखने लगे। रामचन्द्रने उन्हें चिता बनानेके लिये आज्ञा दे दी और चुपचाप गम्भीर मूर्त्ति बनाये बैठे रहे। उनकी यह गम्भीरता देख, जितने लोग वहाँ उपस्थित थे, सब-के-सब चकित और विस्मित हो रहे थे ; पर किसीका इतना साहस न हुआ, कि उनसे एक बात भी कहे।



चिता प्रस्तुत हुई—अग्नि-संयोग कर दिया गया। गलेमें आँचल लपेट, स्वामीके चरणोंमें भक्ति पूर्वक प्रणाम कर, सीताने चिताकी प्रदक्षिणा की। दर्शकोंके नेत्र करुणासे सजल हो आये। वे विस्मयसे आँखें फाड़े हुए कलङ्क भञ्जनकी यह कठिन अग्नि परीक्षा देखने लगे।

तदनन्तर सतीत्वके प्रचण्ड तेजसे तपते हुए मुखमण्डल-वाली सीताने उच्चस्वरसे कहा,—

"मनसि वचसि काये जागरे स्वप्नसगे,
यदि मम पतिभावो राघवादन्यपुंसि।
तदिह दह ममाग पावनं पावकेदं,
सुकृतदुरितभाजा त्वं हि कर्मैकसाक्षी ॥"

अर्थात्—"यदि तनसे, मनसे, वचनसे, सोतेमें, जागतेमें, स्वप्न देखतेमें, कभी मेरा पति-भाव रघुकुल-मुकुट-मणि रामचन्द्रके अतिरिक्त अन्य किसी पुरुषके प्रति हुआ हो, तो हे पाप-पुण्यके साक्षी अग्निदेव! तुम मेरे इस शरीरको जलाकर अभी भस्म कर दो।" *

यह कहती हुई वे निर्भय, निःशङ्क-चित्तसे जलती चितामें कूद पड़ी। आगकी वह प्रचण्ड लपटें देख, एक हलकीसी चीत्कार ध्वनि दर्शक-मात्रके मुँहसे निकल पड़ी। रामचन्द्रका अचल हृदय भी चञ्चल हो उठा। इसी समय लोगोंने देखा, कि अग्नि सहसा बुझ गयी और एक वृद्ध ब्राह्मण सीताको लिये हुए चितासे बाहर आये और बोले,—"राम! सीता सतीकुल शिरोमणि हैं! इनपर सन्देह करना तुम्हारे लिये अनुचित है। मैं अग्निदेव हूँ,—मैं संसार-भरको पलमात्रमें जलाकर राख कर दे सकता हूँ, परन्तु इस परम तेजस्विनी सतीका केश-स्पर्श करनेकी भी शक्ति मुझमें नहीं है। सीताको तुम सादर ग्रहण करो। देखो, इस धरातलमें ऐसी कठिन परीक्षामें आज

*"जो मन, वच, क्रम मम उर माहीं। तजि रघुवीर आन गति नाहीं॥
तौ कृशानु! सबकी गति जाना। मोकहँ होउ श्रीखण्ड समाना॥"
(तुलसीदास)

तक कोई उत्तीर्ण नहीं हुआ। सतीके इस प्रतापको देखो, इस महत्त्वके गौरवको मनमें लाओ, इन देवीने जो अहर्निश तुम्हारे चिन्तन और नाम-स्मरणका व्रत पालन किया है, उसके फल-स्वरूप इनको अपनी हार्दिक श्रद्धाकी पात्री बनाओ।"

यह कह, ब्राह्मणवेशी अग्निदेव अन्तर्धान हो गये। रामचन्द्र-ने, हृदयसे प्रसन्न हो, कहा,—"देवि! प्रियतमे! साध्वी! आज जो काम तुमने कर दिखाया, वह त्रिकालमें भी सम्भव नहीं है। मैं तुम्हें आज भी वैसाही प्यार करता हूँ, जैसा पहले करता था। मेरे हृदयके सिंहासनपर तुम्हारी देवी-मूर्त्तिके सिवाय अन्यका अधिकार नहीं है—वहाँ तुम्हारी पूज्य प्रतिमा सदा एकभावसे विराजती रही है, परन्तु लोकापवादसे बचने और समाजके नियम तथा धर्मके निर्वाहके लियेही मैंने यह कठोरता, हृदयपर पत्थर रखकर, अवलम्बन की थी। आओ, भगवति!, मेरी आँखोंपर उसी तरह बैठो, जैसे बैठनेका तुम्हें सदासे अधि कार है। लोकमें तुम्हारी इस कठिन परीक्षाकी कथा युग-युगा-न्तरतक गायी जाये, संसार सतीका माहात्म्य समझे और आर्य्य-महिलाएँ इस पुण्यका गौरव देख, शिक्षा ग्रहण करें, इसी लिये देवताओंने मेरी मति ऐसी फेर दी थी, कि मैंने तुम्हारी ऐसी विकट परीक्षा ली। क्या अपने सदाके स्नेहशील स्वामीका एकमात्र लोक-दिखावेके लिये किया हुआ अपमान तुम न भूल जाओगी? मुझे न क्षमा करोगी?"

रामचन्द्रके ये वचन सुनतेही सीताकी सारी ग्लानि गयी, क्षणभर पहले जिस भयानक ज्वालासे उनका हृदय

रहा था, वह एकाएक ठंडी हो गयी , वे पुलकित होकर उनके चरणोंपर गिर पड़ीं और बोलीं,—"नाथ ! यह कैसी बात है ! किससे क्षमा माँगते हैं ? अपने चरणोंकी दासीसे ? आजन्म किङ्करीसे ? यह कहना आपको शोभा नहीं देता, उलटा मेरे सिरपर पाप चढ़ता है। आपकी यह कठोर परीक्षा मेरे लिये कितनी मङ्गल-कारिणी हुई है, वह मैं अब समझ रही हूँ। आप यदि ऐसा न करते, तो मैं कैसे संसारको अपनी सच्चरित्रताका प्रमाण दे सकती ! संसारके लोगोंको कुछ कहने-सुननेका अवसर न देकर, आपने मेरा जो मङ्गल किया है, उसके लिये मैं कहाँतक आपकी बड़ाई करूँ ! यह निठुराई मेरी भलाईही करने वाली हुई।"

फिर तो स्वामी और स्त्रीका वह वर्षभरके बिछोहके बादका सम्मिलन इतना सुखकारक हो उठा, जिसकी सीमा नहीं। रामचन्द्रके सैनिक, सेनापति और हित-मित्र हर्षसे जय-जयकी प्रचण्ड ध्वनि करने लगे। उन्होंने सीताके सतीत्वका जो तेज उस समय आँखों देखा, वह जीवनमें फिर कभी न भूला। "धन्य भगवति सीता ! धन्य तुम्हारा पातिव्रत !" यही बात बार-बार सबके हृदयसे निकलकर मुँहपर आने और दिग्दिगन्तमें फैलने लगी।

सीताने पुन पतिके चरणकमलोंके दर्शन पाये, उनके समीप बैठनेका सौभाग्य प्राप्त किया, अतएव वे धन्य-धन्य हो गयीं। उनकी वह प्रसन्नता, वह आनन्दोल्लास, हर्षकी अधिकताके चरणोंकी वह चञ्चलता, वाणीकी वह विह्वलता, नयनोंकी

वह मधुरता और मुखमण्डलकी वह बढ़ी हुई ज्योति देख, यही मालूम होता था, मानों चातकीने बूँद पायी, जन्म दरिद्र रङ्कने राव हो गया, मरते हुएके मुँहमें अमृत पड़ गया, सूखती हुई लताका सरस नीरसे सिञ्चन हो गया!



रामचन्द्रने लङ्काका राज्य विभीषणको दे दिया। लक्ष्मणके हाथसे उसको राजतिलक दिया गया। कई दिन बड़े आनन्द-उत्सव और आमोद-प्रमोदमें बीते। जिसने जो माँगा, उसने वही पाया। याचक अयाची हो गये, दरिद्र दाता हो गये, रङ्क राव बन गये। रामचन्द्रने शत्रुको हराकर, ऐसे परिश्रमसे जीती हुई लङ्का भक्त विभीषणको बिना मोह-मायाके दानकर दी!

इन्हीं दिनों रामचन्द्रने हिसाब लगाकर देखा, कि चौदह वर्ष पूरे होनेको आगये हैं, अब अयोध्याको लौट चलना चाहिये, नहीं तो अवधि पूरी होनेपर भी मुझे आया हुआ न देख, भरत भारी अनर्थ कर बैठेंगे—वे निश्चयही प्राण त्याग कर देंगे। यह विचार मनमें उदय होतेही रामचन्द्रने विभीषणसे कहा,—"भैया! मैं तो बड़ी विकट समस्यामें आ फँसा हूँ। मुझे अबतक इस बातका स्मरणही न रहा, कि मेरे वनवासकी अवधिके अब दोही चार दिन रह गये हैं। अब मैं इतनी जल्दी कैसे अयोध्या पहुँच सकता हूँ? उधर भरत मेरे आनेके दिन बड़ी उत्कण्ठासे गिन रहे होंगे। समयपर नहीं पहुँचनेसे वे निराश होकर प्राण त्याग कर देंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं।"

कहते-कहते रामचन्द्र, चिन्तासे चूर हो, चुप हो रहे। उन्हें व्याकुल देख, विभीषणने कहा,—"भगवन्! आप व्यर्थ चिन्तित न हों। मेरे भाई, रावण, स्वर्गसे 'पुष्पक' नामका एक विमान देवताओंसे छीनकर, लाये थे। वह अबतक हमारे यहाँ पड़ा हुआ है। वह बड़ाही शीघ्रगामी है। वैसा विमान संसारमें दूसरा नहीं है। वह स्वयं विश्वकर्म्माके हाथकी कारीगरी है। उसके द्वारा मेरे स्वर्गीय भ्राताने बड़ी-बड़ी यात्राएँ सहजही तय कर डाली थीं। उसपर सवार हो, आप नियत समयके भीतर अवश्यही अयोध्या पहुँच सकेंगे।"

यह कह, विभीषणने विमान लानेकी आज्ञा दी। उसके आतेही सीता, राम, लक्ष्मण, सुग्रीव, विभीषण और हनुमान् बारी-बारीसे उसपर जा सवार हुए। जब सब लोग सुख पूर्व्वक विमानपर बैठ चुके, तब विभीषणने रामचन्द्रकी आज्ञा ले, विमानका यन्त्र घुमाया, जिससे वह हहास करता हुआ एक विशाल-काय पक्षीकी भाँति आकाशमें उड़ चला। नीचे खड़े हुए लोग तालियाँ पीटने और "जय, जानकी-जीवनकी जय" कहते हुए हर्ष-ध्वनिसे आकाश कम्पित करने लगे।

विमान उड़ता हुआ जाने लगा। देखते-ही देखते वह किष्किन्धा आ पहुँचा। सीतादेवीके आग्रहसे थोड़ी देरके लिये वह नीचे उतारा गया और सुग्रीवके घरकी स्त्रियाँ भी उसपर चढ़ा ली गयीं। तदनन्तर विमान फिर तीर-वेगसे उड़ता हुआ जाने लगा। रामचन्द्र ऊपरहीसे सीताको उन स्थानोंको ˋ लगे, जहाँ कहीं तो उन्होंने उनके साथ रहकर दुःखके

दिन सुखसे बिताये थे और कहीं उनसे बिछुड जानेपर रो-रोकर कर आँसुओंसे भूमि भिगोयी थी। गये दिनोंकी याद दिलानेवाले उन स्थानोंका वर्णन सुन और बहुत ऊँचेसे देखनेके कारण उनकी कुछ निरालीही शोभा निरखकर सीताके मनमें एक साथही हर्ष, शोक और विस्मयके भाव उत्पन्न होने लगे।

इसी प्रकार उडता हुआ विमान प्रयाग पहुँचा। वहाँ पहुँचतेही रामचन्द्रको अपने वनवासके आरम्भिक दिनोंकी याद आ गयी और उन्होंने एक बार फिर भरद्वाज ऋषिके आश्रममें जाना चाहा। अतएव विमान फिर नीचे उतारा गया। ऋषिने बडे प्रेमसे उन लोगोंका स्वागत किया और रामचन्द्रके मुँहसे वनवासका सारा हाल सुन, सुख और दुःख दोनोंका समान अनुभव किया। कई बातोंका विचारकर सबकी सलाहसे हनुमान यहींसे भरतको सब लोगोंके वनवाससे लौट आनेका संवाद देनेके लिये अयोध्या भेज दिये गये।

हनुमान् बहुत शीघ्र अयोध्यामें आ पहुँचे। नन्दीग्राममें भरतके पास जा, उन्होंने सबके आनेका संवाद कह सुनाया। सुनतेही भरत बडे आनन्दसे अधीर हो उठे और उसी क्षण उन्होंने नगरभरमें आनन्द-उत्सव करनेके लिये शत्रुघ्नको आज्ञा दे दी। सारी अयोध्यामें आनन्दके बादल उमड आये। राह-बाट, गली-कूचे, सर्वत्र ध्वजा पताकाएँ फहराती हुई दिखाई देने लगीं। राज-द्वारपर नौबत बजने लगी। सन्तान वियोगिनी मातृ भूमि अपने प्यारे बच्चोंके स्वागतके लिये दोनों हाथ पसारकर खड़ी हो गयी!

बड़ी उत्कण्ठासे विमानके आनेकी बाट देखी जाने लगी। सारी अयोध्याके लोग ऊपरको मुँह उठाये आकाश-मार्गकी ओर देखने लगे। छज्जों, मुडेरों, अटारियों और छतोंपर बैठी हुई पुर-नारियाँ बड़ी बेचैनीके साथ आकाशकी ओर एकटक देखने लगीं। रास्तों, बाग-बगीचों और मैदानोंमें असंख्य मनुष्य जमा होकर आकाशकी ओर टकटकी लगाये देखने लगे।

देखते-देखते विमान अयोध्याके ऊपर चीलके समान मँडराता हुआ दिखाई पड़ा। सबके हृदय चन्द्र-दर्शनसे उमड़े हुए समुद्रकी तरह उछल पड़े। मातृ-भूमिकी वह अलौकिक शोभा और पुर-वासियोंका वह अद्भुत प्रेम देख, रामचन्द्र, लक्ष्मण और सीताके मनमें बड़ाही आनन्द हुआ।

यथा-समय विमान नीचे उतरा। बहुत दिनोंके बिछुड़े एक दूसरेसे मिले। बार-बार परस्पर आलिङ्गन करते हुए भी उन्हें तृप्ति नहीं हुई। अपने वीर पुत्रोंको नाना सङ्कटोंसे उद्धार पाकर आया हुआ देख, माताओंको जो अपरिसीम आनन्द हुआ, वह लिखकर बतलाना मानों मातृ-स्नेहके अथाह समुद्रकी थाह लेनेकी व्यर्थ चेष्टा करना है।

रामचन्द्रने भरत और शत्रुघ्नको गले लगाकर जो अद्भुत भ्रातृ-स्नेह प्रकट किया, नेत्रोंमें आँसू लाकर उनके निश्छल, निश्चल और निस्सीम स्नेहकी जो बड़ाई की, उसे देखकर सुग्रीव और विभीषणको बड़ा पश्चात्ताप हुआ, कि एक ये भी भाई-भाई हैं और एक हम भी थे, जो अपने भाईको मृत्यु पथका

बना आये!

कदाचित् इस भ्रातृ-प्रेमको देख, भारतके उन अभागे निवासियोंको भी ग्लानि उत्पन्न हो जाये, जो इस पवित्र सम्बन्धका तिरस्कार कर छोटी-मोटी बातोंपर आपसमें उलझ पडते और "नास्ति बन्धु समो रिपु "का * पाठ पढने लगते हैं,तो भारतकी बहुत कुछ भलाई हो। आजकल जितने घर बिगडते दिखाई देते हैं, वे सब प्राय बन्धु विरोधकेही कारण। भाईका मोल सब लोग समझने लगें, तो हम इतने गिरकर भी किसी दिन ऊपर उठ सकते हैं।

सबसे मिलने जुलनेके बाद रामचन्द्र ने सुग्रीव और विभीषण आदिका सबसे परिचय कराया और सब लोग उन्हें अपने घरके आदमी समझने लगे। उन्होंने अयोध्यामें जो आदर सत्कार पाया, उससे वे परम सन्तुष्ट हुए और सभी शोक और ग्लानिके भावोंको भूल गये।

जिन कैकेयीने यह सारा विपत्तिका नाटक रचा था, उनके पास जा, जिस समय राम, लक्ष्मण और सीताने प्रणाम किया, उस समय वे मारे लज्जा और सङ्कोचके मरने लगीं। रोते-रोते उनकी घिग्घी बँध गयी। रामचन्द्रने उन्हें तरह-तरहसे समझाया और कहा,—"माता! तुम क्षण भरके लिये भी ऐसा न सोचना, कि मैं तुमसे रुष्ट हूँ। तुम मुझे कितना प्यार करती हो, यह भली भाँति मालूम है, पर मेरे कर्म फलको तुम क्या करतीं? इतना सब होना बदा था, इसीसे तुम कुटिल मनुष्योंके बहकावेमें पड गयीं, पर मैं यह जानता हूँ, कि वे चौदह वर्ष तुमने

* साधारण बोलचालमें भी कहा करते हैं, कि "न भाईसा हित न भाईसा वैरी।"

मन-ही-मन बहुत कष्ट सहकर बिताये हैं और पछतावेकी आगसे जलकर तुम्हारा हृदय फिर वैसाही सोनेकासा खरा हो गया है। भला भरत जैसे स्नेही भाईकी माताके प्रति मेरा क्षणभरके लिये भी दुर्भाव हो सकता है ? वैसा होनेसे माता ! मेरे सारे पुण्य क्षीण हो जायँगे नरककी यन्त्रणासे भी उस पापका प्रक्षालन न होगा।" यह सुन, कैकेयीका दुःख दूर हो गया—उनकी सारी ग्लानि मिट गयी।

इस प्रकार सबको आनन्दमें मग्न करते हुए वे तीनों वनवासी सबसे मिलते-जुलते खाते-पीते और हास्य-परिहास करते हुए विश्राम करने चले गये। सबके इस आनन्द आमोदका दिन भर उपभोग कर सूर्य्यदेव भी अस्ताचलकी चोटीपर जा पहुँचे और नक्षत्र चन्द्रमाको भी इस सुखका प्रसाद पानेका अवसर दे गये। चन्द्रदेव अयोध्याके इस सुहागपर सिहाते हुए सन्तोषकी हँसी हँसने लगे। बड़ी रात बीतनेपर, सब लोगोंने निद्रा देवीकी शरण ली। जबतक लोग जगे रहे, तबतक इस आनन्द-दायक मिलनकीही चर्चा करते रहे।



धीरे-धीरे आनन्दके साथ दिन बीतने लगे। नित्यके आमोद उत्सवोंके कारण अयोध्या आनन्दका आगार बन गयी। इसी बीच एक दिन वसिष्ठजीने सब सभासदोंको बुलाकर कहा,—"भाइयो ! जबसे रामचन्द्र वनसे लौट आये हैं, तबसे वे यद्यपि राज्यका सब काम-धाम देख रहे हैं, तोभी उनके राज्याभिषेकको

रीति अभीतक पूरी नहीं की गयी। अतएव वह भी होही जानी चाहिये। अभीतक भरतकी स्थापित उनकी खड़ाऊँ ही सिंहासन की शोभा बढ़ा रही है। अब वे अपने चरणकमलोंसे कृतार्थ करें, यही मेरी इच्छा है।"

मुनिकी यह बात सबने पसन्द की और उसी समय मन्त्रियोंने कर्मचारियोंको अभिषेककी तैयारी करनेकी आज्ञा दे दी। सभी राजाओं हित-मित्रों, सगे सम्बन्धियों और ऋषि मुनियोंको निमन्त्रण देनेकी व्यवस्था भी कर दी गयी।

यथा-समय रामचन्द्र राजगद्दीपर बैठे। चौदह वर्षका सूना सिंहासन फिर अलङ्कृत हुआ। उस समय भरतने रामकी वह खड़ाऊँ उनके पैरोंमें पहनाते हुए कहा,—"पूजनीय भाई साहब! आपको इन चरण-पादुकाओंको आपके स्थानमें रखकर हमने इनको सदा आपकेही समान समझा और हृदयमें इनका भय, आदर, श्रद्धा और भक्ति रखते हुए राज्यकी व्यवस्था की है। अब आप इन्हें पहन लें, क्योंकि अब इनके द्वारा शासन नहीं होगा—होगा आपके न्यायी करोंके द्वारा। तोभी इतना कह देना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ, कि आपकी इस धरोहरको मैंने तनिक भी नहीं बिगाड़ा। बल्कि पिताके समयसे भी इस समय राज्यकी व्यवस्था अच्छी है। आप देखेंगे, तो आपको मालूम होगा कि इसकी सम्पत्ति पहलेसे दसगुनी बढ़ गयी है। अब आप अपनी धरोहर सम्हालिये, आजसे आप हम तीनों लघु भ्राताओंको जो आज्ञा करेंगे, उसे हम सदा पालन करनेको तैयार हैं।"

भरतके इन वचनोंका सबने जयध्वनिके साथ आदर किया और उनकी उदारता, निःस्वार्थता और निष्कपट भ्रातृ-प्रीतिने सभी उपस्थित जनोंका मन मोह लिया।

राज्यारोहणके बाद रामचन्द्र बड़े न्याय और प्रेमके साथ प्रजाका पालन और शासन करने लगे। उनकी प्रजा उनके राज्य कालमें ऐसी सुखी हुई, कि वैसा सुशासन शायद और किसी राजाके राज्यमें न देखा गया और न सुना। आज लाखों वर्ष बीत गये हैं परन्तु रामचन्द्रकी प्रजा-प्रीति, सुशासन और नीति-निपुणताकी कीर्त्ति-कथा अब भी भारतके घर-घर गायी जाती है। रामका राज्य ऐसा सुखका भाण्डार बन गया था, कि अबतक अच्छे राज्यकी उपमा 'राम-राज्यसे' दी जाती है।

रामचन्द्रके राजतिलकके कुछ दिनों बादतक अयोध्यामें रहकर सुग्रीव और विभीषण आदि मित्र अपने-अपने घर चले गये। जाते समय रामचन्द्रने उन्हें नाना प्रकारके अमूल्य उपहार दिये और उनका बार-बार आलिङ्गन कर, कृतज्ञता और स्नेहके आंसुओंसे आँखें तर किये हुए उनको विदा किया। सब लोग तो चले गये, परन्तु हनुमान् नहीं गये। सीताके सतीत्वकी जो महिमा उन्होंने देखी थी और रामचन्द्रके उदारहृदयका जो परिचय उन्होंने पाया था, उससे उनका यह दृढ़ विश्वास हो गया था, कि वे लोग मनुष्य नहीं, देवता हैं। इसी भक्तिके कारण उन्होंने उनकी चरण सेवामेंही अपना सारा जीवन समर्पण कर दिया।

पाठक-पाठिकाओ! इस प्रकार सारी विघ्न-बाधाओंको ...के अनन्तर पतिके राज-सिंहासनपर बैठनेसे सीताको

कुछ अधिक सानन्द हुआ, ऐसा न समझें। उनके लिये तो पतिदेवके चरणोंके दर्शन करते हुए उनके समीपमें वास करना-ही सारी वसुधाका राज्य था। वे सच्ची पतिव्रता, उच्च-हृदया देवी थीं। वनकी आज्ञा पाकरही उन्हें कौनसा बडा भारी शोक हो गया था, जो आज अपार आनन्द होता? हाँ, अशोक वनका वास उनके लिये शतकोटि-दुःखदायक था, क्योंकि उतने दिन वे पतिदेवकी चरण-सेवासे वञ्चित, उनके सकल-दुःखापहारी दर्शन सुखसे रहित थीं, परन्तु उस समय भी उनके मनमें अपने स्वामीके पूजनीय चरणोंका ध्यान निरन्तर बना हुआ था और उसीके प्रतापसे उन्होंने उन्हें फिर पाया भी। जिस सिंहासनके कारण ये सारे झगडे उठ खडे हुए थे, वह भी उनके पैरोंके नीचे अनायास आप से-आप आ गया।

सच्ची पतिव्रता पतिके सहवास और उनकी सेवाकोही अपना सर्वस्व समझती—उसके लिये पत्थर और लालमें, काच और काञ्चनमें,कुटी और प्रासादमें कोई भेद नहीं है। दरिद्र स्वामीही उसका राजराजेश्वर है, दुखिया पतिही उसके लिये देवराज इन्द्रके सुख-ऐश्वर्यका अधिकारी है। इसीलिये सिंहासनके आधे भागकी अधिकारिणी होनेका उनके मनमें न तो कुछ गर्व था, न हर्ष, केवल स्वामीका कभी न छूटनेवाला साथही पाकर वे धन्य हो गयी थीं। पञ्चवटीकी पत्तोंकी बनी कुटियामें उनके हृदयमें जो आनन्द वर्त्तमान रहता था, वही आनन्द इस समय भी था, उससे कुछ भी अधिक नहीं। वे वन-वासके दिन जैसे सुखके दिन थे, आजके ये दिन भी वैसेही हुए।

न तो वे दिन बुरे थे, और न ये उनसे अधिक अच्छे! उन्होंने तो वन चलतेही समय स्पष्ट शब्दोंमें कह दिया था,—

"नाथ! सकल सुख साथ तिहारे।
शरद-विमल-विधु वदन निहारे॥"

इसी कारण उनके लिये अयोध्या वनकी अपेक्षा कुछ अधिक सुखदायिनी नहीं थी। जिस आनन्दके झरनेसे निकलकर उनकी हृदय-नदीमें निरन्तर हर्षकी धाराएँ बहा करती थीं, वे पतिदेवही उनके सकल सुखोंके आधार और समस्त सौभाग्यके दाता थे—वे जिस स्थानपर रहें, वही सीताके लिये स्वर्ग है, चाहे वह अयोध्याका राजमहल हो या दण्डकका घनघोर जङ्गल!

धन्य सीते! धन्य तुम्हारी पति-भक्ति! सचमुच पतिके आगे तुमने अपने अस्तित्वतकका खो दिया था—उनके जीवनमें अपना जीवन दूधमें पानीकी तरह मिला दिया था। यदि ऐसा न होता, तो तुम रामचन्द्र जैसे मर्यादा-पुरुषोत्तम, देव स्वरूप, ईश्वरावतार नर-पुङ्गवको स्वामी रूपमें कैसे पातीं? फिर हम और हमारे जैसे कोटि-कोटि प्राणीही क्यों तुम्हारा नाम लेकर तुम्हारी गुण-गाथा गाकर, अपनेको धन्य मानते?



सीता-वनवास



'राजा प्रजाका पिता है'—यही वाक्य ध्यानमें रखते हुए महाराज रामचन्द्र न्याय-पूर्वक अपनी प्रजाका पालन कर रहे थे। राज्यका प्रत्येक विभाग चतुर न्यायी और धर्मात्मा मन्त्रियोंके हाथमें था। उनके तीनों भाई राज्यके भिन्न भिन्न विभागोंपर तीखी दृष्टि रखते हुए कहीं किसी तरहकी त्रुटि या अन्याय नहीं होने देते थे। उनकी सारी प्रजा सुखी थी—सभी प्रसन्न और धन-धान्यसे परिपूर्ण दिखाई देते थे। न कोई दुःखी था, न दरिद्र। किसीके मुँहसे राज्य-शासनकी कोई बुराई निकलती हुई नहीं सुनाई देती थी। एक धर्म्मात्मा राजाकी प्रजा जैसी न्यायी, धर्मात्मा और नीतिके अनुसार चलनेवाली होनी चाहिये, रामकी प्रजा वैसीही थी। देखिये, उनके उस सुख-सौभाग्य-मय सुराज्यका वर्णन करते हुए कवि कहते हैं,—

"राम राज्य बैठे त्रय लोका ❀ हर्षित भयेउ गयेउ सब शोका॥
बैर न कर काहू सन कोई ❀ रामप्रताप विषमता खोई॥
दैहिक दैविक भौतिक तापा ❀ रामराज्य काहू नहि व्यापा॥
सब नर करहिं परस्पर प्रीती ❀ चलहिं सुधर्म निरत श्रुतिनीती॥
अल्प मृत्यु नहि कवनिउ पीरा ❀ सब सुन्दर सब निरुज ।

नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना ⊛ नहिं कोउ अबुध न लच्छनहीना॥
सब उदार सब परउपकारी ⊛ द्विज-सेवक सब नर अरु नारी॥
एक-नारि-व्रत-रत नर-नारी ⊛ ते मन-बच क्रम पति हितकारी॥
खगमृग सहज बैर बिसराई ⊛ सबनि परस्पर प्रीति बढ़ाई॥"

इस प्रकार प्रजाके अनुकूल शासन कर रामचन्द्रने सबका मन मुट्ठीमें कर लिया था। उनके अलौकिक और पुण्यमय चरित्रको देख, प्रजा भी अपना चरित्र सदा निर्म्मल रखती थी। कहीं चोरी, जुआ, दगाबाजी झूठ, पर-स्त्री-गमन आदि पापोंकोका नाम निशान भी नहीं था। समयपर वर्षा होती, चारों वर्ण अपने धर्म्मका निर्वाह करते, पुरुष सभी एक-पत्नी-व्रत और नारियाँ सब सती थीं। फिर वहाँ प्लेग, हैजा और इनफ्लुएञ्जा आदि न हों तो आश्चर्यही क्या है? धर्म्म-राज्यसे त्रि-तापका लोप हो जाना कुछ अचम्भा थोड़े है?

इधर प्रजा अनुकूल थीही, उधर घरमें भाइयों और पत्नीकी अनुकूलताने रामचन्द्रके कठिन कर्म्ममय जीवनको बहुत कुछ सुगम और सरस बना दिया था। इतने बड़े राजाकी रानी होकर भी सीता अपने हाथों सब-काम करती थीं। राजरानीकी अपेक्षा उनका यह गृहलक्ष्मी-रूपही रामचन्द्रके प्राणोंको अधिक सुख-सन्तोष प्रदान किया करता था। वे अपनी सासुओंकी जैसी सेवा करतीं, देवरोंपर जैसा वात्सल्य प्रकट करतीं, पुर-नारियोंसे जिस भाँति प्रेम-पूर्व्वक मिलती-जुलतीं—वह सब देख सुनकर रामचन्द्रके आनन्दकी सीमा नहीं रहती थी। और लोग भी सीताके इस देवीकेसे चरित्रको देख, उनके प्रति बड़ी भक्ति दिखलाते और उस गर्व, अभिमान, छल तथा कपटसे

शून्य देवीकी निरन्तर पूजा, स्तुति और गुण-कीर्त्तन करना अपना कर्त्तव्य समझते थे। तात्पर्य्य यह, कि रामचन्द्र केवल अच्छा राज्यही लेकर नहीं सुखी थे, बल्कि उनका गृह-राज्य भी उनकी लक्ष्मी-स्वरूपा गृहिणीके गुणोंके कारण वैसाही सुखमय था।



समय पाकर, भगवान्‌की परम दयासे, सीतादेवी गर्भवती हुईं। माताएँ प्रसन्न हो उठीं, पुरजन-परिजन पुलकित हो उठे, भाइयोंके हर्षकी सीमा न रही। सब लोग बड़ी उत्कण्ठाके साथ गर्भके दिन गिनने लगे।

देखते-देखते नौ महीने बीत गये। सीता इस समय पूर्ण-गर्भा हैं। रामचन्द्र और घरके अन्य सभी प्राणी खूब सावधानीसे उनकी सेवा-शुश्रूषा और गर्भरक्षाकी ओर ध्यान दे रहे हैं। वे जब जो चाहती हैं, उसी समय उनकी वह इच्छा पूरी की जाती है। उन्हें किसी तरहका मानसिक या शारीरिक कष्ट न हो, इसका सबलोग भली भाँति यत्न कर रहे हैं।

इन्हीं दिनों राजा जनक अपनी पुत्रियों और जामाताओंको देखनेके लिये अयोध्यामें आये। सबको सुखी देख, प्रसन्न मनसे दो चार दिन ठहरकर, वे अपने राज्यकी ओर लौट गये। बहुत दिनों बाद पिताको देखकर सीताको बड़ा हर्ष हुआ था; पर उनके इतनी शीघ्रता-पूर्वक लौट जानेसे वे बड़ी उदास हो गयीं।

राजा जनकके जानेके दोही-चार दिन बाद रामचन्द्रके महर्षि ऋष्यशृङ्गके यहाँसे निमन्त्रण आया। उन्होंने एक

करना आरम्भ किया था, इसीसे उन्होंने रामचन्द्रको सपरिवार बुला भेजा था, परन्तु सीताके गर्भके दिन पूरे होनेको आगये थे, अतएव राम और उनके भाई न जा सके। निमन्त्रणकी रक्षाके लिये, कौसल्या, सुमित्रा और कैकेयीही वसिष्ठ-मुनि और उनकी पत्नीके साथ ऋष्यशृङ्गके आश्रममें भेज दी गयी।

पिताके चले जानेके कुछही दिनोंके भीतर सासुओंका भी चली जाना, सीताको बहुत अखरा। वे अत्यन्त दुःखी हो गयीं—उनका मन उचटसा गया। रामचन्द्र उनकी यह उदासी देख, घबरा गये, क्योंकि गर्भवती स्त्रीके लिये चिन्ता, शोक और भय आदि मानसिक विकार बड़ेही अमङ्गलजनक हैं। इसलिये वे भाँति-भाँतिसे उनका जी बहलानेकी चेष्टा करने लगे। वे कभी उन्हें अपनी बाल्य-लीलाएँ सुनाते, कभी धनुष-यज्ञकी याद दिलाते, कभी अन्यान्य महापुरुषों और सती-साध्वियोंके चरित्र सुनाने लगते और कभी वनवासके उन सुखके दिनोंकी याद दिलाते, जब कि पति-पत्नीने एक साथ रहकर सारी वसुधाके राज्यको तुच्छ समझा था!

एक दिन रामचन्द्र, एकान्तमें सीताके साथ बैठे हुए, प्रेमकी बातें कर रहे थे। इसी समय ऋष्यशृङ्गके आश्रमसे अष्टावक्र नामक एक ऋषिकुमार कोई संवाद लेकर आ पहुँचे।

रामचन्द्रने उन्हें आदर-पूर्वक अपने पास बुलवाया और उनके आनेपर अपने बहनोईके यज्ञ और अपने माताओंका समाचार पूछा। उत्तरमें अष्टावक्रने कहा,—"महाराज यज्ञका कार्य ˆ भाँति चल रहा है। आपकी पूजनीया माताएँ तथा अन्यान्य

हित-कुटुम्ब भली भाँति हैं और सबलोग आपकी कुशल-कामना करते हैं। सब बड़े बूढ़े लोगोंने आपको आशीर्वाद देते हुए कहा है, कि सीतादेवी इस समय पूर्ण-गर्भा हैं, अतएव वे जब जिस वस्तुकी इच्छा करें, वह उसी समय उन्हें दी जाये। उनको किसी तरहका शारीरिक या मानसिक कष्ट न व्यापे, इसकी ओर आप सदा लक्ष्य रखें, यही सबका अनुरोध है। महाराज! अधिक क्या कहा जाये? सबलोग दिन रात यही मनाते हैं, कि सीतादेवीके आपकेही समान रूपवान्, गुणवान् और सौभाग्यवान् पुत्र उत्पन्न हो।"

इस सुखकर सन्देशको सुन, परम प्रसन्न हो, रामचन्द्रने कहा,—"ऋषिकुमार! आप जाकर सबसे मेरा प्रणाम कहना और कह देना, कि मैं उनके इन आशीर्वचनोंको बड़े आदरसे सिर-आँखोंपर रखता हूँ। सीतादेवी जब जिस वस्तुकी इच्छा करती हैं, तभी वह उन्हें प्राप्त हो जाती हैं। इसमें मैं क्षणभरका भी आलस्य नहीं करता।"

अष्टावक्र कहने लगे,—"महाराज! गुरु वसिष्ठने एक और सन्देसा आपके लिये भेजा है। उन्होंने कहा हैं, कि आपको राज्यका शासनदण्ड ग्रहण किये अभी थोड़ेही दिन हुए हैं, अतएव प्रजाका मन मुट्ठीमें किये रहनेका सदैव यत्न करते रहियेगा। प्रजा सदा प्रसन्न और सुखी रहे—उसपर कभी किसी तरहका अत्याचार न हो—इसका सदा ध्यान रखियेगा। रघुवंशका गौरव इसीलिये है, कि इस वंशके राजा प्रजाको पुत्र-समान मानते हैं।

यह सुन, रामचन्द्रने कहा,—"ऋषिकुमार! गुरुकी इन हित

शिक्षाओंको सुनकर मैं बड़ाही सुखी हुआ। आप जाकर उनसे कहेंगे, कि मैंने अबतक उनकी आज्ञाकेही अनुसार कार्य्य किया है और आगे भी ऐसाही करता रहूँगा। प्रजाके प्रति राजाका क्या कर्त्तव्य है, यह मैं अच्छी तरह जान गया हूँ। मैं प्रजाके साथ सदा न्याय और धर्म्मके अनुसार व्यवहार करता हूँ। उसके मङ्गलके लिये मैं सब कुछ करनेको तैयार रहता हूँ। अधिक क्या कहूँ ? प्रजाको प्रसन्न रखनेके लिये मैं स्नेह, दया, सौख्य, प्राण—सब कुछ—यहाँतक कि, अपनी प्राण-प्रिया सीताको भी परित्याग कर सकता हूँ। इस विषयमें उनके चिन्तित और शङ्कित होनेका कोई कारण नहीं है।"

रामके इस बड़प्पन और राजधर्म्मकी निष्ठापर सीताका अन्तःकरण प्रफुल्ल हो गया। वे बहुतही प्रसन्न होकर कह उठीं,—"नाथ! यदि आप ऐसे उदार न होते, तो रघुवंशके अलङ्कार क्यों कहे जाते ?"

किन्तु हाय! उस समय स्वप्नमें भी किसीको इस बातकी कल्पना नहीं हो सकती थी, कि रामचन्द्रको सचमुच प्रजा रञ्जनके निमित्त अपनी प्राण-प्रिया सीताका जन्मभरके लिये विसर्ज्जन करनाही पड़ेगा !! कौन जानता था, कि आज जो बात सहजही उनके मुँहसे निकल पड़ी है, वह कल सचही होकर रहेगी ! किसे मालूम था, कि यह बात रामने नहीं कही, किन्तु स्वयं सरस्वती देवी उनकी जिह्वापर आरूढ़ होकर बोल गयीं हैं ?

अस्तु; रामने बड़े प्रेमसे अष्टावक्रको विदा किया और फिर सीताका मन बहलानेकी चेष्टा करने लगे। एक चतुर

चित्रकारसे रामने अपने जीवनकी समस्त घटनाओंके चित्र अङ्कित कराये थे। चित्रशालामें जानेसे सीताका मन बहुत बहलेगा—यही सोचकर, रामचन्द्र उन्हें वहीं ले चले। वहाँ जाकर एक-एक चित्रको दिखलाते हुए वे कभी हर्षसे पुलकित, कभी शोकसे चिन्तित और कभी करुणासे अभिभूत हो जाते थे। सीतादेवी भी उन गये दिनोंकी स्मृति मनमें जाग उठनेसे इन भावोंके प्रभावसे न बचीं। उनके भी मुख-मण्डलपर उन चित्रोंको देख, कभी आनन्दकी ज्योति छिटक जाती, तो कभी विषादकी काली छाया पड़ जाती थी।

वनवासके चित्रोंको देखते-देखते एकाएक सीता कह उठीं—"नाथ! न जाने क्यों मेरे मनमें यह इच्छा होती है, कि एक बार फिर ऋषि-पत्नियोंके दर्शन कर आती और उनके शान्त तपोवनकी शोभा देख, आत्माको प्रसन्न करती।"

यह सुन, रामने कहा,—"प्रिये! गुरुजनोंकी आज्ञा है, कि तुम्हारे सारे अभिलाष पूर्ण किये जायें, तदनुसार मैं तुम्हारी कठिन-से कठिन इच्छाको भी पूर्ण करनेके लिये प्रस्तुत हूँ—फिर भला यह-कौनसी बड़ी बात है? जाओ, कलही मुनिवर वाल्मीकिके आश्रमके दर्शनकर आओ।"

सीताने प्रसन्न होकर कहा,—"परन्तु नाथ! आपको भी मेरे साथ चलना होगा। मैं अकेली न जाऊँगी।"

रामने कहा,—"तुम भी कैसी भोली हो? भला, मैं तुम्हें कैसे अकेली जाने दूँगा? क्षण भरके लिये भी तुम्हें आँखोंकी ओट होने देना, मेरे लिये कठिन है। वनकी सैर तो हमलोगोंकी

सायही हुई थी और एक साथही होगी। मैं तो चाहता हूँ, कि लक्ष्मणको भी सङ्ग ले लूँ। वनमें सदासे हम तीनोंका साथ रहता आया है।"

यह सुन, सीतादेवीके हर्षका पार न रहा। इसके बाद बड़ी देतरक तरह-तरहकी बातें होती रहीं। बातेंही करते-करते सीतादेवीको तन्द्रा घेरने लगी और वे देखते-ही देखते रामचन्द्रकी उसी भुजाके सहारे सिर रखकर सो गयीं, जो विवाहके समयसे लेकर आजतक—क्या घरमें, क्या वनमें—सर्वत्र ही, उनके उपाधानका (तकियेका) काम करती आयी है। रामचन्द्र एकटक नेत्रोंसे उस सुप्त-सौन्दर्य्यकी शोभा निरखने लगे।



राज्य-शासनके भिन्न-भिन्न अङ्गोंमें गुप्तचर-विभाग भी एक प्रसिद्ध और आवश्यक विभाग है। आजकल भी सभी सभ्य देशोंकी सरकारोंने अपने यहाँ जासूसोंका खूब अच्छा प्रबन्ध कर रखा है, जिनके द्वारा राज्यके अनेक गुप्त समाचार राजा और राज-कर्मचारियोंको बराबर मिलते रहते हैं। प्रजाका भी इस विभागसे बहुत काम निकलता है, क्योंकि चक्करदार चोरियाँ और भयानक घटनापूर्ण हत्याओंके असली अपराधी इन्हीं जासूसोंकी बुद्धिसे पकड़े जाते हैं, नहीं तो कितनीही बार ऊधोकी जगह माधोको दण्ड भोगना पड़ता।

रामचन्द्रने भी, अपनी रीति-नीति और शासन-व्यवस्थाके सम्बन्धमें प्रजाका हार्दिक अभिप्राय जाननेके लिये, दुर्मुख नामक

एक जासूस रख छोड़ा था। वह प्रतिदिन नगर भरमें चक्कर लगाता और छिपे-छिपे सब श्रेणीके लोगोंसे मिलकर उनके मनकी थाह लिया करता था। वह सब दिन सबके मुँहसे राम-राज्यकी बड़ाई सुनकर प्रसन्नचित्तसे रामचन्द्रको आकर सुनाया करता था। उसके मुँहसे नित्यही प्रजाकी की हुई वे प्रशंसाएँ सुन सुनकर रामचन्द्र मन-ही मन बड़े सुखी होते थे। ऊपरसे कहते,—"दुर्मुख! मैंने तुम्हें केवल स्तुति सुनानेके लिये नौकर नहीं रखा है। तुम क्या कभी, किसी दिन, किसीके मुँहसे, मेरे किसी दोष या त्रुटिकी बात नहीं सुनते? देखो, तुम जब कभी ऐसी बात सुनो, तब निःसङ्कोच मुझसे आकर कहना, भय या सङ्कोच न करना, क्योंकि मुझे इससे जितनी प्रसन्नता होगी, उतनी तुम्हारे इन नित्यके प्रशंसाके गीतोंसे नहीं होती।"

परन्तु दुर्मुख न कभी कोई बुरी बात सुनता, न उनसे आकर कहता। अतएव रामचन्द्र, सन्तुष्ट चित्तसे, अपनी नीतिपर दृढ़ रहते हुए, प्रजा-पालन करते रहे। कहींसे किसी दिन कोई कटु बात नहीं सुनाई पड़ती थी।

जिस दिन सीतादेवीको चित्रशालाके चित्र दिखलाते हुए रामचन्द्र उनका मन बहला रहे थे और देखते-ही-सुनते सीता उनकी गोदमें एकाएक सो गयी थीं, उसी दिनकी बात कहते हैं। जब सीताको अच्छी तरह नींदने आ घेरा, तब रामचन्द्र चुपचाप अपने प्राणोंके प्राण, जीवनकी आनन्ददायिनी, सुख दुःखकी सहचरी और पूर्ण पतिव्रता पत्नीके उस निद्रित सौन्दर्य्यको देख-देखकर मन-ही मन आनन्दित होने लगे। उन्हें देख-देखकर सैकड़ों

सुखमयी कल्पनाएँ उनके मस्तिष्कमें उत्पन्न होने लगीं और ऐसी साध्वी स्त्रीको सहधर्म्मिणी-रूपमें पानेके लिये वे अपने भाग्यकी बारबार बड़ाई करने लगे।

इसी समय द्वारपालने आकर कहा,—"महाराज! आपका दूत दुर्मुख द्वारपर खड़ा है।"

दुर्मुखकी कहीं और कभी रोट-टोक नहीं होती थी। वह सदा, सब समय, सब जगह महाराजके सम्मुख उपस्थित हो सकता था, अतएव वह वहीं बुलवा लिया गया। और दिन दुर्मुख बड़ा हँसता हुआ चेहरा लिये आता और आतेही रामकी बिरदावली का वर्णन करने लग जाता था, पर आज न जाने क्यों वह चुप चाप प्रणाम कर मुँह लटकाये खड़ा रह गया। उसके मुखड़ेपर प्रसन्नताका लेश-मात्र न था—उदासीकी छाप पड़ी हुई थी। यह देख रामचन्द्रने पूछा—"क्यों दुर्मुख! आज कैसा संवाद ले आये?"

अपने मनका भाव छिपाते और हृदयका आवेग दबाते हुए दुर्मुखने कहा,—"महाराज! अच्छा संवाद है, सब लोग आपकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हैं। यह कहते-कहते उसने और भी मुँह लटका लिया।

उसकी बातें सुन और उसकी वह बिगड़ी हुई सूरत देख, रामचन्द्र समझ गये, कि यह अवश्यही आज कोई बुरी बात सुन आया है, पर मुझसे छिपाना चाहता है। वे उत्सुकता और कौतूहलके मारे अधीर हो, बोले,—"दुर्मुख! डरो मत। तुम कोई बात मुझसे न छिपाओ। चाहे वह बात कितनीही मर्म्म-भेदिनी क्यों न हो, उसको सुनकर मेरे प्राणोंके पर्दे-पर्देमें चिनगारीही

क्यों न लग जाये, परन्तु वह बात, जो तुम्हारे पेटमें है और मुँहपर नहीं आती, मुझसे झटपट कह डालो। बात सचसच कह दोगे, तो मैं तुमसे बड़ाही प्रसन्न हूँगा और छिपाओगे तो तुमपर अत्यन्त क्रोधित और असन्तुष्ट हो जाऊँगा।"

दुर्मुखने देखा, कि उसने बात तो छिपानी चाही, परन्तु उनके मुखके भावनेही भण्डाफोड कर दिया! अतएव दुःखी होकर वह कहने लगा,—"महाराज! मैं आपसे वह बात कैसे कहूँ? आप भलेही मुझे प्राण दण्ड दे डालिये, जिसमें उसके कहनेसे मेरा पीछा छूट जाये, किन्तु मुझसे कुछ न कहलवाइये। हाय! मैंने अपने ऊपर कैसा बुरा उत्तर-दायित्व लिया था? राजन् क्यों आपने इस अधमको यह काम सौंपा था?" यह कह, वह आँखोंसे टपाटप आँसू गिराता हुआ, अधीर होकर रोने लगा।

रामका धीरज छूट गया। वे बड़े आग्रहके साथ बोले,— "दुर्मुख! अब देर न करो, मैं उत्कण्ठा और कौतूहलके मारे अधीर हुआ जा रहा हूँ। यदि न बतलाओगे, तो मैं तुम्हें जन्म-भरके लिये अपने राज्यसे निकाल दूँगा।"

यह सुन, दुर्मुखने भय और दुःखसे लडखडाते हुए स्वरसे कहा,—"महाराज! मेरा अपराध क्षमा करेंगे। आप नहीं मानते, इसीलिये इच्छा न होते हुए भी मुझे ऐसी अप्रिय बात कहनी पड़ती है, जिसे कहनेके पहलेही मेरी जिह्वा कटकर गिर पड़े, तो मैं बड़ा सुखी होजाऊँ। अच्छा, महाराज! मैं छातीपर पत्थर रखकर कहे देता हूँ। आप भी जी कड़ाकर सुनिये। यों तो सभी लोग आपकी बड़ाई करते हैं, पर कोई कोई महारानीके

द्वारा हरी जाने और साल-भरतक लङ्कामें रहनेकी बातको लेकर बडी आपत्तिजनक बातें कहते हैं। वे कहते हैं, कि 'राजाने इतने समयतक पराये घरमें रही हुई स्त्रीको विना विचारे घरमें डाल लिया, अब भला यदि हमलोग अपनी-अपनी स्त्रियोंको दबाना चाहेंगे, तो वे कैसे दबेंगी? वे तो मनमाने तौरसे घर-घर घूमाही करेंगी! राजा धर्म्माधर्म्मके कर्त्ता हैं। उन्होंनेही जब ऐसा किया, तब हमलोग क्या कर सकते हैं? बडे लोगोंकी बडी बातें होती हैं, पर वे यह नहीं सोचते कि छोटे लोग भी उनका अनुकरण कर चौपट होंगे।' महाराज! आज मैं लोगोंके मुँहसे यही सर्वनाशी बात सुन आया हूँ। नाथ! परम सती रानी-माताके सम्बन्धमें मुझे ये बातें सुनकर जो दुःख हुआ था, वह आपके आगे दुहरानेसे दूना हो गया। विधाताने आज मेरा 'दुर्मुख' नाम सार्थक कर दिया। ऐसे मुँहमें आग लगे, कीडे पड जायें, सो अच्छा।" यह कह, दुर्मुख रोता हुआ वहाँसे चला गया रामचन्द्र वज्रकी चोट खाये हुएके समान बैठे रह गये। उनके नेत्रोंसे चौधारे आँसू बह चले।

भरपेट रो लेनेके बाद, वे आप-ही-आप कहने लगे,—"अ[illegible] सोच-विचारका क्या काम है? जब प्रजाके विचार ऐसे हैं, त[illegible] उसके अनुकूल काम करनाही पडेगा। चाहे मेरे हृदयमें सहस्र[illegible] तीर क्यों न चुभें, सिरपर सैकडों बिजलियाँ क्यों न गिरें, परन्[illegible] सीताको जीवन-भरके लिये विसर्ज्जन करनाही इस समय मेर[illegible] कर्त्तव्य है। अहा! कैसे बुरे क्षणमें मेरा जन्म हुआ था? सदा दु[illegible] उठातेही बीता! हाय! क्यों नहीं मैं चिरजीवनके लिये वनमेंही र[illegible]

गया ? क्यों अपने सिरपर राज्यका यह भार और प्रजारञ्जनका उत्तरदायित्व लेने गया ? प्राणेश्वरी सीते ! तुम्हारे भाग्यमें क्या सब दिन दुःख भोगनाही लिखा था ? रावणके यहाँसे उबर आनेपर तुमने सोचा था, कि अब इस जीवनमें तुम्हें फिर दुःख नहीं देखना पडेगा, परन्तु हाय ! आजही तुम्हारी सुख निशाका अन्त हो जायेगा, तुम उससे भी घोर दुःखमें पड जाओगी, यह बात किसे मालूम थी ? मैं जानता हूँ, कि तुमसी सती साध्वी इस धरा-धाममें दूसरी नहीं है, तो भी लोकापवादसे बचनेके लिये मैं तुमको त्याग करूँगाही, यह निश्चय है। तुम्हारे वियोगमें मैं घुल-घुलकर मर जाऊँ, परन्तु प्रजाके प्रति राजाका जो धर्म्म है, उसका अवश्यमेव पालन करूँगा।

इस तरह अपने मनको धैर्य्य दे, दृढता अवलम्बन करनेपर भी, इस कठिन समस्याने रामचन्द्रको बडा विचलित कर दिया। सतीके निरपराध सतायी जानेकी कल्पनाने उनकी अन्तरात्माको जलाना आरम्भ कर दिया। वे चुपचाप आँखोंके आँसू पोंछते-पोंछते वहाँसे दूसरे कमरेमें चले गये।



वहाँ जाकर रामचन्द्रने अपने भाइयोंको बुलवाया। भाइयोंने आतेही देखा, कि राम शोककी मूर्ति बने बैठे हुए चुपचाप रो रहे हैं। यह देखतेही वे चञ्चल हो गये, क्योंकि किसी सामान्य कारणसे भैया ऐसे घबरानेवाले नहीं हैं—यह बात वे अच्छी तरह जानते थे। कुछ देरतक तो वे चुपचाप खडे रहे, पर जब

घबराहट सीमा पार कर गयी, तब लक्ष्मणने कहा,—"भैया आज आपका यह क्या हाल हो रहा है ? आपके नेत्रोंसे आँसू क्यों गिर रहे हैं ? अवश्यही कोई बड़ी भारी दुर्घटना हुई है। अतएव शीघ्र कहिये, नहीं तो हमलोग मारे चिन्ताके मरे जाते हैं।"

यह सुन, रामचन्द्र, आँसू-भरे नेत्रोंसे भाइयोंकी ओर देख, सिसकते हुए कहने लगे,—"भाइयो ! आज मैं बड़ी भारी विपत्ति में हूँ। मैं अच्छी तरह समझ गया, कि मुझसा अभागा और कोई नहीं। आज मैंने सुना है, कि मेरी प्रजा सीताके ऊपर कलङ्क लगाती और कहती है, कि पराये पुरुष द्वारा हरी हुई और उसके यहाँ सालभरतक रही हुई सीताको घरमे लाकर मैंने बडा भारी अधर्म्म किया और अपने निर्म्मल कुलमें धब्बा लगाया है। अतएव मुझे अपनी प्राण-प्रिया सीताको घरसे निकाल देना पडेगा; नहीं तो प्रजा सन्तुष्ट न होगी। मैं बार बार लोगोंसे कहा करता था, कि प्रजाके सन्तोषके लिये मैं सीतातकको त्याग कर सकता हूँ। मैं देखता हूँ, कि भगवान् मेरी उसी प्रतिज्ञाकी परीक्षा ले रहे हैं। हाय ! ऐसी वज्र-वाणी सुननेके पहलेही मेरी मृत्यु क्यों नहीं होगयी ? अच्छा, जो भाग्यमें है, वही हो रहा है, इसमे अपना क्या वश है ? लक्ष्मण ! तुम कलही सीताको मुनिवर वाल्मीकिके तपोवनमें पहुँचा आओ। उन्होंने मुझसे वन-भ्रमणके लिये अपनी इच्छा भी प्रकट की है और मैंने उन्हें आज्ञा भी दे रखी है। इसी बहाने तुम उन्हें सदाके लिये अयोध्याके राजमहलोंसे दूर कर आओ।" यह कहते-कहते उनका गला भर आया, बोली बन्द हो गयी और आँखें सजल हो उठीं।

रामचन्द्रकी ये बातें सुन, तीनों भाई, शोकसे अधीर हो, चुपचाप रोने लगे। जब रोते-रोते मन कुछ ठिकाने हुआ, तब लक्ष्मणने कहा,—"भैया ! आप यह क्या सब कह रहे हैं ? अथवा मैं आपकी सभी आज्ञाएँ सिर झुकाकर पालन करता हूँ, या नहीं, इसकी परीक्षा ले रहे हैं ? भाभी रावणके यहाँ किस तरह रहीं, वहाँसे आनेपर किस प्रकार साक्षात् जलती चितामें प्रवेश कर उन्होंने अपनी निष्कलङ्कता प्रमाणित कर दी, वह क्या आप भूल गये ? यदि नहीं भूले, तो फिर आप क्यों ऐसे वैसे आदमियोंके कहनेसे उनका त्याग करेंगे ?"

रामचन्द्र कहने लगे,—"भाई ! सीतापर मेरा अटल विश्वास है, उनकीसी देवी-मूर्त्तिको पापकी छायातक स्पर्श करनेका साहस नहीं कर सकती, यह मेरी ध्रुव धारणा है, उनकी अग्नि-परीक्षा भी मैं इस जीवनमें कभी न भूलूँगा, परन्तु अयोध्या-वासियोंने तो वह परीक्षा अपनी आँखों नहीं देखी ? फिर वे क्यों मानने लगे ? अतएव जिन प्रजावर्गोंको पालने-पोसने और प्रसन्न रखनेके लिये मैं धर्म्मसे बाध्य हूँ, उनका मन मैं अवश्यही रखूँगा। तुम क्या यही सलाह देते हो, कि मैं उनकी बातकी उपेक्षा कर जाऊँ ?"

लक्ष्मणने कहा,—"आर्य ! आपको सलाह देना न तो मेरा कर्त्तव्य है, और न उतनी बुद्धिही मुझमें है, तोभी मेरा कहना यह है, कि वह अग्नि-परीक्षा तो कुछ गुप चुप नहीं हुई थी, लाखों आदमियोंने आँखें पसारकर देखी थी ? फिर क्या चाहिये ? रही लोगोंके निन्दा करनेकी बात। सो, जो लोग बुरे हैं जिनका व्यवसायही पर-निन्दा है, वे तो आप लाख करेंगे, तो भी

किये विना न मानेंगे। ऐसे लोगोंको कौन प्रसन्नकर सकता है ? यों तो आपकी जो आज्ञा होगी, उसका पालन मैं अवश्यही करूँगा , परन्तु इतना निवेदन किये विना मेरा जी नहीं मानता कि ओछे लोगोंकी बातमें पड़ना, उनके इशारेपर चलना, कभी अच्छा नहीं। जब आपकी आत्मामें भाभीके सम्बन्धमें किसी तरहका सन्देह या विकार नहीं है, तब आप संसारकी निन्दा-स्तुतिकी क्यों परवा करते हैं ?"

यह सुन, रामने कहा,—"भाई ! यह कठिन कर्म करते हुए मैं कितनी मानसिक वेदना पा रहा हूँ, वह तुम्हें क्या बतलाऊँ ! मेरे प्राणोंके पर्दे-पर्देमें शोक और दु:खकी आग सुलग रही है। पर बहुत कुछ सोचने-विचारनेके बाद मैंने यही स्थिर किया है, कि सीताको त्याग देनेके सिवा और कोई उपाय नहीं है। तुम कलही उन्हें पहुँचा आओ—इधर-उधर न करो। लेकिन देखना, लौटकर आनेके पहले उन्हें कदापि न बतलाना, कि मैंने उनका त्याग किया है। जाओ, मैं अब दूसरी बात नहीं सुनना चाहता।

यह कह, रामचन्द्र चुप हो गये। तीनों भाई रोते हुए वहांसे चले गये। सीतादेवीकी ! निर्दोषता और रामकी इस कठोर व्यवस्थाकी बात सोच-सोचकर उनका हृदय फटा जाता था, परन्तु बड़े भाईकी आज्ञासे उन्हें मौनही रह जाना पड़ा।



सीता, बड़ी तत्परता और आनन्दके साथ रात-भर अपने तपोवन-दर्शनकी तैयारी करनेमें लगी रहीं। पलभरको भी उनकी

इन्हें न लगीं। भोर होतेही सुमन्त्रने रथ लाकर महलके द्वारपर खड़ा कर दिया और लक्ष्मण उन्हें लिवा ले जानेके लिये आ पहुँचे।

सीताने मुनि पत्नियोंको देनेके लिये तरह तरहके वस्त्र और अलङ्कार अपने साथ ले लिये और वे बड़े पुलकित मनसे रथपर आ सवार हुईं। लक्ष्मण अपने मनके भावको बड़ी चेष्टासे छिपाते हुए रथपर आ बैठे और उसे हाँक ले चले।

रथ जब कुछ आगे बढ़ा, तब सीतादेवीने कहा,—"वत्स! तपोवनमें चलनेकी चिन्ताके मारे मैं कल रात-भर सोयी नहीं, बड़ी उत्कण्ठाके साथ भोर होनेकी बाट देखती रही। बड़े तड़के तुम्हारे बड़े भैयाके दर्शन नहीं होंगे, इसीलिये मैंने रातकोही उनसे विदा लेली थी। मैंने उनसे साथ चलनेके लिये भी बहुत कहा था, पर राजकार्यके कारण उन्होंने जाना नहीं स्वीकार किया। फिर मैं उनके कर्त्तव्यमें क्योंकर बाधा डालती? इसीसे अधिक आग्रह न कर मैं अकेलीही आनेको प्रस्तुत हो गयी।"

सीताके ये सरल वचन लक्ष्मणके हृदयपर कटेपर नमककासा काम करने लगे। वे मन-ही-मन बड़े दुःखी हुए। कैसे कठोर कर्मका भार लेकर मैं आया हूँ—यही सोच-सोचकर वे अपने आपको बार बार धिक्कार देने लगे।

दो दिनतक किसी-किसी प्रकार यात्रा कटी। तीसरे दिन जब रथ गङ्गा-किनारे आ पहुँचा, तब लक्ष्मण बड़ेही व्याकुल हो गये। उनके नेत्रोंसे बेरोक आँसू गिरने लगे,—हृदयमें शोकका समुद्र लहरें मारने लगा। उनको इस प्रकार

कुल होते देख, सीताने कहा,—"वत्स! तुम अकस्मात् ऐसे दु:खी क्यों हो गये? कहो, कोई अमङ्गलकी बात तो नहीं है? मैंने यह बड़ी भूल की, जो आते समय आर्यपुत्रके चरण-कमलोंके दर्शन नहीं करती आयी। वे अच्छी तरहसे हैं न? भैया! न जाने क्यों, मेरा चित्त भी एकाएक चञ्चल हो उठा है! कुछ ऐसीही चञ्चलता मुझे उस दिन भी मालूम हुई थी, जिस दिन राक्षस-राज रावण मुझे हर ले गया था।"

यह सुन, भाईकी आज्ञाका स्मरण कर, लक्ष्मण, सच्ची बात-को छिपाते हुए कहने लगे,—"देवी! बहुत दिनोंके बाद माता गङ्गाके दर्शन करनेके कारण कई तरहके विचार मनमें उठनेसेही मेरी ऐसी अवस्था हुई है। आप चिन्ता न करें, सब मङ्गलही मङ्गल है।"

सरल-स्वभावा सीता, लक्ष्मणकी बात मान, स्थिर हो गयीं, परन्तु यह झूठ बोलनेसे लक्ष्मणका मन और भी चञ्चल हो उठा। उनकी आत्माके भीतर भारी अन्धड़-तूफान जारी हो गया। बड़े कष्टसे उन्होंने अपने मनका दु:ख मुखड़ेपर नहीं प्रकट होने दिया।

यथा समय गङ्गा पारकर, वे मुनिवर वाल्मीकिके आश्रमके निकट आ पहुँचे। वहाँ आतेही लक्ष्मण, बिना कुछ कहे-सुने अधीर होकर बालककी नाईं रोने लगे।

लक्ष्मणकी यह दशा देख, सीताकी सारी सुध-बुध जाती रही। वे घबराहटके साथ कहने लगीं,—"क्यों लक्ष्मण! अब क्या हुआ? मैं तो पहले ही जानती थी, कि तुम कोई बड़ी भयानक बात कहनेवाले हो; फिर तुमने अबतक कही क्यों

नहीं? अच्छा अब तो कह दो। मैं सुनना चाहती हूँ, कि मेरे भाग्यमें और क्या कष्ट लिखा है? लक्ष्मण! मेरी साध पूरी हो गयी। मैं अभी ये वस्त्राभूषण मुनि पत्नियोंको देकर तुम्हारे साथ अयोध्याको लौट चलूँगी। मारे आशङ्काके मेरे प्राण बड़े व्याकुल हो रहे हैं। कहो, क्या बात है?" यह कहते-कहते सीताका हृदय भयसे काँप उठा।

लक्ष्मण रुँधे हुए कण्ठसे कहने लगे,—"देवी! क्या पूछती हो? वह बात मैं कैसे अपने मुँहसे निकालूँ? यह वज्रकीसी कठोर बात कहनेके पहलेही मेरे सिरपर बिजली टूट पड़े, मेरी मृत्यु हो जाये, तो मैं अपनेको बड़ा सौभाग्यशाली समझूँ। हाय! मैं कैसी बुरी घड़ीमें छोटा भाई होकर जन्मा था, जो आज मुझे यह हत्यारेकासा काम करना पड़ता है।" कहते कहते लक्ष्मण, छातीमें घूँसा मार, चिल्ला-चिल्लाकर रोते हुए पृथ्वीपर गिर पड़े।

यह हाल देख, सीताके तो एकबारही काठ मार गया। वे कुछ देरतक अचरजमें पड़ी खड़ी रहीं, बादको लक्ष्मणका हाथ पकड़, उनके आँसू अपने आँचलसे पोंछती हुई बोलीं,—"प्यारे देवर! तुम्हारी यह दशा देख, मैं बड़ी व्याकुल हो रही हूँ। कहो, तुम क्यों अपनी मृत्यु मना रहे हो? मैंने तुम्हें इतना व्याकुल और अधीर होते कभी नहीं देखा; कहो, आर्यपुत्रका तो कुछ अमङ्गल नहीं हुआ? तुम्हारे प्राण उन्हींमें रहते हैं, अतएव तुम्हारा यह भाव देख, मुझे डर लगता है, कि कहीं उनकी बुराई तो नहीं हुई? इधर तुम्हारा यह हाल है, उधर मेरा चित्त भी रह-रहकर चञ्चल हो उठता है।

मेरी यह शङ्का और भी प्रबल हो रही है। लक्ष्मण! जल्दी कहो, क्या बात है? मेरी उत्कण्ठा सीमा पार कर रही है। अभी न कहोगे, तो मेरे अधीर प्राण शरीरसे बाहर निकल जायेंगे।"

सीताकी ऐसी व्याकुलता देख, लक्ष्मणका शोक सहस्रगुण प्रबल हो उठा। रोते-रोते उनका कण्ठ रुद्ध होने लगा। चाहे कैसीही कठोर बात क्यों न हो, अन्तमें तो कहनीही पड़ेगी, यह सोचकर उन्होंने कई बार कहनेकी चेष्टा की, पर कुछ कह न सके। सीताने, उनको ऐसी विचित्र अवस्थामें पड़ा देख, कहा,—"बस, अब मुझसे नहीं रहा जाता। तुम शीघ्र कहो, नहीं तो मैं प्राण त्याग कर दूँगी। यदि मुझे मरी हुई नहीं देखना चाहते, तो शीघ्र कहो। वह बात मेरा सर्व्वनाश कर देनेवालीही क्यों न हो, परन्तु यदि आर्यपुत्र कुशलसे हों, तो लक्ष्मण! तुम उस बातके कहनेमें तनिक भी न सकुचाओ।"

अब लक्ष्मणने सोचा, कि नहीं कहनेसे कोई बड़ा भारी अनर्थ हो जायेगा, अतएव छातीपर पत्थर रख, बड़े कष्टके साथ कहने लगे,—"देवी! क्या कहूँ? जिस मुँहसे ये बातें कहनी पड़ती हैं, वह सौ-सौ खण्ड होकर पृथ्वीपर गिर पड़े, तो मैं समझूँ, कि मैं सब कुछ पा गया। भाभी! भैयाने आज तुम्हें जीवन-भरके लिये अलग कर दिया है, मैं तुम्हें वनवास देने आया हूँ। प्रजाके कुछ लोग तुम्हारे रावण द्वारा हरी जाने और बारह महीनेतक लङ्कामें रहनेकी बात कहकर तुम्हारे नाममें कलङ्क लगाते हैं। इसीसे प्रजाका मन रखनेके लिये आज भैयाने सारे स्नेह, समस्त दया और सकल ममताका विसर्ज्जन कर,

तुम्हें परित्याग कर दिया है। मुझे आज्ञा हुई है, कि तुम्हें वाल्मीकिके आश्रमतक पहुँचाकर चला जाऊँ। वही देखो, सामने वालमीकि-मुनिका आश्रम दिखाई देता है।"

यह कह, लक्ष्मण पृथ्वीपर गिरकर मूर्च्छित हो गये। उनकी बात पूरी होते-न-होतेही सीता भी प्रचण्ड हवाके झोंकेसे टूटी हुई लताकी भाँति पट्से पृथ्वीपर गिर पडी और बेसुध हो गयी। कुछ देर बाद जब लक्ष्मणकी मूर्च्छा टूटी, तब उन्होंने बडे यत्नसे सीताकी मुर्च्छा दूर की। होशमें आतेही सीता पगलीकी तरह आँखें तरेरकर लक्ष्मणकी ओर देखने लगीं। वे भी चित्रमें लिखे हुएकी नाईं आँखोंमें आँसू भरे चुपचाप खडे उनकी ओर देखते रहे। सीता, बिना कुछ बोले चाले, सिसकती और लम्बी साँसें ले रही थीं। लक्ष्मण न समझ सके, कि उन्हें क्या कहकर समझाये? किस बातसे ढाढस बँधायें? उनकी बुद्धि लोप हो गयी। वे भी हथेलीपर सिर रख, सिसक-सिसक कर रोने लगे।



रोते-रोते जब कुछ स्थिरता हुई, तब सीतादेवी कहने लगीं,—"वत्स! तुम व्यर्थ क्यों कातर होते हो? यह अपराध न तो तुम्हारा है, न आर्यपुत्रका, यह सब मेरे भाग्यकाही दोष है। आज मैंने जाना, कि सदा दुःख भोगनेकेही लिये मेरा जन्म हुआ था। भाग्यके इस लिखेको कौन मेट सकता है? पूर्व-जन्ममें मैंने अवश्यही किसी पतिप्राणा कामिनीका पतिसे [illegible] कराया होगा, उसीका मैं फल भोग रही हूँ। ऐसा न

तो जो आर्यपुत्र स्नेह दया और ममताके अवतार हैं, जो सौ-सौ प्रकारसे मेरी परीक्षा लेकर मुझे परम पतिव्रता और शुद्धाचारिणी समझ चुके हैं, वे अनायासही मुझे क्यों छोड देते! लक्ष्मण! यह इस दुखियाके भाग्यका लेख है। मैं वनवाससे दु:ख नहीं मानती, क्योंकि मैं उनके साथ तेरह वरसोंतक वन वन फिरती फिरी,पर मैंने कभी दु:ख अनुभव नहीं किया। मुझे दु:ख केवल इसी बातका है, कि उन चरणोंसे मैं दूर हटा दी गयी। उनसे बिछुडकर क्षणभर जीना भी मुझे बडा कष्टकर मालूम होता हैं, परन्तु जब उनकी ऐसीही आज्ञा है, तब मैं उसका सहर्ष पालन करूँगी। तुम उनका आदेश पालन कर चुके—अब आनन्दसे अयोध्याको लौट जाओ। इस दुखियाके दुःखसे कातर न होना और आर्यपुत्रको भी न होने देना; क्योंकि यह मैं भली-भाँति जानती हूँ, कि उन्होंने मुझे केवल राजमहलोंसेही निकाला है, हृदयसे नहीं।"

यह कह, सीता थोडी देरके लिये चुप हो गयी। कहनेको तो वे सब कुछ कह गयीं, पर जो दु:खका पहाड उनपर आ टूटा था, उसकी अनुभूतिसे वे परे न हो सकीं। अतएव उनका शोक-प्रवाह किसी तरह न रुक सका और वे अविरल अश्रुधारा विसर्जन करने लगीं। कुछ देर इसी तरह रोनेके बाद वे आप ही-आप कहने लगीं,—"हाय! क्या-से-क्या हो गया? निर्दय दैवने किस निष्ठुरतासे मुझे स्वामीके आश्रयसे दूर कर दिया। अब ये प्राण काहेको शरीरमें टिके हैं? शायद मेरे मर जाने ...ने जो मुझे जला-जलाकर मारनेका सङ्कल्प किया

उसमें विघ्न पड़ जायेगा, इसीलिये मैं अबतक जीती हूँ। मेरे जैसा स्नेह-शील स्वामी किस सौभाग्यवतीने पाया था? परन्तु उन्हीं दयामयने मुझे इस प्रकार दूधकी मक्खीकी तरह निकाल फेंका! यह वज्रपात स्त्रीका कोमल हृदय कैसे सह सकता है? सीताकी छाती कुछ वज्रकी तो बनी नहीं है! हा नाथ! त्राहि परमेश्वर!!" यह कह, वे फिर भी हाहाकार करती हुई मूर्च्छित हो गयीं।

उनकी यह विकलता और अपने हाथों परोक्ष या प्रत्यक्षरूपसे पहुँचे हुए उनके दुःखको देख, लक्ष्मण रो रोकर कहने लगे,—"हाय! भाभीकी यह वियोग-विकल अवस्था देखनेके पहलेही मैं मर क्यों नहीं गया? मैंने भाईकी आज्ञा निरन्तर धर्म समझकर पालन की है, पर यदि इस एक आज्ञाको नहीं मानता, तो कुछ अधर्म नहीं होजाता। मेरी बुद्धिमें क्या भाँग पड़ गयी थी, जो मैं उनकी इस धर्म-विगर्हित आज्ञाका पालन करनेके लिये तैयार होगया? हाय! मैं कैसा अभागा हूँ, कितना निष्ठुर हूँ, जो इस सरल हृदया, पतिगत-प्राणा, शुद्धाचारिणी कामिनीको ऐसी कठोर बात कहते हुए भी न हिचकिचाया! मैंने इस बार बड़े भाईकी आज्ञा मानकर बड़ा भारी पाप किया है—इसमें कोई सन्देह नहीं। भैया! मैं नहीं जानता था, कि आपका हृदय इतना कठोर है। जब आपके मनमें यही था, तब आपने झूठमूठ लङ्काका वह समर क्यों किया था? वन वनमें उस तरह रोते क्यों फिरते थे? क्या वह सब स्वांग था? जो हो आपसा कठिन, कठोर और निठुर व्यक्ति दूसरा न होगा।

यह कहते हुए वे फिर सीताको होशमें ले आये। चैतन्य लाभ कर, वे थोड़ी देरतक चुपचाप बैठी हुई कुछ सोचती रहीं। इसके बाद बोलीं,—"लक्ष्मण! अब तुम जाओ। महाराजने मुझे घरसे निकालकर प्रजाको सन्तुष्ट किया है—राजाका कर्त्तव्य पालन किया है। तुमने भी अपने बड़े भाईकी आज्ञा मानी है। अब मैं भी अपने स्वामीके आदेशको सिर-आँखोंपर रख, हँसते हँसते सारे कष्ट सहनेको तैयार होती हूँ। दु:ख कैसा? मैं निश्चय जानती हूँ, कि उनके मनमें मेरे प्रति अब भी वही प्रेम भाव बना होगा। वे मेरे चरित्रपर कभी सन्देह नहीं कर सकते। उनका मेरे ऊपर जो विश्वास है, भगवान् करे, वह सब दिन ऐसाही बना रहे, क्योंकि ऐसा न होनेसे मैं नरक-गामिनी हूँगी। उसी दिन रौरव नरकका द्वार मेरे लिये खुल जायेगा, जिस दिन मैं उनके हृदयसे भी निर्वासित हो जाऊँगी। आँखोंकी ओट होनेपर भी वे मुझे हृदयसे दूर न कर दें—यही मेरे लिये सारे सौभाग्यका मूल है। मैं उन्हें दोष नहीं दे सकती। वे मेरे स्वामी हैं, मैं उनकी दासी हूँ। वे जो आज्ञा करें, उसे मानना ही मेरा एकमात्र कर्त्तव्य है। मैं कहीं क्यों न रहूँ—सदा उनकी पत्नी, सेविका और दासीही बनी रहूँगी। यही मेरा गौरव है—इसी गौरवके आसनपर मैं सदा बैठी रहूँ—यही परमेश्वरसे वर माँगती हूँ। तुम उनसे जाकर मेरी ओरसे कहना, कि मुझे उन्होंने अयोध्यासे निकाल दिया है सही, परन्तु मैं अब भी उनके राज्यकी एक प्रजा हूँ, क्योंकि वे ससागरा पृथ्वीके अधीश्वर हैं। जैसे प्रजाकी प्रसन्नताके लिये उन्होंने पत्नीका त्याग

किया है, वैसेही मुझे अपनी प्रजा समझकर मुझपर दया रखेंगे। वही दया इस भीषण वियोग और दारुण वनवासमें मेरा कल्याण करेगी। वत्स! तुम अब यहाँ समय न विताओ। शीघ्र चले आओ। उनको सदा सब तरहसे सुखी और प्रसन्न रखना। वे कभी इस दुःखिनीकी याद कर दुःखी हों—ऐसा मत होने देना। लोगोंसे यह सुन-सुनकर, कि वे सानन्द और सकुशल हैं—मैं अपने ये विपद्के दिन सुखसे बिता दूँगी। निमन्त्रण पूरा कर जब माताएँ घर लौटें, तब उनसे उनकी दुखिया पुत्रवधूका प्रणाम कह देना। मेरी बहनोंको मेरा प्यार कहना और तुम तीनों भाई उनपर कदापि ऐसा वज्र न छोड़ना, जैसा तुम्हारे बड़े भाईने मुझपर प्रहार किया है, नहीं तो वे कदापि उस आघातको न सह सकेंगी और प्राणत्याग कर देंगी। मेरे कर्मोंका फल मैं आनन्दसे भोगूँगी, तुमलोग उसके लिये दुःखी न होना। लक्ष्मण! अब तुम शीघ्र चले जाओ!"

इतना कह, सीताने आंचलसे अपना मुँह छिपा लिया। लाचार, लक्ष्मण उन्हें प्रणामकर चल पड़े। जाते समय वे बार-बार पीछे फिरकर देखते जाते और मन-ही-मन परम दुःखी हो रहे थे। जबतक दृष्टि पहुँची, तबतक दोनों एक दूसरेको देखते रहे। देखते-देखते लक्ष्मण, गङ्गा पार हो, रथपर सवार हुए और कुछही क्षणमें आँखोंकी ओट हो गये। उस समय दोनों हृदयोंमें शोकका जो उच्छ्वास उमड़ उठा, वह किस लेखनीकी सामार्थ्य है, जो वर्णन करे? वह शोकोच्छ्वास कुछ ऐसाही था, जिसका वर्णन सर्वथा असम्भव है।

यह कहते हुए वे फिर सीताको होशमें ले आये। चैतन्य लाभ कर, वे थोडी देरतक चुपचाप वैठी हुई कुछ सोचती रहीं। इसके वाद वोलीं,—"लक्ष्मण! अव तुम जाओ। महाराजने मुझे घरसे निकालकर प्रजाको सन्तुष्ट किया है—राजाका कर्त्तव्य पालन किया है। तुमने भी अपने वडे भाईकी आज्ञा मानी है। अव मैं भी अपने स्वामीके आदेशको सिर-आँखोंपर रख, हँसते हँसते सारे कष्ट सहनेको तैयार होती हूँ। दुःख कैसा? मैं निश्चय जानती हूँ, कि उनके मनमें मेरे प्रति अव भी वही प्रेम भाव वना होगा। वे मेरे चरित्रपर कभी सन्देह नहीं कर सकते। उनका मेरे ऊपर जो विश्वास है, भगवान् करे, वह सव दिन ऐसाही वना रहे, क्योंकि ऐसा न होनेसे मैं नरक-गामिनी हूँगी। उसी दिन रौरव नरकका द्वार मेरे लिये खुल जायेगा, जिस दिन मैं उनके हृदयसे भी निर्वासित हो जाऊँगी। आँखोंकी ओट होनेपर भी वे मुझे हृदयसे दूर न कर दें—यही मेरे लिये सारे सौभाग्यका मूल है। मैं उन्हें दोष नही दे सकती। वे मेरे स्वामी हैं, मैं उनकी दासी हूँ। वे जो आज्ञा करें, उसे माननाही मेरा एकमात्र कर्त्तव्य है। मैं कहीं क्यों न रहूँ—सदा उनकी पत्नी, सेविका और दासीही वनी रहूँगी। यही मेरा गौरव है—इसी गौरवके आसनपर मैं सदा वैठी रहूँ—यही परमेश्वरसे वर माँगती हूँ। तुम उनसे जाकर मेरी ओरसे कहना, कि मुझे उन्होंने अयोध्यासे निकाल दिया है सही, परन्तु मैं अव भी उनके राज्यकी एक प्रजा हूँ, क्योंकि वे ससागरा पृथ्वीके अधीश्वर हैं। ~, जैसे प्रजाकी प्रसन्नताके लिये उन्होंने पत्नीका त्याग

किया है, वैसेही मुझे अपनी प्रजा समझकर मुझपर दया रखेंगे। वही दया इस भीषण वियोग और दारुण वनवासमें मेरा कल्याण करेगी। वत्स! तुम अब यहाँ समय न विताओ। शीघ्र चले जाओ। उनको सदा सब तरहसे सुखी और प्रसन्न रखना। वे कभी इस दु:खिनीको याद कर दु:खी हों—ऐसा मत होने देना। लोगोंसे यह सुन-सुनकर, कि वे सानन्द और सकुशल हैं—मैं अपने ये विपद्के दिन सुखसे विता दूँगी। निमन्त्रण पूरा कर जब माताएँ घर लौटें, तब उनसे उनकी दुखिया पुत्रवधूका प्रणाम कह देना। मेरी बहनोंको मेरा प्यार कहना और तुम तीनों भाई उनपर कदापि ऐसा वज्र न छोड़ना, जैसा तुम्हारे बड़े भाईने मुझपर प्रहार किया है, नहीं तो वे कदापि उस आघातको न सह सकेंगी और प्राणत्याग कर देंगी। मेरे कर्म्मोंका फल मैं आनन्दसे भोगूँगी, तुमलोग उसके लिये दु:खी न होना। लक्ष्मण! अब तुम शीघ्र चले जाओ!"

इतना कह, सीताने आँचलसे अपना मुँह छिपा लिया। लाचार, लक्ष्मण उन्हें प्रणामकर चल पड़े। जाते समय वे बार-बार पीछे फिरकर देखते जाते और मन-ही-मन परम दु:खी हो रहे थे। जबतक दृष्टि पहुँची, तबतक दोनों एक दूसरेको देखते रहे। देखते-देखते लक्ष्मण, गङ्गा पार हो, रथपर सवार हुए और कुछही क्षणमें आँखोंकी ओट हो गये। उस समय दोनों हृदयोंमें शोकका जो उच्छ्वास उमड़ उठा, वह किस लेखनीकी सामर्थ्य है, जो वर्णन करे! वह शोकोच्छ्वास कुछ ऐसाही था, जिसका वर्णन सर्वथा

भाग्य कैसा अच्छा है! तुम ऐसे अवसरपर प्रसन्न होनेके बदले शोक क्यों करती हो?"

यह सुन, सीताने कहा,—"सखियो! पुत्र-जन्म नारीके लिये बड़े सौभाग्यका विषय है, यह मैं मानती हूँ, परन्तु किस अवस्थामें? मैंने तो जीवनभरके लिये अपने सारे सुखोंका विसर्जन कर दिया है—मेरी सब साध मिट गयी है। मुझसे आनन्द और प्रसन्नताने सदाको विदा ले ली है। हाय! यदि ये अभागे मेरे गर्भमें न होते, तो मैं ये दुःखके दिन गिननेके लिये काहेको जीती रहती? जैसेही लक्ष्मणने वह वज्रसी वाणी मुझे सुनायी थी, वैसेही छाती फटकर मर न जाती? गङ्गामें डूब न गयी होती? तब काहेको यह दुखिया जीवन और कलङ्कित मुखड़ा लेकर संसारके सामने आती?" यह कहती हुई सीता फुक्का फाड़कर रोने लगीं।

मुनि-कन्याओंसे भी न रहा गया—वे भी रो पड़ीं, परन्तु शीघ्रही अपनी आँखे पोंछ, सीताको धीरज बँधाती हुई बोलीं,—"सीता! पिताजी कहते हैं, कि जल्दीही तुम अयोध्यामें बुला ली जाओगी। महाराज फिर तुम्हें अपनी शरणमें रख लेंगे। देखो, ऐसी निराश न हो, एकदम अधीर मत बनो।"

इस प्रकार बातें होही रही थीं, कि तुरतके पैदा हुए वे दोनों बच्चे रोने लग गये। फिर तो मातृस्नेहने सब कुछ भुला दिया। सारे दुःख-शोक भूल, सीता उन बच्चोंको दूध पिलाने लगीं। ऋषि-कन्याएँ आधी प्रसन्नता और उदासी लिये वहाँसे उठकर चली गयीं।

उस दिनसे रामचन्द्रकी मूर्त्तिके समान वे दोनों बच्चेही सीताकी घोर अन्धकारमयी दुःख-निशाके युगल चन्द्रमा हुए। उन्हेंही देख देखकर वे अपनी विपत्तिके दिन किसी-किसी तरह बिताने लगीं। वाल्मीकिने उन बालकोंके जन्म संस्कार ठीक उसी भाँति किये, जिस तरह वे अपनी कन्याके पुत्र उत्पन्न होनेपर करते।

धीरे धीरे बच्चे शुक्लपक्षकी प्रतिपदाके चन्द्रमाकी नाईं बढ़ने लगे। बड़े स्नेहसे सारे तपोवनके लोग उन्हें खिलौनेकी भाँति हाथोंहाथ लिये फिरने लगे।

परन्तु राम विरह दुःखिता सीताका मन किसी भाँति सुखी नहीं होता था। वे सदा पतिपदोंका ध्यान करती हुई इस दारुण वियोगकी चिन्तामें घुली जा रही थीं। उनका वह सोनेकासा चमकता हुआ रङ्ग उड़ गया और वह शरीर, जो शोभाकी खान तथा सौन्दर्यका भाण्डार मालूम होता था, बेरङ्ग और बेडौल दिखाई देने लगा। वे दिन-दिन छीजने लगीं।

दिन दुःखके हों या सुखके, वे रहते नहीं, चलेही जाते हैं। विरहिणी सीताके सिरपरसे भी कितनी वर्षाकी प्रचण्ड वारि-धाराएँ, ग्रीष्मका प्रखर उत्ताप और शीतकी कँपकँपी आकर चली गयी। दिन-पर-दिन, महीने पर-महीना, वर्ष-पर वर्ष बीत गये! किन्तु साध्वी सीताके मनमें कोई विकार न हुआ। स्थानका दूरत्व अथवा समयका प्रवाह उनके प्रेममें अन्तर न डाल सका। "मेरे पतिदेव सुखी हों"—यही एक कामना उनकी तपस्याका आधार थी। उनके सभी व्रतोपवास इसी अभिलाषासे होते थे

कि पतिके चरणोंमें मेरी जो प्रीति है, वह दिन-दिन बढ़ती रहे।

देवता दर्शन दें या न दें, पर भक्त उनके नामपर भक्तिके फूल चढ़ानेसे थोड़े चूकता है? सीताके देवता भी उनसे दूर हैं; उन्होंने उनको अपने चरणोंकी सेवासे दूरकर जङ्गलमें खदेड़ दिया है, पर सीताका मन सदाही उन चरणोंमें चञ्चरीक होकर मँडराया करता है। सीताका तन वनमें है, पर मन रामके चरणोंमेंही है, परन्तु अपने शरीरका यह अभाग्य भी सीताको परम सन्ताप दे रहा है।

जबतक बच्चे बिलकुल अबोध रहे, तबतक सीताको उनके लालन-पालनमें कुछ अधिक मन लगाना पड़ा, परन्तु जब वे चलने फिरने लगे, तब उन्होंने उनकी चिन्तासे भी मनको फेर लिया और वे एकमात्र पतिदेवके चरणोंके ध्यानमेंही लीन रहने लगीं। उन्हें दिन-रात एकही काम रह गया—पतिका स्वरूप-चिन्तन और गुण-स्मरण करते हुए एकान्तमें बैठकर अपने अभाग्यपर फूट-फूटकर रोना!

काल पाकर सभीका शोक कम हो जाता है परन्तु सीताके रोएँ-रोएँमें जो विकट शोक प्रवेश कर गया था, वह नित्य नया होता जाता था। चिन्ता, शोक और मनोवेदनाने सीताको सुखाकर काँटा बना दिया। वे जीते-जी एकदम मरी हुईके समान दिखाई पड़ने लगीं!

इसी तरह सीताने अपने दुर्भाग्यके बारह बरस बिता दिये!

सीताका पाताल-प्रवेश



प्रजाकी प्रसन्नताके लिये रामचन्द्रने अपनी प्राणोपमा पत्नी और सती सहधर्म्मिणी सीताको वनमें भेज तो दिया, पर उसी दिनसे उनके लिये सुख सपना हो गया। उनके जीवनका आनन्द सदाके लिये विदा हो गया। वे जिधर देखते, उधरही उन्हें अन्धकार दिखाई पडता था। लक्ष्मण, सीताके सामने की हुई प्रतिज्ञाके अनुसार, सदा उनका जी बहलानेकी चेष्टा किया करते थे, पर वह दुःख, वह पछतावा, वह हाहाकार क्या ऐसा-वैसा था, जो समझाने-बुझानेसे मिट जाता!

वे राज्यके सब काम-काज भली भाँति देखते; परन्तु वे जो कुछ करते, ऊपरकेही मनसे करते। भीतर सीताका शोक सौ-सौ शाखा-प्रशाखाओंमें विभक्त होकर सारा हृदय छेंके हुए था। सब दिन, सब समय, उन्हें सीतादेवीकाही ध्यान बना रहता था।

"यह सरलताकी मूर्त्ति, धर्मका अवतार, सतीत्वकी प्रतिमा मेरे द्वारा इस प्रकार पैरोंसे ठुकरा दी गयी! जो फूल शिरको शोभा बढानेवाला था, वह यों चरणोंसे दल-मसल दिया गया! हाय! मैंने यह क्या कर ... राज्यके लिये, ... मानापमानके विचारसे,

किया ! हाय ! इस पापका क्या कोई प्रायश्चित नहीं है ? सचमुच राज्य करना कोई हँसी खेल नहीं—खाँडेकी धारपर चलना है ! न मालूम, किस सुखके लिये लोग राज्यका अधिकारी होना चाहते हैं ? इसी राज्यके लिये मुझे मनुष्यता और ममता छोड़ देनी पड़ी—निर्दोष, निरपराधिनी सीताको छोड़ देना पड़ा ! आनेवाली सन्तानें मुझ जैसे क्रूर पतिके नामपर क्यों न गालियाँ देंगी ? क्यों न वे मुझे निष्ठुर, निर्दयी और निरपराधको सताने वाला समझेंगी ?" यही सब सोच-सोचकर रामचन्द्र अपने जीवनके दिन बड़े कष्टसे बिता रहे थे। राज्य-भोग उन्हें विषके समान प्रतीत हो रहा था। लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न उन्हें तरह-तरहसे धीरज धराते थे, परन्तु उनका मन किसी तरह न मानता था।

यद्यपि उनको ऐसा अपार शोक था, तथापि वे राज्य-कार्यमें किसी प्रकारकी त्रुटि न होने देते थे। भला, जिस प्रजारञ्जनके लिये उन्होंने सीतासी सती त्यागी, उसी काममें वे किस प्रकार शिथिलता प्रकट कर सकते थे ? बाहरसे सब लोग देखते, कि वे पूर्ववत् धैर्यशील, कार्य्य-परायण और कर्त्तव्य निष्ठ हैं, पर भीतर अन्तःसलिला फल्गुकी भाँति अनन्त शोक-प्रवाह निरन्तर जारी रहता था।

धन्य सीते ! ऐसा साधु, ऐसा नीति-निष्ठ स्वामी पानेका तुम्हाराही सौभाग्य था ! इस धरातलमें कौनसी रमणीने तुम्हारे पति जैसा उदार, कर्त्तव्य-पालनमें दक्ष और धर्मके लिये सब कुछ छोड़ देनेवाला स्वामी पाया है ?



धीरे धीरे समय बीतता गया। कितनेही दिन, सप्ताह, पक्ष, महीने और वर्ष आकर काल-प्रवाहमें मिल गये, पर रामचन्द्रका दुःखी हृदय किसी भाँति चैन न पा सका। वैसेही ऊपरसे धीर, पर भीतर अधीर, जीवन बीत रहा था। जिस दिन लक्ष्मण सीताको वनमें अकेली छोड़, सूना रथ लिये हुए अयोध्यामें लौट आये, उस दिन जो शोकाग्नि उनके हृदयमें प्रज्वलित हुई, वह फिर किसी तरह न बुझ सकी!

वर्षों बीत गये, परन्तु न तो सीता आयीं, न रामने उनकी कोई सुध पायी। कौन जाने, वे प्रबल शोकके कारण गङ्गामें डूब मरीं या जङ्गली पशुओंका कलेवा बन गयीं?

देखते-देखते बारह वर्षका समय निकल गया। राज्यका कार्य ज्यों-का-त्यों चलता रहा। प्रजाके सुख-सौभाग्यकी 'दिन दूनी रात चौगुनी' उन्नति होती रही। इस प्रकार बहुत दिनोंतक अपने सुन्दर शासनसे सबको सुखी करनेके कारण, रामचन्द्रकी आत्माको वह अलौकिक आनन्द प्राप्त होता था, जो एक कर्त्तव्य निष्ठ व्यक्तिही अपने कर्त्तव्यका पूरा-पूरा पालन करनेपर अनुभव कर सकता है; दूसरा नहीं समझ सकता, कि यह अपूर्व आनन्द कैसी स्वर्गीय सामग्री है!

एक दिन रामचन्द्रने भरी हुई सभामें अश्वमेध-यज्ञ करनेकी अपनी अभिलाषा प्रकट की। सुन, गुरु आनन्दित होकर कहा,—

अद्वितीय सम्राट् हो। तुमने जिस तरह अपना राज्य चारों ओर फैलाया है, वैसा आजतक कोई न कर सका। तुम्हारे राज्यमें प्रजा जैसी सुखी और सन्तुष्ट है, वैसी किसीके राज्यमें नहीं हुई। भला किसने प्रजाको इतनी स्वाधीनता दी थी, जितनी तुमने दे रखी है ? राजाको जो कुछ करना चाहिये, वह सब तुम कर चुके और करते जाते हो। बड़े-बड़े राजा-महाराज सदासे अश्वमेध-यज्ञ करते आये हैं, अतएव यह काम भी तुम्हें अवश्यही करना चाहिये, फिर तुम्हें कुछ भी करनेको न रह जायेगा।"

गुरुके इन वचनोंका सभी लोगोंने हृदयसे अनुमोदन किया। इसके बाद रामचन्द्रने अपने भाइयोंको बुलवाकर तुरतही यज्ञकी तैयारी आरम्भ कर देनेकी आज्ञा दे डाली, क्योंकि जब सबकी सम्मति होही चुकी और किसी तरहकी गड़बड़ न रही, तब शुभ कार्य्यमें व्यर्थ विलम्ब क्यों किया जाये ?

उन्हें इस प्रकार जल्दी करते देख, वसिष्ठने कहा,—"लेकिन महाराज! मैं एक बात बड़े असमञ्जसकी देख रहा हूँ। शास्त्रकारोंके वचनके अनुसार सभी धार्म्मिक कार्य्योंका अनुष्ठान सहधर्म्मिणीके साथही किया जाता है, परन्तु महारानी तो हैं नहीं, तुम यज्ञ कैसे करोगे ?"

यह सुन, रामने कहा,—"भगवन्! मेरी बुद्धि तो इस विषयमें काम नहीं करती, आपही कहिये, क्या करूँ ?"

वसिष्ठने कहा,—"सिवा दूसरा विवाह मुझे तो और कोई उपाय नहीं दिखाई देता।"

यह सुनतही रामचन्द्रका चेहरा उतर गया। वे थोड़ी देरके लिये मौन हो रहे। उनके जिस हृदय-सिंहासनपर सीता राज-राजेश्वरी-रूपसे विराजती थीं, उसपर वे किस प्रकार एक अन्य रमणीको बैठानेको तैयार होते? जिन नेत्रोंमें वह अलौकिक सती-प्रतिमा बसी हुई थी, उनसे वे किस तरह किसी औरको देख सकते थे? उनको इस तरह चुप देख, सब लोग समझ गये, कि यह चुप्पी सम्मतिका लक्षण नहीं, अस्वीकारकाही परिचय देनेवाली है।

सबको अपनी ओर चुपचाप एकटक देखते हुए देख, रामचन्द्रने कहा,—"गुरुदेव! यह नहीं हो सकता। मैंने सीताके सिवा किसी अन्य रमणीकी ओर कभी देखातक नहीं है, देखा भी है, तो माताकी दृष्टिसे। पत्नी एक बारही ग्रहण की जाती है, बार-बार विवाह करना विडम्बना-मात्र है। मेरे विचारसे जो एक स्त्रीके रहते हुए, दूसरी स्त्रीका पाणिग्रहण करते हैं, वे अच्छा नहीं करते। अतएव, मैं आपकी यह बात नहीं मान सकता, क्षमा करेंगे। मैंने सोचते-सोचते यही निश्चय किया है, कि सीताकी सोनेकी एक मूर्त्ति तैयार कराऊँ और उसीको सहधर्म्मिणीके स्थानपर रखकर यज्ञके सारे कार्य्य करूँ।"

यह सुन, सब लोग "साधु-साधु कहने लगे। सारे सभासद सौ सौ मुँहसे उनके इस एकपत्नी-प्रेमकी बड़ाई करने लगे।

देखते-देखते यज्ञकी सारी तैयारी पूरी हो गयी। देश विदेशके राजा-रईस, ऋषि मुनि, ब्राह्मण पण्डित, योगी यती एक एक करके अयोध्यामें आने लगे।



सीताकी आँखोंके तारे, उनके दुखिया जीवनके सहारे, वे दोनों यमज कुमार लडकपनसेही वाल्मीकिकी शिक्षा-दीक्षामें रहने लगे। मुनिने उनके नाम क्रमशः कुश और लव रखे। ब्राह्मण-ऋषियोंके बालकोंको जैसी शिक्षा दी जाती है, वैसी शिक्षा देने लगे, क्योंकि त्रिकाल दर्शी मुनि यह जानते थे, कि एक दिन वे अयोध्याके राजसिंहासनको अलङ्कृत करेंगे; अतएव उनके लिये राजकुमारोंकीसी शिक्षाही उचित है।

मुनिराज उन राज-कुमारोंको पढना-लिखना सिखानेके साथही-साथ धनुर्बाण और अन्यान्य अस्त्र-शस्त्रोंका प्रयोग करना भी सिखलाते जाते थे। धीरे-धीरे थोड़ी अवस्थामेंही वे दोनों बालक कई शस्त्रों और शास्त्रोंका हाल जान गये। उनकी माता परम दु खिनी होनेपर भी अपनी सन्तानोंके भविष्यकी चिन्तासे एकबारगी अलग न थीं। वे भी सच्ची सुमाताकी भाँति उन्हें अच्छे-अच्छे उपदेश देतीं और उन्हें उनके पूर्वजोंकी कीर्त्ति-कथा सुनाकर वीरता, धीरता, गम्भीरता और अन्यान्य सद्गुणोंकी प्रवृत्ति उनके बाल-हृदयमें उत्पन्न करती थीं। इन दो सुयोग्य शिक्षकोंके हाथोंमें पडकर, वे दोनों बालक सचमुच सुशिक्षित होनेका परिचय प्रदान करने लगे।

वाल्मीकि-मुनि रामचन्द्रको बडी श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते थे। उन्होंने समझ लिया था, कि 'इस युगमें रामकीसी आत्म दूसरी नहीं है। क्या घरमें, क्या राज-दरबारमें, सर्वत्र

उनकी महिमाका विस्तार दिखाई देता है। वे आदर्श पुत्र, आद
बन्धु, आदर्श स्वामी, आदर्श राजा और आदर्श गृहस्थ हैं।
यही सोचकर उन्होंने रामचन्द्रका एक जीवन वृत्तान्त सुललि
छन्दोंमें लिखना आरम्भ किया था। लवकुशके बड़े होनेतक
उनकी रामायण पूरी हो गयी—उसमें रामका आजन्मका
इतिहास लिख गया। अतएव मुनिने और-और विषयोंके साथ-
साथ उन बालकोंको इस रामायणके विशेष विशेष अंशोंको
वीणाके सहारे गाना भी सिखला दिया। परन्तु मुनिने बड़ी
चतुराईसे यह बात उनके कानोंतक न पहुँचने दी, कि जिन
देवताका नाम 'रामचन्द्र' है, वेही उनके जनक और देवी सीताही
उनकी जननी हैं। उन्हें यह नहीं मालूम हो पाया, कि उनकी
यह दुखिया माताही मिथिला-महीपकी पुत्री और अयोध्या-
नरेशकी प्राणप्रिया सीता हैं।

इसी तरह समय निकला जाता था। आजकल करते-करते
बारह वर्षका समय व्यतीत हो गया। सीता मरणके किनारे
पहुँची हुईसी मालूम पड़ने लगीं। उनके शरीरमें केवल हड्डी
और चमड़ा रह गया। यह देख, मुनिराज वाल्मीकिने सोचा,—
"अब सीताको उसके पतिके पास पहुँचाये बिना काम न
चलेगा। उसके पुत्र भी बड़े हो चले हैं, इस समय यदि वे
अपने पिताके पास रहकर राजधर्मको शिक्षा न ग्रहण करेंगे,
तो कोरेही रह जायेंगे। इसलिये कोई-न कोई ढंग रचनाही
चाहिये। न हो, तो एक दिनके लिये अयोध्याही चला जाऊँ
और इस विषयमें ......।"

परन्तु प्रतिदिन अयोध्या जानेकी बात सोचकर भी मुनि आश्रमसे न टल सके। दिन-पर-दिन बीतते चले गये। इसी बीच एक दिन अयोध्यासे एक राजदूतने आकर कहा,—"मुनि-राज! महाराज रामचन्द्र अश्वमेध-यज्ञ कर रहे हैं, अतएव, उन्होंने बडी विनयके साथ आपको उपस्थित होनेके लिये निमन्त्रण दिया है, कृपाकर उनकी प्रार्थना स्वीकार करें।" मुनिने सहर्ष निमन्त्रण स्वीकार कर दूतको विदा किया और आप-ही आप कहने लगे,—"बस, अब मेरा काम बन गया। इसी बहाने मैं रामके सम्मुख उनकी आत्माके इन युगल प्रतिबिम्बोंको रखूँगा। देखा जायेगा, कि वे कैसे अपने मनको वशमें रखते और माता-सहित अपने इन लालोंको अपने घरमें स्थान नहीं देते हैं!"

मुनिने कुटीके भीतर जाकर सीताको यह संवाद सुनाया। सुनकर सीता बड़ीही दु:खित हुई। उन्होंने मन-ही-मन सोचा,—"अबतक तो मैं इसी बातको सोच-सोचकर सुखी होती थी, कि यद्यपि प्रजाके सन्तोषके लिये राजा-भावसे स्वामीने मुझे वनवासिनी बना दिया है, तथापि आदर्श स्वामी-भावसे उन्होंने अपने हृदयमे मुझे उसी तरह राजराजेश्वरी रूपमें बिठला रखा है, जिस तरह मैं, क्या अयोध्याके महलोंमें, क्या वनवासके कठिन दिवसोंमें, क्या दु:खमें, क्या सुखमें, सदैव बैठती आयी हूँ, परन्तु हाय! अब वह सुख भी छीन गया, मालूम होता है, क्योंकि जब वे यज्ञ करने जा रहे, हैं तब उन्होंने दूसरा विवाह अवश्यही किया होगा?" यह कल्पना सहस्र जिह्वावाले सर्पकी नाई सीताके हृदयको काट-काटकर व्यथित करने लगी।

इसी समय कहींसे लवकुश नाचते-कूदते हुए वहाँ आ पहुँचे और बोले,—"माँ! कल हम दोनों महर्षिके साथ अयोध्या जायेंगे और जिनका चरित गा-गाकर हमलोग नित्य सुखी हुआ करते हैं, उन्हीं रामायणके नायक रामचन्द्रका अश्वमेध-यज्ञ आँखों देखेंगे। भला, माँ! ऐसा महापुरुष दुनियामें दूसरा कहाँ दिखाई पड़ेगा, जो प्रजाकी प्रसन्नताके लिये अपनी प्राणसमान पत्नीतक-का परित्याग कर दे? माँ! सचमुच उनके सभी कार्य्य अलौकिक महत्वसे भरे और आश्चर्य्यमें डालनेवाले हैं। हमलोगोंने उनके दूतसे पूछा था, कि जब रामचन्द्रने अपनी पत्नीको निकाल दिया है, तब इस यज्ञमें उनकी सहधर्म्मिणी कौन बनेगी? क्या उन्होंने फिर विवाह किया है? इसपर उसने कहा, 'नहीं। उनके गुरुजोंने लाख कहा, पर वे विवाह करनेको प्रस्तुत न हुए। उन्होंने अपनी निर्वासिता महारानी सीताकी एक सोनेकी प्रतिमूर्त्ति बनवायी है, उसीको साथ लेकर वे यज्ञका कार्य्य पूरा करेंगे।' माँ! इसीसे विदित हो जाता है, कि अपनी पत्नीपर उनका कितना अपार स्नेह है और ऐसी प्यारी पत्नीको प्रजाके लिये छोड़कर उन्होंने कितना बड़ा त्याग किया है! माँ! आज्ञा दो, तो हम-लोग उन महात्माके चरण-कमलोंके दर्शन कर आयें।"

सीताके मनसे सारा शोक, समस्त विकार, सकल सन्देह कपूरकी तरह उड़ गये। स्वामीका स्नेह वैसाही बना हुआ है—मेरे नामसे, मूर्त्तिसे, चिन्तासे वे अबतक पृथक् नहीं हुए हैं—यह विचारकर उनकी दहकती छाती बहुत कुछ ठण्ढी हुई। उन्होंने प्रसन्नमनसे पुत्रोंको अनुमति दे

परन्तु प्रतिदिन अयोध्या जानेकी बात सोचकर भी मुनि आश्रमसे न टल सके। दिन-पर-दिन बीतते चले गये। इसी बीच एक दिन अयोध्यासे एक राजदूतने आकर कहा,—"मुनि-राज! महाराज रामचन्द्र अश्वमेध-यज्ञ कर रहे हैं, अतएव उन्होंने बड़ी विनयके साथ आपको उपस्थित होनेके लिये निमन्त्रण दिया है, कृपाकर उनकी प्रार्थना स्वीकार करें।" मुनिने सहर्ष निमन्त्रण स्वीकार कर दूतको बिदा किया और आप ही आप कहने लगे,—"बस, अब मेरा काम बन गया। इसी बहाने मैं रामके सम्मुख उनकी आत्माके इन युगल प्रतिबिम्बोंको रखूँगा। देखा जायेगा, कि वे कैसे अपने मनको वशमें रखते और माता-सहित अपने इन लालोंको अपने घरमें स्थान नहीं देते हैं!"

मुनिने कुटीके भीतर जाकर सीताको यह संवाद सुनाया। सुनकर सीता बड़ीही दुःखित हुई। उन्होंने मन-ही-मन सोचा,—"अबतक तो मैं इसी बातको सोच-सोचकर सुखी होती थी, कि यद्यपि प्रजाके सन्तोषके लिये राजा-भावसे स्वामीने मुझे वनवासिनी बना दिया है, तथापि आदर्श स्वामी-भावसे उन्होंने अपने हृदयमे मुझे उसी तरह राजराजेश्वरी रूपमें बिठला रखा है, जिस तरह मैं, क्या अयोध्याके महलोंमें, क्या वनवासके कठिन दिवसोंमें, क्या दुःखमें, क्या सुखमें, सदैव बैठती आयी हूँ, परन्तु हाय! अब वह सुख भी छीन गया, मालूम होता है, क्योंकि जब वे यज्ञ करने जा रहे, हैं तब उन्होंने दूसरा विवाह अवश्यही किया होगा?" यह कल्पना सहस्र जिह्वावाले सर्पकी नाईं सीताके हृदयको काट-काटकर व्यथित करने लगी।

इसी समय कहींसे लवकुश नाचते-कूदते हुए वहाँ आ पहुँचे और बोले,—"माँ! कल हम दोनों महर्षिके साथ अयोध्या जायेंगे और जिनका चरित गा-गाकर हमलोग नित्य सुखी हुआ करते हैं, उन्हीं रामायणके नायक रामचन्द्रका अश्वमेध-यज्ञ आँखों देखेंगे। भला, माँ! ऐसा महापुरुष दुनियाँमें दूसरा कहाँ दिखाई पड़ेगा, जो प्रजाकी प्रसन्नताके लिये अपनी प्राणसमान पत्नीतक-का परित्याग कर दे? माँ! सचमुच उनके सभी कार्य्य अलौकिक महत्त्वसे भरे और आश्चर्य्यमें डालनेवाले हैं। हमलोगोंने उनके दूतसे पूछा था, कि जब रामचन्द्रने अपनी पत्नीको निकाल दिया है, तब इस यज्ञमें उनकी सहधर्म्मिणी कौन बनेगी? क्या उन्होंने फिर विवाह किया है? इसपर उसने कहा, 'नहीं। उनके गुरुजीने लाख कहा, पर वे विवाह करनेको प्रस्तुत न हुए। उन्होंने अपनी निर्वासिता महारानी सीताकी एक सोनेकी प्रतिमूर्त्ति बनवायी है, उसीको साथ लेकर वे यज्ञका कार्य्य पूरा करेंगे।' माँ! इसीसे विदित हो जाता है, कि अपनी पत्नीपर उनका कितना अपार स्नेह है और ऐसी प्यारी पत्नीको प्रजाके लिये छोड़कर उन्होंने कितना बड़ा त्याग किया है! माँ! आज्ञा दो, तो हम-लोग उन महात्माके चरण-कमलोंके दर्शन कर आयें।"

सीताके मनसे सारा शोक, समस्त विकार, सकल सन्देह कपूरकी तरह उड़ गये। स्वामीका स्नेह वैसाही बना हुआ है—मेरे नामसे, मूर्त्तिसे, चिन्तासे वे अबतक पृथक् नहीं हुए हैं— यह विचारकर उनकी दहकती हुई छाती बहुत कुछ ... उन्होंने प्रसन्नमनसे पुत्रोंको यज्ञमें जानेकी अनुमति दे

हृदयमें उस समय जो सौभाग्यका गर्व पैदा हुआ, आँखोंने जैसे आनन्दके आँसू गिराये, उसका अनुभव प्रत्येक सहृदय व्यक्ति कर सकता है। सीताने मन-ही-मन देवताओंको प्रणाम कर कहा,—"अभागिनी सीता और कुछ नहीं चाहती। उसकी एक मात्र चाहना यही है, कि सभी सुहागिनें उसीकासा स्नेहमय स्वामी पायें; पर एकको भी उसकी तरह ऐसे नेह-सागरसे एक दिनके लिये भी बिछुड़नेका दुर्भाग्य न देखना पड़े!"



अयोध्यामें जैसी धूमधाम अश्वमेधके दिनोंमें देखी गयी, वैसी न कभी देखी गयी और न सुनी। निमन्त्रण राजा महाराजों, अमीर उमरावों, सैन्य-सामन्तों, नेही नातेदारों, बड़े-बूढ़ों, सखा सहायकों, ब्राह्मण-पण्डितों और ऋषि मुनियोंके मारे अयोध्या तो भरही गयी, नगरके बाहर भी नये-नये डेरे-तम्बुओंका ताँता लग गया और वस्त्रावासोंकी एक नयीही नगरी बस गयी। सब लोग एक मुँहसे कहने लगे, कि ऐसा यज्ञ तो आजतक किसी राजाने नहीं किया था।

इन्हीं डेरोंमेंसे एक मुनिवर वाल्मीकिको भी मिला था। वहाँ वे अपने चेलोंसे नित्य बीनके सहारे रामायण गवाने लगे। उस सुन्दर स्वर-लहरीसे आसपासके सब लोगोंका मन मुग्ध होने लगा। हजारों आदमी उनके चेलोंका गाना सुननेके लिये उनके डेरेको घेरे रहने लगे। तब मुनिने उन बालकोंको घूम-घूमकर डेरेमें यह पवित्र संगीत-सुधा बरसानेकी आज्ञा दे दी। सब

लोग अचल भाव और अतुल आनन्दसे उस गानको सुनने और आँसुओंकी धारासे धरा सिक्त करने लगे। भला जिस सङ्गीतमें रामके अति विचित्र चरित्रका वर्णन था, जो आदि-कवि वाल्मीकिकी सरस और सहज काव्यकलाका नमूना था, जिसके गानेवाले परले सिरेके सुन्दर और ऐसे सुरीले कण्ठ स्वरवाले थे, जिसके आगे कोयल भी मात थी, जिसके साथ वीनकी मधुर झङ्कार भी मिली हुई थी, वह सङ्गीत भला किसके कानोंमें अमृतकी वर्षा नहीं करता? कौन ऐसा नीरस-हृदय था, जिसमें सहानुभूति और आनन्दके साथ साथ अनेक अलौकिक भाव नहीं पैदा होते?

होते-होते यह सवाद रामके कानोंमें भी पहुँचा। उन्होंने उन बालकोंको बुलवा भेजा। आतेही उन्होंने बड़ी विनय और भक्तिके साथ 'महाराजकी जय' कहा और अपने लिये रखे हुए आसनोंपर बैठ गये। उनको एक बार सिरसे पाँवोंतक देखतेही रामचन्द्रका मन, न जाने क्यों, चञ्चल हो उठा। उन्होंने देखा, कि इन दोनोंके शरीरके अगोंमें तो मेरे और जानकीके अगोंके सारे लक्षण विद्यमान हैं। यह विचार उत्पन्न होतेही उनके हृदय-समुद्रमें भयानक ज्वार आने लगा; अपने हृदयके इस उछलते हुए वेगको बड़े कष्टसे रोककर उन्होंने उन्हें गानेकी आज्ञा दी।

तुरतही सबके कानोंमें वह सुधा समुद्र-लहरीकी भाँति अद्भुत सगीत लहरी क्रीडा करने लगी। कविके अद्भुत काव्य-कौशल और उन बालकोंकी निपुणताने एक एकका मन मोह लिया। रामचन्द्र वह प्रबल प्रवाह, जो

हृदयके भीतर जारी था, रोक रखनेमें असमर्थ हुए। अतएव उन्होंने गाना बन्द करवा दिया और पूछा,"—प्यारे बच्चो! तुम लोगोंने यह गाना कहाँ सीखा?" इसके उत्तरमें उन्होंने कहा,—"महाराज! महर्षि वाल्मीकि हमारे गुरु हैं। यह काव्य उन्हींका बनाया हुआ है और गाना-बजाना भी हमने उन्हींसे सीखा हैं।" यह सुन, रामचन्द्रके मनमें और भी सन्देह तथा चिन्ता पैदा होने लगी। उन्होंने कहा,—"अच्छा, आज तो तुम लोग जाओ, मैं फिर किसी दिन तुम्हें बुलवाऊँगा।"

उनके जाने बाद रामचन्द्र अपने एकान्त निवासमें आकर सोचने लगे,—"न जाने क्यों, इन बालकोंको देखकर मेरे मनमें वैसेही भाव उठ रहे हैं, जैसे अपनी सन्तानको देखकर पिताके मनमें उठा करते हैं। कहीं ये सीताकेही बालक तो नहीं हैं? वे भी तो वाल्मीकिके आश्रममेंही छोड दी गयी थीं? परन्तु जिस बुरी तरह वे घरसे निकाल जगलमें छोड दी गयी हैं, उससे तो उनके जीती रहनेका विश्वास नहीं होता। इन बालकोंकी भौंओं नासिकाओं, आँखों, कानों, ठोरियों, होठों और मोतीकेसे दाँतोंके ऊपर तो सीतादेवीकेही इन अवयवोंकी छाप पडी हुई मालूम होती है। परन्तु जिस निष्ठुरने एकदम निरपराधिनी होनेपर भी अपनी पतिव्रता पत्नीको वनमें भिजवा दिया, उसकी यह आशा दुराशाही नहीं, अनुचित भी है। हाय! न जाने वैसी साध्वी, पतिगत-प्राणा सरल-हृदया और शुद्धताकी साकार प्रतिमा मेरे जैसे कपटी, कुटिल और पाषाण-हृदयके पाले क्यों पडी? नहीं तो बेचारीका ऐसा हाल क्यों होता?

यही सोचते-सोचते उनका हृदय व्याकुल होने लगा, आँखें वे रोक आँसू गिराने लगी। थोड़ी देरतक चुप रह, एक लम्बी साँस ले रामचन्द्र फिर आप-ही-आप कहने लगे,—हाँ, वे अवश्य क्षत्रिय-बालकही हैं। नहीं तो उनका उपनयन-संस्कार आठही वर्षकी उमरमें हो जाता। उनको देखनेसे मालूम होता था, कि उनका यह संस्कार अभी हालमें ही हुआ है। ऐसी अवस्थामें उनका सीताके पुत्र होना जितना सम्भव है, उतना दूसरेकी सन्तान होना सम्भव नहीं। नहीं तो दूसरा कौन ऐसा अभागा क्षत्रिय होगा, जिसके बालक मुझ भाग्यहीनके बालकोंकी नाईं वन-वन भटकते फिरेंगे? वे अवश्यही अभागे रामकीही सन्तान हैं।"

यही सब सोचते-विचारते और तरह-तरहकी कल्पनाएँ करते उन्होंने सारी रात तारेही गिनते गिनते बिता दी—"नींद ऐसी सो गयी, कि न आयी तमाम रात।"



दूसरे दिन भरे दरबारमें उन बालकोंको संगीत-निपुणताका चमत्कार देखनेके लिये रामचन्द्रने सर्वसाधारणको आनेकी आज्ञा दे दी। सुनतेही दलके दल दर्शक दरबारमें आने लगे। जितने लोग यज्ञके लिये निमन्त्रित होकर आये थे, उनमेंसे तो कोई ऐसा न था, जो बिना आये रहा हो। दरबार जैसाही सजा था, वैसाही जनसमूहसे भरा हुआ भी था। नियत समयपर राजा रामचन्द्र राजसिंहासनपर आ विराजे। भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न और लङ्का-की लड़ाईके सहायक, सुग्रीव, विभीषण आदि सभी लोग

अपनी योग्यताके अनुसार सिंहासनके दाहिने-बाँयें बैठ गये। कौसल्या, कैकेयी, सुमित्रा, ऊर्म्मिला, माण्डवी और श्रुतकीर्ति आदि राज परिवारकी स्त्रियाँ अन्यान्य स्त्रियोंके साथ निश्चित स्थानोंमें आ बैठीं।

देखते-देखते लव और कुशको साथ लिये हुए वाल्मीकि भी आ पहुँचे। उनके आतेही बड़ा कोलाहल होने लगा। जो लोग उन बालकोंका गाना पहले सुन चुके थे, वे बड़ी प्रसन्नताके साथ उँगली द्वारा उनकी ओर इशारा करते हुए अपने पास बैठे हुए लोगोंको उनका परिचय देने लगे। मुनि और उन बालकोंके बैठतेही सारी सभामें सन्नाटा छा गया। सब लोग उत्सुकताके साथ संगीत आरम्भ होनेकी बाट जोहने लगे।

वाल्मीकिके सिखलाये अनुसार राजाकी आज्ञा पातेही, वे दोनों बालक चुन-चुनकर उन्हीं अंशोंको गा-गाकर सुनाने लगे, जिनमें राम और सीताके पारस्परिक अलौकिक अनुराग और प्रेमका वर्णन था। सुनते-सुनते रामचन्द्रका हृदय गलकर पानी होगया और उनकी आँखोंसे आँसू गिरने लगे। उनका यह विश्वास दृढ़ होने लगा, कि अवश्यही ये दोनों सीताकेही हृदयके टुकड़े हैं। रामने अपने शोकके वेगको रोक, धैर्य्य लक्ष्मणसे कहा—"लक्ष्मण! अभी एक स मुद्राएँ उपहार दो।"

सुनतेही लव-कुशने हाथ वनके रहनेवाले थे आवश्यकता तो उन्हें रहती

हमारा भोग-विलास तो पत्तोंकी कुटीमें रहना, पेड़ोंकी छाल पहनना और कन्द-मूल-फल खाकर जीवन-रक्षा करनाही है। गुरुने हमें बड़े परिश्रमसे यह कविता कण्ठस्थ करायी है। इसे आज आपके आगे सुनानेका अवसर मिला, यही हमारा यथेष्ट पुरस्कार है। आपको हमारा गाना पसन्द आया, इसीसे हम अपनेको कृतार्थ मानते हैं।"

बालकोंकी यह चतुरता और निर्लोभता देख, सबको बड़ा अचम्भा हुआ। रामचन्द्रने मन ही मन उन्हें सौ-सौ बार सराहा।

इधर रामचन्द्रकी माता कौसल्याने जो उन बालकोंको देखा, तो उनमें राम और सीताके अंगोंकी परछाईं देख, वे बड़ी व्याकुल हो गयीं और "हाय सीता! हाय जानकी!! मेरी प्राण-समान पुत्रवधू!!! तू कहाँ गयी!" कहकर पृथ्वीमें गिर पड़ीं और गिरतेही मूर्च्छित हो गयीं। चैतन्य होतेही वे सिसक सिसक कर रोने और कहने लगीं,—"भाइयो! न जाने क्यों, मुझे ऐसा मालूम होता है, कि वे बालक हो-न-हो, सीताकेही गर्भसे उत्पन्न हुए हैं। मैं उनके प्रत्येक अङ्गमें अपने बेटे और बहूके लक्षण देख रही हूँ। सबको धोखा हो तो हो, पर माताकी आँखोंको कभी धोखा नहीं हो सकता। तुम लोग उन्हें मेरे पास ले आओ। मैं उनका मुँह चूमकर, उन्हें गोदमें लेकर, सीताका शोक भूलनेकी चेष्टा करूँगी।"

माताका यह रोना पीटना देख, रामचन्द्र रो पड़े, उनके [illegible] भी व्याकुल हो गये और सारी उपस्थित जन मण्डली [illegible] मूर्त्ति बन गयी। लक्ष्मणने यह [illegible] [illegible]ता,

कर दी और उन बच्चोंको लिये हुए कौसल्याके पास चले आये। उनके पास आतेही कौसल्याने दौड़कर उन्हें कलेजेसे लगा लिया और "बेटी सीता ! तुम कहाँ हो ?" कह-कहकर बार-बार उनका मुँह चूमते हुए आँसुओंकी धारा बहाने लगीं। सुमित्रा और ऊर्म्मिला आदि जितनी स्त्रियाँ वहाँ बैठी थीं, वे सब यह हाल देख, हाहाकार कर उठीं।

कुछ देर बाद सन्देह मिटानेके लिये कौसल्याने पूछा,—"बच्चो ! तुम्हारे माता-पिताका क्या नाम है ? तुम दोनोंके नाम क्या हैं ?"

बड़ी विनयके साथ अपने नाम बतलाते हुए, वे कहने लगे,—"माता ! हमें नहीं मालूम, कि हमारे पिता कौन हैं उनका नाम क्या है ? आजतक न हमने यह बात किसीसे पूछी और न किसीने अपने आपही हमें बतलायी। हाँ, हमारे एक दुखिया माँ हैं। वे दिन-रात तपस्यामें लगी रहती हैं। हमने आजतक उनका नाम भी किसीसे नहीं सुना। ऋषिवर वाल्मीकिने हमें पाल-पोसकर बड़ा किया और शिक्षा दी है, हम उन्हींके शिष्य हैं। हमारी माँ रात-दिन ऐसी उदास रहती हैं, कि जीते-ही-जी मरी हुईसी मालूम पड़ती हैं। उनका शरीर जिस प्रकार दिन-दिन छीजता जाता है, उससे मालूम होता है, कि वे अधिक दिन तक न जियेंगी, आगे हमारे भाग्य !" इसके बाद कौसल्याके पूछनेपर उन्होंने अपनी माताके शरीरके डीलडौल और गठनका जो वर्णन किया, उससे किसीके मनमें यह सन्देह न रहा, कि वे सीताके बालक नहीं हैं।

तदनन्तर कौसल्याने वाल्मीकिको बुलाकर सारा हाल पूछा। उत्तरमें उन्होंने आदिसे अन्ततक सारी कथा कह सुनायी। "हाय! सती सीताके भाग्यमें ऐसा भोग बदा था!" यह कहकर सिर पीटते-पीटते कौसल्याने राम और वासिष्ठको वहाँ बुला भेजा। उनके आतेही उन्होंने जो कुछ वाल्मीकि-मुनि और उन बालकोंसे सुना था, वह कह सुनाया। सुनते-सुनते रामकी छाती आँसुओंसे भींग गयी। दाम्पत्य और वात्सल्य-प्रेमकी नदियोंका सङ्गम हो गया।

कौसल्याने उसी समय सीताको लिवा लानेके लिये वाल्मीकिके आश्रममें पालकी कहार भेज दिये।



धीरे-धीरे यह सम्वाद सर्वत्र फैला गया, कि जो दो बालक आज कई दिनोंसे राम-चरित्र गा-गाकर सबका मन मोहे हुए हैं, वे महाराजकेही पुत्र हैं। वे महाराजके घरसे निकाल देनेपर उनकी महारानीके गर्भसे वनमें पैदा हुए थे। लोगोंने यह भी सुना, कि महारानीको बुला लानेके लिये पालकी-कहार भेज दिये गये हैं।

अधिकांश मनुष्य इस समाचारको सुन, सुखी हुए, परन्तु परनिन्दक, दूसरेकी बुराईसे प्रसन्न होनेवाले मनुष्य रूपी पिशाच, कनक कटोरेमें भरे हुए विष-रस, इतनी यातना पहुँचाकर भी सीतापर सदय न हुए। इस बार भी जहाँ तहाँ कुटिल लोगोंके मुँहसे विष उगला जाने [illegible] बातें रामचन्द्रके कानोंमें [illegible]

रामचन्द्रने विना किसी अपराधकेही अपनी सहधर्म्मिणी सीताको जङ्गलमें छुडवा दिया था। कुछ दुष्ट लोगोंके दुष्टता-भरे वचन सुन, उन्होंने जो निष्ठुर कार्य्य किया है, उसका प्रायश्चित्त आज भी हो सकता है, यदि आपलोग एक मुँहसे उन्हें सीताको पुन ग्रहण कर लेनेकी सम्मति दे दें, क्योंकि प्रजाकी प्रसन्नताके लियेही उन्होंने हृदयपर वज्र रखकर ऐसा काम किया है और विना उसकी सम्मतिके वे उन्हें ग्रहण करनेको आज भी तैयार नहीं हैं। मैं शपथ-पूर्व्वक कहता हूँ, कि सीता परम सती हैं। जो मनुष्य इनके सतीत्वपर शङ्का करे, वह नरकका अधिकारी होगा। यदि मेरे इस कथनमें तनिक भी असत्यता हो, तो मैं अपनी सारी तपस्याके फलोंको खो दूँ।"

वाल्मीकिकी यह बात सुन, बहुतोंने हर्षसे जय-जयकार करते हुए राय दे दी, परन्तु दुष्टोंकी एक टोली कुछ न बोली। यह देख, रामचन्द्रका मुँह कुम्हला गया। वे बड़ी निराशासे मुनिकी ओर देखने लगे।

दूसरा कोई उपाय न देख, वाल्मीकिने कहा,—"बेटी सीता! मैं देखता हूँ, कि तुम्हारे ऊपर प्रजा-पक्षके कुछ लोगोंका अबतक सन्देह बना हुआ है। मैं जानता हूँ, ये सूर्य्य, चन्द्र, नक्षत्र, पवन, पानी, पृथ्वी—सब जानते हैं, तुम्हारे स्वामी भी जानते हैं; तुम्हारे देवरों और तुम्हारी सासुओंको भी मालूम है, कि तुम परम सती, बड़ीही शुद्धाचारिणी हो, पर सारी प्रजा नहीं जानती, कि तुम किन लोक-दुर्लभ गुणोंका आधार हो। सभी मनुष्य समान नहीं हैं, सबकी आँखें हृदयको तहतक नहीं पहुँचतीं, इसलिए पुत्री!

तुम सबके सामने अपने सतीत्वका प्रत्यक्ष प्रमाण और पातिव्रत धर्म्मकी परीक्षा दो।"

मुनिकी एक एक बातने सीताके हृदयपर वज्रकासा काम किया। उनके रोम-रोममें आगकी चिनगारियाँ प्रवेश करने लगीं। उनका सारा आकाश-दुर्ग मिट्टीमें मिल गया, सुखकी आशा मिट गयी! जो सन्तोषकी निर्म्मल किरणें सवेरे सहस्र-सूर्य-रश्मिके समान उनके हृदयाकाशमें छिटकी थीं, वे मध्याह्न होनेके पहलेही घोर बादलोंकी ओटमें हो गयीं!

"हाय! अब भी प्रमाण!! फिर भी परीक्षा!!! बारह वर्षतक निरन्तर जलती रहनेपर भी क्या मेरा प्रायश्चित्त पूरा न हुआ? समझी! अब समझी, कि सीताका जन्म सुखकी कणामात्र भी भोगनेके लिये नहीं हुआ था! आज मेरी सारी आशाओंका अन्त है! जब इस जीवनमें स्वामीका वियोगही मेरे भाग्यमें लिखा है, तब मेरा जीनाही व्यर्थ है! माता वसुमती! यदि मैं निष्पापा हूँ, यदि मैंने भगवान् रामचन्द्रको छोड़, किसी औरका कभी नाम भी न स्मरण किया हो, यदि इस शरीरके रोम रोममें रामकाही पवित्र नाम खुदा हुआ हो, यदि उनके चरणोंमें मेरी विमल प्रीति हो, तो तू अभी फट जा, मैं तेरी गोदमें सदाके लिये सो जाऊँ।"

इतना कहते कहते सीता, मूर्च्छित हो, गिर पड़ी। इसी समय सबने चकित नेत्रोंसे देखा, कि पृथ्वी फट गयी और एक सिंहासन प्रकट हुआ, जिसपर एक तेजोमयी देवी बैठी हुई हैं। प्रकट होतेही देवीने सीताको गोदमें ले लिया और देखते-देखते वह सिंहासन देवी ... लीन ...



सुलभ साहित्यमाला नं० १

* परीक्षागुरु *

लेखक

स्वर्गीय लाला श्रीनिवासदास ।

प्रकाशक

मोतीलाल लाठ

मन्त्री,—ज्ञानवर्द्धक विभाग ।

(मारवाड़ी ट्रेड्स एसोसियेशनके अन्तर्गत)

सुलभ साहित्यमाला नं० १

* परीक्षागुरु *

लेखक

स्वर्गीय लाला श्रीनिवासदास ।

प्रकाशक

मोतीलाल लाठ

मन्त्री,—ज्ञानवर्द्धक विभाग ।

(मारवाड़ी ट्रेड्स एसोसियेशनके अन्तर्गत)

द्वितीयवार] सम्वत् १९७० वि० [मूल्य [illegible]

मिलनेका पता

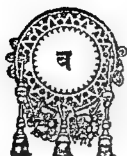
१-मारवाड़ी ट्रेडस् एसोसियेशन,
१६६, हरिसन रोड,
कलकत्ता ।

२-हिन्दी पुस्तक एजेन्सी,
१७६, हरिसन रोड,
कलकत्ता ।

महावीरप्रसाद पोद्दा[illegible]

मुद्रित
"वणिक् प्रेस"
१०, मिर्जापुर [illegible]
कलकत्ता ।

निवेदन।



हुत दिनोंसे अनेक मित्रोंकी यह इच्छा थी कि यहासे भिन्न २ विषयोंकी उत्तमोत्तम पुस्तकें सुलभ मूल्यमें प्रकाशित करनेके लिए एक सस्था स्थापित की जाय। इसी बीचमें यहा मारवाडी ट्रेड्स् एसोसियेशन की स्थापना हुई और उसीके अन्तर्गत एक ज्ञानवर्द्धक विभाग भी खुला। उसी समय यह निश्चय हुआ कि इसी विभाग की ओरसे एक *"सुलभ साहित्य माला"* निकाली जाय। आज उस मालाका यह प्रथम पुष्प स्व० लाला श्रीनिवासदास जी का "परीक्षा गुरु" आपको भेंट किया जाता है। यद्यपि यह पुस्तक एक बार पहले निकल चुकी है, इससे कुछ लोगोंको यह आपत्ति हो सकती है कि कोई नई पुस्तक न निकाल कर यह पुरानी क्यों निकाली गई। इसके उत्तरमे यह निवेदन है कि नई साधारण पुस्तक निकालने की अपेक्षा प्राचीन उत्तम पुस्तक का प्रकाश प्रत्येक दशामें प्रशसनीय समझा जाना चाहिए। जैसे रामायण और गीताके आज तक हजारों सस्करण हो चुके हैं और होते जा रहे हैं वैसे ही अन्य उपयोगी पुस्तकोंके भी सस्करण पर सस्करण होने चाहिए। "परीक्षा गुरु"का पहला सस्करण प्रकाशित हुए ३० वर्षसे ऊपर हो गये। पर अब उस सस्करण की प्रतिया दुर्लभ हो गई हैं। ऐसी उपयोगी पुस्तक का हिन्दी ससारसे लुप्त

जाना हिन्दी वालोंके लिये लज्जा की बात थी। यह लालाश्री-निवासदासजीकी रचनाओंमें सर्वश्रेष्ठ पुस्तक होनेके कारण उनके स्मृति चिन्ह की भांति हिन्दीमें इसका रहना बहुत ही आवश्यक है। पुस्तक की उपयोगिता तथा अन्यान्य बातें सोच कर पहले इसीका प्रकाशित करना उचित जान पड़ा। आशा है कि हिन्दी पाठकोंको "परीक्षा गुरु"के इस दूसरे संस्करणसे विशेष लाभ पहुंचेगा। हिन्दी कोविद रत्नमालासे ले कर स्व० लालाश्रीनिवास-जीकी जीवनी भी इस पुस्तकमें छाप दी गई है।

इस पुस्तक की भाषा तथा चिन्हादि पुरानी छपी हुई कापी के अनुसार ज्योंके त्यों रखे गये हैं।

पुस्तकका मूल्य यथा साध्य कम रखा गया है। आजकल जिस दरसे पुस्तकोंका मूल्य रखा जाता है उससे यह ठीक आधा है। तिसपर भी मारवाड़ीट्रेड्सएसोसियेशनके सदस्यों को पुस्तक नियत मूल्यसे आधे दामोंमें ही मिलती है।

आशा है हम शीघ्र ही और दूसरी अच्छी पुस्तक लेकर आपकी सेवामें उपस्थित होंगे।

प्रकाशक—



लाला श्रीनिवासदासका जीवन चरित।



ला श्रीनिवासदास जाति के वैश्य थे। उनके पिताका नाम लाला मगलीलाल जी था। वे मथुरा के सुप्रसिद्ध सेठ लक्ष्मीचदजी के प्रधान मुनीब थे। कहने को तो वे मुनीब थे पर वास्तव में वे सेठजी के दीवान थे। वे दिल्ली की कोठी के कारिन्दे थे और वहीं रहते थे।

लाला श्रीनिवासदास का जन्म सवत् १९०८ सन् १८५१ ई० में हुआ था। ये बाल्यावस्था ही से बडे शीलवान, सदाचारी और चतुर थे। इन्होंने आरभ में हिन्दी और फिर उर्दू, फारसी, सस्कृत और अगरेज़ी आदि भाषाओं में अभ्यास करके शीघ्र ही अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली।

लाला श्रीनिवासदास ने छोटी उम्र में बडी योग्यता प्राप्त कर ली थी। महाजनी कारोबार में तो इन्होंने ऐसी दक्षता प्राप्त कर ली थी कि केवल अठारह वर्ष की अवस्था में दिल्ली की कोठी का सारा कारोबार हाथों हाथ सभाल लिया। इनकी ऐसी योग्यता देखकर पजाब प्रात की गवर्नमेंट ने इन्हें म्युनिसिपल कमिश्नर बनाया और आनरेरी मजिस्ट्रेट की पदवी प्रदान की। इनकी जैसी पूछ बूझ सरकार में थी वैसे ही बिरादरी वाले और शहर के महाजन लोग भी इनको मानते थे।

लाला श्रीनिवासदास को दिल्ली की कोठी का कारबार करने के अतिरिक्त इधर उधर दौरा करके और कोठियों की भी देख भाल करनी पडती थी, इससे इन्हें अपनी बुद्धि को परिमार्जित करने का और भी अच्छा अवसर हाथ लगा। इन्हें मातृभाषा

हिन्दी से स्वाभाविक प्रेम था। आप जहां कहीं बाहर जाते और वहा कोई हिन्दी का लेखक या रसिक होता तो उससे अवश्य ही मिलते। यदि इनके यहा कोई हिन्दी का गुणग्राही जाता तो सब काम छोड कर उससे बडे प्रेम से मिलते और उसका अच्छा सत्कार करते थे।

एक बार आप पडित प्रतापनारायण मिश्र के यहा मिलने गए और बडी नम्रतापूर्वक इन्होंने उन्हें एक मोहर नज़र करनी चाही। इस पर पडित प्रतापनारायण बेतरह बिगडे और बोले आप हमारे पास अपनी धन की गरूरी बतलाने आए हो। इसके उत्तर में इन्होंने नम्रतापूर्वक हाथ जोड कर उत्तर दिया कि नहीं महाराज मैं तो मातृभाषा के मन्दिरपर अक्षत चढाता हू।

लाला श्रीनिवासदास को हिन्दी से बडा प्रेम था और इसकी सेवा करने का बडा उत्साह था परन्तु काम काज की झंझट के कारण इन्हें अवकाश बहुत कम मिलता था। इसलिये इनके लिखे हुए तप्तासवरण, सयोगितास्वयवर, रणधीरप्रेममोहिनी, और परीक्षागुरु ये ही चार ग्रन्थ हैं, पर फिर भी ये चारों ग्रन्थ एक से एक बढ कर हैं। परीक्षागुरु में इन्होंने जो एक साहूकार के पुत्र के जीवन का दृश्य खीचा है उसे देख कर स्पष्ट प्रगट होता है कि इन्हें सासारिक व्यवहारों का कैसा अच्छा अनुभव था।

खेद के साथ कहना पडता है कि लाला श्रीनिवासदास केवल ३६ वर्ष की अवस्था में सवत् १९४४ (सन् १८८७ ई०) में काल-कवलित हुए। यदि ये कुछ दिन और रहते तो हिन्दी भाषा की बहुत कुछ सेवा करते। इनका चरित्र और स्वभाव आदर्श के योग्य है।

———

निवेदन ।

अबतक नागरी और उर्दू भाषामें अनेक तरहकी अच्छी, अच्छी पुस्तकें तैयार हो चुकी हैं परन्तु मेरे जान इसरीतिसे कोई नहीं लिखी गई इसलिये अपनी भाषामें यह नई चालकी पुस्तक होगी परंतु नई चाल होनेंसे ही कोई चीज अच्छी नहीं हो सक्ती बल्कि साधारण रीतिसे तो नई चालमें तरह, तरहकी भूल होनेंकी सभावना रहती है और मुझको अपनी मन्द बुद्धिसे और भी अधिक भूल होनेंका भरोसा है इसलिये मैं अपनी अनेक तरहकी भूलोंसे क्षमा मिलने का आधार केवल सज्जनोंकी कृपा दृष्टि पर रखता हूं।

यह सच है कि नई चालकी चीज देखनेंको सबका जी लल-चाता है परतु पुरानी रीतिके मनमें समाये रहने और नई रीतिको मन लगाकर समझनेंमें थोडी मेहनत होनेंसे पहले पहल पढनेंवाले का जी कुछ उलझने लगता है और मन उछट जाता है इस्से उसका हाल समझमें आनेंके लिये मैं अपनी तरफसे यहां कुछ खुलासा किया चाहता हूं —

पहले तो पढनेंवाले इस पुस्तकमें सौदागरकी दुकानका हाल पढतेही चकरावेंगे क्योंकि अपनी भाषामें अबतक वार्तारूपी जो पुस्तकें लिखी गई हैं उन्में अक्सर नायक, नायका वगैरेका हाल ठेटसे सिलसिलेवार (यथाक्रम) लिखा गया है "जैसे कोई राजा, बादशाह, सेठ, साहूकारका लडका था उसके मनमें इस बातसे यह रुचि हुई और उस्का यह परिणाम निकला" ऐसा सिल

सिला इसमें कुछभी नहीं मालूम होता "लाला मदनमोहन एक अङ्गरेजी सौदागरकी दूकानमें अस्बाब देख रहे हैं लाला ब्रजकिशोर, मुन्शीचुन्नीलाल और मास्टर शिभूदयाल उनके साथ हैं" इन्में मदनमोहन कौन, ब्रजकिशोर कौन, चुन्नीलाल कौन और शिभूदयाल कौन है? इन्का सभाव कैसा है? परस्पर-सम्बन्ध कैसा है? हरेककी हालत क्या है? यहा इस्समय किस लिये इकट्ठे हुए हैं? यह बातें पहलेसैं कुछ भी नही जताई गई! हा पढनें वाले धैर्यसैं सब पुस्तक पढ लेंगे तो अपनें, अपनें मौकेपर सब भेद खुलता चला जायगा और आदिसैं अन्त तक सब मेल मिल जायगा परन्तु जो साहब इतना धैर्य न रक्खेंगे वह इस्का मतलब भी नही समझ सकेंगे

अलबत्ता किसी नाटकमें यहरीति पहलेसे पाई जातीहै परतु उसकी इस्की लिखनेंकी रीति जुदी जुदी है नाटकोंमें जिस्का वचन होता है उस्का नाम आदिमें लिख देते हैं और वह पैरेग्राफ* उस्का वचन समझा जाता है परतु इस्मैं ऐसा नही होता इस्मैं ऐसा "" चिन्ह (अर्थात इन्वरटेडकोमा या कुटेशन) के भीतर कहनेंवाले का वचन लिखा जाता है और कहनेंवालेका नाम वचनके बीचमैं या अतमैं जहा पुस्तक रचनें वालेको जगह मिल्ती है, वह लिख-देता है अथवा नाम लिखे बिना पढनेंवालेको कहनेंवालेका वचन मालूम हो सके तो नहीं भी लिखता एक आदमीका वचन बहुत करके एक पैरेग्राफमैं पूरा होता है परतु कहीं, कहीं किसी, किसीके

* पैराग्राफके प्रारम्भमें हर जगह नई सतरसे ज़रासी लकीर छोडकर लिखा जाता है और वह पूरा होजाय वहां बाकी लकीर खाली छोडदी जातीहै जैसे यह पैरेग्राफ "" से प्रारम्भ होकर "होगई" पर समाप्त हुआ है

वचनमें और और विषय आजाते हैं तो ऐसे "चिन्ह (इन्वरटेडकोमा) से पहला वचन पूरा किये बिना दूसरे पैरेग्राफके आदिमें ऐसे" चिन्ह लगाकर उसीका वचन जारी रक्खा जाताहै और वचनके बीचमें दूसरेका वचन आजाता है तो वहा उस वचनको अलग दिखानेंके लिये उसपर भी अक्सर इन्वरटेडकोमा लगा दिये जातेहैं परन्तु जो वचन ऐसे" " चिन्होंके भीतर नहीं होते वह पुस्तक रचनें वालेकी तरफसे होते हैं

और चिन्होंमें ऐसा , (कोमा) किंचित विश्राम, ऐसा , (सिमीकोलन) अथवा (कोलन) अर्धविश्राम, ऐसा. (फुलिस्टोप) पूर्णविश्राम, ऐसा ? (इन्ट्रोगेशन) प्रश्नकी जगह, ऐसा ! (एक्सक्लेमेशन) आश्चर्य अथवा सबोधन वगैरेके जो शब्द जोर देकर बोलनें चाहियें उन्के आगे ऐसा–चिन्ह बात अधूरी छोडनेंके समय लगाया जाता है और ऐसे ( ) चिन्हों (पेरेनथिसेस) के भीतर पहले पदका खुलासा अर्थ या चल्ते प्रसगमें कोई दूसरकी अथवा विशेष बात जतानी होती है वह लिख देते हैं

इस पुस्तकमें दिल्लीके एक कल्पित (फर्जी) रईसका चित्र उतारा गया है और उस्को जैसेका तैसा (अर्थात् स्वाभाविक) दिखानेंके लिये सस्कृत अथवा फारसी अरबीके कठिन कठिन, शब्दोंकी बनाई हुई भाषाके बदले दिल्लीके रहनेंवालोंकी साधारण बोलचालपर ज्याद दृष्टि रक्खी गई है अलबत्ता जहा कुछ विद्याविषय आ गया है वहा विवस होकर कुछ, कुछ शब्द संस्कृत आदिके लेनें पडे हैं परन्तु जिनको ऐसी बातोंके समझनेंमें कुछ झमेल मालूम हो उन्की सुगमताके लिये ऐसे प्रकरणोंपर ऐसा +

चिन्ह लगा दिया गया है जिस्सै उन प्रकरणोंको छोड़कर हरेक मनुष्य सिलसिले वार वृतान्त पढ़ सका है.

इस पुस्तकमैं संस्कृत, फारसी अङ्गरेजीकी कविताका तर्जुमा अपनी भाषाके छंदोंमैं हुआ है परंतु छंदोंके नियम और दूसरे देशोंका चाल चलन जुदा होनेकी कठिनाईसै पूरा तर्जुमा करनेंके बदले कही, कही भावार्थ ले लिया गया है

अब इस पुस्तकके गुणदोषों पर विशेष विचार करनेंका काम बुद्धिमानोंकी बुद्धिपर छोडकर मैं केवल इतनी बात निवेदन किया चाहता हूं कि कृपाकरके कोई महाशय पूरी पुस्तक बांचे बिना अपना विचार प्रगट करनेंकी जल्दी न करैं और जो सज्जन इस विषयमैं अपना विचार प्रगट करैं वह कृपाकरके उस्की एक नकल मेरे पासभी भेजदें (यदी कोई अखबारवाला उस अंककी कीमत चाहेगा तो वह तत्काल उस्के पास भेज दी जायगी) जो सज्जन तरफदारी (पक्षपात) छोडकर इस विषयमैं स्वतत्रतासै अपना-विचार प्रगट करैंगे मैं उन्का बहुत उपकार मानूंगा

इसपुस्तकके रचनेंमैं मुझको महाभारतादि संस्कृत, गुलिस्तां वगैरे फारसी, स्पेक्टेटर, लार्ड बेकन, गोल्डस्मिथ, विलियमकूपर आदिके पुरानें लेखों और स्त्रीबोध आदिके वर्तमान रिसालोंसै बड़ी सहायता मिली है इसलिये इन् सबका मैं बहुत उपकार मान्ता हूं और दीनदयालु परमेश्वरकी निर्हेतुक [illegible] मनसै अमित उपकार मान[illegible] [illegible] समाप्त क[illegible]



प्रकरण १.

सौदागरकी दुकान.

चतुर मनुष्य को जितने खर्च में अच्छी प्रतिष्ठा अथवा धन मिलसक्ताहै मूर्ख को उस्से अधिक खर्चन पर भी कुछ नहीं मिलता
लार्ड चेस्टर फील्ड.

लाला मदनमोहन एक अंग्रेजी सौदागर की दुकान में नई, नई फाशन का अंग्रेजी असबाब देख रहे हैं लाला ब्रजकिशोर, मुन्शी चुन्नीलाल, और मास्टर शिभूदयाल उन्के साथ हैं

"मिस्टर ब्राइट! यह बडी काच की जोडी हमको पसंद है इस्की कीमत क्या है?" लाला मदनमोहन नें सौदागर से पूछा

"इस साथकी जोडी अभी तीनहजार रुपे में हमनें एक हिन्दुस्थानी रईस को दी है लेकिन आप हमारे दोस्त हैं आपको हम चारसौ रुपे कम कर देंगे."

"निस्सन्देह ये काच आपके कमरेके लायक हैं इन्के लगनें से उसकी शोभा दुगुनी हो जायगी' शिभूदयाल बोले

"आहा! मैं तो इन्के चोपटोंकी कारीगरी देखकर चकित हूं! ऐसे अच्छे फूल पत्ते बनाये हैं कि सच्चे बेल बूटों को मात

हैं जी चाहता है कि कारीगर के हाथ चूम लू" मुन्शी चुन्नीलालनें कहा

"इन्के विना आपका इस्समय कौन्सा काम अटक रहा है ?" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "खेल तमाशेकी चीजों से भोलेभाले आदमियोंका जी ललचाता है वह सौदागर की सब दुकान को अपनें घर लेजाया चाहते हैं परन्तु बुद्धिमान अपनी जरूरी चीजोंके सिवाय किसी पर दिल नही दौड़ाते" लाला ब्रजकिशोर बोले.

"ज़रूरत भी तो अपनी, अपनी रुचि के समान अलग, अलग होती है" मुन्शी चुन्नीलालनें कहा

"और जब दरिद्रियोंकी तरह धनवान भी अपनी रुचि के समान काम न करसकें तो फिर धनी और दरिद्रियों मैं अन्तरही क्या रहा ?" मास्टर शिभूदयाल नें पूछा

"नामुनसिब काम करके कोई नुक्सानसै नही बच सक्ता।

"धनी दरिद्री सकल जन हैं जग के आधीन।
चाहत धनी विशेष कछु तासों तै अति दीन॥"

लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे." मुनासिब रीति सै थोडे खर्च मैं सब तरहका सुख मिल सक्ता है परन्तु इन्तजाम और कामके सिल्सिले विना बडीसै बडी दौलत भी जरूरी खर्चों को पूरी नहीं हो सक्ती जब थोथी बातों मैं बहुतसा रुपया खर्च हो जाता है तो जरूरी कामोंके लिये पीछेसै जरूर तकलीफ उठानी पडती है"

"चित्त की प्रसन्नता के लिये मनुष्य सब काम करते हैं फिर जिन चीजों के देखनें से चित्त प्रसन्नहो उन्का खरीदना थोथी कैसे समझा जाय ?" मुनशी चुन्नीलालनें कहा

"चित्त प्रसन्न रखनें की यह रीति नही है चित्त तो उचित व्यवहारसे प्रसन्न रहता है" लाला ब्रजकिशोरनें जवाब दिया

"परन्तु निरी फिलासफीकी वातोंसे भी तो दुनियादारीका काम नहीं चल सक्ता" लाला मदनमोहन नें दुनियादार बन कर कहा

"वलायत की सब उन्नति का मूल लार्ड बेकन की यह नीति है कि 'केवल विचार, ही विचार में मकडी के जाले न बनाओ आप परीक्षा करके हरेक पदार्थ का स्वभाव जानों" मिस्टर ब्राइट नें कहा

"क्यों साहब ! ये काच कहां के बने हुए हैं ?" मुन्शीचुन्नी-लाल नें सौदागरसे पूछा

"फ्रान्स के सिवाय ऐसी सुडोल चीज कहीं नहीं बन सक्ती जब से ये काच यहां आए हैं हर वक्त देखनेंवालों की भीड लगी रहती है और कई कारीगर तो इन्का नक्शा भी खींच लेगये हैं"

"अच्छा जी ! इन्की कीमत हमारे हिसाब में लिखो और ये हमारे यहां भेज दो"

"मैंनें एक हिन्दुस्थानी सौदागर की दुकान में इसी मेल के काच देखे हैं उन्के चोखटों में निस्सन्देह ऐसी कारीगरी नहीं है परन्तु कीमत में वह इन्से बहुत ही सस्ते हैं" लाला ब्रजकिशोर बोले

"मैं तो अच्छी चीज का गाहक हूं चीज पसन्द आये पीछे मुझको कीमत की कुछ परवा नहीं रहती"

'अंग्रेजों की भी यही चाल है" मास्टर शिभूदयाल नें कहा

"परन्तु सब बातों मैं अंग्रेजों की नकल करनी क्या जरुर है ?" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया

"देखिये ! जबसै लाला साहब यह अमीरी चाल रखनें लगे हैं लोगोंमैं इन्की इज्ज़त कितनी बढ़ती जाती है।" मास्टर शिंभूदयालनें कहा.

"सर सामानसै सच्ची इज्जत नहीं मिल सक्ती सच्ची इज्जत तो सच्ची लियाकतसै मिल्ती है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "और जब कोई मनुष्य बुद्धिके विपरीत इस रीतिसै इज्जत चाहता है तो उस्का परिणाम बडा ही भयङ्कर होता है।"

"साहब ! इतनी बात तो मैं हिम्मतसे कहता हूं कि जो इस साथकी जोडी इस शहरमैं दूसरी जगह निकल आवेगी तो मैं ये काच मुफ्त नज़र करूंगा" मिस्टर ब्राइटनें ज़ोर देकर कहा.

"कदाचित इस साथकी जोडी दिल्ली भरमैं न होगी परन्तु कीमतकी कम्ती बढती भी तो चीजकी हैसियतके बमूजिब होनी चाहियें" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया

"जिस तरह मोतियोंके हिसाब मैं किसी दानेकी तोल ज़रा ज्याद होनेंसै दाम बहुत ज्याद बढ जाते हैं इसी तरह इन शीशोंकी क़ीमतका भी हाल है मुझको लाला साहबसै ज्याद नफा लेना मंजूर न था इस वास्ते मैंने पहले ही असली क़ीमत मैं चार सौ रुपे कम कर दिये इसपर भी आपको कुछ सन्देह हो तो आप तीसरे पहर मास्टर साहबको यहां भेज दें मैं बीजक इन्सै क़ीमत ठैरा लूंगा".

"अच्छा ! मास्टर शिंभूदयाल सै लोटर

पास थायगे पर ये काच हमसें पूछे विना आप और किसीको न दें" लाला मदनमोहनने कहा

इस वातसें सव अपने अपने जीमें राजी हुए, व्रजकिशोरने इतना अवकाश वहुत समझा मदनमोहनके मनमें हाथसे चीज निकल जानेंका खटका न रहा, चुन्नीलाल और शिभूदयालको अपने कमीशन सही करनेंका समय हाथ आया और मिस्टर ब्राइटको लाला मदनमोहनकी असली हालत जान्ने के लिये फुरसत मिली

"वहुत अच्छा" मिस्टर ब्राइटने जवाव दिया "लेकिन आपको फुरसत हो तो आप एक वार यहा फिर भी तशरीफ लाय हालमें नई नई तरहकी वहुतसी चीजें वलायतसें ऐसी उम्दा आई हैं जिन्को देखकर आप वहुत खुश होंगे परंतु अभी वह खोली नही गई हैं और इस्समय मुझको रुपे की कुछ जरूरत है इन चीजों-की क़ीमतके विलका रुपया देना है आप मेहरवानी करके अपने हिसाव मैंसें थोडा रुपया मुझको इस्समय भेज दें तो वडी इनायत हो"

इस वचनमें मिस्टर ब्राइट अपनें अस्वावकी खरीदारीके लिये लाला मदनमोहनको ललचाता है परंतु अपने रुपे के वास्ते मीठा तकाजा भी करता है चुन्नीलाल और शिभूदयालके कारण उस्को मदनमोहनके लेन देनमें वहुत कुछ फायदा हुआ परंतु उसके पचास हजार रुपे इस समय मदनमोहनकी तरफ़ वाकी हैं और शहर में मदनमोहन की वावत तरह, तरहकी चर्चा फ़ैल रही हैं वहुत लोग मदनमोहन को फिजूल खर्च, दिवालिया वताते हैं और हकीकत में मदनमोहन का खर्च दिन पर

दिन बढता जाता है इस्सै मिस्टर ब्राइट को अपनी रकम का खटका है इसी लिये उसने इन् काचों का सौदा इससमय अटकाया है और तीसरे पहर मास्टर शिभूदयाल को अपनें पास बुलाया है.

"रुपया ! ऐसी जल्दी !" लाल ब्रजकिशोरनें मिस्टर ब्राइट को वहम में डालनें के लिये आश्चर्य से इतनी बात कह कर मनमें कहा" हाय ! इन् कारीगरोकी निरर्थक चीजोंके बदले हिन्दुस्थानी अपनी दौलत वृथा खोये देतेहैं"

"सच है पहले आप अपना हिसाब तैयार करायें, उस्को देख कर अंदाज सें रुपे भेजे जायगे" मुन्शीचुन्नीलालनें बात बनाकर कहा.

"और बहुत जल्दी हो तो बिल कर के काम चला लीजिये. जब तक कागज के घोडे दौडते हैं रुपे की क्या कमी है ?" ब्रजकिशोर बीच में बोल उठे

"अच्छा ! मैं हिसाब अभी उतरवाकर भेजता हूं मुझको इससमय रुपे की बहुत ज़रूरतहै" मिस्टर ब्राइटनें कहा.

"आपनें साढे नो बजे मिस्टर रसल को मुलाकातके लिये बुलायाहै इस्से वास्ते अब वहां चलना चाहिये" मास्टर शिभूदयाल नें याद दिवाई.

- "अच्छा मिस्टर ब्राइट ! इन् काचों की याद रखना और नया असबाब खुलें जब हम को जरूर बुला लेना" यह कह कर लाला मदनमोहन नें मिस्टर ब्राइट से हाथ मिलाया और अपने साथियों समेत जोडी की एक निहायत उम्दा बलायती फिटन में सवार होकर रवाने हुए

जब बग्गी कपनी बाग में पहुची तो सवेरे का सुहावना समय देखकर सब का जी हरा होगया उस्समयकी शीतल, मद, सुगधित हवा बहुत प्यारी लगती थी वृक्षों पर हर तरहके पक्षी मीठे मीठे सुरों सें चहचहा रहे थे ! नहरके पानी की धीरी, धीरी आवाज़ कानको बहुत अच्छी मालूम होती थी ! पन्नेसी हरी घास की भूमिपर मोतीसी ओस की बूदें बिखर रहीं थी ! और तरह, तरहको फुलवाडी हरी मखमल में रंग रंगके बूटोंकी तरह बडी बहार दिखा रही थी इस स्वाभाविक शोभाको देखकर लाला ब्रज-किशोरनें मदनमोहन से थोडी देर वहा ठैरनें के वास्ते कहा

इस्समय मुन्शीचुन्नीलाल नें जेबसें निकालकर घडी में चाबी दी और घडी देखकर घबराटसें कहा "ओ ! हो ! नोपर बीस मिनिट चलेगए तो अब मकान को जल्दी चलना चाहिये "

निदान लाला मदनमोहन की बग्गी मकानपर पहुची और ब्रजकिशोर उन्सें रुखसत् होकर अपनें घर गए

प्रकरण २

अकालमें अधिकमास

अप्रापति के दिनन में खर्च होत अविचार
घर आवत है पाहुनो बणिज न लाभ लगार

वृन्द

"हैं अभी तो यहा के घन्टे में पोनें नो ही बजे हैं तो क्या मेरी घडी आध घन्टे आगे थी ?" मुन्शी चुन्नीलालनें मकान प-

ते ही बड़े घन्टे की तरफ देख कर कहा. परन्तु ये उस्की चालाकी थी उसने ब्रजकिशोर सै पीछा छुडाने के लिये अपनी घडी चावी देने के बहाने सै आध घन्टे आगे कर दी थी!

"कदाचित् ये घन्टा आध घन्टे पीछे हो" मास्टर शिंभूदयाल ने बात साध कर कहा.

"नहीं, नहीं ये घन्टा तोप सै मिला हुआ है" लाला मदनमोहन बोले.

"तो लाला ब्रजकिशोर साहब की लच्छेदार बातैं नाहक अधूरी रह गई?" मुन्शी चुन्नीलाल नें कहा

"लाला ब्रजकिशोर की बातैं क्या हैं चकाबू का जाल है वह चाहते हैं कि कोई उन्के चक्कर सै बाहर न निकलने पाय" मास्टर शिंभूदयाल ने कहा.

"मैं यौं तो ये काच लेता या न लेता पर अब उन्की ज़िद सै अदबद कर लूंगा"

"निस्सन्देह जब वे अपनी ज़िद नहीं छोड़ते तो आपको अपनी बात हारनी क्या जरूर है?" मुन्शी चुन्नीलाल ने छींटा दीया.

हितोपदेश में कहा है "आज्ञालोपी सुतहु कों क्षमै न नृपति विनीत॥ को विशेष नृप, चित्रमै जो न गहे यहरीति"॥ * पंडित पुरुषोत्तमदासने मिल्तीमै मिलाकर कहा.

"बहुत पढने लिखने सै भी आदमी की बुद्धि कुछ ऐसी निर्बल हो जाती है कि बडे, बडे फिलासफर छोटी, बातों मैं चक्कर खाते हैं" मास्टर शिंभूदयाल कहने लगे. "सर आईजिक न्यूटन

* आज्ञा भङ्गकरान् राजा न क्षमेत सुतानपि। विशेष कोनु राज्ञश्च राज्ञ चित्रगतस्य च॥

कितनी ही यार खाना खाकर भूल जाते थे, जरमन का प्रसिद्ध विद्वान लेसिंग एक यार वहुत रात गए अपने घर आया और कुन्दा खडकाने लगा, नोकर नें गैर आदमी समझ कर भीतर से कहाकि "मालिक घर मैं नहीं हैं कल आना " इसपर लेसिंग सच मुच लौट चला !!! इटली का मारीनी नामी कवि एक दिन कविता यनाने मै ऐसा मग्न हुआ कि अंगीठी सै उस्का पैर जल गया तोभी उसै कुछ खवर न हुई !"

"लाला व्रजकिशोर साहव का भी कुछ, कुछ ऐसा ही हाल है यह सीधी, सीधी यातों को विचार ही विचार मैं खेंच तान कर ऐसो पेचीदा वनालेते हैं कि उनका सुल्झाना मुश्किल पड जाता है" मुन्शी चुन्नीलाल वोले

"मैनें तो मिस्टर ब्राइट के रोवरू ही कह दिया था कि कोरी फिलासोफी की यातों से दुनियादारी का काम नहीं चलता" लाला मदनमोहन ने अपनी अकल म दी जाहर की

इतने मै मिस्टर रसल की गाडी कमरे के नीचे आ पहुंची और मिस्टर रसल खट, खट करते हुए कमरे मैं दाखिल हुए लाला मदनमोहन ने मिस्टर रसल से शेकहेंड करके उन्हें कुर्सी पर विठाया और मिज़ाज की खैरोआफियत पूछी

मिस्टर रसल नील का एक होसले मंद सोदागर है परंतु इस्के पास रुपया नही है यह नील के सिवाय रुई और सन वगैरे का भी कुछ, कुछ व्यापार कर लिया करता है इस्का लेन देन डेढ, पौने दो वरस से एक दोस्तकी सिफारश पर लाला मदनमोहन के यहा हुआ है पहले वरसमैं लाला मदनमोहन का जितना रुपया लगा था माल की विकी से व्याज

समेत वसूल होगया परन्तु दूसरे साल रुई की भरती की जिस्में सात आठ हज़ार रुपे टूटते रहे इस्का घाटा भरने के लिये पहले से दुगनी नील बनवाई जिस्में एक तो परता कम बैठा दूसरे माल कलकत्ते पहुंचा उससमय भाव मंदा रह गया जिस्से नफ़े के बदले दस, बारह हज़ार इसमें टूटते रहे लाला मदनमोहन के लेन देन से पहले मिस्टर रसल का लेन देन रामप्रसाद बनारसीदास से था उन्के आठ हज़ार रुपे अबतक इस्की तरफ़ बाकी थे जब उन्की मयाद जाने लगी तो उन्होंने नालिश करके साढेग्यारह हज़ारकी डिक्री इसपर कराली अब उन्की इजराय डिक्री में इस्का सब कारखाना नीलाम पर चढ रहा है और नीलाम की तारीखमें केवल चार दिन बाकी हैं इस लिये यह बडे घबराट में रुपे का बदोबस्त करने के लिये लाला मदनमोहन के पास आया है

"मेरे मिज़ाज का तो इससमय कोसों पता नहीं लगता परन्तु उस्को ठिकाने लाना आपके हाथ है" मिस्टर रसल ने मदनमोहन के कुशलप्रश्न (मिज़ाजपुर्सी) पर कहा "जो आफत एकाएक इससमय मेरे सिर पर आपडी है उस्को आप अच्छी तरह जान्ते हैं, इस कठिन समय में आपके सिवाय मेरा सहायक कोई नहीं है आप चाहैं तो दम भर में मेरा बेडा पार लगा सक्ते हैं नहीं तो मैं तो इस तूफ़ान में ग़ारत हो चुका"

"आप इतने क्यों घबराते हैं? ज़रा धीरज रखिये" मुन्शी चुन्नीलाल ने पहले की मिलावट के अनुसार सहारा लगाकर कहा "लाला साहब के सभाव को आप अच्छी तरह जान्ते हैं जहां तक हो सकेगा यह आप की सहायता में कभी कसर न करेंगे."

"पहले आप मुझे यह तो बताइये कि आप मुझसैं किस तरह की सहायता चाहते हैं ?" लाला मदनमोहन ने पूछा

"मैं इस्समय सिर्फ इतनी सहायता चाहता हू कि आप रामप्रसाद बनारसीदास की डिक्री का रुपया चुकादें मुझसैं हो सकेगा जहा तक मैं आपका सब कर्जा एक बरसके भीतर चुका दू गा" मिस्टर रसल ने कहा "मुझको अपनी बरबादी का इतना खयाल नही है जितनी आपके कर्जे की चिन्ता है रामप्रसाद बनारसीदास की डिक्रीमें मेरी जायदाद बिक गई तो और लेन-दार कोरे रह जाय गे और मै ने इन्साल्वन्ट होनें की दरख्वास्त की तो आप लोगों के पल्ले रुपे मैं चार आने भी न पडैंगे"

"अफ्सोस ! आपकी यह हकीकत सुन् कर मेरा दिल आप सैं आप उमड़ा आता है" लाला मदनमोहन बोले

"सच है महा कवि शेक्सपीअर नें कहा है" मास्टर शिंभूदयाल कहनें लगे —

"कोमल मन होत न किये होत प्रकृति अनुसार।
जो पृथवी हित गगन ते बारिद द्रवति फुहार॥
बारिद द्रवति फुहार द्रवहि मन कोमलताई।
लेत, देत शुभ हेत दोउनको मन हरषाई॥
मन गुनते उतकृष्ट सकल बभव को भूषन।
राजहु ते कछु अधिक देत शोभा कोमलमन॥" ॥ §

§ The quality of mercy is not strained
It droppeth as the gentle rain from heaven
Upon the place beneath, it is twice blessed
It blesseth him that gives, and him that takes
'Tis mightiest in the mightiest it becomes
The throned monarch better than his crown
William
Shakespeare

"हज़रत सादी कहते हैं कि "दुर्बल तपस्वी सै कठिन समय मै उस्के दुःख का हाल न पूछ और पूछै तो उस्के दुःख की दवा कर" * मुन्शी चुन्नीलाल ने कहा

"अच्छा इस रुपे के लिये ये हमारी दिल जमई क्या कर देंगे ?" लाला मदनमोहन ने बडी गम्भीरता सै पूछा.

"हां हां लाला साहब सच कहते हैं आप इस रुपे के लिये हमारी दिल जमई क्या कर देंगे ?" मुन्शी चुन्नीलाल ने दिल-जमई की चर्चा हुए पीछे अपनी सफाई जताने के लिये मिस्टर रसल सै पूछा.

"मैं थोडे दिन मै शीशे बरतन का एक कारख़ाना यहां बनाया चाहता हूं अबतक शीशे बरतन की सब चीज़ें बलायत सै आती हैं इस लिये ख़र्च और टूट फूट के कारण उन्की लागत बहुत बढ जाती है जो वह सब चीज़ें यहां तैयार की जायगी तो उन्मै ज़रूर फ़ायदा रहेगा और ख़ुदा ने चाहा तो एक बरस के भीतर भीतर आपकी सब रकम जमा हो जायगी परन्तु आपको इस्समय इस बात पर पूरा भरोसा न हो तो मेरा नील का कारख़ाना आपकी दिलजमई के वास्ते हाज़िर है" मिस्टर रसल ने जवाब दिया.

"हिंदुस्थान मै अब तक कलों के कारख़ाने नहीं हैं इस्सै हिंदुस्थानियों को बडा नुक्सान उठाना पडता है मैं जान्ता हूं कि इस्समय हिम्मत करके जो कलों के कारख़ानें पहले जारी करेगा उस्को ज़रूर फायदा रहेगा" मास्टर शिम्भूदयाल ने कहा

---

*दरवेश ज़ईफ़ हालरा दरतंगिये रोज़ गार मपुरस कि चूनी इल्ला बशर्ते आंकि मरहम बनिही

"आपको रामप्रसाद बनारसीदास के सिवाय किसी और का रुपया तो नहीं देना !" मुन्शी चुन्नीलाल ने पूछा

'रामप्रसाद बनारसीदास की डिक्री का रुपया चुके पीछे मुझको लाला साहब के सिवाय किसी की फूटी कौडी नहीं देनी रहैगी" मिस्टर रसल ने जवाब दिया

परन्तु काच का कारखाना बनाने के लिये रुपे कहा से आयगे ? और लाला मदनमोहन के कर्ज लायक नील के कारखाने की हैसियत कहा है ? इन्सालवन्ट होने से लेनदारों के पल्ले चार आने भी न पडेंगे यह बात मिस्टर रसल अपने मुह से अभी कह चुका है पर यहा इन् बातोंकी याद कौन दिलावै ?

"इस सूरत में रामप्रसाद बनारसीदास की डिक्री का रुपया न दिया जायगा तो उन्की डिक्री में इस्का कारखाना बिकजायगा और अपनी रकम वसूल होने की कोई सूरत न रहैगी" मुन्शी चुन्नीलाल ने लाला मदनमोहन के कान में झुक कर कहा

"परतु इस्समय इस्को देने के लिये अपने पास नगद रुपया कहा है ?" लालामदनमोहन ने धीरे से जवाब दिया

"अब मेरी शर्म आप को है 'वक्त निकल जाता है बात रह-जाती है' जो आप इस्समय मुझको सहारा देकर उभार लोगे तो मैं आपका अहसान जन्म भर नहीं भूलूगा ' मिस्टर रसल ने गिड गिडा कर कहा

"मैं मनसे तुम्हारी सहायता किया चाहता हू परन्तु मेरा रुपया इस्समय और कामो मे लग रहा है इस्से मैं कुछ नहीं कर सक्ता" लाला मदनमोहन ने शर्माते, शर्माते कहा

' अजीहुजूर ! आप यह क्या कहते हैं ? आपके वास्ते रुपे

की क्या कमी है ? आप कहें जितना रुपया इसी समय हाजिर हो" मास्टर शिभूदयाल बोले.

"अच्छा ! मुझसे होसकेगा जिस तरह दस हजार रुपे का बदोबस्त करके मैं कल तक आपके पास भेजदूंगा आप किसी तरह की चिन्ता न करें" लाला मदनमोहनने कहा.

"आपने बड़ी महरबानी की मैं आपकी इनायत सैं जी गया अब मैं आपके भरोसे बिल्कुल निश्चिन्त रहूंगा" मिस्टर रसल नें जाते, जाते बडी खुशी सैं हाथ मिला कर कहा और मिस्टर रसल के जाते ही लाला मदनमोहन भी भोजन करनें चले गए.

प्रकरण ३.

सगतिका फल.

सहवासी बस होत नृप गुण कुल रीति निहाय
नृप युवती अर तरलता मिलत प्राय संग पाय *

हितोपदेशे

लाला मदनमोहन भोजन करके आए उस्समय सब मुसाहब कमरे में मौजूद थे मदनमोहन कुर्सी पर बैठ कर पान खानें लगे और इन लोगोंने अपनी, अपनी बात छेडी

हरगोविंद (पन्सारी के लडके) ने अपनी बगल सैं लखनऊ की बनी हुई टोपिये निकाल कर कहा "हुजूर ये टोपिये अभी

* आसन्नमेव नृपतिर्भजते मनुष्य । विद्याविहीनमकुलीनमसंस्तुतं वा
प्रायेण भूमिपतयः प्रमदा लता च, य पार्श्वतो वसति तं परिवेष्टयन्ति ॥

लखनऊसे एक बजाज के यहां आई हैं सोगात में भेजने के लिये अच्छी हैं पसंद हों तो दो, चार ले आऊं ?"

"कीमत क्या है ?"

"वह तो पचीस, पचीस रुपे कहता है परन्तु मैं वाजवी ठैरा लूंगा"

"बीस, तीस रुपे में आवें तो ये चार टोपियें ले आना"

"अच्छा ! मैं जाता हूं अपने बस पडते तोड जोड में कसर नहीं रक्खूंगा" यह कह कर हरगोविंद वहां से चल दिया

"हुजूर ! यह हिना का अतर अजमेर से एक गंधी लाया है वह कहता है कि मैं हुजूर की तारीफ सुनकर तरह, तरह का निहायत उम्दा अतर अजमेर से लाता था परंतु रस्ते में चोरी होगई सब माल अस्बाब जाता रहा सिर्फ यह शीशी बची है वह आप की नजर करता हूं" यह कह कर अहमद हुसैन हकीमने वह शीशी लाला साहब के आगे रखदी

"जो लाला साहब को मंजूर करने में कुछ चारा विचार हो तो हमारी नजर करो हम इस्को मंजूर करके उस्की इच्छा पूरी करेंगे" पण्डित पुरुषोत्तमदास ने बडीबजेदारी से कहा

"आपकी नजर तो सिवाय करेले के और कुछ नहीं हो सका मरजी हो , मंगवाय ?" हकीमजीने जबाव दिया

"करेले तुम खाओ, तुम्हारे बरके खाय हमको मुंह कडवा करने की क्या जरूरत है ! हम तो लाला साहब के कारण नित्य लड्डू उडाते हैं और चैन करते हैं" पण्डित जी ने कहा

"लड्डू ही लड्डूओं की वातें करनी आती हैं या कुछ और भी सीखे हो ?" मास्टर शिंभूदयाल ने छेड की

"तुम सरीखे छोकरे मदरसे में दो एक किताबें पढ़ कर अपनें को अरस्तातालीस समझनें लगते हैं परन्तु हमारी विद्या ऐसी नहीं है तुम को परीक्षा करनी हो तो लो इस काग़ज पर अपनें मन की बात लिख कर अपनें पास रहनें दो जो, तुमनें लिखा होगा हम अपनी विद्या सैं बता देंगे" यह कह कर पडित-जी नें अपने अगोछे में सै कागज पेनसिल और पुष्टीपत्र निकाल दिया

मास्टर शिभूदयालनें उस कागज पर कुछ लिखकर अपने पास रख लिया और पडितजी अपना पुष्टीपत्र लेकर थोडी देर कुडली खेंचते रहे फिर बोले "बच्चा तुमको हर बात में हसी सूझती है तुमनें कागज में 'करेला' लिखा है परन्तु ऐसी हसी अच्छी नहीं"

लाला मदन मोहन के कहनें सें मास्टर शिभूदयाल नें कागज खोल कर दिखाया तो हकीकत में 'करेला' लिखा पाया अब तो पडितजी की खूब चढ बनी मूछों पर ताव दे, दे कर खखारने लगे

परंतु पंडितजी ने ये 'करेला' कैसे बता दिया? लाला मदनमोहनके रोबरू आपस की मिलावट से बकरी का कुत्ता बना देना सहजसी बात थी परंतु पडित जी का चुन्नीलाल और शिभूदयाल सें ऐसा मेल न था और न पडितजी को इतनी विद्या थी कि उस्के बल से करेला बता देते असल बात यह थी कि पडित जीने एक कागज पर काजल लगा कर पुष्टीपत्र में रख छोडा था जिस्समय पुष्टीपत्र पर कागज रख कर कोई कुछ लिखता था कलम के दबाव सैं काजलके अक्षर दूसरे कागज पर

उतर आते थे फिर पडितजी कुंडली खेंचती वार किसी ढव से उस्को देखकर थोडी देर पीछे बता देते थे

"तो हुजूर! उस गधीके वास्ते क्या हुक्म है?" हकीम जीने फिर याद दिवाई.

"अत्र में चदनके तेल की मिलावट मालूम होती है और मिलावट की चीज बेचने का सरकार से हुक्म नही है इस वास्ते कह दो शीशी अत हुई वह अपना रस्ता ले" पडित जी शीशी सूंघ कर वीच में बोल उठे.

"हा हकीमजी! आपकी राय में उस गन्धी का कहना सच है?" लाला मदनमोहन नें पूछा.

"बेशक, अन्दाज सैं तो ऐसा ही मालूम होता है आगे खुदा जाने" हकीमजी बोले

"तो लो यह पचीस रुपेके नोट इस्तसमय उस्को खर्चके वास्ते दे दो विदा पीछे से सामने बुलाकर की जायगी" लाला मदन-मोहन ने पचीस रुपे के नोट पाकट से निकाल दिये

"उदारता इस्का नाम है" "दयालुता इसे कहते हैं" "सच्चे यश मिलने की यह राह है" "परमेश्वर इस्सैं प्रसन्न होता है" चारों तरफ सैं वाह वाह की बोछार होनें लगी.

"ये वहियां मुलाहजे के वास्ते हाजिर हैं और बहुत सी रकमोंका जमाखर्च आपके हुक्म विना अटक रहा है जो अवकाश हो तो इस्समय कुछ अर्ज करूं?" लाला जवाहरलाल नें आते ही वस्ता आगे रख कर डरते, डरते कहा

"लाला जवाहरलाल इतने वरस सैं काम करते हैं पर लाला साहब की तबियत, और कागज दिखाने का मौका

तक नहीं पहचान्ते" लाला मदनमोहन को सुना कर चुन्नीलाल और शिंभूदयाल आपस में कानाफूसी करने लगे.

"भला इस्समय इन्बातोंका कौन प्रसग है ? और मुझको बार, बार दिक करने से क्या फायदा है ? मैं पहले कहचुका हूं कि तुह्मारी समझ में आवे जैसे जमा ख़र्च करलो मेरा मन ऐसे कामों में नहीं लगता" लाला मदनमोहन नें झिड़ककर कहा और जवाहरलाल वहां से उठकर चुप चाप अपने रस्ते लगे.

"चलो अच्छा हुआ ! थोड़े ही में टल गई मैं तो बहियोंका अटवार देख कर घबरा गया था कि आज उस्तादजी घेरे बिना न रहेंगे" जवाहरलाल के जाते ही लाला मदनमोहन खुश हो, हो कर कहने लगे

"इन्का तो इतना होसला नहीं है परन्तु ब्रजकिशोर होते तो वे थोडे बहुत उलझे बिना कभी न रहते" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा

"जब तक लाला साहब लिहाज करते हैं तब ही तक उन्का उलझना उलझाना बन रहा है नहीं तो घड़ी भर मे अकल ठिकाने आजायगी" मुनशी चुन्नीलाल बोले

"हुजूर ! मैं लाला हरदयाल साहब के पास हो आया उन्हों नें बहुत, बहुत करके आपकी ख़ैरोआफियत पूछी है और आज शामको आपसे बाग मे मिलने का करार किया है" हरकिसन दलाल ने आकर कहा

"तुम गए जब वो क्या कर रहे थे ?" लाला मदनमोहन ने होकर पूछा.

"भोजन करके पलग पर लेटे ही थे आपका नाम सुनकर तुर्त उठ आए और बडे जोश से आपकी खैरोआफियत पूछने लगे"

"मैं अच्छी तरह जान्ता हूं वे मुझको प्राण से भी अधिक समझते हैं" लाला मदनमोहननें पुलकित होकर कहा.

"आपकी चालही ऐसी है जो एक बार मिल्ता है हमेशेके लिये चेला बन् जाता है" मुनशी चुन्नीलालने बढावा देकर कहा

"परंतु कानूनीजदे इस्सें अलग हैं" मास्टर शिभूदयाल ब्रजकिशोर की तरफ इशारा कर के बोले

"लीजिये ये टोपियां अठारह, अठारह रुपेमें ठैरालाया हूं" हरगोविंदने लाला मदनमोहन के आगे चारों टोपियें रख कर कहा

"तुमनें तो उस्की आंखोंमें धूल डालदी ! अठारह, अठारह रुपे में कैसे ठैरालाये ? मुझको तो ये बाईस, बाईस रुपे से कमकी किसी तरह नहीं जचती" लाला मदनमोहन ने हरगोविंद का हाथ पकडकर कहा.

"मै ने उस्को आगेका फायदा दिखाकर ललचाया और बडी बडी पट्टियें पढाई तब उस्ने लागत में दो, दो रुपे कम लेकर आप के नामसे ये टोपियें दी हैं"

अच्छा ! यह लाला हरकिशोर आते हैं इन्सें तो पूछिये ऐसी टोपी कितने, कितनें में लादेंगे ?" दूरसें हरकिशोर बजाज को आते देखकर पंडित पुरुषोत्तमदास ने कहा.

"ये टोपियें हरनारायण बज़ाज के हां कल लखनऊ से

और बाजार मै बारह, बारह रुपे को बिकी हैं पर यहां तो तेरह तेरह मैं आई होंगी" हरकिशोर ने जवाब दिया.

"तुम हमे पदरह, पदरह रुपे में लादो" हरगोविन्द ने झुंझला कर कहा

"मैं अभी लाता हू तुह्मारे मन मैं आवे जितनी लेलेना"

"ला चुके, ला चुके लाने की यही सूरत है ?" हरगोविन्द ने बात उडाने के वास्ते कहा

"क्यों ? मेरी सूरत को क्या हुआ ? मै अभी टोपियां लाकर तुह्मारे साम्ने रखदेता हू" हरकिशोर ने हिम्मत सै जवाब दिया

"तुम टोपियें क्या लाओगे ? तुह्मारी सूरत पर तो खिसियानपन अभी सै छा गया !" हरगोविन्द ने मुस्करा कर कहा

"मुझको नही मालूम था कि मेरी सूरत मैं दर्पण की खासियत है" हरकिशोर ने हस कर जवाब दिया

"चलो चुप रहो क्यों थोथी बातें बनाते हो ?" मुन्शी चुन्नीलाल रोकने के वास्ते भरम मै बोले

"बहुत अच्छा ! अब मैं टोपी लाये पीछे ही बात करूंगा" यह कह कर हरकिशोर वहा सै चल दिये-

"यहा के दुकानदारों मै यह बडा ऐब है कि जलनके मारे दूसरेके माल को बारह आनेका आचदेते हैं" मुन्शी - चुन्नीलाल ने कहा

"और किसी समय मुकाबला आपडे तो अपनी गिरह सैं घाटा भी दे बैठते हैं" मास्टर शिभूदयाल बोले

"न जाने लोगों को अपनी ,नाक कटा कर औरों की बदशगूनी करने मै क्या मजा आता है" हकीमजी ने कहा

"और जो हरगोविंद कुछ ठगा आया होगा तो क्या मै इस्के पीछे उस्का मन बिगाड़ूगा" लाला मदनमोहन बोले,

"आप की ये ही बातें तो लोगों को बेदाम गुलाम बना लेती है" मुन्शी चुन्नीलाल ने कहा

"कुछ दिन से यहा ग्वालियर के दो गवैये निहायत अच्छे आए है मरजी हो तो घडी के वास्ते आज की मजलिस मैं उन्हें बुला लिया जाय" हरकिसन दलाल ने पूछा

"अच्छा ! बुलालो तुम्हारी पसद है तो जरूर अच्छे होंगे" मदनमोहन नें कहा

"लखनऊ की अमीरजान भी इन दिनों यहीं है इस्के गाने की बडी तारीफ सुनी गई है पर मैंनें अपनें कान से अब तक उस्का गाना नहीं सुना" हकीमजी बोले

"अच्छा ! आप के सुन्ने को हम उसे भी यहा बुलाये लेते हैं पर उस्के गाने मैं सभा न बधा तो उस्के बदले आप को गाना पडेगा !" लाला मदनमोहन ने हस कर कहा

"सच तो ये है कि आप के सबब सें दिल्ली की बात बन रही है जो गुणी यहां आता है कुछ न कुछ जरूर ले जाता है आप न होते तो उन बिचारों को यहा कौन पूछता ? आपकी इस उदारता से आपका नाम विक्रम और हातम की तरह दूर, दूर तक फैल गया है औ बहुत लोग आप के दर्शनोंकी अभिलाषा रखते हैं" मुन्शी चुन्नीलाल ने छींटा दिया

इतने में हरकिशोर टोपी ले कर आ पहुंचे और बारह, बारह पे मैं खुशी से देने लगे.

"सच कहो तुमने इस्में अपनी गिरह का पलोथन क्या लगाया है ?" शिंभूदयाल ने पूछा.

"पलोथन लगाने की क्या जरूरत थी मैं तो इस्में लाला साहब से कुछ इनाम लिया चाहता हूं" हरकिशोर ने जवाब दिया.

"मुझको टोपियें लेनी होती तो मैं किसी न किसी तरह से आपही तुह्मारा घाटा निकालता पर मैं तो अपनी ज़रूरतके लायक पहलै ले चुका" लाला मदनमोहन ने रुखाई से कहा.

"आप को इन्की कीमत मैं कुछ सदेह हो तो मैं असल मालिक को रोबरू कर सक्ता हूं ?"

"जिस गाव नही जाना उस्का रस्ता पूछना क्या जरूर"

"तो मैं इन्हें ले जाउ ?"

"मैंने मनाई कब थी जो मुझसे पूछते हो" यह कह कर लाला मदनमोहनने कुछ ऐसी त्योरी बदली कि हरकिशोर का दिल खट्टा हो गया. और लोग तरह, तरह की नकलैं करके उस्का ठट्ठा उड़ाने लगे.

हरकिशोर उस्समय वहा से उठ कर सीधा अपने घर चला गया पर उस्के मन मैं इन् बातोंका बडा खेद रहा

प्रकरण ४.

मित्रमिलाप (!)

दूरहिसों करबढाय, नयननते जलन्हाय,
आदरसों ढिगबुलाय, अर्धासन देतसो ॥
हितसोंहियमें लगाय, रुचिसमवाणी बनाय,
कहत सुनत अति सुभाय, आनंद भरि लेत जो ॥
ऊपरसों मधु समान, भीतर हलाहल जान,
छलमें पंडितमहान, कपटको निकेतनो ॥
ऐसो नाटक विचित्र, देख्यो ना कबहु मित्र,
दुष्टनको यह चरित्र, सिखनें को हेतको ?॥*

लाला मदनमोहन को हरदयाल सै मिलनें की लालसा मैं दिन पूरा करना कठिन होगया वह घड़ी, घडी घंटे की तरफ देखते थे और उखताते थे. अर ठीक चार बजे अपनें मकान सै सवार होकर मिस्तरीखानेंमें पहुंचे यहां तीन बग्गियें लाला मदनमोहन की फर्मायश सै नई चाल की बन रही थीं उन्के लिये बहुतसा सामान बलायत सै मगाया गया था और मुंबई के दो कारीगरों की राह सै वह बनाई जाती थीं लाला मदनमोहन नें कह रक्खा था कि "चीज़ अच्छी बनें खर्च की कुछ नहीं अटकी जो होगा

* दूरा दुच्छ्रितपाणि रार्द्रनयन प्रोत्सारितार्द्धासनो
गाढालिङ्गनतत्पर प्रियकथाप्रश्नेषु दत्तादरः ॥
अन्तर्भूतविषो बहिर्मधुमयश्चातीव मायापटुः
कोनामायमपूर्वनाटकविधिर्यः शिक्षितोदुर्जनैः ॥ १ ॥

हम करेंगे " निदान लाला मदनमोहन इन बग्गियों को देख भाल कर वहा से आगा हसनजान के तवेले मे गये और वहां तीन घोडे पांच हजार, पाच सो रुपे मै लेनें करके वहा से सीधे अपनें बाग 'दिलपसद' को चले गये.

यह बाग सब्जी मंडो से आगे बढ कर नहर की पटडी के किनारे पर था इस्की रविशों के दोनों तरफ रेलिया की कतार, सुहावनी क्यारियों मैं रग, रग के फूलों की बहार, कही हरी, हरी घासका सुहावना फर्श, कही घनघोर वृक्षों की गहरी छाया, कहीं बनावट के झरनें, और बेंट, कही पेड और टट्टियों पर बेलों की लपेट एक तरफ को चिडियाखाने मैं तरह, तरह के पक्षी चहचहा रहे थे दूसही तरफ को सगमरमर के एक कु ड मैं तरह, तरह के जलचर अपना रग ढग दिखा रहे थे बाग के बीच मैं एक बडा कमरा हवादार बहुत अच्छा बना हुआ था उस्के चारों तरफ सगमरमर का साईवान और साईवान के गिर्द फव्वारों की कतार लगी थी जिस समय ये फव्वारे छुटते थे जैठ बैसाख को सावन भादों समझ कर मोर नाच उठते थे बीच के कमरे मैं रेशमी गलीचे की बडी उम्दा बिछायत थी और बढ़िया साठन की मढी हुई सुनहरी कौंच, कुर्सियें जगह, जगह मोके से रक्खी थीं दीवार के सहारे संगमरमर की मेजोंपर बडे, बड़े आठ काच आम्नें साम्नें लगे हुए थे, छत में बहुमूल्य झाड लटक रहे थे, गोल, बेजई और चोखूंटी मेजों पर फूलों के गुलदस्ते हाथी-दांत, चन्दन, आबनूस, चीनी, सीप और काच वगैरेके उम्दा, उम्दा [illegible] खिलोनें मिसल से रक्खे थे, चांदी की रकेबियों मे [illegible]ी, सुपारी [illegible] हुई थी समय, तारीख, [illegible] [illegible]ना, बह[illegible] [illegible] हार-

मोनियम वाजा, अंटा खेलनें की मेज, अलवमं, सैरवीन, सितार, और शतरञ्ज वगैरे मन वहलानें का सव सामान अपनें, अपनें ठिकानें पर रक्खा हुआ था दिवारों पर गच के फूल पत्तों का सादा काम अवरख की चमक से चादी के डले की तरह चमक रहा था और इसी मकान के लिये हजारों रुपे का सामान हर महीनें नया खरीदा जाता था

इस्समय लाला मदनमोहन को कमरे मै पाव रखते ही विचार आया कि इस्के दरवाजों पर वढिया साठन के पर्दे अवश्य होनें चाहियें उसी समय हरकिशोर के नाम हुक्म गया कि तरह, तरह की वढिया साठन लेकर अभी चले आओ हरकिशोर समझा कि "अव पिछली वातों के याद आनें से अपने जी मै कुछ लज्जित हुए होंगे चलो सवेरे का भूला साझ को घर आजाय तो भूला नही वाजता" यह विचार कर हरकिशोर साठन इकट्ठी करनें लगा पर यहा इन्वातों की चर्चा भी न थी यहां तो लाला मदनमोहन को लाला हरदयाल की लौ लगरही थी निदान रोशनी हुए पीछे वडी देर वाट दिखाकर लाला हरदयाल आये उन्को देखकर मदनमोहन की खुशी की कुछ हद नहीं रही वग्गीके आने की आवाज सुन्ते ही लाला मदनमोहन वाहर जाकर उन्को लिवा लाए और दोनों कौच पर वैठ कर वडी प्रीति सै वातें करनें लगे

"मित्र तुम वडे निठुर हो मैं इतनें दिनम्में तुम्हारी मोहनी मुर्ति देखने के लिये तरस रहाहूं पर तुम याद भी नहीं करते" लाला मदनमोहन ने सच्चे मन सै कहा

"मुझको एक पल आपके विना कल नहीं पडती

करू ? चुगलखोरो के हाथ से तग हू जब कोई बहाना निकाल कर आने का उपाय करता हू वे लोग तत्काल जाकर लालाजी (अर्थात् पिता) से कह देते हैं और लालाजी खुलकर तो कुछ नहीं कहते पर बातोंही बातों मे ऐसा झंझोडते हैं कि जी जलकर राख हो जाता है आजतो मैंने उन्से भी साफ कह दिया कि आप राजी हों, या नाराज हों मुझसे लाला मदनमोहन की दोस्ती नहीं छूट सक्ती" लाला हरदयालनें यह बात ऐसी गर्मा गर्मी सै कही कि लाला मदनमोहन के मनपर लकीर होगई पर यह सब बनावट थी उस्ने ऐसी बाते बना, बना कर लाला मदनमोहन सै "तोफा तहायफ" मे बहुत कुछ फायदा उठाया था इस लिये इस सोने की चिड़िया को जाल मे फसाने के लिये भीतर पेटे सब घरके शामिल थे और मदनमोहन के मनमें मिलने की चाह बढ़ानें के लिये उसनें अब की बार आनें में जान बूझ कर देर की थी.

"भाई ! लोग तो मुझे भी बहुत बहकाते हैं कोई कहता है "ये रुपे के दोस्त हैं कोई कहता है "ये मतलब के दोस्त हैं" पर मे उन्को जरा भी मुह नही लगाता क्योंकि मुझ को ओथेलो की बरबादी का हाल अच्छी तरह मालूम है" लाला मदनमोहन ने साफ मन सें कहा पर हरदयाल के पापी मन को इतनीही बात से खटका हो गया

"दुनिया के लोगों का ढग सदा अनोखा देखने मे आता है उन्मे से कोई अपना मतलब द्रष्टात और कहावतो के द्वारा कह जाता है, कोई अपना भाव दिल्लगी और हसी की बातो मे' जता ता है, कोई अपना प्रयोजन औरों पर रखकर सुना जाता है. ... आशय जता कर फिर पलट जाने का पहलू बनायें

रखता है, पर मुझ को ये बातें नही आतीं मैं तो सच्चा आदमी हूं जो मनमैं होती है वह जवान से कहता हू जो जवान से कहता हू वह पूरी करता हू ." लाला हरदयाल ने भरमा भरमी अपना सदेह प्रगट करके अंत में अपनी सचाई जताई

"तो क्या आपको इस्समय यह सदेह हुआ कि मैं ने बहका-ने वालों पर रख कर अपनी तरफ सैं आपको "रुपेका दोस्त" और "मतलबका दोस्त" ठैरायाहै ?" लाला मदनमोहन गिड गिडा कर कहनें लगे "हाय! आपनें मुझको अबतक नहीं पहचाना मै अपनें प्राणसै अधिक आपको सदा समझता रहा हू इस ससार मै आप सैं बढ कर मेरा कोई मित्र नहीं है जिस्पर आपको मेरी तरफ सै अवतक इतना सदेह बन रहा है मुझको आप इतना नादान समझते हैं क्या मै अपने मित्र और शत्रु को भी नही पहचान्ता? क्या आप सैं अधिक मुझको ससार मै कोई मनुष्य प्यारा है? मै अपना कलेजा चीर कर दिखाऊ तो आपको मालूम हो कि आपकी प्रीति मेरे हृदय मैं कैसी अकित हो रही है!"

"आप वृथा खेद करते हैं मै आपकी सच्ची प्रीति को अच्छी तरह जान्ता हू और मुझको भी इस ससार मै आप सैं बढ कर कोई प्यारा नहीं है मैंने दुनिया का यह ढङ्ग केवल चालाक आदमियों की चालाकी जताने के लिये आप सैं कहा था आप वृथा अपने ऊपर ले दौडे मुझको तो आपकी प्रीति का यहा तक विश्वास है कि सूर्य चन्द्रमा की चाल बदल जायगी तो भी आप की प्रीति मै कभी अतर न आयगा" लाला हरदयालने मदन मोहन के गले मैं हाथ डाल कर कहा

कि शायद मेरा माल पसन्द न आय" हरकिशोरनें मुस्करा कर कहा.

"तुम कपडा दिखानें आए हो या वातोंकी दुकानदारी लगानें आए हो ? जो कपडा दिखाना हो तो झट पट दिखा दो नही तो अपना रस्ता लो हमको थोथी वातों के लिए इस्समय अवकाश नहीं है" लाला मदनमोहन नें भौं चढा कर कहा.

"यह तो मैंने पहले ही कहा था अच्छा ! अव मैं जाता हू फिर किसी वक्त हाजिर होऊ गा"

"तो तुम कल नो, दस वजे मकान पर आना" यह कह कर लाला मदनमोहन नें उसै रुखसत किया.

"आपस में क्या मज़े की वातें हो रही थीं न जानें यह हत्या वीच में कहा सै आगई" लाला हरदयाल वोले

"ख़ैर अव कुछ दिल्लगी की वात छेडिये !" लाला मदन-मोहन ने फरमायश की

निदान वहुत देर तक अच्छी तरह मिल भेट कर लाला हर-दयाल अपने मकान को गए और लाला मदनमोहन अपने मकान को गए



प्रकरण ५.



विपयासक्त †

इच्छा फलके लाभसों कबहु न पूरहि आश
जैसे पावक घृत मिले बहु विधि करत प्रकाश *

हरिवंश.

लाला मदनमोहन बाग से आए पीछे ब्यालू करके अपने कमरे में आए उस्समय लाला ब्रजकिशोर, मुन्शी चुन्नीलाल, मास्टर शिंभूदयाल, बाबू बैजनाथ, पंडित पुरुषोत्तमदास, हकीम अहमदहुसैन वगैरे सब दरबारी लोग मौजूद थे लाला साहब के आते ही ग्वालियर के गवैयों का गाना होने लगा

"मैं जान्ता हूं कि आप इस निर्दोष दिल्लगी को तो अवश्य पसंद करते होंगे देखिये इस्से दिन भर की थकान उतर जाती है और चित्त प्रसन्न हो जाता है" लाला मदनमोहन ने थोडी देर पीछे लाला ब्रजकिशोर से कहा

"सब बातें काम के पीछे अच्छी लगती हैं जो सब तरह का प्रबंध बंध रहा हो, काम के उसूलों पर दृष्टि हो, भले बुरे काम और भले बुरे आदमियों की पहचान हो, तो आपना काम किये पीछे घडी, दो घडी की दिल्लगी में कुछ बिगाड नहीं है पर उस्समय भी इस्का व्यसन न होना चाहिये" लाला ब्रजकिशोर ने जवाब दिया

---

† न जातु काम कामाना मुपभोगेन शाम्यति ॥ हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्द्धते

"अमीरों को ऐश के सिवाय और क्या काम है?" मास्टर शिभूदयाल नें कहा.

"राजनीति मैं कहा हे "राजा सुख भोगहि सदा मंत्री करहि सम्हार॥ राजकाज बिगरे कछू तो मत्री सिर भार * ॥" पंडित पुरुषोत्तमदास बोले.

"हा यहां के अमीरों का ढग तो यही है पर यह ढग दुनिया सै निराला है जो यात सब ससार के लिये अनुचित गिनी जाती हे वही उन्के लिये उचित समझी जाती है। उन्की एक, एक बात पर सुननेंवाले लोट पोट हो जाते हैं। उन्की कोई बात हिकमत सै खाली नहीं ठैरती! जिन बातो को सब लोग बुरी जान्ते हैं, जिन बातों के करने मैं कमीनें भी लजाते हैं, जिन बातों के प्रगट होने से बदचलन भी शर्माते हैं उन्का करना यहा के धनवानों के लिये कुछ अनुचित नहीं है। इन लोगों को न किसी काम के प्रारभ की चिन्ता होती है। न किसी काम के परिणाम का बिचार होता है। यहा के धनपति तो अपने को लक्ष्मी पति समझते हैं परतु ईश्वर के हा का यह नियम नहीं है उस्ने अपनी सृष्टि मैं सब गरीब अमीरों को एकसा बनाया है" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "जो मनुष्य ईश्वर का नियम तोड़ेगा उसको अपने पाप का अवश्य दड मिलैगा. जो लोग सुख भोग मैं पड़ कर अपने शरीर या मन को कुछ परिश्रम नहीं देते प्रथम तो असावधान्ता के कारण उन्का वह वैभव ही नहीं रहता और रहा भी तो कुदरती कायदे के मूजिब उन्का

शरीर और मन क्रम से दुर्बल होकर किसी काम का नही रहता पाचन शक्तिके घटने से तरह, तरह के रोग उत्पन्न होते हैं और मानसिक शक्तिके घटने से चित्त की विकलता, बुद्धि की अस्थिरता, और काम करने की अरुचि उत्पन्न हो जाती है जिस्से थोडे दिन में ससार दु खरूप मालूम होने लगता है

"परंतु अत्यत महनत करने से भी तो शिथिलता हो जाती है" बाबू बैजनाथने कहा.

"इस्से यह बात नही निकल्ती कि बिल्कुल महनत न करो सब काम अदाजसिर करने चाहिये " लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "लिडिया का बादशाह क्रारून साईरस से हारा उस्समय साईरस उस्की प्रजा को दास बनाने लगा तब कारूनने कहा "हमको दास किस लिये बनाते हो ? हमारे नाश करने का सीधा उपाय यह है कि हमारे शस्त्र लेलो, हम को उत्तमोत्तम वस्त्र भूषण पहरने दो, नाच रग देखने दो, शृंगार रसका अनुभव करनें दो, फिर थोडे दिन मे देखोगे कि हमारे शूरबीर अबला बन जायँगे और सर्वथा तुम से युद्ध न कर सकेंगे " निदान ऐसाही हुआ पृथ्वीराज का सयोगता से विवाह हुए पीछे वह इसी सुरत में लिपट कर हिन्दुस्थान का राज खो बैठा और मुसल्मानों का राज भी अत में इसी भोग विलास के कारण नष्ट हुआ"

"आप तो जिस्बात को कहते हैं हद्द के दरजे पर पहुचा देते हैं भला ! पृथ्वी राज और मुसल्मानों की बादशाह्त का लाला साहब के काम काज से क्या सबंध है ? उन्का द्रव्य बहुत कर के अपने भोग विलास मे खर्च होता था परतु लाला

"अमीरौं को ऐश के सिवाय और क्या काम है ?" मास्टर शिभूदयाल नें कहा.

"राजनीति मैं कहा है "राजा सुख भोगहि सदा मत्री करहि सम्हार ॥ राजकाज बिगरे कछू तो मत्री सिर भार * ॥" पडित पुरुषोत्तमदास बोले

"हा यहा के अमीरौं का ढग तो यही है पर यह ढंग दुनिया सै निराला है जो बात सब ससार के लिये अनुचित गिनी जाती हे वही उन्के लिये उचित समझी जाती है। उन्की एक, एक बात पर सुननेंवाले लोट पोट हो जाते हैं। उन्की कोई बात हिक्मत सै खाली नहीं ठैरती। जिन बातों को सब लोग बुरी जान्ते हैं, जिन बातों के करनें मैं कमीनें भी लजाते हैं, जिन बातों के प्रगट होने सै बद्चलन भी शर्माते हैं उन्का करना यहा के धनवानों के लिये कुछ अनुचित नहीं है! इन् लोगों को न किसी काम के प्रारभ की चिन्ता होती है! न किसी काम के परिणाम का बिचार होता है! यहा के धनपति तो अपने को लक्ष्मी पति समझते हैं परतु ईश्वर के हा का यह नियम नहीं है उस्ने अपनी सृष्टि मैं सब गरीब अमीरो को एकसा बनाया है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "जो मनुष्य ईश्वर का नियम तोडेगा उस्को अपने पाप का अवश्य दड मिलेगा जो लोग सुख भोग मैं पड कर अपनें शरीर या मन को कुछ परिश्रम नहीं देते प्रथम तो असावधान्ता के कारण उन्का वह वैभव ही नहीं रहता और रहा भी तो कुदरती कायदे के मूजिब उन्का

* भोगस्य भाजन राजा मत्री कार्य्यस्य भाजनम् ॥ राजकार्य्यपरिध्वंसी मन्त्री दोषेण लिप्यते ॥

शरीर और मन क्रम से दुर्बल होकर किसी काम का नही रहता पाचन शक्तिके घटने से तरह, तरह के रोग उत्पन्न होते हैं और मानसिक शक्तिके घटने से चित्त की विकलता, बुद्धि की अस्थिरता, और काम करने की अरुचि उत्पन्न हो जाती है जिस्से थोडे दिन में ससार दु खरूप मालूम होने लगता है

"परंतु अत्यत महनत करने से भी तो शिथिलता हो जाती है" बाबू बैजनाथने कहा

"इस्से यह बात नही निकल्ती कि बिल्कुल महनत न करो सब काम अंदाजसिर करने चाहिये" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "लिडिया का बादशाह क्रारून साईरस से हारा उस्समय साईरस उस्की प्रजा को दास बनाने लगा तब कारूनने कहा "हमको दास किस लिये बनाते हो ? हमारे नाश करने का सीधा उपाय यह है कि हमारे शस्त्र लेलो, हम को उत्तमोत्तम वस्त्र भूषण पहनने दो, नाच रग देखने दो, शृंगार रसका अनुभव करनें दो, फिर थोडे दिन में देखोगे कि हमारे शूरवीर अबला बन जायँगे और सर्वथा तुम से युद्ध न कर सकेंगे" निदान ऐसाही हुआ पृथ्वीराज का सयोगता से विवाह हुए पीछे वह इसी सुख में लिपट कर हिन्दुस्थान का राज खो बैठा और मुसल्मानों का राज भी अंत में इसी भोग विलास के कारण नष्ट हुआ"

"आप तो जिस्बात को कहते हैं हद्द के दरजे पर पहु चा देते हैं भला ! पृथ्वी राज और मुसल्मानों की बादशाहत का लाला साहब के काम काज से क्या सबंध है ? उन्का द्रव्य य... कर के अपने भोग ... होता था

साहब का तो परोपकार मैं होता है" मास्टर शिभूदयाल नें कहा.

"देखिये लाला साहब का मन पहले नाच तमाशे मैं बिल्कुल नही लगता था पर इन्हों नें चार मित्रों का मेल मिलाप बढानें के लिये अपना मन रोक कर उन्की प्रसन्नता की." पंडित पुरुषोत्तमदास बोले.

"बुरे कामों के प्रसंग मात्र से मनुष्य के मन मैं पाप की ग्लानि घटती जाती है पहले लाला साहब को नाच रंग अच्छा नही लगता था पर अब देखते, देखते व्यसन हो गया फिर जिन् लोगों की सोहबत से यह व्यसन हुआ उन्कों मैं लाला साहबका मित्र कैसे समझूं ? मित्रता का काम करे वह मित्र समझा जाता है अपनें मतलब के लिये लंबी, लंबी बातें बनानें से कोई मित्र नहीं हो सक्ता" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "सादी नें कहा है "एक दिवस मैं मनुज की विद्या जानी जाय । पै न भूल, मन को कपट बरसन लग न लखाय ॥+

"तो क्या आप इन् सब को स्वार्थपर ठैरा कर इन्का अपमान करते हैं ?" लाला मदनमोहन नें जरा तेज होकर कहा.

"नहीं, मैं सब को एकसा नहीं ठैराता परंतु परीक्षा हुए बिना किसी को सच्चा मित्र भी नहीं कह सक्ता" लाला ब्रज किशोर कहनें लगे "केलीप्स नामी एक एथीनियन से साइराक्यूस के बादशाह डिओन की बड़ी मित्रता थी. डिओन बहुधा

+ तवां मआलूम करदन बयकरोज़ दर शमायल मरद । किता कुजाश रसीदस्त पायगाहे अलूम । बले ज़ बातिनश एमन मबाशो गर्रा मशौ । के खुब्स नफ्स नगर्दद

फेलीप्स के मकान पर जाकर महीनों रहा करता था एक वार डिओन को मालूम हुआ कि फेलीप्स उसका राज छीन्ने के लिये कुछ उद्योग कर रहा है डिओन नें फेलीप्स से इस्का वृत्तात पूछा तब वह डिओन के पाव पकडकर रोनें लगा और देवमंदिर में जाकर अपनी सच्ची मित्रता के लिये कठिन से कठिन सौगध खा गया पर असल में यह बात झूटी न थी अंत में फेलीप्स नें साइराक्यूस पर चढाई की और डिओन को महल ही में मरवा डाला। इस लिये मैं कहता हूं कि दूसरे की बातों में आकर अपना कर्तव्य भूलना बडी भूल की बात है"

"अच्छा! फिर आप खुलकर क्यों नही कहते आप के निकट लाला साहब को बहकानें वाला कौन, कौन है?" पंडितजी नें जुगत से पूछा

"मैं यह नही कह सक्ता जो बहकाते होंगे, अपनें जीमें आप समझते होंगे मुझको लाला साहब के फायदे से काम है और लोगों के जी दुखानें से कुछ काम नही है मनुस्मृति में कहा है "सत्य कहहु अरु प्रिय कहहु अप्रिय सत्य न भाष॥ प्रियहु असत्य न बोलिये धर्म सनातन राख॥"* "इस लिये मैं इस्समय इतना ही कहना उचित समझता हूं" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया.

और इसपर थोडी देर सब चुप रहे.

---

*सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात् सत्यमप्रियम् ॥
प्रियं च नानृतं ब्रूयादेष धर्मस्सनातन ॥

प्रकरण ६.

भले बुरेकी पहचान ।

धर्म्म, अर्थ शुभ कहत कोउ काम, अर्थ कहिं आन
कहत धर्म्म कोउ अर्थ कोउ तीनहु मिल शुभ जान ॐ

मनुस्मृति

"आप के कहनें मूजब किसी आदमी की बातों सै उस्का स्वभाव नहीं जाना जाता फिर उस्का स्वभाव पहचान्ने के लिये क्या उपाय करें ?" लाला मदनमोहन नें तर्क की.

"उपाय करनें की कुछ जरूरत नहीं है, समय पाकर सब भेद अपनें आप खुल जाता है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "मनुष्य के मन मैं ईश्वरनें अनेक प्रकार की वृत्ति उत्पन्न की हैं जिन्मैं परोपकार की इच्छा, भक्ति और न्याय परता धर्म्मप्रवृत्ति मै गिनी जाती हैं, दृष्टांत और अनुमानादि के द्वारा उचित अनुचित कामों की विवेचना, पदार्थज्ञान, और विचारशक्ति का नाम बुद्धिवृत्ति है बिना विचारे अनेकवार के देखनें, सुन्ने आदि सै जिस काम मैं मन की प्रवृत्ति हो, उसै आनुसंगिक प्रवृत्ति कहते हैं काम, सन्तानस्नेह, संग्रह करनें की लालसा, जिघांसा और

ॐ धर्मार्थावुच्यते श्रेय कामार्थौ धर्म एव च ॥
अर्थ एवेह वा श्रेय स्त्रिवर्ग इति तु स्थिति ॥

आत्मसुख की अभिरुचि इत्यादि निकृष्ट प्रवृत्ति मैं शामिल है और इन् सब के अविरोध सै जो काम किया जाय वह ईश्वर के नियमानुसार समझा जाता है परन्तु किसी काम मैं दो वृत्तियों का विरोध किसी तरह न मिट सके तो वहां जरूरत के लायक आनुसंगिक प्रवृत्ति और निकृष्ट प्रवृत्ति को धर्म्मप्रवृत्ति और बुद्धि वृत्ति सै दबा देना चाहिये जैसें श्रीरामचन्द्रजी नें राज पाट छोड कर बन मैं जानें सै धर्म्म प्रवृत्ति को उत्तेजित किया था ■

"यह तो सवाल और जवाब और हुआ मैंनें आप सै मनुष्य का स्वभाव पहिचान्ने की राय पूछी थी आप बीच मे मन की वृत्तियों का हाल कहनें लगे " लाला मदनमोहन नें कहा

"इसी सै आगे चल कर मनुष्य के सभाव पहचान्ने की रीति मालूम होगी—"

"पर आप तो काम, सन्तानस्नेह आदि के अविरोध सै भक्ति और परोपकारादि करनें के लिये कहते हैं और शास्त्रों मैं काम क्रोध, लोभ, मोहादिक की बारम्बार निन्दा की है फिर आप का कहना ईश्वर के नियमानुसार कैसे हो सक्ता है ?" पंडित पुरुषोत्तमदास बीच मैं बोल उठे .

"मैं पहले कह चुका हूं कि धर्मप्रवृत्ति और निकृष्टप्रवृत्ति मैं विरोध हो वहा जरूरत के लायक धर्म्मप्रवृत्ति को प्रबल मान्ना चाहिये परन्तु धर्म्मप्रवृत्ति और बुद्धिप्रवृत्ति का बचाव किये पीछें भी निकृष्टप्रवृत्ति का त्याग किया जायगा तो ईश्वर की यह रचना सर्वथा निरर्थक ठैरेगी पर ईश्वर का कोई काम निरर्थक नहीं है मनुष्य निकृष्टप्रवृत्ति के बस होकर धर्म्मप्रवृत्ति और बुद्धि वृत्ति की रोक नहीं मान्ना इसी सै शास्त्र मैं

न्यार उस्का निषेध किया है परन्तु धर्म्मप्रवृत्ति और बुद्धि को मुख्य माने पीछे उचित रीति सै निकृष्टप्रवृत्ति का आचरण किया जाय तो गृहस्थ के लिये दूषित नहीं हो सक्ता हां उस्का नियम उल्लंघन कर किसी एक वृत्ति की प्रबलता सै और, और वृत्तियों के विपरीत आचरण कर कोई दुःख पावे तो इस्मैं किसी का बस नहीं सब सै मुख्य धर्म्मप्रवृत्ति है परन्तु उस्मैं भी जबतक और वृत्तियों के हक की रक्षा न की जायगी अनेक तरह के बिगाड होनें की संभावना बनी रहैगी."

"मुझ को आप की यह बात बिल्कुल अनोखी मालूम होती है भला परोपकारादि शुभ कामों का परिणाम कैसे बुरा हो सक्ता है ?" पंडित पुरुषोत्तमदास नें कहा.

"जैसें अन्न प्राणाधार है परन्तु अति भोजन सै रोग उत्पन्न होता है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "देखिये परोपकार की इच्छा ही अत्यन्त उपकारी है परन्तु हृद सै आगे बढनें पर वह भी फिजूलखर्ची समझी जायगी और अपनें कुटुंब परवारादि का सुख नष्ट हो जायगा जो आलसी अथवा अधर्म्मियों की सहायता की तो उस्सै संसार मैं आलस्य और पाप की वृद्धि होगी इसी तरह कुपात्र मैं भक्ति होनें सै लोक, परलोक दोनों नष्ट हो जायगे न्यायपरता यद्यपि सब वृत्तियों को समान रखनें वाली है परन्तु इस्की अधिकता सै भी मनुष्य के स्वभाव मैं मिलनसारी नहीं रहती, क्षमा नहीं रहती. जब बुद्धि वृत्ति के कारण किसी वस्तु के विचार मैं मन अत्यंत लग जायगा तो और जान्ने लायक पदार्थों की अज्ञानता बनी रहैगी मन को अत्यन्त परिश्रम होनें सै वह निर्बल हो जायगा. और शरीर,

का परिश्रम बिल्कुल न होनें के कारण शरीर भी बलहीन हो जायगा आनुसंगिक प्रवृत्ति के प्रबल होनें से जैसा संग होगा वैसा रंग तुरत लग जाया करेगा काम की प्रबलता सें समय, असमय और स्त्री परस्त्री आदि का कुछ विचार न रहैगा संतानस्नेह की वृत्ति बढ गई तो उस्के लिये आप अधर्म्म करने लगैगा, उस्को लाड, प्यार में रखकर उस्के लिये कुंदे कांटे बोयेगा संग्रह करनें की लालसा प्रबल हुई तो जोरी सै, चोरी सै, छल सै, खुशामद सै, कमानें की डिढ्या पडैगी और खानें, खर्चनें के नाम सै जान निकल जायगी जिघांसा वृत्ति प्रबल हुई तो छोटी, छोटी सी बातों पर अथवा खाली संदेह पर ही दूसरों का सत्यानाश करनें की इच्छा होगी और दूसरे को दंड देती बार आप दंड योग्य बन जायगा आत्म सुख की अभिरुचि हद सै आगे बढ गई तो मन को परिश्रम के कामों सै बचानें के लिये गानें बजानें की इच्छा होगी, अथवा तरह, तरह के खेल तमाशे हँसी चुहल की बातें, नशेबाजी, और खुशामद मैं मन लगैगा, द्रव्य के बल सै बिना धर्म्म किये धर्मात्मा बना चाहैंगे, दिन रात बनाव सिंगार में लगे रहैंगे अपनी मानसिक उन्नति करनें के बदले उन्नति करनें वालों सै द्वेष करैंगे, अपनी झूटी जिद निबाहनें मैं सब बडाई समझैंगे, अपनें फायदे की बातों मैं औरों के हक का कुछ विचार न करैंगे अपनें काम निकालनें के समय आप खुशामदी बन जायंगे, द्रव्य की चाहना हुई तो उचित उपायों सै पैदा करनें के बदले जुआ, बदनी, धरोहड, रसायन, या धरी ढकी दोलत ढूंढते फिरैंगे—"

"आप तो फिर वोही मन की वृत्तियो का झगड़ा ले बैठे. मेरे सवाल का जवाब दीजिये या हार मानिये" लाला मदनमोहन उखता कर कहनें लगे.

"जब आप पूरी बात ही न सुनें तो मैं क्या जवाब दू? मेरा मतलब इतनें विस्तार से यह था कि सब वृत्तियों का सबंध मिला कर अपना कर्तव्य कर्म निश्चय करना चाहिये किसी एक वृत्ति की प्रबलता से और वृत्तियों का विचार न किया जायगा तो उस्में बहुत नुक्सान होगा" लालाब्रजकिशोर कहनें लगे —

"वाल्मीकि रामायण मैं भरत से रामचन्द्र नें और महाभारत मैं नारदमुनि नें राजायुधिष्ठिर से ये प्रश्न किया है "धर्महि धन, अर्थहिधरम बाधक तो कहु नाहि? ॥ काम न करत बिगार कछु पुन इन दोउन माहि? ॥ १"

"विदुरप्रजागर मैं विदुरजी राजाधृतराष्ट्र से कहते हैं धर्म अर्थ अरु काम, यथा समय सेवत जु नर ॥ मिल तीनहु अभिराम, ताहि देत दुहु लोक सुख ॥ २"

"विष्णु पुराण मैं कहा है "धर्म विचारै प्रथम पुनि अर्थ, धर्म अविरोधि ॥ धर्म, अर्थ बाधा रहित सेवै काम सुसोधि ॥३"

"रघुवंश मैं अतिथि की प्रशंसा करतीवार महाकवि कालि-

---

१ कच्चिदर्थेन वा धर्मं धर्मेणार्थं मथापि वा ॥
उभौ वा प्रीतिसारेण न कामेन प्रबाधसे ॥

२ योधर्म मर्थं काम च यथा कालं निषेवते ॥
धर्मार्थ काम संयोग सोऽमुत्रेह च विन्दति ॥

३ बिबुद्ध चिन्तयेद्धर्म मर्थं चास्या विरोधिनम् ॥
धर्मार्थयो रबाधेन काम मुभयोरपि चिन्तयेत् ॥

दास नें कहा है "निरीनीति कायरपनो केवल बल पशुधर्म ॥ तासों उभय मिलाय इन सिद्ध किये सब कर्म्म ॥ ४ ॥

हीन निकम्मे होत हैं बली उपद्रववान ॥ तासों कीन्हें मित्र तिन मध्यम बल अनुमान ॥ ५"

"चाणक्य नें लिखा है " बहुत दान ते बलि बँध्यो मान मरो कुरराज ॥ लपट पन रावण हत्यो अति वर्जित सब काज ॥ ६"

"फ्रीजिया के मशहूर हकीम एपिक्टेट्स की सब नीति इन दो बचनों में समाई हुई है कि "धैर्य सै सहना" और "मध्यम भाव सै रहना" चाहिये.

"कुरान में कहा है कि "अय (लोगो)! खाओ, पीओ परन्तु फिज़ूलखर्ची न करो ॥ ७"

"वृन्द कहता है "कारज सोई सुधर है जो करिये समभाय ॥ अति बरसे बरसे बिना जों खेती कुम्हलाय ॥"

"अच्छा संसार में किसी मनुष्य का इसरीति पर पूरा बरताव भी आज तक हुआ है ?" बाबू बैजनाथ नें पूछा

"क्यों नहीं देखिये पाईसिस्ट्रेट्स नामी एथीनियन का नाम इसी कारण इतिहास में चमक रहा है यह उदार होनें पर

---

४ कातय कैवलानीति शौर्यश्वापदचेष्टितम् ॥
कत सिद्धिमेतावा सुभाध्यामन्वियेष स ॥

५ हीना वगुपकर्त्तृत्वि प्रवृत्तानि विक्रमेने ॥
तेन मध्यमशक्तिनी मित्राणि स्थापितान्यत

६ अतिदानाद्बलिर्बद्धो नष्टो मानात् सुयोधन ॥
विनष्टो रावणो लौल्या दतिसर्वत्र वर्जयेत्

७ कुलू वश्रबू व ला तुस्त्रिफू

फिज़ूलखर्च न था और किसी के साथ उपकार कर के प्रत्युपकार नहीं चाहता था बल्कि अपनी मानवरी की भी चाह न रखता था वह किसी दरिद्र के मरनें की खबर पाता तो उस्की क्रिया कर्म के लिये तत्काल अपनें पास सै खर्च भेज देता. किसी दरिद्र को विपद ग्रस्त देखता तो अपनें पास सै सहायता कर के उस्के दु:ख दूर करनें का उपाय करता पर कभी किसी मनुष्य को उस्की आवश्यकता सै अधिक देकर आलसी और निरुद्यमी नहीं होने देता था हा सब मनुष्यों की प्रकृति ऐसी नहीं हो सक्ती, बहुधा जिस मनुष्य के मन मैं जो वृत्ति प्रबल होती है वह उस्को खींच खांच कर अपनी ही राह पर ले जाती है जैसे एक मनुष्य को जंगल मै रुपों की थैली पड़ी पावै और उस्समय उस्के आस पास कोई न हो तब संग्रह करने की लालसा कहती है कि "इसे उठा लो" सन्तानस्नेह और आत्म सुख की अभिरुचि सम्मति देती है कि "इस काम सै हम को भी सहायता मिलेगी" न्याय परता कहती है कि "न अपनी प्रसन्नता सै यह किसी नें हम को दी न हमनें परिश्रम कर के यह किसी से पाई फिर इसपर हमारा क्या हक है? और इस्का लेना चोरी सै क्या कम है? इसे पर धन समझ कर छोड चलो" परोपकार की इच्छा कहती है कि "केवल इस्का छोड जाना उचित नही, जहा तक हो सके उचित रीति सै इस्को इस्के मालिक के पास पहुचानें का उपाय करो" अब इन वृत्तियों सै जिस वृत्ति के अनुसार मनुष्य काम करे वह उसी मेल मैं गिना जाता है यदि धर्म्मप्रवृत्ति प्रबल रही तो वह मनुष्य अच्छ समझा

 और निकृष्ट प्रवृत्ति प्रबल रही तो वह मनुष्य नीच गिना

छल, बल की प्रतिज्ञाओं का निवाहना आवश्यक नहीं है परंतु प्रतिज्ञा भंग करनें की अपेक्षा पहले विचार कर प्रतिज्ञा करना हर भात अच्छा है"

"ऐसी सावधानी तो केवल आप लोगों ही से हो सक्ती है जो दिन रात इन्हीं बातों के बारा विचार में लगे रहैं" लाला मदनमोहन नें हँसकर कहा

"मै ऐसा सावधान नहीं हूं परंतु हर काम के लिये साव-धानी की बहुत जरूरत है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "मैं अभी मन की वृत्तियों का हाल कहकर अच्छे बुरे मनुष्यों की पहचान बता चुका हूं परन्तु उन में से धर्म्मप्रवृत्ति की प्रबलता रखनें वाले अच्छे आदमी भी सावधानी बिना किसी काम के नहीं हैं क्योंकि वे बुरी बातों को अच्छा समझ कर धोका खा जाते हैं आपनें सुना होगा कि हीरा और कोयला दोनों में कार्बोन है और उन्के बन्ने की रसायनिक क्रिया भी एकसी है दोनों में कार्बोन रहता है केवल इतना अंतर है हीरे में निरा कार्बोन जमा रहता है और कोयले में उस्की कोई खास सूरत नहीं होती जो कार्बोन जमा हुआ, दृढ रहनें से बहुत कठोर, स्वच्छ, स्वेत और चमकदार होकर हीरा कहलाता है वही कार्बोन परमा-णुओं के फैंठ फुट और उल्ट पुल्ट होनें के कारण काला, खिर्खिरा, बोदा, और एक सूरत में रहकर कोयला कहलाता है! येही भेद अच्छे मनुष्यों में और अच्छी प्रकृतिवाले साव-धान मनुष्यों में है कोयला बहुतसी जहरीली और दुर्गंधित हवाओं को सोख लेता है अपने पास की चीजों को गलनें सडनें की हानि से बचाता है और अमोनिया इत्यादि के

"मैंनें केलीप्सके दृष्टांत मैं पिछले कामों सैं पहली बातों का भेद खोल कर उस्का निज स्वभाव बता दिया था इसी तरह समय पाकर हर आदमी के कामों सैं मन की वृत्तियों पर निगाह कर कै उस्की भलाई बुराई पहचान्ने की राह वतलाई तो इस्सैं पहली बातों सैं क्या विरोध हुआ ?" लाला ब्रजकिशोर पूछनें लगे

"अच्छा ! जब आपके निकट मनुष्य की परीक्षा बहुत दिनों मैं उस्के कामों सै हो सक्ती है तो पहले कैसा बरताव रक्खैं ? क्या उस्की परीक्षा न हो जब तक उस्को अपनें पास न आनें दें ?" लाला मदनमोहन नें पूछा

"नहीं, केवल संदेह सैं किसी को बुरा समझना, अथवा किसी का अपमान करना सर्वथा अनुचित है परन्तु किसी की झूटी बातों में आकर ठगा जाना भी मूर्खता सै खाली नहीं." लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "महाभारत मैं कहा है "मन न भरे पतियाए जिन पतियायेहु अति नाहिं ॥ भेदी सों भय होतही जर उपरे छिन माहिं ॥" * इस्कारण जब तक मनुष्य की परीक्षा न हो साधारण बातों में उस्के जाहिरी बरताव पर दृष्टि रखनी चाहिये परन्तु जोखों के काम मैं उस्सै सावधान रहना चाहिये उस्का दोष प्रगट होने पर उस्को छोडनें मैं संकोच न हो इस लिये अपना भेदी बना कर, उस्का अहसान उठाकर, अथवा किसी तरह की लिपावट और जंजाल सै उस्के वसवर्ती होकर अपनी स्वतन्त्रता न खोवे यद्यपि किसी, किसी के विचार मैं

छल, बल की प्रतिज्ञाओं का निबाहना आवश्यक नहीं है परंतु प्रतिज्ञा भग करनें की अपेक्षा पहले बिचार कर प्रतिज्ञा करना हर भांत अच्छा है"

"ऐसी सावधानी तो केवल आप लोगों ही से हो सक्ती है जो दिन रात इन्हीं बातों के बारा विचार में लगे रहें" लाला मदनमोहन नें हँसकर कहा

"मैं ऐसा सावधान नही हूं परन्तु हर काम के लिये साव-धानी की बहुत जरूरत है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "मैं अभी मन की वृत्तियों का हाल कहकर अच्छे बुरे मनुष्यों की पहचान बता चुका हूं परंतु उन में से धर्म्मप्रवृत्ति की प्रबलता रखनें वाले अच्छे आदमी भी सावधानी बिना किसी काम के नहीं हैं क्योंकि वे, बुरी बातों को अच्छा समझ कर धोखा खा जाते हैं आपनें सुना होगा कि हीरा और कोयला दोनों में कार्बोन है और उन्के बन्ने की रसायनिक क्रिया भी एकसी है दोनों में कार्बोन रहता है केवल इतना अंतर है हीरे में निरा कार्बोन जमा रहता है और कोयले में उस्की कोई खास सूरत नहीं होती जो कार्बोन जमा हुआ, दृढ रहनें से बहुत कठोर, स्वच्छ, स्वेत और चमकदार होकर हीरा कहलाता है वही कार्बोन परमा-णुओं के फैल फुट और उलट पुलट होनें के कारण काला, झिर्झिरा, पोदा, और एक सूरत में रहकर कोयला कहलाता है। येही भेद अच्छे मनुष्यों में और अच्छी प्रकृतिवाले साव धान मनुष्यों में है कोयला बहुतसी जहरीली और दुर्गंधित हवाओं को सोख लेता है अपनें पास की चीजों को गल्नें सड़नें की हानि सें बचाता है और अमोनिया इत्यादि के द्वारा

स्पति को फायदा पहुंचाता है इसी तरह अच्छे आदमी दुष्कर्मों से बचते हैं परन्तु सावधानी का योग मिले बिना हीरा की तरह क़ीमती नहीं हो सक्ते "

"मुझे तो यह बातें मन कल्पित मालूम होती हैं क्योंकि संसार के बरताव से इन्को कुछ विध नहीं मिल्ती संसार मैं धनवान कुपढ, दरिद्री पंडित, पापी सुखी, धर्मात्मा दुखी असावधान अधिकारी, सावधान आज्ञाकारी, भी देखनें मैं आते हैं" मास्टर शिभूदयाल नें कहा.

"इस्के कई कारण हैं" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "मैं पहले कह चुका हूं कि ईश्वर के नियमानुसार मनुष्य जिस विषय मैं भूल करता है बहुधा उस्को उसी विषय मैं दंड मिल्ता है. जो विद्वान दरिद्री मालूम होतें हैं वह अपनी विद्या मैं निपुण हैं परन्तु सांसारिक व्यवहार नहीं जान्ते अथवा जान बूझ कर उस्के अनुसार नहीं बरतते. इसी तरह जो कुपढ धनवान दिखाई देते हैं वह विद्या नहीं पढे परन्तु द्रव्योपार्जन करनें और उस्के रक्षा करनें की रीति जान्ते है बहुधा धनवान रोगी होते हैं और गरीब नैरोग्य रहते हैं इस्का यह कारण है कि धनवान द्रव्योपार्जन करनें की रीति जान्ते हैं परन्तु शरीर की रक्षा उचित रीति से नहीं करते और गरीबों की शरीर रक्षा उचित रीति से बन जाती है परन्तु वे धनवान होनें की रीति नहीं जान्ते इसी तरह जहां जिस बात की कसर होती है वहां उसी चीज की कमी दिखाई देती हैं परन्तु कहीं, कहीं प्रकृति के विपरीत पापी सुखी, धर्मात्मा दुखी, असावधान अधिकारी, सावधान आज्ञाकारी, दिखाई देते हैं इस्के दो कारण हैं. एक यह कि संसार

की वर्तमान दशा के साथ मनुष्य का बडा दृढ संबध रहता है इस लिये कभी, कभी औरों के हेतु उस्का विपरीत भाव हो जाता है जैसे मा बाप के विरसे से द्रव्य, अधिकार या ऋण रोगादि मिल्ते हैं, अथवा किसी और की धरी हुई दौलत किसी और के हाथ लगजानें से वह उस्का मालिक बन बैठता है, अथवा किसी अमीर की उदारता से कोई नालायक धनवान बन जाता है, अथवा किसी पास पडोसी की गफलत से अपना सामान जल जाता है, अथवा किस्सी दयालु विद्वान के हित-कारी उपदेशों से, कुपढ मनुष्य विद्या का लाभ ले सक्ते हैं, अथवा किसी बलवान लुटेरे की लूट मार से कोई गृहस्थ बेसबब धन और तन्दुरुस्ती खो बैठता है और ये सब बातें लोगों के हक में अनायास होती रहती है इस लिये इनको सब लोग प्रारब्ध फल मान्ते हैं परन्तु ऐसे प्रारब्धी लोगों में जिस्को कोई वस्तु अनायास मिल गई पर उस्के स्थिर रखनें के लिये उस्के लायक कोई वृत्ति अथवा सब वृत्तियों की सहायता स्वरूप सावधानी ईश्वर नें नहीं दी तो वह उस चीज को अन्त में अपनी स्वाभाविक वृत्तियों के बस होकर बहुधा खो बैठता है अथवा विपरीत वृत्तियों की प्रबलता से वह वस्तु अधिक हुई तो उस्में उन वृत्तियों का नुक्सान गुप्त रहकर समय पर ऐसे प्रगट होता है जैसे बचपन की बेमालूम चोट बडी अवस्था में शरीर को निर्बल पाकर अचानक कसक उठे, या शतरंज में किस्सी चाल की भूल का असर दसबीस चालें पीछे मालूम हो पर ईश्वर की कृपा से किसी को कोई वस्तु मिलती है तो ... साथ ही उस्के लायक बुद्धि भी मिल्जाती है या ईश्वर

सै किसी कायम मुकाम (प्रतिनिधि) वगैरे की सहायता पाकर उस्के ठीक, ठीक काम चलनें का बानक बन जाता है जिस्सै वह नियम निभे जाते हैं परन्तु ईश्वर के नियम मनुष्य सै किसी तरह नही टूट सक्ते"

"मनुष्य क्या मैं तो जान्ता हु ईश्वरसे भी नहीं टूट सक्ते" बाबू बैजनाथने कहा

"ऐसा विचारना अनुचित है ईश्वर को सब सामर्थ्य है देखो प्रकृतिका यह नियम सब जगह एकसा देखा जाता है कि गर्म होनें सै हरेक चीज फैलती है और ठंडी होनें सै सिमट जाती है यही नियम २१२ डिग्री तक जल के लिये भी है परन्तु जब जल बहुत ठंडा होकर ३२ डिग्री पर बर्फ बनें लगता है तो वह ठंड सै सिमटनें के बदले फैलता जाता है और हल्का होनें के कारण पानी के ऊपर तैरता रहता है इस मैं जल जंतुओंकी प्राणरक्षा के लिये यह साधारण नियम बदल दिया गया ऐसी ऐसी बातों सै उस्की अपरमित शक्तिका पूरा प्रमाण मिलता है उस नें मनुष्य के मानसिक भावादि सै ससार के बहुतसे कामोंका गुप्त सबंध इस तरह मिला रक्खा है कि जिस्के आभास मात्र सै अपना चित्त चकित होजाता है यद्यपि ईश्वर के ऐसे बहुतसे कामोंकी पूरी थाह मनुष्य की तुच्छ बुद्धि को नही मिली तथापि उस नें मनुष्य को बुद्धि दी है इस लिये यथाशक्ति उस्के नियमों का विचार करना, उन्के अनुसार बर्तना और विपरीत भावका कारण न। उस्को उचित है।सोमैं अपनी तुच्छ बुद्धि के अनुसार एक पहले कह चुकाहूं. दूसरा यह मालूम होताहै कि जैसे की छाह चन्द्रमा की चादनी मैं और चन्द्रमाकी चादनी

सूर्य्य की धूपमें मिलकर अपने आप उस्का तेज घटाने लगती है इसी तरह बहुत उन्नतिमें साधारण उन्नति अपने आप मिलजाती है जबतक दो मनुष्योंका अथवा दो देशों का बल बराबर रहता है कोई किसी को नहीं हरा सक्ता, परन्तु जब एक उन्नतिशाली होता है, आकर्षणशक्ति के नियमानुसार दूसरे की सम्रृद्धि अपने आप उस्की तरफ को खिचने लगती है देखिये जबतक हिन्दुस्थान में और देशों से बढकर मनुष्य के लिये वस्त्र और सब तरह के सुख की सामग्री तैयार होती थी, रक्षाके उपाय ठीक, ठीक बनरहे थे, हिन्दुस्थान का वैभव प्रतिदिन बढता जाता था परन्तु जबसे हिन्दुस्थान का एका टूटा और देशोंमें उन्नति हुई बाफ और बिजली आदि कलोंके द्वारा हिंदुस्थान की अपेक्षा थोडे खर्च थोडी महनत, और थोडे समय में सब काम होनें लगा हिन्दुस्थान की घटती के दिन आगए , जब तक हिन्दुस्थान इन बातों मै और-देशों की बराबर उन्नति न करेगा यह घाटा कभी पूरा न होगा. हिन्दुस्थान की भूमि में ईश्वर की कृपा से उन्नति करने के लायक सब सामान बहुतायतसे मोजूदहैं केवल नदियों के पानी ही से बहुत तरह की कलें चल सक्ती हैं परन्तु हाथ हिलाये बिना अपने आप ग्रास मुखमें नहीं जाता नई, नई युक्तियों का उपयोग किये बिना काम नहीं चलता पर इन बातों से मेरा यह मतलब हरगिज नहीं है कि पुरानी, पुरानी सब बातें बुरी और नई, नई सब बातें एकदम अच्छी समझ ली जायँ मैंने यह दृष्टान्त केवल इस विचार से दिया है कि अधिकार और व्यापारादि के —— में कोई, कोई युक्ति किसी समय कामकी होती है वह भी न्तर में पुरानी रीति भात पलटजाने पर अथवा किसी

की सूधी राह के निकल आनें पर अपने आप निरर्थक हो जाती है और संसार के सब कामों का संबन्ध परस्पर ऐसा मिला रहता है कि एक की उन्नति अवनतिका असर दूसरों पर तत्काल हो जाता है इस कारण एक सावधानी बिना मनकी वृत्तियों के ठीक होनें पर भी जमानें के पीछै रह जाने सैं कभी, कभी अपनें आप अवनति हो जाती है और इनही कारणो सैं कहीं, कहीं प्रकृति के विपरीत भाव दिखाई देता है"

"इस्सै तो यह बात निकली की हिन्दुस्थान मैं इस्समय कोई सावधान नही है" मुन्शी चुन्नीलालनें कहा

"नहीं यह बात हरगिज नहीं है, परतु सावधानीका फल प्रसगके अनुसार अलग, अलग होता है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "तुम अच्छी तरह विचार कर देखोगे तो मालूम हो जायगा कि हरेक समाजका मुखिया कोई निरा विद्वान् अथवा धनवान नही होता, बल्कि बहुधा सावधान मनुष्य होता है और जो खुशी बडे बड़े राजाओंको अपने बराबर वालों मैं प्रतिष्ठा लाभ सै होती है वही एक गरीब सै गरीब लकडहारे को भी अपनें बराबर वालोंमें इज्जत मिलने सै होती है और उन्नति का प्रसग हो तो वह धीरे, धीरे उन्नति भी करता जाता है परंतु इन दोनोंकी उन्नतिका फल बराबर नही होता क्योंकि दोनोंको उन्नति करने के साधन एकसे नहीं मिलते मनुष्य जिन कामोंमें सदैव लगा रहता है अथवा जिन बातोंका बारबार अनुभव करता है बहुधा उन्हीं कामोंमें उसकी बुद्धि दौडती है और किसी साव-धान मनुष्यकी बुद्धि किसी अनूठे काममैं दोडी भी तो उसै काममैं लानेंके लिये बहुत करके मौका नही मिलता देशकी

उन्नति अवनतिका आधार वहांके निवासियों की प्रकृति पर है. सब देशोंमें सावधान और असावधान, मनुष्य रहते हैं परन्तु जिस देशके बहुत मनुष्य सावधान और उद्योगी होते हैं उस्की उन्नति होती जाती है और जिस देशमें असावधान और कमकस् विशेष होते हैं उस्की अवनति होती जाती है हिन्दुस्थान में इस समय और देशोंकी अपेक्षा सच्चे सावधान बहुत कम हैं और जो हैं वे द्रव्यकी असंगति से, अथवा द्रव्यवानोंकी अज्ञानता से, अथवा उपयोगी पदार्थों की अप्राप्तिसे, अथवा नई, नई युक्तियोंके अनुभव करनें की कठिनाइयोंसें, निरर्थक से हो रहे हैं और उन्की सावधानता बनके फूलोंकी तरह कुछ उपयोग किये बिना वृथा नष्ट हो जाती है परन्तु हिन्दुस्थान में इस समय कोई सावधान न हो यह बात हरगिज़ नहीं है"

"मेरे जान तो आजकल हिन्दुस्थान में बराबर उन्नति होती जाती है जगह, जगह पढनें लिखनें की चर्चा सुनाई देती है, और लोग अपना हक पहचाननें लगे हैं" बाबू बैजनाथनें कहा

"इन सब बातों में बहुत सी स्वार्थपरता और बहुतसी अज्ञानता मिली हुई है परन्तु हकीकत में देशोन्नति बहुत थोडी है" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "जो लोग पढते हैं वे अपने बाप दादोंका रोजगार छोडकर केवल नौकरीके लिये पढते हैं और जो देशोन्नतिके हेतु चर्चा करते हैं उनका लक्ष अच्छा नहीं है वे थोथी बातों पर बहुत हल्ला मचाते हैं परन्तु विद्याकी उन्नति, कलोंके प्रचार, पृथ्वीके पैदावार बढाने की नई, नई युक्ति और लाभदायक व्यापारादि आवश्यक बातों पर जैसा चाहिये ध्यान नहीं देते जिस्सें अपने यहांका घाटा पूरा हो मैं पहले कह -

हूं कि जिन मनुष्यों की जो वृत्तियां प्रबल होती हैं वह उन्को खींच खांचकर उसी तरफ ले जाती हैं सो देख लीजिये कि हिन्दुस्थान में इतने दिन सै देशोन्नति की चर्चा हो रही है परन्तु अबतक कुछ उन्नति नहीं हुई और फ्रांस वालों को जर्मनीवालों से हारे अभी पूरे दस वर्स नहीं हुए जिस्मैं फ्रान्सवालों ने सच्ची सावधानी के कारण ऐसी उन्नति करली कि वे आज सब सुधरी हुई वलायतों सै आगै दिखाई देते हैं"।

"अच्छा! आपके निकट सावधानी की पहचान क्या है?" लाला मदनमोहन ने पूछा

"सुनिये" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "जिस तरह पांच, सात गोलियें बराबर, बराबर चुन्दी जाय और उन्मैं सै सिरे की एक गोली को हाथ सै धक्का देदिया जाय तो हाथ का बल, पृथ्वी की आकर्षणशक्ति, हवा आदि सब कार्य कारणों के ठीक, ठीक जान्नेसै आपस्मैं टकरा कर अन्त की गोली कितनी दूर लुढकैगी इस्का अन्दाज हो सक्ता है इसी तरह मनुष्यों की प्रकृति और पदार्थों की जुदी, जुदी शक्ति का परस्पर संबन्ध विचार कर दूर और पास की हरेक बात का ठीक परिणाम समझ लेना पूरी सावधानी है परन्तु इन बातों को जान्नें के लिये अभी बहुत से साधनों की कसर है और [illegible] यह [illegible] पा कर एक मनुष्य बहुत दूर [illegible] ठीक [illegible] सकै यह बात असंभव मा[illegible] तथापि [illegible]

वर्तमान प्रकाश पर न भूलना परिणाम पर दृष्टि करना सावधानी का साधारण काम है और इसी से सावधानता पहचानी जाती है"

"आपने अपनी सावधानता जताने के लिये इतना परिश्रम करके सावधानी का वर्णन किया इस लिये मैं आपका बहुत उपकार मान्ता हूं" लाला मदनमोहन ने हंस कर कहा.

"वाजबी बात कहने पर मुझको आप से ये तो उम्मेद हीं थी." लाला ब्रजकिशोरजे जबाब दिया, और लाला मदनमोहन से रुखसत होकर अपने मकान को रवाने हुए.

प्रकरण ८.

सबमैं हा (!)

"एकै साधे सब सधै सब साधे सब जाहि
जो गहि सींचे मूलकों फूलै फलै अघाहि
कबीर."

"लाला ब्रजकिशोर बातें बनानेमैं बडे होशयार हैं परन्तु आपनें भी इस्समय तो उन्को ऐसा मंत्र सुनाया कि वह बंद ही होगए" मुनशी चुन्नीलालनें कहा.

"मुझको तो उन्की लंबी चोडी बातोंपर लुकमानकी यह कहावत याद आती है जिस्मैं एक पहाडके भीतरसे बडी गड़गड़ाहट हुए पीछे छोटीसी मूसी निकली थी" मास्टर शिंभूदयालने कहा.

"उन्की बातचीतमैं एक बड़ा ऐब यह था कि वह बीचमैं दूसरे को बोलने का समय बहुत कम देते थे जिस्सै उन्की बात अपने आप फीकी मालूम होनें लगती थी" बाबू बैजनाथनें कहा.

"क्या करें ? वह वकील हैं और उन्की जीविका इन्हीं बातों सै है" हकीम अहमदहुसेन बोले

"उन् पर क्या है अपना, अपना काम बनानें मैं सब ही एकसे दिखाई देते हैं" पंडित पुरुषोत्तमदासनें कहा.

"देखिये सवेरे वह काचोंकी खरीदारी पर इतना झगडा करते थे परन्तु मन मैं क़ायल हो गए इस्सै इस्समय उन्का नाम भी न लिया" मुन्शी चुन्नीलाल नें याद दिलाई

"हां, अच्छी याद दिलाई, तुम तीसरे पहर मिस्टर ब्राइट के पास गये थे ? काचोंकी कीमत क्या ठैरी ?" लाला मदनमोहन नें शिभूदयाल सै पूछा

"आज मदरसे सै आनें मैं देर हो गई इस्सै नही जासका" मास्टर शिभूदयाल नें जवाब दिया परन्तु यह उस्की बनावट थी असल मैं मिस्टर ब्राइट नें लाला मदनमोहन का भेद जान्नें के लिये सौदा अटका रक्खा था

"मिस्टर रसलको दस हजार रुपे भेजनें हैं उन्का कुछ बदोबस्त हो गया" मुन्शी चुन्नीलाल नें पूछा-

"हा लाला जवाहरलाल सै कह दिया है परन्तु मास्टर साहब भी तो बदोबस्त करनें कहते थे इन्हों नें क्या किया ?" लाला मदनमोहन नें उलट कर पूछा.

"मैंने एक, दो जगह चर्चा की है पर अबतक किसी सै १५८ नहीं हुई" मास्टर शिभूदयाल नें जवाब दिया.

"खैर ! यह बातैं तो हुआ ही करैंगी मगर वह लखनऊ का तायफा शाम सैं हाजिर है उस्के वास्तै क्या हुक्म होता है ?" हकीम अहमदहुसैन नें पूछा

"अच्छा ! उस्को बुलवाओ पर उस्के गानें मैं समा न बँधा तो आप को वह शर्त पूरी करनी पडेगी" लाला मदन-मोहन नें मुस्कराकर कहा

इस्पर लखनऊ का तायफा मुजरे के लिये खडा हुआ और उस्नें मीठी आवाज सै तालसुर मिलाकर सोरठ गाना शुरू किया.

निस्सदेह उस्का गाना अच्छा था परन्तु पंडितजी अपनी अभिज्ञता जतानें के लिये बे समझे बूझे लट्टू हुए जाते थे समझनेंवालों का सिर मोके पर अपनें आप हिल जाता है परन्तु पंडितजी का सिर तो इस्समय मतवालों की तरह घूम रहा था मास्टर शिंभूदयाल को दुपहर का बदला लेनें के लिये यह समय सब सै अच्छा मिला उस्नें पंडितजी को आसामी बनानें के हेतु और लोगों सै इशारों मैं सलाह कर ली और पंडितजी का मन बढानें के लिये पहले सब मिलकर गानें की वाह २ करनें लगे अंत मैं एकनें कहा "क्या स्यामकल्याण है", दूसरेनें कहा "नहीं, ईमन है" तीसरे नें कहा "वाह झंझोटी है" चौथा बोला "देस है", इस्पर सुनारी लडाई होनें लगी

"पंडितजी को सब सै अधिक आनंद आरहा है इस लिये इन्सै पूछना चाहिये" लाला मदनमोहन नें झगडा मिटानें के मिस सै कहा

"हां, हां पंडितजी नें दिन मैं अपनी विद्या के बल सै बेदेखे भाले करेला बता दिया था सो अब इस प्रत्यक्ष बात के बतानें

मैं क्या संदेह है ?" मास्टर शिंभूदयाल नें शै दी और सब लोग पंडितजी के मुंह की तरफ देखनें लगे.

"शास्त्र सै कोई बात बाहर नहीं है जब हम सूर्य चन्द्रमा का ग्रहण पहले सै बता देते हैं तो पृथ्वी पर की कोई बात बतानी हम को क्या कठिन है ?" पंडित पुरुषोत्तमदास नें बात उडानें के वास्तै कहा

"तो आप रेल और तार का हाल भी अच्छी तरह जान्ते होंगे ?" बाबू बैजनाथ नें पूछा "मैं जान्ता हूं कि इन सब का प्रचार पहले हो चुका है क्योंकि "रेल पेल" और "एकतार" होनें की कहावत अपनें यहां बहुत दिन सै चली आती है" पंडितजी नें जवाब दिया.

"अच्छा महाराज! रेल शब्द का अर्थ क्या है ? और यह कैसे चल्ती है ?" मास्टर शिंभूदयाल नें पूछा.

"भला यह बात भी कुछ पूछनें के लायक है! जिस तरह पानी की रेल सब चीजों को बहा ले जाती है इसी तरह यह रेल भी सब चीजों को घसीट ले जाती है इस वास्तै इस्को लोग रेल कहते हैं और रेल धुंए के जोर सै चल्ती है यह बात तो छोटे, छोटे बच्चे भी जान्ते हैं †" पंडित पुरुषोत्तमदास नें जवाब दिया, और इसपर सब आपस मैं एक दूसरे की तरफ देखकर मुस्करानें लगे

"और तार ?" मुनशी चुन्नीलाल नें रही सही कलई खोलनें के वास्ते पूछा

---

† हिन्दीभाषा मैं भाफ और बिजली की शक्ति के वृत्तान्त न प्रकाशित होनें का यह है कि अब तक सर्व साधारण रेल और तार का भेद कुछ नहीं जान्ते.

"इस्मैं कुछ योग विद्या की कला मालूम होती है !" इतनी बात कहकर पंडित पुरषोत्तमदास चुप होते थे परंतु लोगों को मुस्कराते देखकर अपनी भूल सुधारनें के लियें झट पट बोल उठे कि "कदाचित् योग विद्या न होगी तो तार भीतर सें पोला होगा जिस्मैं होकर आवाज जाती होगी या उस्के भीतर चिट्ठी पहुचानें के लिये डोर बध रही होगी"

"क्यों दयालु! बैलून × कैसा होता है ?" बाबू बैजनाथ नें पूछा

"हम सब बातें जान्ते हैं परंतु तुम हमारी परीक्षा लेनें के वास्तै पूछते हो इस्सै हम कुछ नही बताते" पडितजी ने अपना पीछा छुडाने के लिये कहा परतु शिभूदयाल ने सब को जता कर झूटे छिपाव से इशारे में पडितजी को उडने की चीज बताई इस्पर पडितजी तत्काल बोल उठे "हम को परीक्षा देनें की क्या जरूरत है ? परंतु इस समय न बतावैंगे तो लोग बहाना समझैंगे. बैलून पतग को कहते हैं"

"वाह, वा, वाह ! पडितजी नें तो हद् कर दी इस कलि काल मैं ऐसी विद्या किसी को कहा आ सक्ती है !" मुनशी चुन्नीलाल नें कहा.

"हा पडितजी महाराज ! हुलक किस जानवर को कहते हैं ?" हकीम अहमदहुसैन ने नया नाम बना कर पूछा.

"एक चोपाया है" मुनशी चुन्नीलाल ने बहुत धीरी आवाज सें पडितजी को सुना कर शिभूदयाल के कान मैं कहा

"और बिना परों के उडता भी तो है" मास्टर शिभूदयाल ने उसी तरह चुन्नीलाल को जवाब दिया.

× गैस सें भरा हुआ उडनें का गुबारा

"चलो चुप रहो देखें पंडितजी क्या कहते हैं" चुन्नीलाल ने धीरे से कहा.

"जो तुम को हमारी परीक्षा ही लेनी है तो लो, सुनो हुलक एक चतुष्पद जंतु विशेष है और बिना परों के उड सक्ता है" पंडितजी नें सब को सुनाकर कहा.

"यह तो आप नें बहुत पहुंच कर कहा परन्तु उस्की शक्ल बताइये" हकीमजी हुज्जत करनें लगे.

"जो शक्ल ही देखनी हो तो यह रही" बाबू बैजनाथ नें मेज पर से एक छोटासा काच उठाकर पंडितजी के सामनें कर दिया

इस्पर सब लोग खिल खिलाकर हँस पडे.

"यह सब बातें तो आपनें बता दी परन्तु इस रागका नाम न ताया" लाला मदनमोहननें हँसी थमे पीछे कहा.

"इस्समय मेरा चित्त ठिकानें नहीं है मुझको क्षमा करो" पंडित पुरुषोत्तमदासनें हार मान कर कहा

"बस महाराज! आपको तो करेला ही करेला बताना आता है और कुछ भी नहीं आता" मास्टर शिंभूदयाल बोले

"नहीं साहब! पंडितजी अपनी विद्यामें एक ही हैं" "रेल और तारका हाल क्या ठीक, ठीक बताया है!" "और बैलूनमें तो आप ही उड चले!" "हुलककी सूरत भी तो आप ही नें दिखाई थी!" "और सब से बढकर राग का रस भी तो इनहीं नें लिया है" चारों तरफ लोग अपनी अपनी कहने लगे

पंडित जी इन लोगोंकी बातें सुन, सुनकर लज्जाके मारे धरतीमें गढे चले जाते थे पर कुछ बोल नहीं सक्ते थे

आखिर यह दिल्लगी पूरी हुई तब बाबू बैजनाथ लाला मदन-मोहनको अलग ले जा कर कहने लगे "मैंने सुना है कि लाला ब्रजकिशोर दो, चार आदमियों को पक्का कर के यहा नए सिर से कालिज स्थापन करने के लिये कुछ उद्योग कर रहे हैं यद्यपि सब लोगोंके निरुत्साह से ब्रजकिशोर के कृतकार्य होने की कुछ आशा नहीं है तथापि लोगों को देशोपकारी बातों में अपनी रुचि दिखानें और अग्रसर बनने के लिये आप इसमें जरूर शामिल हो जायँ अख बारोंमें धूम मैं मचादूगा यह समय कोरी बातोंमें नाम निकालने का आ गया है क्योंकि ब्रजकिशोर नामवरी नहीं चाहते इसी लिये मैं चलाकर आपको चेताने के लिये इस्समय आपके पास आया था"

"आप की बड़ी महरबानी हुई मै आपके उपकारोंका बदला किसी तरह नहीं दे सक्ता किसीने सच कहा है "हितहि परायो आपनो अहित अपनपोजाय ॥ बनकी ओषधि प्रिय लगत तनको दुख न सुहाय ॥ + ऐसा हितकारी उपदेश आपके बिना और कौन् दे सक्ता है" लाला मदनमोहनने बडी प्रीति से उन्का हाथ पकडकर कहा.

और इसी तरह अनेक प्रकारकी बातोंमें बहुत रात चली गई तब सब लोग रुखसत होकर अपने, अपने घर गए

+ परोपि हितवान् बन्धुर्बन्धु रप्यहित पर ।
अहितो देहजो व्याधि र्हितमारण्यमौषधम् ॥

"चलो चुप रहो देखें पंडितजी क्या कहते हैं" चुन्नीलाल नें धीरे से कहा

"जो तुम को हमारी परीक्षा ही लेनी है तो लो, सुनो हुलक एक चतुष्पद जंतु विशेष है और बिना पखों के उड सक्ता है" पंडितजी नें सब को सुनाकर कहा.

"यह तो आप नें बहुत पहुंच कर कहा परन्तु उस्की शक्ल बताइये" हकीमजी हुज्जत करनें लगे.

"जो शक्ल ही देखनी हो तो यह रही" बाबू बैजनाथ नें मेज पर से एक छोटासा काच उठाकर पंडितजी के सामनें कर दिया.

इसपर सब लोग खिल खिलाकर हँस पडे

"यह सब बातें तो आपनें बता दी परन्तु इस रागका नाम न बताया" लाला मदनमोहननें हँसी थमे पीछे कहा.

"इससमय मेरा चित्त ठिकानें नहीं है मुझको क्षमा करो" पंडित पुरुषोत्तमदासनें हार मान कर कहा

"बस महाराज! आपको तो करेला ही करेला बताना आता है और कुछ भी नहीं आता" मास्टर शिंभूदयाल बोले

"नहीं साहब! पंडितजी अपनी विद्यामें एक ही हैं" "रेल और तारका हाल क्या ठीक, ठीक बताया है!" "और बैलूनमें तो आप ही उड चले!" "हुलककी सूरत भी तो आप ही नें दिखाई थी!" "और सब से बढकर राग का रस भी तो इनहीं नें लिया है" चारों तरफ लोग अपनी अपनी कहने लगे

पंडित जी इन लोगोंकी बातें सुन, सुनकर लज्जाके मारे धरतीमें गढे चले जाते थे पर कुछ बोल नहीं सक्ते थे

आखिर यह दिल्लगी पूरी हुई तब बाबू बैजनाथ लाला मदन-मोहनको अलग ले जा कर कहने लगे "मैंने सुना है कि लाला ब्रजकिशोर दो, चार आदमियों को पक्का करके यहां नए सिर से कालिज स्थापन करने के लिये कुछ उद्योग कर रहे हैं यद्यपि सब लोगोंके निरुत्साह से ब्रजकिशोर के कृतकार्य होने की कुछ आशा नहीं है तथापि लोगों को देशोपकारी बातों में अपनी रुचि दिखाने और अग्रसर बन्नेके लिये आप इसमें जरूर शामिल हो जायँ अखबारोंमें धूम मैं मचादूंगा यह समय कोरी बातोंमें नाम निकालने-का आ गया है क्योंकि ब्रजकिशोर नामवरी नहीं चाहते इसी लिये मैं चलाकर आपको चेताने के लिये इससमय आपके पास आया था"

"आप की बडी मह्रबानी हुई मैं आपके उपकारोंका बदला किसी तरह नहीं दे सक्ता किसीने सच कहा है "हितहि पराये आपनो अहित अपनपोजाय ॥ बनकी ओषधि प्रिय लगत तनको दुख न सुहाय ॥ + ऐसा हितकारी उपदेश आपके बिना और कौन् दे सक्ता है" लाला मदनमोहनने बडी प्रीति से उन्का हाथ पकडकर कहा.

और इसी तरह अनेक प्रकारकी बातोंमें बहुत रात चली गई तब सब लोग रुखसत होकर अपने, अपने घर गए

+ परोपि हितवान् बन्धुर्बन्धुः व्यहित परः ।
अहितो देहजो व्याधि हितमारण्यमौषधम् ॥

"चलो चुप रहो देखें पंडितजी क्या कहते हैं" चुन्नीलाल नें धीरे से कहा

"जो तुम को हमारी परीक्षा ही लेनी है तो लो, सुनो हुल्क एक चतुष्पद जंतु विशेष है और बिना पंखों के उड सक्ता है" पंडितजी नें सब को सुनाकर कहा

"यह तो आप नें बहुत पहुंच कर कहा परंतु उस्की शक्ल बताइये" हकीमजी हुज्जत करने लगे.

"जो शक्ल ही देखनी हो तो यह रही" बाबू बैजनाथ ने मेज पर से एक छोटासा काच उठाकर पंडितजी के सामनें कर दिया.

इसपर सब लोग खिल खिलाकर हँस पडे.

"यह सब बातें तो आपनें बता दी परंतु इस रागका नाम न बताया" लाला मदनमोहननें हँसी थमे पीछे कहा.

"इससमय मेरा चित्त ठिकानें नहीं है मुझको क्षमा करो" पंडित पुरुषोत्तमदासनें हार मान कर कहा

"बस महाराज! आपको तो करेला ही करेला बताना आता है और कुछ भी नहीं आता" मास्टर शिंभूदयाल बोले.

"नहीं साहब! पंडितजी अपनी विद्यामें एक ही हैं" "रेल और तारका हाल क्या ठीक, ठीक बताया है!" "और बैलूनमें तो आप ही उड चले!" "हुल्ककी सूरत भी तो आप ही नें दिखाई थी!" "और सब से बढकर राग का रस भी तो इनही नें लिया है" चारों तरफ लोग अपनी अपनी कहने लगे

पंडित जी इन लोगोंकी बातें सुन, सुनकर लज्जाके मारें धरतीमें गडे चले जाते थे पर कुछ बोल नहीं सक्ते थे.

आखिर यह दिल्लगी पूरी हुई तब बाबू बैजनाथ लाला मदनमोहनको अलग ले जा कर कहने लगे "मैंने सुना है कि लाला ब्रजकिशोर दो, चार आदमियों को पक्का करके यहां नए सिर से कालिज स्थापन करने के लिये कुछ उद्योग कर रहे हैं यद्यपि सब लोगोंके निरुत्साह मैं ब्रजकिशोर के कृतकार्य होने की कुछ आशा नहीं है तथापि लोगों को देशोपकारी बातों में अपनी रुचि दिखाने और अग्रसर बनने के लिये आप इस्मैं जरूर शामिल हो जायँ अग नारोंमें धूम मैं मचादूंगा यह समय कोरी बातोंमें नाम निकालने का आ गया है क्योंकि ब्रजकिशोर नामवरी नहीं चाहते इसी लिये मैं चलाकर आपको चेताने के लिये इस्समय आपके पास आया था"

"आप की बडी महरबानी हुई मैं आपके उपकारोंका बदला किसी तरह नहीं दे सक्ता किसीनें सच कहा है "हितहि परगरो आपनो अहित अपनपोजाय ॥ मनको ओषधि प्रिय लगत मनको ऊप न सुहाय ॥ + ऐसा हितकारी उपदेश आपके बिना और कौन दे सक्ता है" लाला मदनमोहननें बडी प्रीति से उनका हाथ पकडकर कहा.

और इसी तरह अनेक प्रकारकी बातोंमें बहुत रात चली गई तब सब लोग रुखसत होकर अपने, अपने घर गए.

+ परोपि हितवान् बन्धुर्बन्धुरप्यहितः परः ।
अहितो देहजो व्याधिर्हितमारण्यमौषधम् ॥

प्रकरण ९.

सभासद.

धर्मशास्त्र पढ, वेद पढ दुर्जन सुधरे नाहिं
गो पय मीठो प्रकृति ते प्रकृति प्रबल सब माहिं †

हितोपदेशे,

इस्समय मदनमोहनके वृत्तान्त लिखनें से अवकाश पाकर हम थोडा सा हाल लाला मदनमोहनके सभासदोंका पाठक गण को विदित करते हैं इन्में सब सै पहले मुन्शी चुन्नीलाल स्मर्ण योग्य हैं

मुन्शी चुन्नीलाल प्रथम ब्रजकिशोर के यहां दस रुपे महीनें का नोकर था उन्हीनें इस्को कुछ, कुछ लिखना पढना सिखाया था, उन्हीकी संगति मैं रहने सै इसै कुछ सभाचातुरी आ गई थी, उन्हींके कारण मदनमोहन से इस्की जान पहचान हुई थी परन्तु इस्के स्वभाव मैं चालाकी ठेठ से थी इस्का मन लिखने पढनें मैं कम लगता था पर इस्ने बडी, बडी पुस्तकों मैं सैं कुछ, कुछ बातें ऐसी याद कर रक्खी थी कि नए आदमी के सामने झट बाध देता था स्वार्थ परता के सिवाय परोपकार की रुचि इस को न थी पर जवानी जमा खर्च करनें और कागज़ के घोडे

† न धर्मशास्त्रं पठतीति कारणं न चापि वेदाध्ययनं दुरात्मनः ।
स्वभाव एवात्र तथातिरिच्यते यथा प्रकृत्या मधुरं गवां पयः ॥

दौडाने में यह बड़ा धुरंधर था. इस्की प्रीति अपना प्रयोजन निकालने के लिये, और धर्म लोगों को ठगने के लिये था. यह औरों से विवाद करने में बडा चतुर था परन्तु इस्को अपना चाल चलन सुधारने की इच्छा न थी. यह मनुष्यों का सभाव भली भांत पहचान्ता था, परन्तु दूर दृष्टि से हरेक बात का परिणाम समझलेने की इस्को सामर्थ्य न थी जोड तोड की बातों में यह इयागो का अवतार था कणिक की नीति पर इस्का पूरा विश्वास था. किसी बडे काम का प्रबंध करने की इस्को शक्ति न थी परन्तु बातोंमें धरती और आकाश को एक कर देता था इस्के काम निकालने के ढंग दुनियासे निराले थे यह अपने मतलब की बात बहुधा ऐसे समय करता था जब दूसरा किसी और काम में लग रहा हो जिस्सै इस्की बात का अच्छी तरह विचार न कर सके अथवा यह काम की बात करती बार कुछ, कुछ साधारण बातों की ऐसी चर्चा छेड देता था जिस्सै दूसरे का मन बटा रहै अथवा कोई बात रुचि के विपरीत अंगिकार करानी होती थी तो यह अपनी बातोंमें हर तरह का बोझ इस ढबसै डाल देता था कि दूसरा इन्कार न करसके कभी, कभी यह अपनी बातों को इस युक्ति सै पुष्ट कर जाता कि सुन्ने वाले तत्काल इस्का कहना मान लेते जो काम यह अपने स्वार्थ के लिये करता उस्का प्रयोजन सब लोगों के आगे और ही बताता था और अपनी स्वार्थ परता छिपाने के लिये बडी आना कानी सै वह बात मंजूर करता था यह अपने वैरी की व्याजस्तुति इस ढब सै करता था कि लोग इस्का

इस्की ५

५

जिस्बात के सहसा प्रगट करने में कुछ खटका समझता उस्का प्रथम इशारा कर देता था और सुन्ने वाले के आग्रह पर रुक, रुक वह बात कहता था. जोखों की बात लोगों पर ढाल कर कहता था अथवा शिमूदयाल वगैरे के मुख सै कहवा दिया करता था और आप साधनें को तयार रहता था. तुच्छ बातों को बढा कर, बडी बातों को घटा कर, अपनी तरफ सै लौन मिर्च लगाकर, कभी प्रसन्न, कभी उदास, कभी क्रोधित, कभी शान्त होकर वह इस रीति सै बात कहता था कि जो कहता था उस्की मूर्ति बन जाता था इस्के मन में सग्रह करने की वृत्ति सब सै प्रबल थी.

मुनशी चुन्नीलाल ब्रजकिशोर के यहा नौकर था जब अपनी चालाकी सै बहुधा मुकद्मेंवालों को उलट पुलट समझा कर अपना हक ठैरा लिया करता था. स्टाम्प, तत्वाने वगैरे के हिसाब में उन लोगों को धोका दे दिया करता था बल्कि कभी, कभी प्रतिपक्षी सै मिल्कर किसी मुकद्मेंवाले का सबूत वगैरे भी गुप चुप उस्को दिखा दिया करता था ब्रजकिशोर ने ये भेद जान्ते ही पहले उसै समझाया फिर धमकाया जब इस्पर भी राह में न आया तो घर का मार्ग दिखाया. इस्नें पहले ही सै ब्रजकिशोर का मन देख कर लाला मदनमोहन के पास अपनी मिसल लगा ली थी हरकिशोर को अपना सहायक बना लिया था. लाला ब्रजकिशोर के पास सै अलग होते ही लाला मदन मोहन के पास रहनें लगा

मुनशी चुन्नीलाल ने लाला मदनमोहन के स्वभाव को अच्छी

प्रसन्नता, लोगों की वाह वाह, अपने शरीर का सुख, और थोडे खर्च में बहुत पैदा करने के लालच सिवाय किसी काम में रुपया खर्च करना अच्छा नहीं लगता था पर रुपया पैदा करने अथवा अपने पासकी दौलत को बचा रखने के ठीक रस्ते नहीं मालूम थे इस लिये मुन्शी चुन्नीलाल उन्को उन्की इच्छानुसार बातें बनाकर खूब लूटता था

मास्टर शिभूदयाल प्रथम लाला मदनमोहन को अंग्रेजी पढाने के लिये नोकर रक्खा गया था पर मदनमोहन का मन बचपन से पढने लिखने की अपेक्षा खेल कूद में अधिक लगता था शिभूदयाल ने लिखने पढ़ने की ताकीद की तो मदन-मोहन का मन बिगडने लगा मास्टर शिभूदयाल खाने, पहन्ने, देखने, सुन्ने, का रसिक था और लाला मदनमोहन के पिता अंग्रेजी नहीं पढ़े थे इस लिये मदनमोहन से मेल करने में इस्ने हर भांत अपना लाभ समझा पढाने लिखाने के बदले मदनमोहन बालक रहा जितने अलिफलैला में से सोते जागते का किस्सा, शेक्सपियर के नाटकों में से कोमेडी आफ एरर्ज़, ट्वेलफ्थनाइट, मचएडू एबउट नथिंग, बेनजान्सन का एवरीमैन इनहिज ह्यूमर, स्विफ्टके ड्रेपीअर्सलेटर्स, गुलिवर्स ट्रैवल्स, टेल आफ ए टब, आदि सुनाकर हँसाया करता था और इस युक्ति से उस्को, टोपी, रुमाल, घडी, छडी आदि का बहुधा फायदा हो जाता था जब मदनमोहन तरुण हुआ तो अलि-फलैला में से अबुलहसन, और शम्सुल्निहार का किस्सा, शेक्सपियर के नाटकों में से रोमयो ऐन्ड जुलियट आदि

कर आदि रस का रसिक बनाने लगा और आप भी उस्के साथ फूलके कीडे की तरह चैन करने लगा. परंतु यह सब बातें मदनमोहन के पिता के भय सै गुप्त होती थीं और गुप्त होती थीं इसी सै शिभूदयाल आदि का बहुत फायदा था वह पहाडी आदमियों की तरह टेढी राह मैं अच्छी तरह चल सक्ता था परंतु समभूमि पर चलने की उस्को आदत न थी जब चुन्नीलाल मदनमोहन के पास आया कुछ दिन इन दोनों की बडी खटपट रही परन्तु अंत मैं दोनों अपना हानि लाभ समझ कर गरम लोहे की तरह आपस मैं मिल गए शिभूदयाल को मदनमोहन नें सिफारश कर के मदरसे मैं नोकर रखा दिया था इस्कारण वह मदनमोहन की अहसानमंदी के बहानें सै हर वक्त वहां बना रहता था..

पंडित पुरषोत्तमदास भी बचपन सै लाला मदनमोहन के पास आते जाते थे इन्को लाला मदनमोहन के यहां सै इन्के स्वरूपानुरूप अच्छा लाभ हो जाता था परंतु इन्के मन मैं औरों की डाह बडी प्रबल थी लोगों को धनवान, प्रतापवान, विद्वान, बुद्धिमान, सुन्दर, तरुण, सुखी और कृतिकार्य देखकर इन्हैं बडा खेद होता था वह यशवान मनुष्यों सै सदा शत्रुता रखते थे औरों को अपने सुख लाभ का उद्योग करते देखकर कुढ जाते थे अपने दुखिया चित्त को धैर्य देनें के लिये अच्छे, अच्छे मनुष्यों के छोटे, छोटे दोष ढूंढा करते थे किसी के यश मैं किसी तरह का कलंक लग जाने सै यह बडे प्रसन्न होते थे. पापी दुर्योधन की तरह सब संसार के विनाश होनें मैं

से भोजन न करनें और नुक्सान के डरसै व्यापार न करनें, की कहावत यहा प्रत्यक्ष दिपाई देती थी. इस्को सब कामों मैं पुरानी चाल पसद थी

बाबू बैजनाथ ईस्ट इन्डियन रेलवे कपनी मैं नौकर था अंग्रेजी अच्छी पढा था. यूरुप के सुधरे हुए विचारों को जान्ता था परन्तु स्वार्थपरताने इस्के सब गुण ढक रक्खे थे विद्या थी पर उस्के अनुसार व्यवहार न था "हाथी के दात खाने के और दिखानें के और थे" इस्के निर्वाह लायक इस्समय बहुत अच्छा प्रबध हो रहा था परन्तु एक सतोप बिना इस्के जीको जरा भी सुख न था. लाभसैं लोभ बढता जाता था और समुद्र की तरह इस्की तृष्णा अपार थी. लोभसै धर्म्म, अधर्म्मका कुछ विचार न [illegible]ता था बचपन मैं इस्को इल्मसुसल्लिम, तहरीरउक्लेदस और [illegible]मुकाबले वग़ैरे के सीखने मैं परीक्षा के भयसै बहुत परिश्रम [illegible]रना पडा था परन्तु इस्के मनमैं धर्म्म प्रवृत्तिके उत्तेजित करने [illegible] लिये धर्म्म नीति आदिके असरकारक उपदेश अथवा देशो[illegible]तिके हेतु बाफ और बिजली आदिकी शक्ति, नई, नई कलोंका [illegible]द, और पृथ्वी की पैदावार बढानें के हेतु खेती बाडी की [illegible]वेद्या, अथवा स्वछंदतासैं अपना निर्वाह करनेके लिये देशदशाके अनुसार जीविका करने की रीति और अर्थ विद्या, तंदुरस्ती के [illegible]लिये देह रक्षाके तत्व द्रव्यादिकी रक्षा और राजाज्ञा भगके अपराधसैं बचनेंको राजाज्ञाका तात्पर्य, अथवा, बडे और बराबर वालोंसैं यथायोग्य व्यवहार करने के लिये शिष्टाचार का उपदेश बहुत ही कम मिला था बल्कि नही मिलनेके बराबर था इस्के

कई वर्ष,तो केवल,अंग्रेजी भाषा सीखने में विद्याके द्वारपर खडे, खडे बीत गये जो अंग्रेजों की तरह ये शिक्षा अपनी देश भाषा में होती अथवा काम, कामकी पुस्तकों का अपनी भाषामें अनुवाद हो गया होता तो कितना समय व्यर्थ नष्ट होने से बचता ? और कितने अधिक लोग उस्से लाभ उठाते ? परंतु प्रचलित रीतिके अनुसार इसको सच्ची हितकारी शिक्षा नहीं हुई थी जिसपर अभिमान इतना बढ गया था कि बडे बुडे मूर्ख मालूम होने लगे और उन्के कामसे ग्लानि हो गई पर इस विद्वत्ता में भी सिवाय नोकरीके और कहीं ठिकाना न था भाग्यबलसे मदरसा छोडते ही रेलवे की नोकरी मिलगई पर बाबूसाहब को इतने पर संतोष न हुआ वह और किसी धुर्दकी ताक झाक में लगरहे थे इतने में लाला मदनमोहनसे मुलाकात होगई एक बार लालामदनमोहन आगरे लखनऊकी सैर को गए उससमय इसने उन्की स्टेशन पर बडी खातिर की थी उसी समयसे इन्की जानपहचान हुई वह दूसरे तीसरे दिन लाला मदनमोहनके यहा जाता था और समा बाध कर तरह, तरह की बाते सुनाया करता था इस्की बातोंसे मदनमोहन के चित्त पर ऐसा असर हुआ कि वह इस्को सब से अधिक चतुर और विश्वासी समझने लगा इस्ने अपनी युक्ति से चुन्नीलाल वगैरे को भी अपना बना रक्खा था पर अपने मतलब से निश्चिन्त न था यह सब बाते जानबूझकर भी धृतराष्ट्रकी तरह लोभसे अपने मनको नहीं रोक सक्ता था.

खेद है कि लाला व्रजकिशोर और हरकिशोर आदिके वृत्तान्त लिखने का अवकाश इस्समय नहो रहा अच्छा फिर किसी समय विदित किया जायगा पाठकगण धैर्य रक्खें

प्रकरण १०†

प्रबध (इन्तजाम)

कारजको अनुबंध लख अर उत्तरफल चाहि
पुन अपनी सामर्थ्य लख करै कि न करै ताहि †

विदुरप्रजागरे

सवेरे ही लाला मदनमोहन हवा खोरी के लिये कपडे पहन थे मुन्शी चुन्नीलाल और मास्टर शिभूदयाल आ चुके थे

"आजकल मैं हमको एकवार हाकिमों के पास जाना है" लाला मदनमोहन नें कहा.

"ठीक है, आपको म्युनिसिपेलीटी के मेम्बर बनानें की रिपोर्ट हुई थी उसकी मजूरी भी आगई होगी" मुन्शी चुन्नीलाल बोले

"मजूरी मैं क्या संदेह है ? ऐसे लायक आदमी सरकार को कहा मिलेंगे ?" मास्टर शिभूदयालनें कहा

"अभी तो (खुशामदमैं) बहुत कसर है ! साइराक्यूस के समासद डायोनिस्यसका थूक चाट जाते थे और अमृतसैं अधिक मीठा बताते थे" लाला ब्रजकिशोरने कमरे मैं आते, आते कहा.

"यों हर काम मैं दोष निकालनें की तो जुदी बात है पर

† अनुबन्ध च संप्रेक्ष्य विपाकं चैवकर्मणाम् ॥
उत्थान मात्मन श्चैव धीर कुर्वीत वा नवा ॥

आप ही बताइये इसमें मैंनें झूट क्या कहा ? मास्टर शिंभूदयाल पूछनें लगे

"लाला साहब ने म्युनिसिपेलीटी का सालान आमद खर्च अच्छी तरह समझ लिया होगा ? आमदनी बढाने के रस्ते अच्छी तरह बिचार लिये होंगे ? शहर की सफ़ाई के लिये अच्छे, अच्छे उपाय सोच लिये होंगे ? लाला ब्रजकिशोर नें पूछा

"नहीं, इन बातो में सें अभी तो किसी बात पर दृष्टि नहीं पहुचाई गई परन्तु इन बातों का क्या है ? ये सब बातें तो काम करते, करते अपने आप मालूम हो जायँगी" लाला मदनमोहन ने जबाब दिया

"अच्छा आप अपने घर का काम तो इतने दिनसें करते हो उसके नफे नुक्सान और राह बाट सें तो आप अच्छी तरह वाकिफ हो गये होंगे ? लाला ब्रजकिशोर नें पूछा

इससमय लाला मदनमोहन नावाकिफ नहीं बना चाहते थे परन्तु वाकिफकार भी नहीं बन सक्ते थे इस लिये कुछ जबाब न देसके

"अब आप घर की तरह वहा भी औरों के भरोसे रहे तो काम कैसे चलेगा ? और सब बातों सें वाकिफ होने का विचार किया तो वाकिफ होंगे जितने आप के बदले काम कौन करेगा ?" लाला ब्रजकिशोर ने पूछा

"अच्छा मजूरी आवेगी जितने में इन बातों सें कुछ, कुछ वाकिफ हो लूगा" लाला मदनमोहन ने कहा

"क्या इन बातों सें पहले आप को अपने घर के कामों सें वाकिफ होने की जरूरत नहीं है ? जब आप अपने घर का

प्रबन्ध उचित रीति से कर लेंगे तो प्रबन्ध करने की रीति आ जायगी और हरेक काम का प्रबन्ध अच्छी तरह कर सकेंगे. परन्तु जब तक प्रबंध करने की रीति न आवेगी कोई काम अच्छी तरह न हो सकेगा ?" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे. "हाकमों की प्रसन्नता पर आधार रख, अपने मुख से अधिकार मागने में क्या शोभा है ? और अधिकार लिये पीछे वह काम अच्छी तरह पूरा न हो सके तो कैसी हँसी की बात है ? और अनुभव हुए बिना कोई काम किस तरह भली भांति हो सक्ता है ? महाभारत में कौरवों के गौ घेरने पर विराट का राजकुमार उत्तर बडे अभिमान से उन्को जीतनें की बातैं बनाता था परंतु कौरवों की सेना देखते ही रथ छोडकर उघाडे पांव भाग निकला ! इसी तरह सादी अपने अनुभव से लिखते हैं कि "एकबार मैं बलख से शामवालों के साथ सफर को चला मार्ग भयकर था इस लिये एक बलवान पुरुष को साथ ले लिया वह शस्त्रों से सजा रहता था और उस्की प्रत्यचा को दस आदमी भी नहीं चढा सक्ते थे वह बडे, बड़े वृक्षों को हाथ से उखाड डाल्ता परंतु उसने कभी शत्रु से युद्ध नहीं किया था. एक दिन मैं और वो आपस में बातैं करते चले जाते थे उससमय दो साधारण मनुष्य एक टीले के पीछे से निकल आए और हम को लूटने लगे उन्में एक के पास लाठी थी और दूसरे के हाथ में एक पत्थर था परतु उन्को देखते ही उस बलवान पुरुष के हाथ पाव फूल गए ! तीर कमान छूट पडी !

अपने सब वस्त्र शस्त्र देकर उन्से [illegible] ना

" देखने में आता है कि अ [illegible]

पर किसी, किसी साहूकार का दिवाला निकल जाता है और रुपे का माल दो, दो आने को विकता फिरता है"

"परंतु काम किये बिना अनुभव कैसे हो सक्ता है ?" मुन्शी चुन्नीलाल ने पूछा

"सावधान मनुष्य काम करने से पहले औरों की दशा देखकर हरेक बात का अनुभव अच्छी तरह कर सक्ता है और अनायास कोई नया काम भी उस्को करना पढे तो साधारण भाव से प्रबन्ध करने की रीति जानकर और और बातों के अनुभव का लाभ लेने से काम करते, करते वह मनुष्य उस विषय में अपना अनुभव अच्छी तरह बढा सक्ता है सो मैं प्रथम कह चुका हू कि लाला साहब प्रबन्ध करने की रीति जान जायगे तो हरेक काम का प्रबन्ध अच्छी तरह कर सकैंगे" लाला ब्रजकिशोर ने जबाब दिया

"आप के निकट प्रबन्ध करने की रीति क्या है ?" लाला मदनमोहन ने पूछा

"हरेक कामके प्रबन्ध करने की रीति जुदी, जुदी हैं परतु मैं साधारण रीति से सब का तत्व आप को सुनाता हू" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "सावधानी की सहायता लेकर हरेक बात का परिणाम पहले से सोच लेना, और उन सब पर एक बार दृष्टि कर के जितना अवकाश हो उतने ही में सब बातों का ब्योंत बना लेना निरर्थक चीजों को काम में लाने की युक्ति सोचते रहना और जो, जो बाते आगे होने वाली मालूम हों उन्का प्रबन्ध पहले ही से दूर दृष्टि पहुचा कर धीरे, धीरे इस भात करते जाना कि समय पर सब काम तयार मिलें,

वात का समय न चूकनें पावै, कोई काम उलट पलट न होने पावै, [अपने आस पास वालों की उन्नति सै आप पीछे न रहे किसी नोकर का अधिकार स्वतन्त्रता की हद सैं, आगे न बढनें पाव, किसी पर ज़ुल्म न होनें पावै, किसी के हक़ मैं अन्तर न आने पावै, सब बातों की सम्हाल उचित समय पर होती रहे, परतु ये सब काम इन्की वारीकियों पर दृष्टि रखने सै कोई नहीं कर सक्ता बल्कि इस रीति सै बहुत महनत करनें पर भी छोटे, छोटे कामों मैं इतना समय जाता रहता है कि उस्के बदले बहुत सै ज़रूरी काम अधूरे रह जाते हैं और तत्काल प्रवन्ध बिगड जाता है इस लिये बुद्धिमान मनुष्य को चाहिये कि काम बाट कर उन्पर योग्य आदमी मुकर्रर कर दे और उन्की कारवाई पर आप दृष्टि रक्खे पहले अन्दाज सै पिछला परिणाम मिलाकर भूल सुधारता जाय एक साथ बहुत काम न छेडे, काम करनें के समय डटे रहैं आमद सै थोडा खर्च हो और कुपात्र को कुछ न दिया जाय महाराज रामचन्द्रजी भरत सै पूछते हैं "आमद पूरी होत है ? खर्च अल्पदरसाय ॥ देतन-कबहु कुपात्रकों कहहु भरत समुझाय" *

इसी तरह इन्तजाम के कामोंमैं करीआयत सै बडा बिगाड होता है हजरत सादी कहते हैं "जिस्से तैनें दास्ती की उस्सै नोंकरीकी आशा न रख" †।

---

* आयस्ते विपुल कच्चित्कच्चिदल्पतरो व्यय ॥
अपात्रेषु न ते कच्चित्कोषो गच्छति राघव ॥

† बू दस्ती दोस्ती कर दो मसके ज़िम्मत मदार।

"लाला ब्रजकिशोर साहब आज कल की उन्नति के साथी हैं तथापि पुरानी चालके अनुसार रोचक और भयानक बातोंको अपनी कहन में इस तरह मिला देते हैं कि किसीको बिल्कुल खबर नहीं होनें पाती" मास्टर शिंभूदयालने कहा.

"नहीं मैं जो कुछ कहता हूं अपनी तुच्छ बुद्धि के अनुसार यथार्थ कहता हूं" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "चीनके शाहन-शाह होपनने एकबार अपने मन्त्री टिचोसै पूछा कि "राज्य के वास्ते सब सै अधिक भयकर पदार्थ क्या है ?" मन्त्रीनें कहा "मूर्तिके भीतरका मूसा" शहनशाहने कहा "समझाकर कह" मन्त्री बोला "अपने यहां काठकी पोली मूर्ति बनाई जाती है, और ऊपर सै रंग दी जाती है अब दैवयोग सै कोई मूसा उस्के भीतर चला गया तो मूर्ति खंडित होनें के भयसे उस्का कुछ नहीं कर सक्ते. इसी तरह हरेक राज्य में बहुधा ऐसे मनुष्य होते हैं जो किसी तरह की योग्यता और गुण बिना केवल राजा की कृपा के सहारे सै सब कामों में दखल देकर सत्यानास किया करते हैं परंतु राजा के डर सै लोग उन्का कुछ नहीं कर सक्ते" हां जो राजा आप प्रबंध करने की रीत जान्ते हैं वह उनलोगों के चक्कर सै खूबसूरती के साथ बचे रहते हैं जैसे ईरान के बादशाह आरटाजरकसीस सें एक बार उस्के किसी कृपापात्रने किसी अनुचित काम करने के लिये सवाल किया बादशाहने पूछा कि तुझको इस्सै क्या लाभ होगा ?" कृपा पात्रने बता दिया तब बादशाहने उतनी रकम उसको अपने खजाने सै दिवा दी और कहा कि 'ये रुपे ले इन्के देनें सै मेरा कुछ नहीं घटता परंतु तैंने जो अनुचित सवाल किया था उस्के पूरा करने सै मैं निस्सदेह

बात का समय न चूकनें पावै, कोई काम उलट पलट न होनें पावै, [अपने आस पास वालों की उन्नति सै आप पीछे न रहे किसी नोकर का अधिकार स्वतन्त्रता की हद सैं आगे न वढने पाव, किसी पर जुल्म न होनें पावै, किसी के हक में अन्तर न आनें पावै, सव वातों की सम्हाल उचित समय पर होती रहे, परतु ये सव काम इन्की वारीकियों पर द्रृष्टि रखने सै कोई नहीं कर सक्ता वल्कि इस रीति सैं वहुत महनत करने पर भी छोटे, छोटे कामों मैं इतना समय जाता रहता है कि उस्के वदले वहुत सै ज़रूरी काम अधूरे रह जाते हैं और तत्काल प्रवन्ध विगड जाता है इस लिये वुद्धिमान मनुष्य को चाहिये कि काम वाट कर उन्पर योग्य आदमी मुकर्रर कर दे और उन्की कारखाई पर आप द्रृष्टि रक्खे पहले अन्दाज सै पिछला परिणाम मिलाकर भूल सुधारता जाय एक साथ वहुत काम न छेडे, काम करने के समय वटे रहैं आमद से थोडा खर्च हो और कुपात्र को कुछ न दिया जाय महाराज रामचन्द्रजी भरत सै पूछते हैं "आमद पूरी होत है? खर्च अल्पदरसाय॥ देतन कवहु कुपात्रकों कहहु भरत समुझाय" *

इसी तरह इन्तजाम के कामोंमें रूरीआयत सै वडा विगाड होता है हजरत सादी कहते हैं "जिस्सै तैनें दोस्ती की उस्सै नौंकरीकी आशा न रख" †

---

* आयस्ते विपुल कच्चित्कच्चिदल्पतरो व्यय ॥
अपात्रे पु न ते कच्चित्कोषो गच्छति राघव ॥

† घु दकरारे दोस्ती कर दी तवक्के ख़िदमत मदार ।

नया आदमी शामिल हो जाय तो कुछ दिन के अभ्यास से अच्छी तरह वाकिफ हो सक्ता है, चार बराबरवालों से बात चीत करने में अपने विचार खत सुधर जाते हैं और आज काल के सुधरे विचार जानें का सीधा रस्ता तो इस्से बढ कर और कोई नहीं है" मुन्शी चुन्नीलाल ने कहा.

"जिस तरह समुद्र में नोका चलाने वाले केवट समुद्र की गहराई नहीं जान सक्ते इसी तरह ससार में साधारण रीति से मिलने भेटने वाले इधर उधर की निरर्थक बातों से कुछ फायदा नहीं उठा सक्ते बाहर की सज धज और ज़ाहिर की बनावट से सच्ची सज्जनताका कुछ सबध नहीं है वह तो दरिद्री धनवान और मूर्ख विद्वान का भेद भाव छोड कर सदा मन की {निर्मलता के साथ रहती है और जिस जगह रहती है उस्को सदा प्रकाशित रखती है' लाला व्रजकिशोर ने कहा

"तो क्या लोगों के साथ आदर सत्कार से मिलना जुलना और उन्का यथोचित शिष्टाचार करना सज्जनता नहीं है ?" लाला मदनमोहन नें पूछा

"सच्ची सज्जनता मन के सग है" लाला व्रजकिशोर कहनें लगे कुछ दिन हुए जब अपनें गवर्नर जनरल मारक्किस आफ रिपन साहब नें अजमेर के मेयो कालिज में बहुत से राजकुमारों के आगे कहा था कि "‡ ‡ हम चाहे जितना प्रयत्न करें परंतु तुम्हारी भविष्यत अवस्था तुम्हारे हाथ है अपनी योग्यता बढानी, योग्यता की क़दर करनी, सत्कर्मो में प्रवृत्त रहना, असत्कर्मो से ग्लानि करना तुम यहा सीख जाओगे तो निस्सन्देह सरकार में प्रतिष्ठा, और प्रजा की प्रीति लाभ कर सकोगे तुममें से

बहुत कुछ खो बैठता" उचित प्रबंध में जरासा अंतर आनेसे कैसा भयंकर परिणाम होता है इसपर विचार करिये कि इसी दिल्लीके तख्त बाबत दाराशिकोह और औरंगज़ेब के बीच युद्ध हुआ उस्समय औरंगज़ेब की पराजय में कुछ संदेह न था परंतु दाराशिकोह हाथीसे उतरते ही मानों तख्त से उतर गया मालिक का हाथी ख़ाली देखते ही सब सेना तत्काल भाग निकली."

"महाराज! बग्गी तैयार है." नोकरने आकर रिपोर्ट की.

"अच्छा चलिये रस्ते में बतलाते चलेंगे" लाला ब्रजकिशोर- ने कहा.

निदान सब लोग बग्गी में बैठकर रवाने हुए.

प्रकरण ११.

सज्जनता

सज्जनता न मिलै किये जतन करो किन कोय
ज्यों कर फार निहारिये लोचन बडो न होय

वृन्द.

"आप भी कहा की बात कहां मिलाने लगे! म्यूनिसिपे- लीटीके मेम्बर होने से और इन्तजाम की इन बातों से क्या संबंध है? म्यूनिसिपेलीटी के कार्य निर्वाह का बोझ एक आदमी के सिर नहीं है उसमें बहुत से मेम्बर होते हैं और उन्में कोई

नया आदमी शामिल हो जाय तो कुछ दिन के अभ्यास में अच्छी तरह वाकिफ हो सक्ता है, चार बराबरवालों में बात चीत करने में अपने विचार स्वत सुधर जाते हैं और आज काल के सुधरे विचार जान्ने का सीधा रस्ता तो इस्में बढ़ कर और कोई नहीं है" मुन्शी चुन्नीलाल ने कहा.

"जिस तरह समुद्र में नौका चलाने वाले केवट समुद्र की गहराई नहीं जान सक्ते इसी तरह संसार में साधारण रीति से मिलने भेटने वाले इधर उधर की निरर्थक बातों में कुछ फायदा नहीं उठा सक्ते बाहर की सज धज और आदर की बनावट में सच्ची सज्जनता का कुछ संबंध नहीं है वह तो अमीरी [illegible] और मूर्ख विद्वान का भेद भाव छोड़ कर सदा मन की निर्मलता के साथ रहती है और जिस जगह रहती है उसको सदा प्रकाशित रखती है" लाला ब्रजकिशोर ने कहा.

"तो क्या लोगों के साथ आदर सत्कार से मिलना जुलना और उन्का यथोचित शिष्टाचार करना सज्जनता नहीं है?" लाला मदनमोहन नें पूछा

"सच्ची सज्जनता मन के संग है" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "कुछ दिन हुए जब अपने गवर्नर जनरल मार्किस आफ् रिपन [illegible] ने अजमेर के मेयो कालिज में बहुत से राजकुमारों के आगे [illegible] था कि "‡ ‡ हम चाहे जितना यत्न करें परन्तु [illegible] भविष्यत अवस्था तुम्हारे हाथ है, [illegible] योग्यता की कदर करनी, सच्चाई [illegible] से ग्लानि [illegible] में प्रतिष्ठा, [illegible]

बहुत से राजकुमारोंको बड़ी जोखोंके काम उठानें पड़ेंगे और तुम्हारी कर्तव्यता पर हजारों लाखों मनुष्योंके सुख दु:ख का बल्कि जीने मरनें का आधार रहैगा. तुम बड़े कुलीन हो और बड़े विभववान हो. फ्रैंच भाषा मैं एक कहावत है कि जो अपनें सत्कुल का अभिमान रखता हो उस्को उचित है कि अपनें सत्कर्मों सै अपना बचन प्रमाणिक कर दे. तुम जान्ते हो कि अंग्रेज लोग बड़े, बड़े खितावों के बदले सज्जन (Gentleman) जैसे साधारण शब्दोंको अधिक प्रिय समझते हैं इस शब्द का साधारण अर्थ ये है कि मर्यादाशील, नम्र और सुधरे विचार का मनुष्य हो, निस्सन्देह ये गुण यहाके बहुत सै अमीरों मैं हैं परन्तु इसके अर्थपर अच्छी तरह दृष्टि की जाय तो इस्का आशय बहुत गम्भीर मालूम देता है जिस मनुष्य की मर्यादा, नम्रता और सुधरे विचार केवल लोगों को दिखानें के लिये न हों बल्कि मन सै हो अथवा जो सच्चा प्रतिष्ठित, सच्चा बीर और पक्षपात रहित न्याय परायण हो, जो अपनें शरीर को सुख देनें के लिये नहीं बल्कि धर्म से औरों के हक़ मैं अपना कर्तव्य सम्पादन करने के लिये जीता हो, अथवा जिस्का आशय अच्छा हो जो दुष्कर्मों सै सदैव बचता हो वह सच्चा सज्जन है * *"

"निस्सन्देह सज्जनता का यह कल्पित चित्र अति विचित्र है परन्तु ऐसा मनुष्य पृथ्वी पर तो कभी कोई काहेको उत्पन्न हुआ होगा" मास्टर शिभूदयालने कहा,

हमलोग जहां खड़े हों वहां से चारों तरफ़ को थोड़ी थोड़ी दूर पर पृथ्वी और आकाश मिले दिखाई देते हैं परन्तु हक़ीक़त मैं वह नहीं मिले इसी तरह संसार के सब लोग अपनी, अपनी

प्रकृतिके अनुसार और मनुष्यों के स्वभाव का अनुमान करते हैं परंतु दर असल उन्में बडा अंतर है" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "देखो —

'एथेन्स का निवासी आरिस्टाईडीज एक वार दो मनुष्यों का इन्साफ करने बैठा तब उन्में से एकने कहा कि "प्रतिपक्षीने आप को भी प्रथम बहुत दुख दिया है आरिस्टाईडीजने जवाब दिया कि "मित्र! इस्ने तुमको दुख दिया हो वह बताओ क्योंकि इस्समय में अपना नहीं, तुम्हारा इन्साफ करता हूं"

"प्रीवरनमके लोगोंने रूमके विपरीत बलवा उठाया उस्समय रूमकी सेना ने वहांके मुखिया लोगोंको पकडकर राज सभामें हाजिर किया उस्समय प्लाटीनियस नामी सभासदने एक बंधुए से पूछा कि "तुम्हारे लिये कौन्सी सजा मुनासिब है?" बंधुएने जवाब दिया कि "जो अपनी स्वतंत्रता चाहने वालोंके वास्ते मुनासिब हो" इस उत्तरसे और सभासद अप्रसन्न हुए पर प्लाटीनियस प्रसन्न हुआ और बोला "अच्छा! राजसभा तुम्हारा अपराध क्षमा कर दे तो तुम कैसा बरताव रक्खो?" "जैसा हमारे साथ राजसभा रक्खे" बंधुआ कहने लगा "जो राजसभा हमसे मानपूर्वक मेल करेगी तो हम सदा ताबेदार बने रहेंगे परंतु हमारे साथ अन्याय और अपमान से बरताव होगा तो हमारी वफादारी पर सर्वथा विश्वास न रखना" इस जवाब से और सभासद अधिक चिड गए और कहने लगे कि "इस्में राजसभा को धमकी दी गई है" प्लाटीनियसने समझाया कि इस्में धमकी कुछ नहीं दी गई यह एक स्वतंत्र मनुष्य का

जवाब है" निदान प्लाटीनियस के समझानें से राजसभा का मन फिर गया और उस्नें उन्हें क़ैदसै छोड दिया.

"मेसीडोनके पादशाह पीरसनें रूमके कैदियोंको छोडा उस्समय फेब्रीशियस नामी एक रूमी सरदारको एकान्तमैं लेजा कर कहा "मैं जान्ता हूं कि तुम जैसा वीर, गुणवान स्वतंत्र, और सच्चा मनुष्य रूमके राजभरमैं दूसरा नहीं है जिस्पर तुम ऐसे दरिद्री बनरहे हो यह बडे खेदकी बात है! सच्ची योग्यताकी कदर करना राजाओं का प्रथम कर्तव्य है इस लिये मैं तुमको तुम्हारी पदवी के लायक धनवान बनाया चाहता हूं परंतु मैं इस्मैं तुम्हारे ऊपर कुछ उपकार नहीं करता अथवा इसके बदले तुमसे कोई अनुचित काम नही लिया चाहता मेरी केवल इतनी प्रार्थना है कि उचित रीतिसे अपना कर्तव्य सम्पादन किये पीछै न्याय पूर्वक मेरी सहायता होसके सो करना" फेब्रीशियसने उत्तर दिया कि "निस्सदेहमैं धनवान नही हूं मैं एक छोटे से मकानमैं रहता हूं और जमीन का एक छोटासा क़िता मेरे पास है. परंतु ये मेरी जरूरत के लिये बहुत है और जरूरत सै ज्याद लेकर मुझको क्या करना है? मेरे सुखमैं किसी तरह का अंतर नही आता मेरी इज्जत और धनवानों सै बढकर है, मेरी नेकी मेरा धन है, मैं चाहता तो अबतक बहुतसी दौलत इकट्ठी करलेता परन्तु दौलतकी अपेक्षा मुझको अपनी इज्जत प्यारी है इस लिये तुम अपनी दौलत अपनें पास रक्खो और मेरी इज्जत मेरे पास रहनें दो"

"नोशेरवा अपनी सेना का सेनापति आप था एक बार उस्की मंजूरी सै राजान्चीने तनख्वाह बांटने के वास्तै सब सेना

को हथियार वद होकर हाज़िर होने का हुक्म दिया पर नोशेरवा इस हुक्मसे हाज़िर न हुआ इस लिये खजान्चीने क्रोध करके सब सेनाको उलटा फेर दिया और दूसरी वार भी ऐसा ही हुआ तब तीसरी वार खजान्चीने डौंडी पिटवाकर नोशेरवाको हाज़िर होने का हुक्म दिया नोशेरवा उस हुक्म के अनुसार हाज़िर हुआ पर तु उस्की हथियार वदी ठीक न थी खजान्चीने पूछा "तुम्हारे धनुषकी फाल्तू प्रत्यचा कहा है?" नोशेरवाने कहा "महलोंमें भूल आया" खजान्चीने कहा "अछा! अभी जा कर ले आओ" इस्पर नोशेरवा महलोंमें जाकर प्रत्यचा ले आया तब सब की तनख़्वाह वटी पर तु नोशेरवा खजान्चीके इस अपक्षपात काम से ऐसा प्रसन्न हुआ कि उसे निहाल कर दिया इस प्रकार सच्ची सज्जनता के इतिहासमें सैकडों दृष्टात मिल्ते हैं पर तु समुद्रमें गोता लगाए विना मोती नहीं मिलता"

"आप वार, वार सच्ची सज्जनता कहते हैं सो क्या सज्जनता सज्जनतामें भी कुछ भेद भाव है?" लाला मदनमोहनने पूछा

"हा सज्जनता के दो भेद हैं एक स्वभाविक होती है जिस का वर्णन मैं अव तक करता चला आया हू दूसरी ऊपरसे दिखाने की होती है जो बहुधा वडे आदमियों मैं और उन्के पास रहने-वालों मैं पाई जाती है वडे आदमियों के लिये यह सज्जनता सुन्दर वस्त्रों के समान समझनी चाहिए जिन्को वह वाहर जाती वार पहन जाते हैं और घर मैं आते ही उतार देते हैं स्वाभाविक सज्जनता स्वच्छ स्वर्ण के अनुसार है जिस्को चाहे जैसे तपाओ, गलाओ परन्तु उसमें कुछ अंतर नहीं आता ऊपर से वालों की सज्जनता गिल्टी के समान है जो रगड लगते

जाती है ऊपर के दिखाने वाले लोग अपना निज स्वभाव छिपाकर सज्जन बन्नें के लिये सच्चे सज्जनों के स्वभाव की नकल करते हैं परन्तु परीक्षा के समय उन्की कलई तत्काल खुल जाती उन्के मन मैं विकास के बदले संकुचित भाव, सादगी के बदले बनावट, धर्म्म प्रवृत्ति के बदले स्वार्थ परता और धैर्य के बदले घबराट इत्यादि प्रगट दिखनें लगते हैं उन्का सब सद्भाव अपनें किसी गूढ प्रयोजन के लिये हुआ करता है परन्तु उन्के मन को सच्चा सुख इस्सै सर्वथा नहीं मिल सक्ता."

प्रकरण १२.

सुखदु:ख

आत्मा को आधार अर साक्षी आत्मा जान
निज आत्मा को भूलहू करिये नहिं अपमान *

मनुस्मृति

"सुख दु:ख तो बहुधा आदमी की मानसिक वृत्तियों और शरीर की शक्ति के आधीन है. एक बात सै एक मनुष्य को अत्यंत दु:ख और क्लेश होता है वही बात दूसरे को खेल तमाशे की सी लगती है इस लिये सुख दु:ख होने का कोई नियम नहीं होता" मुन्शी चुन्नीलाल ने कहा

* आत्मैव ह्यात्मन: साक्षी गति रात्मा तथात्मन:
मावमंस्था: स्वमात्मानं नृणां साक्षिणमुत्तमम् ॥

"मेरे जान तो मनुष्य जिस बात को मन से चाहता है उस्का पूरा होना ही सुख का कारण है और उस्में हर्ज पड़ने ही से दुःख होता है" मास्टर शिंभूदयाल ने कहा

"तो अनेक बार आदमी अनुचित काम कर के दुःख में फँस जाता है और अपने किये पर पछताता है इस्का क्या कारण? असल बात यह है कि जिस्समय मनुष्य के मन में जो वृत्ति प्रबल होती है वह उसी के अनुसार काम किया चाहता है और दूर-अंदेशी की सब बातों को सहसा भूल जाता है परन्तु जब वो वेग घटता है तबियत ठिकाने आती है तो वो अपनी भूल का पछतावा करता है और न्याय वृत्ति प्रबल हुई तो सब के साम्हने अपनी भूल अंगीकार कर के उस्के सुधारने का उद्योग करता है पर निकृष्ट प्रवृत्ति प्रबल हुई तो छल कर के उस्को छिपाया चाहता है अथवा अपनी भूल दूसरे के सिर रक्खा चाहता है और एक अपराध छिपाने के लिये दूसरा अपराध करता है परन्तु अनुचित कर्म्म से आत्मग्लानि और उचित कर्म्म से आत्मप्रसाद हुए बिना सर्वथा नहीं रहता" लाला व्रजकिशोर बोले

"अपना मन मारने से किसी को खुशी क्यों कर हो सकी है?" लाला मदनमोहन आश्चर्य से कहने लगे

"सब लोग चित्तका सन्तोष और सच्चा आनन्द प्राप्त करने के लिये अनेक प्रकार के उपाय करते हैं परन्तु सब वृत्तियों के अविरोध से धर्म्मप्रवृत्ति के अनुसार चलनेवालों को जो सुख मिलता है वह और किसी तरह नहीं मिल सक्ता" लाला व्रजकिशोर कहने लगे "मनुस्मृति में लिखा है" "जाको मन अरु वचन शुचि विधि सों रक्षित होय॥ सो न दुर्लभ वेदान्त

जाती है ऊपर के दिखानें वाले लोग अपना निज सभाव छिपाकर सज्जन वन्नें के लिये सच्चे सज्जनों के सभाव की नकल करते हैं परन्तु परीक्षा के समय उन्की कलई तत्काल खुल जाती उन्के मन में विकास के वदले सकुचित भाव, सादगी के वदले वनावट, धर्म्म प्रवृत्ति के वदले स्वार्थ परता और धैर्य के वदले घवराट इत्यादि प्रगट दिखनें लगते हैं उन्का सव सद्भाव अपनें किसी गूढ प्रयोजन के लिये हुआ करता है परन्तु उन्के मन को सच्चा सुख इस्सै सर्वथा नही मिल सक्ता "

प्रकरण १२.

सुखदु ख +

आत्मा को आधार अर साक्षी आत्मा जान
निज आत्मा को भूलहू करिये नहिं अपमान *

मनुस्मृति

"सुख दु ख तो वहुधा आदमी की मानसिक वृत्तियों और शरीर की शक्ति के आधीन है. एक वात सै एक मनुष्य को अत्यंत दु ख और क्लेश होता है वही वात दूसरे को खेल तमाशे की सी लगती है इस लिये सुख दु:ख होने का कोई नियम नहीं मालूम होता" मुनशी चुन्नीलाल ने कहा

---

* आत्मैव ह्यात्मन साक्षी गति रात्मा तथात्मन
मावमंस्था स्वमात्मानं नृणां साक्षिण मुत्तमम् ॥

है उस्के छूनें की किस को सामर्थ्य है? आपनें सुना होगा कि —

"महाराज रामचन्द्रजी को राजतिलक के समय चौदह वर्ष का वनवास हुआ उस्समय उन्के मुखपर उदासी के वदले प्रसन्नता चमकनें लगी.

"इगलेन्ड की गद्दी बाबत एलीजावेथ और मेरी के बीच विवाद हो रहा था उस्समय लेडी जेनग्रे को उस्के पिता, पति और स्वसुरने गद्दीपर विठाना चाहा परन्तु उस्को राज का लोभ न था वह होशियार, विद्वान और धर्मात्मा स्त्री थी उस्ने उन्को समझाया कि 'मेरी निस्वत मेरी और एलिजावेथ का ज्याद हक है और इस काम से तरह, तरहके बखेडे उठने की सभावना है मैं अपनी वर्तमान अवस्था मे बहुत प्रसन्न हू इस लिये मुझको क्षमा करो" पर अत मै उस्को अपनी मरजी के उपरांत बडों की आज्ञा से राजगद्दी पर बैठना पडा परन्तु दस दिन नही बीते इतनेंमें मेरी ने पकड कर उसे कैद किया और उस के पति समेत फासी का हुकम दिया वह फासी के पास पहुची उस्समय उस्नें अपने पति को लटकते देख कर तत्काल अपनी याद्दाश्त में यह तीन वचन लाटिन, यूनानी, और अंग्रेजी में क्रम से लिखे कि "मनुष्य जाति के न्याय ने मेरी देह को सजा दी परंतु ईश्वर मेरे ऊपर कृपा करेगा और मुझ को किसी पाप के बदले यह सजा मिली होगी तो अज्ञान अवस्था के कारण मेरे अपराध क्षमा किये जायेंगे और मैं आशा रखती हूं कि सर्व शक्तिमान परमेश्वर और भविष्यत काल के मनुष्य मुझ पर दृष्टि रखेंगे" उस्ने फासी पर चढ़कर सब लोगों के

जगमैं पावत सोय + जो लोग ईश्वर के बांधे हुए नियमों के अनुसार सदा सत्कर्म्म करते रहते हैं उन्को आत्मप्रसाद का सच्चा सुख मिल्ता है उन्का मन विकसित पुष्पों के समान सदा प्रफुल्लित रहता है जो लोग कह सक्ते हैं कि हम अपनी सामर्थ्य भर ईश्वर के नियमों का प्रतिपालन करते हैं, यथा शक्ति परोपकार करते हैं, सब लोगों के साथ अनीति छोडकर नीति पूर्वक सुहृद्भाव रखते हैं, अतिशय भक्ति और विश्वास पूर्वक ईश्वर की शरणागति हो रहे हैं वही सच्चे सुखी हैं वह अपनें निर्मल चरित्रों को बारम्बार याद कर के परम सन्तोष पाते हैं. यद्यपि उन्का सत्कर्म्म मनुष्य मात्र न जान्ते हों इसी तरह किसी के मुख सै एक बार भी अपनें सुयश सुन्नें की सम्भावना न हो, तथापि वह अपनें कर्तव्य काम मैं अपनें को कृतकार्य देखकर अद्वितीय सुख पाते हैं उचित रीति से निष्प्रयोजन होकर किसी दुखिया का दुःख मिटानें की, किसी मूर्ख को ज्ञानोंपदेश करनें की एक, एक बात याद आनें सै उन्को जो सुख मिल्ता है वह किसी को बडे से बडा राज मिलनें पर भी नहीं मिल सक्ता उन्का मन पक्षपात रहित होकर सबके हितसाधन मैं लगा रहता है इस्कारण वह सब के प्यारे होनें चाहिये परन्तु मूर्ख जलन सैं, हटसैं स्वार्थपरता सै अथवा उन्का भाव जानें बिना उन्सै द्वेषकरें, उन्का बिगाड़ करना चाहें तो क्या कर सक्ते हैं ! उन्का सर्वस्व नष्ट होजाय तो भी वह नहीं घबराते, उन्के हृदय मैं जो धर्म्म का खजाना इकट्ठा हो रहा

+ यस्य वाङ्मनसी शुद्धे सम्यग्गुप्ते च सर्वदा ॥
स वै सर्वमवाप्नोति वेदान्तोपगतम्फलम् ॥

है उस्के छूनें की किस को सामर्थ्य है ? आपनें सुना होगा कि —

"महाराज रामचन्द्रजी को राजतिलक के समय चौदह वर्ष का वनवास हुआ उस्समय उन्के मुखपर उदासी के बदले प्रसन्नता चमकनें लगी

"इंगलेन्ड की गद्दी वाबत एलीजावेथ और मेरी के बीच विवाद हो रहा था उस्समय लेडी जेनग्रे को उस्के पिता, पति और स्वसुरने गद्दीपर बिठाना चाहा परन्तु उस्को राज का लोभ न था वह होशियार, विद्वान और धर्मात्मा स्त्री थी उस्ने उन्को समझाया कि "मेरी निस्बत मेरी और एलिजावेथ का ज्याद हक है और इस काम से तरह, तरहके बखेडे उठने की संभावना है मैं अपनी वर्तमान अवस्था मे बहुत प्रसन्न हू इस लिये मुझको क्षमा करो" पर अंत में उस्को अपनी मरजी के उपरांत बडों की आज्ञा से राजगद्दी पर बैठना पडा परन्तु दस दिन नहीं बीते इतनेंमें मेरी ने पकड कर उसै कैद किया और उस के पति समेत फांसी का हुक्म दिया वह फांसी के पास पहुची उस्समय उस्नें अपने पति को लटकते देख कर तत्काल अपनी याददाश्त में यह तीन वचन लाटिन, यूनानी, और अंग्रेजी में क्रम से लिखे कि "मनुष्य जाति के न्याय ने मेरी देह को सजा दी परन्तु ईश्वर मेरे ऊपर कृपा करेगा और मुझ को किसी पाप के बदले यह सजा मिली होगी तो अज्ञान अवस्था के कारण मेरे अपराध क्षमा किये जायेंगे और मैं आशा रखती हू कि सर्व शक्तिमान परमेश्वर और भविष्यत काल के मनुष्य मुझ पर कृपा दृष्टि रक्खेंगे" [illegible]नी पर चढकर सब लोगों के

वक्तृता की जिस्मैं अपने मरनें के लिये अपने सिवाय किसी को दोष न दिया वह बोली कि "इङ्गलेन्ड की गद्दी पर बैठनें के वास्तै उद्योग करने का दोष मुझ पर कोई नही लगावेगा परन्तु इतना दोष अवश्य लगावेगा कि "वह औरों के कहनेसैं गद्दीपर क्यों बैठी ? उस्नें जो भूल की वह लोभ के कारण नही, केवल बडों के आज्ञावर्ती होकर की थी " सो यह करना मेरा फर्ज था, परन्तु किसी तरह करो जिस्के साथ मैंनें अनुचित व्यवहार किया उस्के साथ मैं प्रसन्नतासे अपनें प्राण देनें को तयार हूं" यह कहकर उस्नें बडे धैर्यसे अपनी जान दी "

"दुखिया अपनें मन को धैर्य देनेके लिये चाहे जैसे समझा करैं परन्तु साधारण रीति तो यह है कि उचित उपायसै हो अथवा अनुचित उपायसै हो जो अपना काम निकाल्लेता है वही सुखी समझा जाता है आप विचार कर देखैंगे तो माल्म हो जायगा कि आज भूमडल मैं जितने अमीर और रईस दिखाई देते हैं उन्के बडों मैं सैं बहुतों ने अनुचित कर्म करकै यह वैभव पाया होगा "मुन्शी चुन्नीलाल नें कहा .

" कभी अनुचित कर्म करनेसै सच्चा सुख नही मिलता प्रथम तो मनु महाराज और लोमश ऋषि एक स्वरसै कहते हैं कि "कर अधर्म पहले बढत सुख पावत बहु भांत ॥ शत्रुन जय कर आप पुन मूलसहित विनसात ॥ *" फिर जिस तरह सत्कर्म का फल

* अधर्मेणैधते तावत्ततो भद्राणि पश्यति ॥
ततः सपत्नान् जयति समूलस्तु विनश्यति ॥
महत्य धर्मेण मरक्ततो भद्राणि पश्यति ॥
ततः सपत्नान् जयति समूलस्तु विनश्यति ॥

आत्म प्रसाद है इसी तरह दुष्कर्म का फल आत्मग्लानि, आंतरिक दु ख अथवा पछतावा हुए बिना सर्वथा नही रहता मनुस्मृति मैं लिखा है " पापी समुझत पाप कर काहु देख्यो नाहिं ॥ पैंसुर अरुनिज आतमा निस दिन देखत जाहिं ॥ +" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "जिस्समय कोई निकृष्टप्रवृत्ति अत्यंत प्रबल होकर धर्म्मप्रवृत्ति की रोक नहीं मान्ती उस्समय हम उस्की इच्छा पूरी कर नेंके लिये पाप करते हैं परन्तु उस काम सै निवृत्ति होतेही हमारे मन मैं अत्यत ग्लानि होती है हमारी आत्मा हम को धिक्कारती है और लोक परलोक के भयसै चित्त विकलरहता है जिस्नें अपनें अधर्म्म सै किसीका सुख हर लिया है अथवा स्वार्थपरता के वसवर्ती होकर उपकार के बदले अपकार किया है, अथवा छल बलसै किसी का धर्म्म भ्रष्ट कर दिया है, जो अपनें मन मैं समझता है कि मुझसै फलानें का सत्यानाश हुआ, अथवा मेरे कारण फलानेंके निर्मल कुल मैं कलक लगा, अथवा संसार मैं दु ख के सोते इतनें अधिक हुए मैं उत्पन्न न हुआ होता तो पृथ्वी पर इतना पाप कम होता, केवल इन बातों की याद उस्का हृदय विदीर्ण करनेंके लिये बहुत है और जो मनुष्य ऐसी अवस्था मैं भी अपनें मनका समाधान रख सकै उस्को मैं वज्रहृदय समझता हू जिस्नें किसी निर्धन मनुष्य के साथ छल अथवा विश्वासघात कर के उस्की अत्यत दुर्दशा की है उस्की आत्म ग्लानि और आतरिक दु खका वरणन् कौन करसक्ता है ? अनेक प्रकार के भोगविलास करनेंवालों को भी समय पाकर अवश्य

+ मन्यन्ते वै पापकृतो न कश्चित्पश्यतीति न ॥
तांस्तु देवा प्रपश्यन्ति स्वस्यैवान्तर पूरुष

पछतावा होता है . जो लोग कुछ काल श्रद्धा और यत्न पूर्वक धर्म्मका आनंद लेकर इस दलदल में फस्ते हैं उन्सै आत्मग्लानि और आतरिक दाहका क्लेश पूछना चाहिये "

" टरकी का खलीफा मौन्तासर अपनें बापको मरवाकर उस्के महल का कीमती सामान देख रहा था उस्समय एक उम्दा तस्वीर पर उसकी दृष्टि पडी जिस में एक सुशोभित तरुण पुरुष घोडे पर सवार था और रत्नजटित "ताज" उस्के सिरपर शोभायमान था. उस्के आसपास फारसी में बहुतसी इबारत लिखी थी खलीफा नें एक मुनशी को बुला कर वह इबारत पढवाई उसैं लिखा था कि "मैं सीरोज खुसरोका बेटा हू मैंनें अपनें बापका ताज लेनेंके वास्तै उसे मरवाडाला पर उस्के पीछे वह ताज मैं सिर्फ छ महीने अपनें सिर पर रखसका " यह बात सुन्तेही खलीफा मौन्तासर के दिल पर चोट लगी और अपनें आतरिक दु:खसै वह केवल तीन दिन राजकर कै मर गया. "

" यह आत्मग्लानि अथवा आतरिक क्लेश किसी नए पंछी को जाल मैं फसनैसै भलेही होताहो परानें खिलाडियों को तो इस्की खबर भी नहीं होती ससार मैं इस्समय ऐसे बहुत लोग मोजूद हैं जो दूसरे के प्राण लेकर हाथ भी नही धोते " मास्टर शिभूदयाल नें कहा.

" यह बात आपनें दुरुस्त कही निस्सदेह जो लोग लगातार दुष्कर्म करते चलेजाते हैं और एक अपराधी से बदला लेनेंके लिये आप अपराधी बनजाते हैं अथवा एक दोष छिपानें के लिये दूसरा दूषितकर्म करनें लगते हैं या जिन्को केवल अपनें मतलब सैं गर्ज़ है उन्के मन सैं धीरे, धीरे धर्म की अरुचि उठती जाती

है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "जैसे दुर्गंध में रहनें वाले मनुष्यों के मस्तक में दुर्गंध समा जाती है तब उन्को वह दुर्गंध नहीं मालूम होती अथवा बार बार तरवार को पत्थर पर मारने सैं उन्की धार अपने आप भोंटी होती जाती है इसी तरह ऐसे मनुष्यों के मन सैं अभ्यास बस अधर्म की ग्लानि निकल कर उन्के मन पर निकृष्टप्रवृत्तियों का पूरा अधिकार होजाता है विदुरजी कहते हैं " तासों पाप न करत बुध किये बुद्धि कौ नाश ॥ बुद्धि नासते बहुरि नर पापें करत प्रकाश * ॥ यह अवस्था बडी भयंकर है और सन्निपात के समान इस्सें आरोग्य होने की आशा बहुत कम रहती है ऐसी अवस्था में निस्सन्देह शिभूदयाल के कहने मूजब उन्को अनुचित रीति सें अपनी इच्छा पूरी करनें में सिवाय आनन्द के कुछ पछतावा नहीं होता परन्तु उन्को पछतावा हो या न हो ईश्वर के नियमानुसार उन्हे अपने पापों का फल अवश्य भोगना पडता है मनुस्मृति में लिखा है "वेद, यज्ञ, तप, नियम, अरु बहुत भांति के दान ॥ दुष्ट हृदय को जगत में करत न कुछ कल्यान ॥ +" ऐसे मनुष्यों को समाज की तरफ सैं, राज की तरफ सें अथवा ईश्वर की तरफ सैं अवश्य दंडमिल्ता है और बहुधा वह अपना प्राण देकर उस्सें छुट्टी पाते

* तस्मात् पाप न कुर्वीत पुरुष शंसितव्रत ॥
पापं प्रज्ञां नाशयति क्रियमाणं पुन पुन ॥

वेदास्त्यागश्च यज्ञाश्च नियमाश्च तपांसिच ॥
नविप्रभावदुष्टस्य सिद्धि गच्छन्ति कर्हिचित् ॥

+ चक्रवा दैव क्रुध्य ति प्रसीदत्यभिमितान ॥
शीलमेतदसाधूनामभ्रं पारिप्लवं यथा ॥

हैं इस लिये सुख दु:खका आधार इच्छा फल की प्राप्ति पर नहीं बल्कि सत्कर्म और दुष्कर्म पर है.

इसतरह पर अनेक प्रकार की बात चीत करते हुए लाला मदन मोहन की बग्गी मकान पर लौटआई और लाला ब्रजकिशोर वहां से रुखसत होकर अपने घर गए

प्रकरण १२

बिगाडकामूल-विवाद

कोपे बिन अपराध। रीझे बिन कारन सुनर॥
ताको शील असाध। शरदकालके मेघ जो॥ *

विदुर-प्रजागरे.

लाला मदनमोहन हवा खाकर आए उस्समय लाला हरकिशोर साठन की गठरी लाकर कमरे में बैठे थे.

"कल तुमने लाला हरदयाल साहब के सामने बड़ी ढिठाई की परन्तु मैं पुरानी बातोंका विचार करके उस्समय कुछ नहीं बोला" लाला मदनमोहन ने कहा.

"आपने बडी दया की पर अब मुझ को आप से एकान्त में कुछ कहना है, अवकाश हो तो सुन लीजिये" लाला हरकिशोर बोले.

"यहां तो एकांत ही है तुम को जो कुछ कहना हो निस्संदेह कहो" लाला मदनमोहन नें जवाब दिया

"मुझ को इतना ही कहना है कि मैंनें अब तक अपनी समझ मुजिब आप को अप्रसन्न करनें की कोई बात नहीं की परन्तु मेरी सब बातें आपको बुरी लगती हैं तो मैं भी ज्याद आवा जाई रखनें में प्रसन्न नहीं हू. किसी ने सच कहा है "जब तो हम गुल थे मियां लगते हजारों के गले ॥ अब तो हम खार हुए सब से किनारे ही भले ॥ " ससार में प्रीति स्वार्थ परता का दूसरा नाम है समय निकले पीछे दूसरे से मेल रखनें की किसी को क्या गरज पड़ी है ? अच्छा ! महरबानी कर के मेरे माल की कीमत मुझ को दिलवा दें " हरकिशोर नें रुखाई से कहा-

"क्या तुम कीमत का तक़ाजा कर के लाला साहब को दबाया चाहते हो ? " मुन्शी चुन्नी लाल बोले

" हरगिज नहीं मेरी क्या मजाल ! " हरकिशोर कहनें लगे- "सब जान्ते हैं कि मेरे पास गांठ की पू जी नहीं है, मैं जहा तहा से माल लाकर लाला साहब के हुक्म की तामील कर देता था परन्तु अब की बार रुपे मिल्नें में देर हुई कई एकरार झूटे हो गए इसलिये लोगों का विश्वास जाता रहा अब आज कल में उन्के माल की कीमत उन्के पास न पहु चे गी तो वे मेरे ऊपर नालिश कर दे गे और मेरी इज्जत धूल में मिल जायगी "

"तुम कुछ दिन धैर्य धरो तुह्मारे रुपे का भुगतान हम बहुत जल्दी कर देंगे " लाला मदनमोहन ने कहा

"जब मेरे ऊपर नालिश हो गई और मेरी साख जाती रही तो फिर रुपे मिलने से मेरा क्या काम निकला? "देखो अवसर को भलो जासों सुधरे काम ॥ खेती सूखे बरसवो घन को निपट निकाम ॥" मैं जानता हू कि आप को अपने कारण किसी

मुझको दिनभर रोजगार धंधा करना पड़ता है, आपका सवदिन हसी दिल्लगी की वातों मैं जाता है. मैं दिन भर पैदल भटकता हू, आप सवारी विना एक कदम नहीं चल्ते. मेरे रहने की एक झोंपडी, आप के वड़े वडे महल मुल्क मैं अकालहो, गरीव विचारे भूखों मरतेहों, आप के यहा दिन रात ये ही हाहा, हीही, रहेगी. सच है आप पर उन्का क्या हक है? उनूसें आपका क्या सवन्ध है? परमेश्वर ने आप को मनमानी मोज करने के लिये दौलत देदी फिर औरों के दुख दर्द में पडने की आप को क्या जरूरत रही? आपके लिये नीति अनीति की कोई रोक नही है आप—"

"क्यों जी! तुम अपनी वकवाद नही छोडते अच्छा जमा दार इन्को हाथ पकड़ कर यहां सै वाहर निकालदो और इन्की गठरी उठाकर गली मैं फैंकदो" मुन्शी चुन्नीलाल नैं हुक्म दिया

"मुझको उठाने की क्या जरूरत है? मै आप जाता हू परंतु तुमने वेसवव मेरी इज्जत ली है इन्का परिणाम थोड़े दिन मैं देखोगे जिस तरह राजा द्रुपद नें वचपन में द्रोणाचार्य सै मित्रता करके राज पाने पर उन्का अनादर किया तव द्रोणाचार्य नें कौरव पाडवों को चढा ले, जाकर उन्की मुश्कें वधवा ली थीं और चाणक्य ने अपनें अपमान होनेपर नन्द वंश का नाश करके अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर दिखाई थी, पृथ्वीराज नें सयोगता के वसवर्ती होकर चन्द और हाहुली राय को लौंडियों के हाथ पिटवाया तव [illegible] राय ने उस्का वदला पृथ्वीराज सें लिया था, इसी तरह [illegible] नें चाहातो मै भी इन्का वदल आप सै लेकर रहूगा"

यह कह कर हरकिशोर नें तत्काल अपनी गठरी उठाली और गुस्से मे मूछोंपर ताव देता चला गया

"ये बदला लेंगे ! ऐसे बदला लेनेंवाले सैकड़ों झकमारते फिरते हैं" हरकिशोर के जाते ही मुन्शी चुन्नीलाल नें मदनमोहन को दिलासा देनें के लिये कहा.

"जो यों किसी के वैर भाव सै किसी का नुक्सान होजाया करै तो बस संसार के काम ही बन्द होजाय" मास्टर शिभूदयाल बोले

"सूर्य चन्द्रमा की तरफ धूल फैंकनें वाले अपनेही सिर पर धूल डालते हैं" पंडित पुरुषोत्तमदास ने कहा पर इनबातों सै लाला मदनमोहन का संतोष न हुआ

"मैं हरकिशोर को ऐसा नहीं जान्ता था, वह तो आज आपे सै बाहर होगए अच्छा ! अब वह नालिश करदे तो उस्की जवाब दिही किस तरह करनी चाहिये ? मैं चाहता हूं कि चाहे जितना रुपया खर्च होजाय परन्तु हरकिशोर के पल्ले फूटी कौडी न पड़े" लाला मदनमोहन नें अपने सभावानुसार कहा

"मदन मोहन के निकटवर्ती जान्ते थे कि मदनमोहन जैसे हठीले हैं वैसे ही कमहिम्मत हैं, जिस्समय उन्को किसी तरह का घबराट हो हरेक आदमी दिलजमई की झूटी सच्ची बातें बनाकर उन्को अपने काबू पर चढ़ा सक्ता है और मन चाहा फ़ायदा उठासक्ता है इस लिये अब चुन्नीलाल नें यह चाल डाली

"यह मुकद्दमा क्या चीज है ! ऐसे सैंकडों मुकद्दमें आप के पुन्य प्रताप मैं चुटकियों मैं उड़ा सक्ता हूं परन्तु इस्समय

चित्त को ज़रा उद्वेग होरहा है इसी सैं अकल काम नहीं देती"
मुनशी चुन्नीलाल ने कहा,

"क्यों तुह्मारे चित्त के उद्वेग का क्या कारण है? क्या हर किशोर की धमकी सैं डरगए? ऐसा हो तो विश्वास रक्खो कि मेरी सब दौलत खर्च होजायगी तो भी तुह्मारे ऊपर आंच न आनें दूंगा" लाला मदनमोहन नें कहा

"नहीं, महाराज! ऐसी बातोंसैं मैं कब डरता हूं? और आपके लिये जो तकलीफ मुझको उठानी पड़े उस्में तो और मेरी इज़्ज़त है. आपके उपकारोंका बदला मैं किसी तरह नहीं दे सक्ता, परन्तु लडकीके ब्याहके दिन बहुत पास आ गये, तयारी अबतक कुछ नहीं हुई, ब्याह आपकी नामवरीके मूजिब करना पडेगा, इस्सै इन दिनों मेरी अकल कुछ गुमसी हो रही है" मुन्शी चुन्नीलालनें कहा

"तुम धैर्य रक्खो तुह्मारी लडकीके ब्याहका सब खर्च हम देंगे" लाला मदनमोहन नें एकदम हामी भर ली

"ऐसी सहायता तो इस सरकार सैं सब को मिलती ही है परन्तु मेरी जीविका का वृत्तान्त भी आपको अच्छी तरह मालूम है और घर गृहस्थका खर्च भी आपसैं छिपा नहीं है, भाई न्यारे बैठे हैं जब आपके यहांसैं कुछ सहायता होगी तो ब्याहका काम छिडैगा कपडे लत्ते वगैरे की तैयारी में महीनों लगते हैं" मुन्शी चुन्नीलालनें कहा.

"लो, ये दो सो रुपेके नोट लेकर इस्समय तो काम चलाओ, और बातोंके लिये बदोबस्त पीछैसैं कर दिया जायगा" लाला मदनमोहननें नोट देकर कहा.

"जी नहीं, हुजूर ! ऐसी क्या जल्दी थी" मुन्शी चुन्नीलाल नोट जेबमैं रखकर बोले.

"यह भी अच्छी विद्या है" पंडितजीनें भरमा भरमी सुनाई.

"मैं जान्ता हूं कि प्रथम तो हरकिशोर नालिश ही नहीं करेंगे और की भी तो दमभर मैं खारिज करा दी जायगी" मुन्शी चुन्नीलालनें कहा

निदान लाला मदनमोहन बहुत देरतक इस प्रकारकी बातों से अपनी छातीका बोझ हल्का करके भोजन करनें गए और गुपचुप बैजनाथके बुलानेंके लिये एक आदमी भेज दिया

प्रकरण १४

पत्रव्यवहार

अपन अपन लाभको बोलतचैन बनाय
बेस्या बरस घटावही जोगी बरस बढाय

वृंद

लाला मदनमोहन भोजन करके आए उस्समय डाकके चपरासीनें लाकर चिट्ठिया दी

उन्मैं एक पोस्टकार्ड महरौलीसै मिस्टर बेलीनें भेजा था उस्मैं लिखा था कि "मेरा विचार कल शामको दिल्ली आनेंका है आप महरबानी करके मेरे वास्तै डाकका बंदोबस्त कर दें और लौटती डाकमैं मुझको लिख भेजें" लाला मदनमोहननें तत्काल उस्का प्रबंध कर दिया

दूसरी चिठ्ठी कलकत्तेसें हमल्टीन कंपनी जुएलर (जोहरी) की आई थी उस्में लिखा था "आपके आरडरके बमूजिब हीरोंकी पाकट चेन बनकर तैयार हो गई है, एक दो दिनमें पालिश करके आपके पास भेजी जायगी और इस्पर लागत चार हजार अंदाज रहैगी. आपनें पन्नेकी अगूठी और मोतियोंकी नेक्लेसके रुपे अबतक नहीं भेजे सो महरबानी करके इन तीनों चीजोंके दाम बहुत जल्द भेज दीजिये"

तीसरा फारसी खत अलीपूरसे अब्दुर्रहमान भेटका आया था उस्में लिखा था कि "रुपे जल्दी भेजिये नहीं तो मेरी आबरूमें फ़र्क आ जायगा और आपका बडा हर्ज होगा ककरवालेका रुपया बहुत चढ गया इस लिये उस्नें खेप भेजनी बद कर दी मज्दूरोंका चिट्ठा एक महीनेंसे नहीं बटा इस लिये वह मेरे इज्जत लिया चाहते हैं इस ठेके बाबत पाच हजार रुपे सरकारसें आपको मिल्नें वाले थे वह मिले होंगे, महरबानी करके वह कुल रुपे यहा भेज दीजिये जिस्सें मेरा पीछा छूटे मुझको बडा अफ़सोस है कि इस ठेकेमें आपको नुक्सान रहैगा, परन्तु मैं क्या करू ? मेरे बसकी बात न थी जमीन बहुत ऊ ची नीची निकली, मज्दूर दूर, दूरसें दूनी मज्दूरी देकर बुलानें पडे, पानी का कोसों पता न था मुझसें हो सका जहातक मैंनें अपनी जांन लडाई. ग़ैर इस्का इनाम तो हुजूरके हाथ है परन्तु रुपे जल्दी भेजिये, रुपयोंके बिना यहाका काम घडी भर नही चल सक्ता"

लाला मदनमोहन नोकरोंको काम बतानें, और उन्की तन्‌ख्वाहका खर्च निकाल्नेंके लिये बहुधा ऐसे ठेके वगैरा ले लिया

करते थे नोकरोंके विषयमें उन्का बरताव बडा विलक्षण था, जो मनुष्य एक बार नोकर हो गया वह हो गया फिर उस्से कुछ काम लिया जाय या न लिया जाय, उस्के लायक कोई काम हो या न हो. वह अपना काम अच्छी तरह करे या बुरी तरह करे, उस्के प्रतिपालन करनेका कोई हक अपने ऊपर हो या न हो, वह अलग नही हो सक्ता ओर उस्पर क्या है ? कोई खर्च एक बार मुकर्रर हुए पीछे कम नहीं हो सक्ता, ससारके अयशका ऐसा भय समा रहा है कि अपनी अवस्थाके अनुसार उचित प्रबध सर्वथा नहीं होने पाता. सब नोकर सब कामोंमें दखल देते हैं परन्तु कोई किसी कामका जिम्मेवार नहीं है, और न कोई सम्हाल रखता है, मामूली तनख्वाह तो उन लोगोंने बादशाही पेन्शन समझ रक्खी है दस पदरह रुपे महीनेंकी तनख्वाहमें हजार पाच सो रुपे पेशगी ले रखना, दो, चार हजार पैदा कर लेना कौन बडी बात है ? पाच रुपे महीनेके नोकर हों, या तीन रुपे महिनेंके नोकर हों विवाह आदिका खर्च लाला साहब के जिम्में समझते हैं, और क्यों न समझें ? लाला साहब की नोकरी करें तब विवाह आदिका खर्च लेने कहा जाय ? मदत का दारोगा मदत में, चीजवस्त लानेंवाले चीजवस्त में दुकान के गुमाश्ते दुकान में, मनमानाकाम चलारहे हैं जिसनें जिसकाम के वास्ते जितना रुपया पहले ले लिया वह उस्के बाप दादे का होचुका, फिर हिसाब कोई नहीं पूछता घाटे नफे और लेन देन की जाच परताल करने के लिये कागज कोई नहीं देखता. हाल में मदनमोहन नें अपने नोकरों के प्रतिपालन के लिये अलीपुर का ठेका ले रक्खा था जिस्में सरकार से ठेका लिया ७

रुपे अब तक ख़र्च हो चुके थे पर काम आधा भी नहीं बना था और ख़र्चके वास्ते वहां से ताकीदपर ताकीद चली आती थी पर मेश्वर जानें अबदुर्रहमान को अपनें घर ख़र्चके वास्ते रुपे की जरूरत थी या मदत के वास्ते रुपेकी ज़रूर थी.

चौथा ख़त एक अख़बार के एडीटर का था उस्मैं लिखा था कि "आपनें इस महीनें की तेन्हवी तारीख़ का पत्र देखा होगा उस्मैं कुछ वृत्तान्त आपका भी लिखा गया है इस्समय के लोगों को ख़ुशामद बहुत प्यारी है और ख़ुशामदी चैन करते हैं परन्तु मेरा यह काम नहीं मैंने जो कुछ लिखा वह सच, सच लिखा है आप से बुद्धिमान, योग्य, सच्चे अभिज्ञ, उदार और देशहितैषी हिन्दुस्थान मैं बहुत कम हैं इसी से हिन्दुस्थान की उन्नति नहीं होती, विद्याभ्यास के गुण कोई नहीं जान्ता, अख़बारों की क़दर कोई नहीं करता, अख़बार जारी करनेवालों को नफ़े के बदले नुक्सान उठाना पडता है हम लोग अपना दिमाग खिपा कर देश की उन्नति के लिये आर्टिकल लिखते हैं, परन्तु अपने देशके लोग उस्की तरफ आंख उठाकर भी नहीं देखते इस्सै जी टूटा जाता है देखिये अख़बार के कारण मुझपर एक हज़ार रुपे का क़र्ज होगया और आगे को छापेख़ाने का ख़र्च निकलना भी बहुत कठिन मालूम होता है प्रथम तो अख़बार के पढनेवाले बहुत कम, और जो हैं उन्मैं भी बहुधा कारस्पोन्डेन्ट बनकर बिना दाम दिये पत्र लिया चाहते हैं और जो गाहक बनते हैं उन्मैं भी बहुधा दिवालिये निकल जाते हैं छापेख़ानें का दो हज़ार रुपया इस्समय लोगों मैं बाक़ी है परन्तु फूटी कौडी पटनें का भरोसा नहीं. कोई आपसा साहसी पुरुष देशका हित विचार कर इस डूबती

नाव को सहारा लगावे तो बेडा पार होसक्ता है नही तो फैर जो इच्छा परमेश्वर की "

एक अखबार के एडीटर को इस लिखावट से क्या, क्या बातें मालूम होती हैं ? प्रथम तो यह कि हिन्दुस्थान में विद्या का, सर्व साधारण की अनुमति जान्नें का, देशान्तर के वृत्तान्त जान्नें का, और देशोन्नति के लिये देश हितकारी बातों पर चर्चा करनें का व्यसन अभी बहुत कम है बलायत की बस्ती हिन्दुस्थान की बस्ती से बहुत ही थोडी है तथापि वहा अखबारों की इतनी वृद्धि है कि बहुतसे अखबारों की डेढ डेढ दो, दो लाख कापिया निकलती हैं वहा के स्त्री, पुरुष, बूढे, बालक, गरीब, अमीर, सब अपने देश का वृत्तान्त जान्ते हैं और उसपर वादा विवाद करते हैं किसी अख बार में कोई बात नई छपती है तो तत्काल उस्की चर्चा सब देश में फैल जाती है और देशान्तर को तार दौड जाते हैं परन्तु हिन्दुस्थान में ये बात कहा ? यहा बहुतसे अखबारों की पूरी दो, दो सौ कापिया भी नही निकलतीं। और जो निकलती हैं उन्में भी जान्ने के लायक बातें बहुत ही कम रहती हैं क्योंकि बहुतसे एडीटर तो अपना कठिन काम सम्पादन करने की योग्यता नहीं रखते और बलायत की तरह उन्को और विद्वानों को सहायता नहीं मिल्ती, बहुतसे जान बूझ कर अपना काम चलानें के लिये अजान बनजाते हैं इस लिये उचित रीति से अपना कर्तव्य सम्पादन करने वाले अखबारों की सख्या बहुत थोडी है पर जो हैं उस्को भी उत्तेजन देने वाला और मन लगा कर पढने वाला कोई नहीं मिल्ता. बडे, बडे अमीर, सौदागर, साहूकार,जमींदार, दस्तकार जिन्की हानि लाभ का और देशों से बडा

सवन्ध है वह भी मन लगा कर अखबार नही देखते बल्कि कोई कोई तो अखबार के एडीटरों को प्रसन्न रखनें के लिये अथवा गाहकों के सूचीपत्र में अपना नाम छपानें के लिये, अथवा अपनी मेज को नए, नए, अखबारों सै सुशोभित करनें के लिये, अथवा किसी समय अपना काम निकाललेनें के लिये अखबार खरीदते हैं ! जिसपर अखबार निकालनें वालों की यह दशा है !- लाला मदनमोहन इस खत को पढ़ कर सहायता करनें के लिये बहुत ललचाये परन्तु रुपे की तगी के कारण तत्काल कुछ न कर सके .

"हुजूर ! मिस्टर रसलके पास रुपे आज भेजनें चाहियें" मुनशी चुन्नीलाल नें डाक देखे पीछै याद दिवाई.

, हां ! मुझको बहुत खयाल है परन्तु क्या करूं ? - अबतक कोई वानक नहीं बना " लाला मदनमोहन बोले

" थोडी बहुत रकमतो मिस्टर-ब्राइट के यहा भी जरूर भेजनी पडेगी " मास्टर शिभूदयाल ने अवसर पाकर कहा.

" हा, और हरकिशोर ने नालिश करदी तो उस्सै जवाब दिही करने के लिये भी रुपे चाहियेंगे " लाला मदनमोहन चिंता करनें लगे.

" आप चिन्ता न करें, जोतिष सै सब होनहार मालूम हो सक्ता है चाणक्य नें कहा है " का ऐश्वर्य विशा— में का मोटेंडुर

थे. जोतिष से बढ कर होनहार जान्नें का कोई सुगम मार्ग नहीं है" पंडित पुरुषोत्तमदास ने लाला मदनमोहन को कुछ उदास देख कर अपना मतलब गांठनें के लिये कहा वह जान्ता था कि निर्बल चित के मनुष्य सुख मैं किसी बात की गर्ज नहीं रखते परन्तु घबराट के समय हर तरफ को सहारा तकते फिर्ते हैं

"विद्याका प्रकाश प्रति दिन फैल्ता जाता है इस लिये अब आपकी बातोंमैं कोई नहीं आवेगा" मास्टर शिभूदयालनें कहा

"यह तो आजकलके सुधरे हुओंकी बात है परन्तु वे लोग जिस विद्याका नाम नहीं जान्ते उसमैं उन्की बात कैसे प्रमाण हो ?" पंडितजीने जबाब दिया

"अच्छा ! आप करेलेके सिवाय और क्या जान्ते हैं ? आपको मालूम है कि नई तहकीकात करनें वालोंनें कैसी, कैसी दूरबीनें बनाकर ग्रहोंका हाल निश्चय किया है ?" मास्टर शिभूदयाल बोले

"किया होगा, परन्तु हमारे पुरुषोंनें भी इस विषयमैं कुछ कसर नहीं रक्खी" पंडित पुरुषोत्तमदास कहनें लगे, "इन समय के बिद्वानोंनें बडा खर्च करके जो कलें ग्रहों का वृतान्त निश्चय करनें के लिये बनाई हैं हमारे बडों नें छोटी, छोटी नालियों और बांसकी छडियों के द्वारा उन्से बढ़कर काम निकाला था. संस्कृत की बहुतसी पुस्तकें नष्ट हो गई, योगाभ्यास आदि विद्याओं का खोज नहीं रहा परन्तु फिर भी जो पुस्तकें अब मौजूद हैं उन्मैं ढूंढनें वालों के लिये कुछ थोडा खजाना नहीं है हां आप की तरह कोई कुछ ढूंढभाल करे बिना दूर ही से "कुछ नहीं" "कुछ नहीं" कहकर बात उडा दे तो यह जुदी बात है"

"संस्कृत विद्या की तो आजकल के सब विद्वान एक स्वर होकर प्रशंसा करते हैं परंतु इस्समय जोतिष की चर्चा थी सो निस्सन्देह जोतिष में फलादेश की पूरी विध नहीं मिल्ती शायद बतानेंवालों की भूल हो. तथापि मैं इस विषय में किसी समय तुम से प्रश्न करूंगा और तुम्हारी विध मिल जायगी तो तुम्हारा अच्छा सत्कार किया जायगा" लाला मदनमोहन नें कहा और यह बात सुनकर पंडितजी के हर्ष की कुछ हद न रही.

प्रकरण १५.

प्रिय अथवा पिय् ?

दमयन्ति विलपतहुती मनमें अति भय पाइ
अहि बध-अधिक अधिक भयो ताहूते दुसराइ

नलोपाख्याने.

ज्योतिष की विध पूरी नहीं मिल्ती इसलिये उस्पर विश्वास नहीं होता परन्तु प्रश्न का बुरा उत्तर आवे तो प्रथम हीसें चित्त ऐसा व्याकुल हो जाता है कि उस काम के अचानक होनें पर भी वैसा नहीं होता, और चित्त का असर ऐसा प्रबल होता है कि जिस वस्तु की संसार में सृष्टि ही न हो वह भी वहम [illegible] से तत्काल दिखाई देनें लगती है जिस्पर जोतिषी [illegible] को उलट पुलट नहीं कर सक्ते, अच्छे बुरे फल को [illegible], फिर प्रश्न करनें से लाभ क्या ? कोई ऐसी

करनी चाहिये जिस्से कुछ लाभ हो" मुन्शी चुन्नीलाल नें कहा.

"आप हुक्म दें तो मैं कुछ अर्ज करू ?" विहारी बाबू बहुत दिन से अवसर देख रहे थे वह धीरे से पूछनें लगे.

"अच्छा कहो" मुन्शी चुन्नीलाल नें मदनमोहन के कहने सै पहले ही कह दिया

"भोजला पहाडी पर एक बडे धनवान जागीरदार रहते हैं उन्को ताश खेलनें का बडा व्यसन है वह सदा बाजी बद कर खेल्ते हैं और मुझको इस खेल के पत्ते ऐसी राह सै लगानें आते हैं कि जब खेलैं तब अपनी ही जीत हो मैंनें उन्को कितनी ही बार हरादिया इसलिये अब वह मुझको नहीं पतियाते परन्तु आप चाहैं तो मैं यह खेल आप को सिखा दूं फिर आप उन्सै निधडक खेलैं आप हार जायंगे तो वह रकम मैं दूंगा और जीतें तो उसमैं सै मुझको आधी ही दें" विहारी बाबू नें जुए का नाम छिपा कर मदनमोहन को आसामी बनानें के वास्ते कहा

"जीतेंगे तो चौथाई देंगे परन्तु हारनें के लिये रकम पहले जमा करा दो" मुन्शी चुन्नीलाल लालामदनमोहन की तरफ सै मामला करनें लगे

"हारनें के लिये पहले पाच सौ की थैली अपनें पास रख लीजिये परंतु जीतनें मैं आधा हिस्सा लूंगा" विहारी बाबू हुज्जत करनें लगे

"नहीं, जो चुन्नीलाल नें कह दिया वह हो चुका, उस्सै अधिक हम कुछ न देंगे" लाला मदनमोहन नें कहा

और बडी मुश्किल सै विहारी बाबू उस्पर कुछ,

हुए परन्तु सौभाग्य वस उस्समय बाबू बैजनाथ आ गए इस्सै सब काम जहां का तहा अटक गया.

"बिहारी बाबू सै किस बात का मामला हो रहा है ?" बाबू बैजनाथ नें पहुंचते ही पूछा

"कुछ नहीं, यह तो ताश के खेल का ज़िक्र था" मुन्शी चुन्नीलाल नें साधारण रीति सै कहा.

"बिहारी बाबू कहते हैं कि "मैं पत्ते लगानें सिखा दूं जिस्से यह पत्ते लगाकर आप एक धनवान जागीरदार सै ताश खेलैं और बाजी बद लें जो हारेंगे तो सब नुक्सान मैं दूंगा. और जीतेंगे तो उस्में से चौथाई ही मैं लूंगा" लाला मदनमोहन नें भोले भाव सै सच्चा वृत्तान्त कह दिया

"यह तो खुला जुआ है और बिहारी बाबू आप को चाट लगानें के लिये प्रथम यह सब्ज़ बाग दिखाते हैं" बाबू बैजनाथ कहनें लगे "जिस तरह सै पहले एक मेवनें आप को गडी दौलतका ताम्रपत्र दिखाया था, और वह सब दौलत गुप चुप आप के यहां ला डालनें की हामी भरता था परन्तु आप सै खोदनें के बहानें सो, पचास रुपे मार लेगया तब सै लौट कर सूरत तक न दिखाई ! आप को याद होगा कि आप के पास एक बदमाश स्याम का शाहज़ादा बनकर आया था, और उस्नें कहा था कि "मैं हिन्दुस्थान की सैर करनें आया हूं मेरे जहाज ने कलकत्ते मैं लंगर कर रक्खा है मुझ को यहां ख़र्च की ज़रूरत है आप अपनें [illegible]तिये का नाम मुझे बता दें मैं अपनें नौकरों को लिखकर [illegible] पास रुपे जमा करा दूंगा जब उस्की इत्तला आप के पास [illegible] तब आप रुपे मुझे देदें" निदान आप के आढतिये के

नाम से तार आप के पास आगया और आपनें रुपे उस्को दे दिये, परन्तु वह तार उन्हीं के किसी साथी नें आप के आढतिये के नाम से आप को दे दिया था इसलिये यह भेद खुला उस्समय शाहजादे का पता न लगा! एकबार एक मामला करानेंवाला एक मामला आप के पास लाया था जब उस्नें कहा था कि "सरकार में रसद के लिये लकडियों की खरीद है और तहसील में ढाई मन का भाव है मैं सरकारी हुक्म आप को दिला दूंगा आप चार मन के भाव में मेरी मारफत एक जंगलवाले की लकडी लेनी कर ले" यह कहकर उस्नें तहसील से निर्खनामे की दस्तखती नकल लाकर आप को दिखा दी पर उस भाव में सरकार की कुछ खरीददारी न थी! इस्के सिवाय जिस्तरह बहुत से रसायनी तरह, तरह का धोका देकर सीधे आदमियों को ठगते फिरते हैं इसी तरह यह भी जुआरी बनानें की एक चाल है. जिस काम में बे लागत और बे महनत बहुतसा फ़ायदा दिखाई दे उस्में बहुधा कुछ न कुछ धोकेबाजी होती है ऐसे मामलेवाले ऊपर से सब्जबाग दिखाकर भीतर कुछ न कुछ चोरी जरूर रखते हैं"

"बाबू साहब! मैंनें जिस राह से ताश खेलनें के वास्ते कहा था वह हरगिज जुए में नहीं गिनी जा सकती परन्तु आप उस्को जुआ ही ठैराते हैं तो कहिये जुए में क्या दोष है?" बिहारी बाबू मामला बिगडता देखकर बोले "दिवाली के दिनों में सब संसार जुआ खेलता है और असल में जुआ एक तरह का व्यापार है जो नुक्सान के डर से जुआ वर्जित हो तो और सब तरह के व्यापार भी वर्जित होनें चाहियें और व्यापार में

के समय मनुष्य की नीयत ठिकानें नहीं रहती परन्तु जुए के लेन देन बाबत अदालत की डिक्री का डर नहीं है तोभी जुआरी अपना सब माल अस्बाब बेचकर लेनदारों की कौडी, कौडी चुका देता है उस्के पास रुपया हो तो वह उस्के लुटानें में हाथ नहीं रोकता और अपनें काम में ऐसा निमग्न हो जाता है कि उसै खानें पीनें तक की याद नहीं रहती. उस्के पास फूटी कौडी न रहे तोभी वह भूखों नहीं मरता फडपर जाते ही जीते जुआरी दो, चार गडे देकर उस्का काम अच्छी तरह चला देते हैं"

"राम! राम! दिवाली पर क्या? समझवार तो स्वप्न मैं भी जुए के पास नहीं जाते जुए सै व्यापार का क्या संबंध? उस्की कुछ सूरत मिल्ती है तो बदनी से मिल्ती है पर उस्को जुए से अलग कौन समझता है? उस्को प्रतिष्ठित साहूकार कब करते हैं? सरकार मैं उस्की सुनाई कहा होती है? निरी बातों का जमा खर्च व्यापार मैं सर्वथा नहीं गिना जाता. व्यापार के तत्वही जुदे हैं, भविष्यत काल की अवस्था पर दृष्टि पहुचाना परता लगाना, माल का खरीदना, बेचना या दिसावर को बीजक भेजकर माल मगाना और माल भेजकर बदला भुगताना, व्यापार है परन्तु जुए मैं यह बातें कहा? जुआ तो सब अधर्मों की जड है, मनु और विदुरजी एक स्वर सै कहते हैं "सुनी पुरातन बात जुआ कलह को मूल है॥ हासीहू मैं तात तासों नहीं खेलै चतुर॥ *" बाबू बैजनाथ नें कहा.

"आप वृथा तेज होते हैं मैं खुद जुए का तरफ़दार नहीं हू

* द्यूतमेतत्पुराकल्पे दृष्ट वैरकरम् महत् ॥

तस्मात् द्यूतन्नसेवेत हास्यार्थमपि बुद्धिमान् ॥

परतु विवाद के समय अच्छी, अच्छी युक्तियों से अपना पक्ष प्रबल करना चाहिये क्रोध करके गाली देनें से जय नहीं होती आप की दृष्टिमें मैं झूटा हू परतु मेरी सदुक्तियों को आप झूटा नहीं ठैरा सक्ते मुझ पर किसी तरह का दोषारोप किया जाय तो उसको युक्ति पूर्वक साबित करना चाहिये और और बातों में मेरी भूल निकालनें से क्या वह दोष साबित हो जायगा ?"

"जुए का नुक्सान साबित करनें के लिये विशेष परिश्रम नहीं करना पडेगा देखो नल और युधिष्ठिरादि की बरबादी इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है" बाबू बैजनाथ बोले

"मैं आप से कुछ अर्ज नहीं कर सक्ता परतु—"

"बसजी ! रहनें दो बाबू साहब कुछ तुम से बहस करनें के लिये इस्समय यहा नहीं आए" यह कहकर लाला मदनमोहन बाबू बैजनाथ को अलग लेगए और हरकिशोर की तकरार का सब वृत्तान्त थोडे मैं उन्हें सुना दिया

"मैं पहले हरकिशोर को अच्छा आदमी समझता था परतु कुछ दिन से उस्की चाल बिल्कुल बिगड गई उस्को आप की प्रतिष्ठा का बिलकुल बिचार नहीं रहा और आज तो उस्नें ऐसी ढिठाई की कि उस्को अवश्य दंड होना चाहिये था सो अच्छा हुआ कि वह अपनें आप यहा से चला गया, उस्के चले जानें से उस्के सब हक जाते रहे अब कुछ दिन धक्के खानें सें उस्की अकल अपने आप ठिकानें आ जायगी"

"और उस्नें नालिश कर दी तो ?" लाला मदनमोहन घबराकर बोले.

"क्या होगा ? उस्के पास सबूत क्या है ? उस्का गवाह कौन है ? वह नालिश करेगा तो हम कानूनी पाइन्ट सै उस्को पलट देंगे परन्तु हम जान्ते हैं कि यहांतक नोबत न पहुंचेगी अच्छा ! उस्के पास आप की कोई सनद है ?"

"कोई नहीं"

"तो फ़िर आप क्यों डरते हैं ? वह आप का क्या कर सक्ता है ?"

" सच है उस्को रुपे की गर्ज होगी तो वह नाक रगडता आप चला आयगा हम उस्के नीचे नहीं दबे वही कुछ हमारे नीचे दब रहा है "

" आप इस विषय मैं बिल्कुल निश्चिन्त रहैं "

" मुझको थोडासा खटका लाला ब्रजकिशोर की तरफ का है वह हरबात मैं मेरा गला घोंटते हैं और मुझको तोतेकी तरह पिंजरे मैं बंद रखा चाहते हैं "

" वकीलों की चाल ऐसीही होती है वह प्रथम धरती आकाशके कुलाबे मिलाकर अपनी योग्यता जताते हैं फिर दूसरे को तरह, तरह का डर दिखाकर अपना आधीन बनाते हैं और अंत मैं आप उस्के घरबार के मालक बन बैठते हैं परन्तु चाहे जैसा फायदा हो मैंतो ऐसी परतन्त्रता से रहने को अच्छा नहीं समझता "

" मेरा भी यही विचार है मै ज्यों ज्यों दबता हू वह ज्याद दबाते जाते हैं इसलिये अब मैं नहीं दबा चाहता "

" आपको दबने की क्या ज़रूरत है ? जबतक आप इन को जवाब न देंगे यह सीधे न होंगे, लाला ब्रजकिशोर

आपके घर के टुकडे खाखा कर बडे हुए थे वह दिन भूल गए।"

"लाला मदनमोहन नें बाबू बैजनाथ की नेकसलाहों का बहुत उपकार माना और वह लाला मदनमोहन से रुखसत होकर अपनें घर गए

प्रकरण १६.

सुरा (शराब)

जेंनिंदितकर्मनडराहि करहिंकाज शुभजान ॥
रनें मंत्र प्रमाद तज करहिं न ते मदपान ॥*

विदुरनीति

"अब तो यहां बैठे, बैठे जी उखताता है चलो कहीं बाहर चलकर दस, पांच दिन सैर कर आवें" लाला मदनमोहन ने कमरे में आकर कहा.

"मेरे मन में तो यह बात कई दिन से फिर रही थी परन्तु कहने का समय नहीं मिला" मास्टर शिभूदयाल बोले

"हुजूर! आजकल कुतब में बडी बहार आरही है थोड़े दिन पहले एक छींटा होगया था इस्सै चारों तरफ हरियाली छागई इस्समय झरने की शोभा देखने लायक है" मुनशी चुन्नी लाल कहने लगे

---

* अकार्य कारणाद्भीत कार्याणांच विचक्षणाः ॥
[illegible] ॥

"क्या होगा ? उस्के पास सबूत क्या है ? उस्का गवाह कौन है ? वह नालिश करेगा तो हम कानूनी पाइन्ट से उस्को पलट देंगे परन्तु हम जान्ते हैं कि यहातक नौबत न पहुंचेगी अच्छा ! उस्के पास आप की कोई सनद है ?"

"कोई नहीं"

"तो फिर आप क्यों डरते हैं ? वह आप का क्या कर सक्ता है ?"

" सच है उस्को रुपे की ग़र्ज होगी तो वह नाक रगडता आप चला आयगा हम उस्के नीचे नहीं दबे वही कुछ हमारे नीचे दब रहा है "

" आप इस विषय में बिल्कुल निश्चिन्त रहैं "

" मुझको थोडासा खटका लाला ब्रजकिशोर की तरफ क है यह हरबात में मेरा गला घोटते हैं और मुझको तोतेकी तर पिंजरे में बंद रक्खा चाहते हैं "

" वकीलों की चाल ऐसीही होती है वह प्रथम धरती आक शके कुलावे मिलाकर अपनी योग्यता जताते हैं फिर दूसरे व तरह, तरह का डर दिखाकर अपना आधीन बनाते हैं और अं में आप उस्के घरबार के मालक बन बैठते हैं परन्तु चाहे जैस फायदा हो मैंतो ऐसी परतन्त्रता से रहने को अच्छा नहीं स झता "

" मेरा भी यही विचार है मै जोंजों दबता हू वह ज्याद द ते जाते हैं इसलिये अब मैं नहीं दबा चाहता "

" आपको दबने की क्या जरूरत है ? जबतक आप इन ८ ज्यादा न देंगे यह सीधे न होंगे, लाला ब्रजकिश

आपके घर के टुकडे खाखा कर बडे हुए थे वह दिन भूल गए।"

लाला मदनमोहन ने बाबू बैजनाथ की नेकसलाहों का बहुत उपकार माना और वह लाला मदनमोहन से रुखसत होकर अपनें घर गए.

प्रकरण १६.

सुरा (शराव)

जेनिंदितकर्मनकरहिं करहिंकाज शुभज्ञान ॥
रक्षें मंत्र प्रमाद तज करहिं न तें मदपान ॥*

विदुरनीति

"अब तो यहां बैठे, बैठे जी उखताता है चलो कहीं बाहर चलकर दस, पांच दिन सैर कर आवें" लाला मदनमोहन ने कमरे में आकर कहा.

"मेरे मन में तो यह बात कई दिन से फिर रही थी परन्तु कहने का समय नहीं मिला" मास्टर शिंभूदयाल बोले

"हुजूर! आजकल कुतब में बडी बहार आरही है थोडे-दिन पहले एक छींटा होगया था इस्से चारों तरफ हरियाली छागई इस्समय झरने की शोभा देखने लायक है" मुन्शी चुन्नी-लाल कहने लगे

---

* अकार्य कारणाद्भीत कार्याणां च विमर्शनान् ॥

" आहा! वहा की शोभाका क्या पूछना है? आमके मौर की सुगंधी से सब अमरैयें महक रही हैं उन्की लहलही लताओं पर बैठकर कोयल कुहुकती रहती है घनघोर वृक्षों की घटासी छटा देखकर मोर नाचा करते हैं नीचे झग्नाझरता है ऊपर बेल और लताओं के मिलने से तरह, तरह की रमणीक कुंजैं और लता मंडप बन गये हैं रंग, रंग के फूलों की बहार जुदी ही मनको लुभाती है फूलोंपर मदमाते भौरों की गुंजार और भी आनंद बढाती है शीतल मंद सुगन्धित हवा से मन अपनें आप खिला जाता है निर्मल सरोवरों के बीच बारहदरी में बैठकर चद्दर और फुआरों की शोभा देखनें से जी कैसा हरा हो जाता है? वृक्षों की गहरी छाया में पत्थर के चटानों पर बैठकर यह बहार देखनें में कैसा आनंद आता है?" पंडित पुरुषोत्तमदास नें कहा.

"पहाड की ऊंची चोटियों पर जानें में कुछ और विशेष चमत्कार दिखाई देता है जब वहां से नीचे की तरफ देखते हैं कहीं बर्फ, कहीं पत्थर की चटानें, कहीं बडी, बडी कदराएँ, कहीं पानी बहनें के घाटों में कोसोंतक वृक्षों की लंगतार, कहीं सूअर, रीछ, और हिरनों के झुंड, कहीं जोर से पानी का टकराकर छींट, छींट हो जाना और उन्में सूर्य की किर्णों के पडनें से रंग, रंग के प्रतिबिंबों का दिखाई देना, कहीं बादलों का पहाड से टकराकर अपनें आप बरस जाना, बरसा की झडी, अपनें आस पास बादलों का झूम झूम कर घिर आना अति मनोहर दिखाई देता है" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा.

"शुतर में ये बहार नहीं है तोभी वो अपनी दिल्लगी के लिये एक अच्छी जगह है" मुन्शी चुन्नीलाल बोले.

"रात को चांद अपनी चांदनी सै सब जगत को रुपहरी बना देता है उस्समय दरया किनारे हरियाली के बीच मीठी तान कैसी प्यारी लगती है ?" हकीम अहमदहुसैन नें, कहा "पानी के झरनें की झनझनाहट, पक्षियों की चहचहाहट, हवा की सन् सनाहट, बाजे के सुरों सै मिलकर गानेंवाले की ल्यको चौगुना बढा देते हैं. आहा ! जिस्समय यह समा आंख के साम्नें हो स्वर्ग का सुख तुच्छ मालूम देता है"

"जिस्में यह वसंतऋतु तो इसके लिये सब सै बढकर है" पंडितजी कहनें लगे "नई कोंपल नये पत्ते, नई कली, नए फूलों सै सज सजाकर वृक्ष ऐसे तैयार हो जाते हैं जैसे बुड्ढो मैं नए सिर सै जवानी आजाय"

"निस्सदेह. , यहां कुछ दिन रहना हो, सुख भोगकी सब सामग्री मौजूद हो, और भीनी, भीनी रात में तालसुर के साथ किसी पिकबयनी की आवाज आकर कान में पड़े तो पूरा आनन्द मिले" मास्टर शिभूदयालनें कहा

"शराब की चसबिना यह सब मजा फीका है" मुन्शी चुन्नीलाल बोले.

"इस्में कुछ संदेह नहीं" मास्टर शिभूदयाल नें सहारा लगाया "मनकी चिन्ता मिटानें के लिये तो ये अक्सीर का गुण रखती है इस्की लहरों के चढाव उतार में स्वर्ग का सुख तुच्छ मालूम होता है इस्के जोश में बहादुरी बढती है बनावट और छिपाव दूर हो जाता है हरेक काम में मन खूब लगता है

"बस ; विशेष कुछ न कहो ऐसी बुरी चीज की तुम इतनी तारीफ करते हो इस्सै मालूम होता है कि तुम इस्समय

उसी के वसवर्ती ही रहे हो " वावू वैजनाथ कहनें लगे "मनुष्य बुद्धि के कारण और जीवों से उत्तम है फिर जिस्के पान सै बुद्धि मै विकार हो, किसी काम के परिणाम की खवर न रहै हरेक पदार्थका रूप और से और जाना जाय, स्वेच्छाचार की हिम्मत हो काम क्रोधादि रिपु प्रवल हों, शरीर जर्जर हो वह कैसे अच्छी समझी जाय ?

"यों तो गुणदोष सै खाली कोई चीज़ नहीं है परंतु थोडी शराव लेनें से शरीर मैं वल और फुर्ती तो जरूर मालूम होती है" मुन्शी चुन्नीलाल नें कहा.

"पहले थोडी शराव पीनें सै निःसदेह रुधिर की गति तेज होती है, नाडी वलवान होती है और शरीर में फुर्ती पाई जाती है परतु पीछै उतनी शराव का कुछ असर नहीं मालूम होता इस लिये वह धीरे धीरे वढानी पडती है उस्के पानकिये विना शरीर शिथिल हो जाता है, अन्न हजम नहीं होता, हात पाव काम नहीं देते पर वढानें सै वढते, वढते थोडी शराव प्राणघातक हो जाती है डाक्टर पेरेरा लिखते है कि शराव सैं दिमाग और उदर आदि के अनेक रोग उत्पन्न होते हैं डाक्टर कार्पेन्टर नें इस वावत एक पुस्तक रची है जिस्मैं वहुत से प्रसिद्ध डाक्टरों की राय सें सावित किया है कि शराव सें लकवा, मंदाग्नि, वात, मूत्ररोग, चर्मरोग, फोडाफुन्सी, और कपवायु आदि अनेक रोग उत्पन्न होते हैं, शरावियों की दुर्दशा प्रतिदिन देखी जाती है, कभी, कभी उनका शरीर सूखे काठ की तरह अपनें आप भभक उठता है, दिमाग में गर्मी वढनें सै वहुधा लोग वावले हो

"शराब में इतनें दोष होते तो अंग्रेजों में शराब का इतना रिवाज हरगिज न पाया जाता" मास्टर शिभूदयाल बोले

"तुम को मालुम नही है बलायत के सैकडों डाक्टरों नें इस्के विपरीत राय दी है और वहा सुरापान निवारणी सभा के द्वारा बहुत लोग इसे छोडते जाते हैं परन्तु वह छोडें तो क्या और न छोडें तो क्या ? इन्द्र के परस्त्री (अहिल्या) गमन सें क्या वह काम अच्छा समझ लिया जायगा ? अफसोस ! हिन्दुस्थान में यह दुराचार दिन दिन बढता जाता है यहा के बहुत से कुलीन युवा छिप छिपकर इसमें शामिल होनें लगे हैं पर जेर इङ्गलैंड जैसे ठंडे मुल्क में शराब पीनें से लोगों की यह गत होती हैं तो न जानें हिन्दुस्थानियों का क्या परिणाम होगा और देश की इस दुर्दशा पर कौन्से देश हितैषी की आखों से आसू न टपकेंगे."

"अब तो आप हदसे आगे बढ चले" मुन्शी चुन्नीलाल नें कहा.

"नहीं, हरगिज़ नहीं मै जो कुछ कहता हू यथार्थ कहता हू देखो इसी मदिरा के कारण छप्पन कोटि यादवों का नाश घडी-भर मे हो गया, इसी मदिरा के कारण सिकन्दर नें भर जवानी में अपनें प्राण खो दिये मनुस्मृति में लिखा है "द्विजघाती, मद्यप बहुरि चोर, गुरु, स्त्री, मीत ॥ महापातकी हैं सोउ जाकी इनसों प्रीति ॥ × इसी तरह कुरान में शराब के स्पर्शतक का महा दोष लिखा है"

"आज तो बाबू साहब नें लाला ब्रजकिशोर की गद्दी दबा ली" मुन्शी चुन्नीलाल नें मुस्करा कर कहा

"राम, राम उन्का ढग तो दुनिया सै निराला है वह क्या अपनी बात चीत मैं किसी को एक अक्षर बोलनें देते हैं" मास्टर शिभूदयाल बोले.

"उन्की कहन क्या है अर्गन बाजा है एक बार चाबी देदी ; घंटों बजता रहा. मुन्शी चुन्नीलाल नें कहा

"मैंने तो कल ही कह दिया था कि ऐसे फिलासफर विद्या सबधी बातों मैं भलेही उपकारी हों ससारी बातों मैं तो किसी काम के नही होते" मास्टर शिभूदयाल बोले.

"मुझ को तो उन्का मन भी कुछ अच्छा नही मालूम देता" लाला मदनमोहन आपही बोल उठे

"आप उन्सै जरा हरकिशोर की बाबत बातचीत करेंगे तो रहासहा भेद और खुल जायगा देखैं इस विषय मैं वह अपनें भाई की तरफदारी करते हैं या इन्साफ पर रहते हैं" मुन्शी चुन्नीलाल नें पेच सै कहा

"क्या कहैं ? हमारी आदत निन्दा करनें की नहीं है परसों शाम को लाला साहब मुझ सै चांदनीचौक मैं मिले थे आंख की सैन मारकर कहनें लगे "आजकल तो बड़े शहरों मैं हो हम पर भी थोड़ी कृपादृष्टि रक्खा करो" मास्टर शिभूदयाल नें मदन-मोहन का आशय जान्ते ही जड़ दी.

"हैं! तुम से ये बात कही ?" लाला मदनमोहन आश्चर्य से बोले

"मुझ मैं तो सैकड़ों बार ऐसी नोक झोक हो चुकी है परन्तु मैं कभी इन्बातों का विचार नहीं करता" मुन्शी चुन्नी-लाल नें मिर्चें सी मिलाईं.

"जब वह मेरे पीछे मेरा ठट्टा उडाते हैं तो मेरे मित्र कहा रहे ? जब तक वह मेरे कामों के लिये केवल मुझ से झगडते थे मुझ को कुछ विचार न था परन्तु जब वह मेरे पासवालों को छेडने लगे तो मैं उनको अपना मित्र कभी नहीं समझ सका" लाला मदनमोहन बोल उठे.

"सच तो ये है कि सब लोग आप की इस बरदाश्त पर बडा आश्चर्य करते हैं" मुन्शी चुन्नीलाल नें अवसर पाकर बात आगे बढाई.

"आपको लाला ब्रजकिशोर का इतना क्या दबाव है ? उन्सै आप इतनें क्यों दबते हैं ? " मास्टर शिभूदयाल ने कहा

"सच है में अपनी दौलत खर्च करता हु इस्में उन्की गाठ का क्या जाता है ? और वह बीच, बीच में बोलनेवाले कौन हैं ? " लाला मदनमोहन तेज होकर कहने लगे.

"इस्तरह पर हर बात में रोक टोक होने सै बात का गुमर नहीं रहता, नोकरों को मुकाबला करने का होसला बढता जाता है और आगे चल कर कामकाज में फर्क आने की सूरत हो चली है " मुनशी चुन्नीलाल ले बढाने लगे

"में अब उन्सै हरगिज नहीं दबूंगा मैंने अब तक दब, दब कर वृथा उनको सिर चढा लिया" लाला मदनमोहन नें प्रतिज्ञा की.

"जो वह झरने के सरोवरों मैं अपना तैरना और तिवारी के ऊपर सै कलामुंडी खा खाकर कूदना देखैंगे तो फिर घंटों तक उन्का राग काहेको बन्द होगा ? " पंडित पुरुषोत्तमदास बडी देर सै बोलने के लिये उमाह रहे थे वह झट पट बोल उठे

"उन्का वहां चलने का क्या काम है? उन्को चार दोस्तों मैं बैठ कर हसने बोलने की आदतही नहीं है वह तो शाम सवेरे हवा खा लेते हैं और दिन भर अपनें काम मैं लगे रहते हैं या पुस्तकों के पत्रे उलट पुलट किया करते हैं! वह संसारका सुख भोगनें के लिये पैदा नहीं हुए फिर उन्हें लेजाकर हम क्या अपना मजा मट्टी करें?" लाला मदनमोहन नें कहा.

"बरसात मैं तो यहा झूलों की बडी बहार रहती है" हकीम अहमदहुसैन बोले

"परन्तु यह ऋतु झूलों की नहीं है आज कल तो होली की बहार है" पंडित पुरुषोत्तमदास ने जवाब दिया

"अच्छा फिर कब चलनें की ठैरी और मैं कितनें दिन की रुखसत ले आऊं" मास्टर शिभूदयाल नें पूछा

"वृथा देर करने से क्या फ़ायदा है? चलनाही ठैरा तो कल सवेरे यहां से चलदेंगे और कम से कम दस बारह दिन वहां रहैंगे" लाला मदनमोहन नें जवाब दिया

लाला मदनमोहन केवल सैर के लिये कुतब नहीं जाते ऊपर से यह केवल सैर का बहाना करते हैं परन्तु इन्के जी मैं अब तक हरकिशोर की धमकी का खटका बनरहा है मुनशी चुन्नीलाल और बाबू बैजनाथ वग़ैरे नें इन्को हिम्मत बधाने मैं कसर नहीं रक्खी परन्तु इन्का मन कमजोर है इस्सै इन्की छाती अब तक नहीं ठुकती यह इस अवसर पर दस पांच दिन के लिये यहां सै टलजाना अच्छा समझते हैं इन्का मन आज दिन भर बेचैन रहा है इसलिये और कुछ फ़ायदा हो या न हो यह अपना मन बहला ने के लिये, अपने मनसे यह डरावनें विचार दूर करने के लिये

दस पाच दिन यहां से बाहर चले जाना अच्छा समझते हैं और इसी वास्ते ये झट पट दिल्ली से बाहर जाने की तैयारी कर रहे हैं.

प्रकरण १७.

स्वतन्त्रता और स्वेच्छाचार

जो कहुं सब प्राणीन सों होय सरलता भाव,
सब तीरथ अभिषेक तें ताको अधिक प्रभाव +

विदुरप्रजागरे

लाला मदनमोन कुतब जाने की तैयारी कर रहे थे इतने में लाला ब्रजकिशोर भी आपहुंचे.

+ सर्वतीर्थेषु वा स्नान सर्वभूतेषु चार्जवम् ॥
उभे त्वेते समे स्यातां आर्जवं वा विशिष्यते ॥

"आपने लाला हरकिशोर का कुछ हाल सुना?" ब्रजकिशोर के आते ही मदनमोहन नें पूछा

"नहीं! मैं तो कचहरी से सीधा चला आया हूं"

"फिर आप नित्य तो घर होकर आते थे आज सीधे कैसे चले आए?" मास्टर शिभूदयाल ने सन्देह प्रगट करके कहा

"इस्मैं कुछ दोष हुआ? मुझको कचहरी में देर होगई थी इस्वास्तै सीधा चला आया तुम अपना मतलब कहो"

" मतलब तो आपका और मेरा लाला साहब खुद समझते होंगे परन्तु मुझको यह बात कुछ नई, नईसी मालूम होती है" मास्टर शिभूदयाल ने सन्देह बढ़ाने के वास्तै कहा.

" सीधी बात को बे मतलब पहेली बनाना क्या जरूर है? जो कुछ कहना हो साफ कहो."

" अच्छा! सुनिये " लाला मदनमोहन कहने लगे " लाला हरकिशोर के स्वभाव को तो आप जान्तेही हैं आपके और उन्के बीच बचपन सै झगडा चला आता है —"

" वह झगडा भी आपही की बदौलत है परन्तु खैर! इसमय आप उस्का कुछ बिचार न करें अपना वृत्तान्त सुनायँ औरों के काम मैं अपनी निजकी बातोंका सम्बन्ध मिलाना बडी अनुचित बात है? " लाला ब्रजकिशोर ने कहा.

" अच्छा! आप हमारा वृत्तान्त सुनिये" लाला मदनमोहन कहने लगे " कई दिन सै लाला हरकिशोर रूठे रूठेसे रहते थे कल बेसबब हरगोविंद सै लड पडे उस्की जिदपर आप पाच, पांच रुपेके घाटेसे टोपियें देने लगे! शामको बाग मैं गए तो लाला हरदयाल साहब सै वृथा झगड पडे, आज यहा आए तो मुझको और चुन्नी लाल को सैंकडों कहनी न कहनी सुनागए!"

" बेसबब तो कोई बात नहीं होती आप इस्का असली सबब बताइये? और लाला हरकिशोर पाच, पाच रुपेके घाटेपर प्रसन्नता सै आपको टोपिया देते थे तो आपने उनमें सै दस, पाच क्यों नही लेलीं? इन्मैं आप सै आप हरकिशोर पर पाच पचीस रुपे का जुर्माना होजाता " लाला ब्रजकिशोर ने मुस्करा कर

"तो क्या मैं हरकिशोर की जिदपर उस्की टोपियें लेलेता और दस वीस रुपेके वास्ते हरगोविंद को नीचा देखने देता ? मै हरगोविंद की भूल अपनें ऊपर लेनेंको तैयार हू परंतु, अपनें आश्रितुओं की ऐसी वेइज्ज़ती नहीं किया चाहता" लाला मदनमोहन नें जोर देकर कहा

"यह आप का झूटा पक्षपात है" लाला ब्रजकिशोर स्वतन्त्रता से कहनें लगे "पापी आप पाप करनें से ही नहीं होता. पापियों की सहायता करनेवाले, पापियों को उत्तेजन देनेंवाले बहुत प्रकार के पापी होते हैं, कोई अपनें स्वार्थ से, कोई अपराधी की मित्रता से कोई औरोंकी शत्रुता से, कोई अपराधी के सबंधियों की दया से, कोई अपनें निजके सबंध से, कोई खुशामद से, महान् अपराधियों का पक्ष करनेंवाले बन जाते हैं परंतु वह सब पापी समझे जाते हैं और वह प्रगट में चाहे जैसे धर्मात्मा, दयालु, कोमल चित्त हों, भीतर से घट भी बहुधा वैसे ही पापी और कुटिल होते हैं"

"तो क्या आप की राह में किसी की सहायता नहीं करनी चाहिये ?" लाला मदनमोहन नें तेज होकर पूछा

"नहीं, बुरे कामोंके लिये बुरे आदमियों की सहायता कभी नहीं करनी चाहिये" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "रशिया का शहन्शाह पीटर एक वार भरजवानी में ज्वर से मरनें लायक हो गया था उस्समय उस्के वजीर नें पूछा कि "जो अपराधियों को अभी लूट, मार के कारण कठोरदंड दिया गया है क्या वह भी ईश्वर प्रार्थना के लिये छोड दिये जायँ ?" पीटर नें निर्बल अवाज से कहा "क्या तुम यह समझते हो कि इन अभागों को

क्षमा करनें और इन्साफ की राह में कांटे बोनें से मैं कोई अच्छा काम करूंगा ? और जो अभागे माया जाल मै फंसकर उस सर्व शक्तिमान ईश्वर कोही भूल गए हैं मेरे फायदे के लिये ईश्वर उन्की प्रार्थना अंगीकार करैगा ? नहीं हरगिज नहीं, जो कोई काम मुझ से ईश्वर की प्रसन्नता लायक बन पड़े तो वह यही इन्साफ का शुभ काम है"

"मैं तो आप के कहनें से इन्साफ के लिये परमार्थ करना कभी नहीं छोड सक्ता" लाला मदनमोहन तमक कर कहनें लगे।

"जो जिस्के लिये करना चाहिये सो करना इसाफ में आ गया परन्तु स्वार्थ का काम परमार्थ कैसै हो सक्ता है ? एक के लाभ के लिये दूसरों की अनुचित हानि परमार्थ मैं कैसै समझी जा सक्ती है ? किसी तरह के स्वार्थ बिना केवल अपनें ऊपर परिश्रम उठा कर, आप दु:ख सहकर, अपना मन मारकर औरो. को सुखी करना सच्चा धर्म्म समझा जाता है जैसै यूनान में कोडर्स नामी बादशाह राज करता था उस्समय यूनानियों पर हेरेक्लिडिली लोगों नें चढाई की. उससमय के लोग ऐसे अवसर पर मंदिर में जाकर हार जीत का प्रश्न किया करते थे इसी तरह कोडर्सनें प्रश्न किया तब उसे यह उत्तर मिला कि "तू शत्रु के हाथ से मारा जायगा तो तेरा राज स्वदेशियोंके हाथ बना रहेगा और तू जीता रहैगा तो शत्रु प्रबल होता जायगा" कोडर्स देशो-पकार के लिये प्रसन्नता सै अपनें प्राण देनें को तैयार था परन्तु कोडर्स के शत्रु को भी यह बात मालूम हो गई इस लिये उसनें अपनी सेनामें हुक्म दे दिया कि कोडर्स को कोई न मारे. तथापि [illegible] नें यह बात लोग दिखाईके लिये नहीं की थी इससै वह

साधारण सिपाही का भेप बना कर लड़ाई मैं लड़ मरा परन्तु अपने देशियों की स्वतन्त्रता शत्रुके हाथ न जानें दी."

"जब आप स्वतन्त्रता को ऐसा अच्छा पदार्थ समझते हैं तो आप लाला साहब को इच्छानुसार काम करनें सै रोककर क्यों पिंजरेका पछी बनाया चाहते हैं?" मास्टर शिभूदयाल नें कहा

"यह स्वतन्त्रता नहीं स्वेच्छाचार है, और इन्कों एक समझनें सै लोग बारम्बार धोखा खाते हैं" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "ईश्वर नें मनुष्यों को स्वतन्त्र बनाया है पर स्वेच्छाचारी नहीं बनाया क्योंकि उस्को प्रकृति के नियमों मैं अदलबदल करने की कुछ शक्ति नहीं दी गई वह किसी पदार्थ की स्वाभाविक शक्ति मैं तिलभर घटा बढ़ी नहीं करसक्ता जिन पदार्थों मैं अलग, अलग रहनें अथवा रसायनिक सयोग होनें सै जो, जो शक्ति उत्पन्न होनें का नियम ईश्वर नें बना दिया है बुद्धि द्वारा उन पदार्थों की शक्ति पहचानकर केवल उन्सै लाभ लेनें के लिये मनुष्य को स्वतन्त्रता मिली है इसलिये जो काम ईश्वर के नियमानुसार स्वाधीन भाव सै किया जाय वह स्वतन्त्रता मैं समझा जाता है और जो काम उस्के नियमों के विपरीत स्वाधीन भाव सै किया जाय वह स्वेच्छाचार और उस्का स्पष्ट दृष्टांत यह है कि शतरंज के खेल मैं दोनों खिलाडियों को अपनी मर्जी मूजब चाल चलनें की स्वतन्त्रता दी गई है परन्तु वह लोग घोड़े को हाथी की चाल या हाथीको घोड़े की चाल नहीं चल सक्ते और जो वे इस्तरह चलैं तो उन्का चलना शतरंज के

इन्साफ़ का साथ देना और हर तरह का स्वार्थ छोडकर सर्व साधारण के हित मैं तत्पर रहना मेरे जान सच्चा परोपकार है" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया

प्रकरण १८.

क्षमा

नरको भूषण रूप है रूपहुको गुणजान।
गुणको भूषण ज्ञान है क्षमा ज्ञान को मान ॥ १ ॥ *

सुभाषित रत्नाकरे.

"आप चाहे स्वार्थ समझैं चाहे पक्षपात समझैं हरकिशोर नें तो मुझे ऐसा चिडाया है कि मैं उस्सै बदला लिये बिना कभी नही रहूंगा" लाला मदनमोहन नें गुस्से सै कहा

"उस्का कसूर क्या है? हरेक मनुष्य सै तीन तरह की हानि हो सक्ती है एक अपवाद करके दूसरे के यश मैं धब्बा लगाना, दूसरे शरीर की चोट, तीसरे माल का नुक्सान करना इन्मैं हरकिशोर ने आप की कौनसी हानि की?" लाला ब्रजकिशोर नें कहा.

लाला मदनमोहन के मन मैं यह बात निश्चय समा रही थी कि हरकिशोर नें कोई बडा भारी अपराध किया है परंतु ब्रजकिशोर नें तीन तरह के अपराध बताकर हरकिशोर का अपराध पूछा तब यह कुछ न बता सके क्योंकि मदनमोहन की वाकफि-[यत] मैं ऐसा कोई अपराध हरकिशोर का न था मदनमोहन

को लोगों नें आस्मान पर चढा रक्खा था इसलिये केवल हरकिशोर के जवाब देनें से उस्के मन में इतना गुस्सा भर रहा था.

"उस्नें बडी ढिटाई की वह अपनें रुपे तत्काल मागनें लगा और रुपया लिये विना जानें सै साफ इन्कार किया" लाला मदनमोहन ने बडी देर सोच विचार कर कहा.

"बस उस्का यही अपराध है? इस्में तो उस्ने आप की कुछ हानि नहीं की मनुष्य को अपना सा जी सबका समझना चाहिये. आप का किसी पर रुपया लेना हो और आप को रुपे की जरूरत हो अथवा उस्की तरफ से आप के जीमें किसी तरहका शक आजाय अथवा आप के और उस्के दिल में किसी तरह का अन्तर आजाय तो क्या आप उस्सै व्यवहार बंद करने के लिये अपने रुपेका तकाजा न करेंगे? जब ऐसी हालतों में आप को अपनें रुपे के लिये औरों पर तकाज़ा करनें का अधिकार है तो औरों को आप पर तकाजा करने का अधिकार क्यों न होगा? आप तो बेसबब जरा, जरासी बातों पर मुंह बनाए, वाजबी राह सै जरासी बात दुलख देने पर उस्को अपना शत्रु समझने लगें और दूसरे को वाजवी बात कहने का भी अधिकार न हो!" लाला ब्रजकिशोर ने जोर देकर कहा

"साहब! उस्ने लाला साहब को तंग करने की नीयत सै ऐसा तकाज़ा किया था" मुन्शी चुन्नीलाल बोले

पेज १२४ ⊛ नरस्याभरणं रूप रूपस्याभरणं गुणः॥
गुणस्याभरणं ज्ञानं ज्ञानस्याभरणं क्षमा

"लाला साहब को उस्का स्वभाव पहचान्कर उस्सै व्यवहार डालना चाहिये था अथवा उस्का रुपया बाकी न रखना चाहिये था. जब उसका रुपया बाक़ी है तो उस्को तकाजा करनें का निस्सदेह अधिकार है और उस्नें कड़ा तकाज़ा करनें मैं कुछ अपराध भी किया हो तो उस्के पहले कामोंका सबध मिलाना चाहिये" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "प्रल्हादजीनें राजा बलिसे कहा है "पहलो उपकारी करै जो कहु अतिशय हान ॥ तोहु ताकों छोडिये पहले गुण अनुमान ॥ १ ॥ विन समझे आश्रित करै सोऊ क्षमिये तात ॥ सब पुरुषनमैं सहज नहि चतुराई की,बात ॥ २ ॥" + यह सच है कि छोटे आदमी पहले उपकार करकै पीछे उसका बदला बहुधा अनुचित रीतिसे लिया चाहते हैं परन्तु यहा तो कुछ ऐसा भी नही हुआ"

"उपकार हो या न हो ऐसे आदमियोंको उन्की करनी का दड तो अवश्य मिलना चाहिये" मास्टर शिभूदयाल कहनें लगे जो उन्को उन्की करनीका दड न मिलेगा तो उन्की देखा देखी और लोग विगडते चले जायँगे और भय विना किसी बातका प्रबन्ध न रह सकेगा सुधरे हुए लोगों का यह नियम है कि किसीको कोई नाहक न सतावे और सतावे तो दड पावै दडका प्रयोजन किसी अपराधी सैं बदला लेनेंका नहीं.

+ पूर्वोपकारी यस्ते स्यादपराधे गरीयसि ॥
उपकारेण तत्तस्य क्षन्तव्यमपराधिनः ।
अबुद्धिमाश्रितानां तु क्षन्तव्यमपराधिनां ॥
नहि सर्वत्र पाण्डित्यं सुलभं पुरुषेणवै

है बल्कि आगेके लिये और अपराधों से लोगों को बचानें का है"

"इसी वास्ते मै चाहता हू कि मेरा चाहे जितना नुक्सान हो जाय परंतु हरकिशोर के पल्ले फूटी कौडी न पडनें पावे" लाला मदनमोहन दांत पीसकर कहनें लगे.

"अच्छा ! लाला साहबनें कहा इस रीति सें क्या मास्टर साहब के कहनें का मतलब निकल आवेगा ?" लाला ब्रजकिशोर पूछने लगे "आप जान्ते हैं कि दंड दो तरह का है एक तो उचित रीति से अपराधी को दंड दिवाकर औरोंके मनमें अपराधकी अरुचि अथवा भय पैदा करना, दूसरे अपराधी सें अपना वैर लेना और अपनें जी का गुस्सा निकालना जिस्नें झूटी निंदा करके मेरी इज्जत ली उस्को उचित रीति सें दंड करानेंमें मै अपनें देशकी सेवा करता हू परंतु मै यह मार्ग छोडकर केवल उस्की बरबादी का विचार करू अथवा उस्का वैर उसके निर्दोष संबधियों से लिया चाहू, आधीरात के समय चुपके सें उस्के घर में आग लगा दू और लोगों को दिखानें के लिये हाथ में पानी लेकर आग बुझानें जाऊ तो मेरी बराबर नीच कौन होगा ? विदुरजी नें कहा है "सिद्ध होत विनहू जतन मिथ्या मिश्रित काज। अकर्तव्यते सप्तह मन न धरो महाराज ॥ १" ऐसी काररवाई करनेंवाला अपनें मन में प्रसन्न होता है कि मैंनें अपनें वैरीको दुखी किया परंतु वह आप महापापी बन्ता है और देशका पूरा नुक्सान करता है मनु महाराज नें कहा है "दुखित होय

---

१ मिथ्योपेतानि कर्माणि सिद्धयुर्यानि भारत ॥

अनुपायप्रयुक्तानि मास्म तेषु मनः कृथा ॥

भाखै न तौ मर्म विभेदक बैन ॥ द्रोह भाव राखै न चित करै न परहि अचैन ॥ २"

जो अपराध केवल मन को सतानेंवाले हों और प्रगट मैं सावित न हो सकैं तो उन्का बदला दूसरे सै कैसे लिया जाय ?" लाला मदनमोहन नें पूछा.

"प्रथम तो ऐसा अपराध होही नहीं सक्ता और थोड़ा बहुत हो भी तो वह ख़याल करनें लायक नहीं है क्योंकि संदेह का लाभ सदा अपराधी को मिल्ता है इस्के सिवाय जब कोई अपराधी सच्चे मन से अपनें अपराध का पछताव कर ले तो वह भी क्षमा करनें योग्य हो जाता है और उस्सै भी दंड देनें के बराबर ही नतीजा निकल आता है"

"पर एक अपराधी पर इतनी दया करनी क्या जरूर है ?" लाला मदनमोहन नें ताज्जुब सै पूछा.

"जब हम लोग सर्व शक्तिमान परमेश्वर के अत्यंत अपराधी होकर उस्सै क्षमा करानें की आशा रखते हैं तो क्या हम को अपनें निजके कामों के लिये, अपनें अधिकार के कामों के लिये, आगे की राह दुरस्त हुए पीछें, अपराधी के मन मैं शिक्षा की बराबर पछतावा हुए पीछे, क्षमा करना अनुचित है ? यदि मनुष्यके मन मैं क्षमा ओर दया का लेश भी न हो तो उस्मैं और एक हिंसक जंतु मैं क्या अन्तर है ? पोप कहता है "भूल करना मनुष्य का स्वभाव है परंतु उस्को क्षमा करना ईश्वर का गुण है" ×

---

२ नारुन्तुदः स्यादार्तोपि न परद्रोहकर्मधी ॥
ययास्योद्विजते वाचा नालोकान्तामुदीरयेत् ॥

+ To err is human, to forgive divine.

एक अपराधी अपना कर्तव्य भूल जाय तो क्या उस्की देखा देखी हम को भी अपना कर्तव्य भूल जाना चाहिये सादीनें कहा है "होत हुमा याही लिये सब पक्षिन को राय ॥ अस्थिभक्ष रक्षे तनहिं काहू कों न सताय ॥" * दूसरे का उपकार याद रखना वाजबी बात हैं परन्तु अपकार याद रखनें मैं या यों कहो कि अपनें कलेजे का घाव हरा रखनें मैं कौन्सी तारीफ़ है ? जो दैव योग से किसी अपराधी को औरों के फ़ायदे के लिये दंड दिवानें की जरूरत हो तो भी अपनें मन मैं उस्की तरफ दया और करुणा ही रखनी चाहिये"

"ये सब बातें हँसी खुशी मैं याद आती हैं क्रोध मैं बदला लिये बिना किसी तरह चित्त को सन्तोष नहीं होता" लाला मदनमोहन नें कहा.

"बदला लेनें का तो इस्सै अच्छा दूसरा रस्ता ही नही है कि वह अपकार करे और उस्के बदले आप उपकार करो" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "जब वह अपनें अपराधों के बदले आप की महेरबानी देखेगा तो आप लज्जित होगा और उस्का मन ही उस्को धिक्कारने लगेगा वैरी के लिये इस्सै कठोर दंड दूसरा नहीं है परन्तु यह बात हर किसी सै नहीं हो सक्ती तरह, तरह का दुख, नुकसान और निन्दा सहने के लिये जितनें साहस, धैर्य और गंभीरता की जरूरत है बैरी सै बैर लेने के लिये उन्की कुछ भी जरूरत नहीं होती यह काम बहुत थोडे आदमियों सैं बन पडता है पर जिनसै बन पडता है वही सच्चे धर्मात्मा हैं —

---

* हुमाय बरसरे मुर्गां अजां शरफ़ दारद ॥
किउस्तुख्वां खुरदो तायरे नयाजारद ॥

प्रकरण १६.

स्वतन्त्रता.

"स्तुति निन्दा कोऊ करहि लक्ष्मी रहहि कि जाय
मरै कि जियै न धीरजन धरै कुमारग पाय ॥ ॐ

प्रसंगरत्नावली.

"सच तो यह है कि आज लाला ब्रजकिशोर साहब ने बहुत अच्छी तरह भाईचारा निभाया इन्की बात चीत मै यह बडी तारीफ है कि जैसा काम किया चाहते हैं वैसा ही असर सब के चित्त पर पैदा कर देते हैं" मास्टर शिंभूदयाल नें मुस्करा कर कहा ;

"हरगिज नहीं हरगिज नहीं, मैं इन्साफ के मामले मैं भाईचारे को पास नहीं आनें देता जिस रीति सै बरतनें के लिये मैं और लोगों को सलाह देता हूं उस रीति सै बरतना मैं अपनें ऊपर फर्ज समझता हूं कहना कुछ और, करना कुछ और नालायकों का काम है और सचाई की अमिट दलीलों को दलील करनेंवाले पर झूटा दोषारोप करके उडा देनेंवाले और होते हैं,, लाला ब्रजकिशोर नें शेर की तरह गरज कर कहा और क्रोध के मारे उन्की आखें लाल होगईं.

लाला ब्रजकिशोर अभी मदनमोहन [illegible] के लिये सलाह देरहे थे इतने [illegible] एक शि[illegible] बात

पर शुल्ले मैं कैसे भर गए? शिभूदयाल नें तो कोई बात प्रगट मैं ब्रजकिशोर के अप्रसन्न होनें लायक नहीं कही थी? निस्सन्देह प्रगट मैं नहीं कही परन्तु भीतर से ब्रजकिशोर का हृदय विदीर्ण करने के लिये यह साधारण वचन सबसे अधिक कठोर था. ब्रजकिशोर और सब बातो मैं निरभिमानी थे परन्तु अपनी ईमानदारी का अभिमान रखते थे इस लिये जब शिभूदयाल ने उन्की ईमानदारी मैं बट्टा लगाया तब उन्को क्रोध आए बिना न रहा. ईमानदार मनुष्य को इतना खेद और किसी बात से नहीं होता जितना उस्को बेईमान बताने से होता है

"आप क्रोध न करें. आप को यहा की बातों मैं अपना कुछ स्वार्थ नहीं है तो आप हरेक बात पर इतना जोर क्यों देते हैं? क्या आप को ये सब बातें किसी को याद रह सक्ती हैं? और शुभचिन्तकों के बिचार से हानि लाभ जतानें के लिये क्या एक इशारा काफी नहीं है?" मुन्शी चुन्नीलाल नें मास्टर शिभूदयाल की तरफदारी करके कहा

"मैंने अबतक लाला साहब से जो स्वार्थ की बात की होगी वह लाला साहब और तुम लोग जान्ते होगे जो इशारे मैं काम होसका तो मुझको इतनें बढा कर कहने से क्या लाभ था? मैंने कहीं हैं वह सब बातें निस्सन्देह याद नहीं रह सकीं परन्तु मन लगा कर सुनें से बहुधा उन्का मतलब याद रह सक्ता है और उस्समय याद न भी रहे तो समय पर याद आ जाता है मनुष्य के जन्म से लेकर वर्तमान समय तक जिस, जिस हालत मैं वह रहता है उस सबका असर बिना जानें उस्की तबियत मैं बना रहता है इस वास्तें मैंने ये बातें जुदे, जुदे अवसर पर यह

अनुसार अपने बराबर वालों की कारस्वाई, देशदेशांतर का वृत्तान्त और होनहार वातों पर निगाह पहुचाकर अपने रोजगार धदेकी वातोंमें कुछ उन्नति की जाती है ? व्यापारके तत्व क्या हैं. थोडे खर्च, थोडी महनत और थोडे समयमें चीज तैयार होनेंसेकितना फायदा होता है, इन वातोंपर किसीनें मन लगाया है ? उगाहीमें कितने रुपे लेनें हैं, पटने की क्या सूरत है, देनदारों की कैसी दशा है, मयादके कितनें दिन वाकी है इन वातोंपर कोई ध्यान देता हे ? व्योपार सिगाके मालपर कितनी रकम लगती है, माल कितना मोजूद है किस्समय वेचनेंमें फायदा होगा इन वातों पर कोई निगाह दौडाता है ? खर्च सीगाके मालकी कभी विध मिलाई जाती है ? उस्की कमीवेशीके लिये कोई जिम्मेदार है ? नौकर कितने हैं, तनख्वाह क्या पाते हैं, काम क्या करते हैं, उन्की लियाकत कैसी है, नीयत कैसी है, कारस्वाई कैसी है, उन्की सेवाका आप पर क्या हक है, उन्के रखनें न रखनें में आपका क्या नफा नुक्सान है इनवातोंको कभी आपने मन लगा कर सोचा है ?"

"मैं पहले ही जान्ता था कि आप फिर फिरकर मेरे पासके आदमियोंपर चोट करेंगे परन्तु अब मुझको यह वात असह्य है मैं अपना नफा नुक्सान समझता हू आप इस विषयमें अधिक परिश्रम न करें" लाला मदनमोहननें रोककर कहा.

"मैं क्या कहूंगा पहलेसे बुद्धिमान कहते चले आए हैं" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "चलियम कूपर कहता है. —

"जिन नृपनको शिशुकालसैं सेवहि छली तनमनदिये ॥
तिनकी दशा अविलोक करुणाहोत अति मेरे हिये ॥

आजन्मसों अभिषेकलों मिथ्या प्रशंसा जनकरैं ॥
बहु भांत अस्तुति गाय, गाय सराहि सिर स्हेरा धरैं ॥
शिशुकालते सीखत सदा सजधज दिखावन लोक मैं ॥
तिनको जगावत मृत्यु बहुतिक दिनगए इहलोक मैं ॥
मिथ्या प्रशंसी बैठ घुटनन, जोडकर, मुस्कावहीं ॥
छलकी सुहाती बातकहि पापहि धरम दरसावहीं ॥
छबिशालिनी, मृदुहासिनी अरधनिक नितघेरें रहैं ॥
झूटी झलक दरसाय मनहि लुभाय कछु दिनमैं लहैं ॥
जे हेम चित्रित रथन चढ, चंचल तुरग भजावहीं ॥
सेना निरख अभिमानकर, यों व्यर्थ दिवस गमावहीं ॥
'तिनकी दशा अविलोक भारत फेरहू मनदुख लिये ॥
नृपकी अधमगति देख 'करुणा होत अति मेरे हिये' ॥" *

"लाला साहब अपने सरल स्वभाव से कुछ नहीं कहते इस वास्ते आप चाहे जो कहते चले जायं परन्तु कोई तेज स्वभाव का मनुष्य होता तो आप इक तरह हगिरज न कहने पाते" मास्टर शिंभूदयाल ने अपनी जात दिखाई

---

* I pity kings whom worship waits upon,
Obsequious from the cradle to the throne,
Before whose infant eyes the flatterer bows,
And binds a wreath about their baby brows,
Whom education stiffens into state,
And death awakens from that dream too late.
Oh! if servility with supple knees,
Whose trade it is to smile, to crouch, to please,
If smooth dissimulation, skill'd to grace,
A devil's purpose with an angel's face,

प्रकरण २०

कृतज्ञता.

> तृणहु उतारे जनगनत कोटि सुहर उपकार
> प्राण दियेहू दुष्टजन करत बैर व्यवहार ॥ +
>
> भोजप्रबंधसार.

लाला ब्रजकिशोर मदनमोहन के पास सैं उठकर घर को जानें लगे उस्समय उन्का मन मदनमोहन की दशा देखकर दुःख सैं बिवस हुआ जाता था वह वारम्वार सोचते थे कि मदनमोहन नें केवल अपना ही नुक्सान नहीं किया. अपनें बाल बच्चों का हक भी डबो दिया मदनमोहन नें केवल अपनी पूंजी ही नहीं खोई अपने ऊपर कर्ज भी कर लिया.

भला ! लाला मदनमोहनको कर्ज करनेंकी क्या जरूरत थी? जो यह पहले ही सैं प्रबंध करनें की रीति जान्कर तत्काल अपनें आमद खर्च का बदोबस्त कर लेते को इन्को क्या ? इन्के बेटे पोतों को भी तंगी उठानें की कुछ जरूरत न थी. मैं आप तकलीफ सैं रहनें को, निर्लज्जता सैं रहनें को, बदइन्तज़ामी सैं रहनें को, अथवा किसी हकदार के हक में कमी करनें को पसंद नहीं करता, परंतु इन्को तो इन बातों के लिये उद्योग करनें की भी कुछ जरूरत न थी यह तो अपनी आमदनी का बदोबस्त

+ सन्ता स्वल्पोपकारमपि शतगुणमुपकर्षा यान्ति ॥
मान्यर्थयन्नपि कृतोपकारा खलाः परस्परं निवेदयन्ति ॥

करके असल पूंजी के हाथ लगाए बिना अमीरी ठाठ से उमरभर चैन कर सक्ते थे विदुरजी नें कहा है "फल अपक्व जो वृक्ष ते तोर लेत नर कोय ॥ फल को रस पावै नही नास बीजको होय ॥ नासबीज को होय यहै निज चित्त बिचारै ॥ पके, पके फललेइ समय परिपाक निहारै ॥ पके, पके फललेइ स्वाद रस लहै बुद्धिबल ॥ फलते पावै बीज, बीजते होइ बहुरिफल ॥ †" यह उपदेश सब नीतिका सार है परन्तु जहां मालिक को अनुभव न हो, निकटवर्ती स्वार्थपर हों वहां यह बात कैसे हो सक्ती है ? "जैसे माली बाग को राखत हितचित चाहि ॥ तैसैं जो कोला करत कहा दरद है ताहि ! ॥"

लाला मदनमोहन अबतक कर्जदारी की दुर्दशा का वृत्तान्त नहीं जान्ते

जिस्समय कर्जदार वादे पर रुपया नहीं दे सक्ता उसी समय सै लेनदार को अपनें कर्ज के अनुसार कर्जदार की जायदाद और स्वतन्त्रता पर अधिकार हो जाता है. वह कर्जदार को कठोर से कठोर वाक्य "बेईमान" कह सक्ता है, रस्ता चल्ते मैं उस्का हाथ पकड सक्ता है यह कैसी लज्जा की बात है कि एक मनुष्य को देखते ही डर के मारे छाती धडकनें लगे और शर्म के मारे आखें नीची हो जायं, सब लोग लाला मदनमोहन की तरह फिजूल खर्ची और झूंठी ठसक दिखानें मैं बरबाद नहीं होते सौ

---

† यः पक्वमपक्वानि फलानि प्रचिनोति च ॥
नाप्नोति रसं तेभ्यो बीजं च स विनश्यति
यस्तु पक्वमुपादत्ते काले परिणतं फलं ॥
[illegible]

मैं दो, एक समझवार भी किसी का काम बिगड जानें सै, या किसी की जामनी कर देनें सै या किसी और उचित कारण सै इस आफत मैं फस जाते हैं परन्तु बहुधा लोग अमीरों कीसी ठसक दिखानें मैं और अपनें बूते सै बढकर चलनें मैं क़र्जदार होते हैं

कर्जदारी मै सबसै बडा दोष यह है कि जो मनुष्य धर्मात्मा होता है वह भी कर्ज मैं फसकर लाचारी सै अधर्म्म की राह चलनें लगता है जब सै कर्ज लेनें की इच्छा होती है तब ही सै कर्ज लेनेंवाले को ललचानें, और अपनी साहूकारी दिखानें के लिये तरह, तरह की बनावट की जाती है. एकबार कर्ज लिये पीछे क़र्ज लेनें का चस्का पड जाता है और समय पर कर्ज नही चुका सक्ता तब लेनदार को धीर्य देनें और उस्की दृष्टि मैं साहूकार दीखनें के लिये ज्यादा ज्यादा क़र्ज मैं जकडता जाता है और लेनदार का कडा तक़ाज़ा हुआ तो उस्का कर्ज चुकानें के लिये अधर्म्म करनें की भी रुचि हो जाती है कर्जदार झूट बोलनें सै नही डरता और झूट बोले पीछे उस्की साख नहीं रहती वह अपनें बाल बच्चों के हक मैं दुश्मन सै अधिक बुराई करता है मित्रों को तरह, तरह की जोखों मैं फसाता है अपनी घडी भर की मोज के लिये आप जन्मभर के बंधन मैं पडता है और अपनी अनुचित इच्छा को सजीवन करनें के लिये आप मर मिटता है.

बहुत से अविचारी लोग कर्ज चुकानें की अपेक्षा उदारता को अधिक समझते हैं इस्का कारण यह है कि उदारता सै यश मिल्ता है, लोग जगह, जगह उदार मनुष्य की बडाई करते फिरते

हैं परन्तु कर्ज चुकाना केवल इन्साफ है इसलिये उस्की तारीफ कोई नहीं करता इन्साफ को लोग साधारण नेकी समझते हैं इस कारण उस्की निस्बत उदारता की ज्याद कदर करते हैं जो बहुधा स्वभाव की तेजी और अभिमान से प्रगट होती है परन्तु बुद्धिमानी से कुछ सबंध नहीं रखती किसी उदार मनुष्य से उस्का नौकर जाकर कहै कि फलाना लेनदार अपनें रुपेका तकाजा करने आया है ओर आप के फलानें गरीब मित्र अपनें निर्वाह के लिये आप की सहायता चाहते हैं तो वह उदार मनुष्य तत्काल कह देगा कि लेनदार को टाल दो और उस गरीब को रुपे देदो क्योंकि लेनदार का क्या? वह तो अपनें लेने लेता इस्के देने से वाह वाह होगी

परन्तु इन्साफ का अर्थ लोग अच्छी तरह नहीं समझते क्योंकि जिस्के लिये जो करना चाहिये वह करना इन्साफ है इसलिये इन्साफ में सब नेकियें आगई इन्साफ का काम वह जिस्में ईश्वर की तरफ का कर्तव्य, संसार की तरफ का कर्तव्य, और अपनी आत्मा की तरफ का कर्तव्य अच्छी तरह सम्पन्न होता हो. इन्साफ सब नेकियों की जड है और सब नेकिया उस्की शाखा प्रशाखा हैं इन्साफ की सहायता बिना कोई बात मध्यम भाव से न होगी तो सरलता अविवेक, बहादरी दुराग्रह, परोपकार अन्समझी और उदारता फिजूलखर्ची हो जायँगी.

कोई स्वार्थ रहित काम इन्साफ के साथ न किया जाय तो उस्की सूरत ही बदल जाती है और उस्का परिणाम बहुधा भयंकर होता है सिवाय की रकम में से अच्छे कामों में लगाए

पीछे कुछ रुपया बचे और वो निर्दोष दिल्लगी की बातों में खर्च कियाजाय तो उस्को कोई अनुचित नहीं बता सक्ता. परन्तु कर्तव्य कामों को अटका कर दिल्लगी की बातों में रुपया या समय खर्च करना कभी अच्छा नहीं हो सक्ता. अपने बूते मूजब उचित रीति सै औरों की सहायता करनी मनुष्य का फर्ज है परन्तु इस्का यह अर्थ नही है कि अपने मन को अनुचित इच्छाओं को पूरी करने का उपाय करै अथवा ऐसी उदारता पर कमर बांधे कि आगे को अपना कर्तव्य संपादन करने के लिये और किसी अच्छे काम में खर्च करने के लिये अपने पास फूटी कौडी न बचे बरकि सिवाय मे कर्ज होजाय.

अफसोस! लाला मदनमोहन की इस्समय ऐसी ही दशा हो रही है. इन्पर चारों तरफ सै आफत के बादल उमडे चले आते हैं परन्तु इन्हें कुछ खबर नहीं है विदुरजी ने सच कहा है—
"बुद्धिभ्र शते लहत विनासहि ॥ ताहि अनीति नोतिसी भासहि ॥+"

इस तरह सै अनेक प्रकार के सोच विचार में डूबे हुए लाला ब्रजकिशोर अपने मकान पर पहुंचे परन्तु उन्के चित्त को किसी बात सै जरा भी धैर्य न हुआ

लाला ब्रजकिशोर कठिन सै कठिन समय में अपनें मन को स्थिर रख सक्ते थे परंतु इस्समय उन्का चित्त ठिकानें न था उन्नें यह काम अच्छा किया कि बुरा किया? इस बात का निश्चय वह आप नही कर सक्ते थे वह कहते थे कि इस दशा में मदनमोहन का काम बहुत दिन नहीं चलेगा और उस्समय ये सब

+ बुद्धौ कलुषभूतायां विनाशे प्रत्युपस्थिते ॥
अनयो नयसंकाशो हृदयान्नापसर्पति ॥

रुपे के मित्र मदनमोहन को छोडकर अपनें, अपनें रस्ते लगेंगे परतु मैं क्या करू ? मुझको कोई रस्ता नहीं दिखाई देता और इस्समय मुझ से मदनमोहन की कुछ सहायता न हो सकी तो मैंनें ससार में जन्म लेकर क्या किया ?

फ्रान्स के- चौथे हेन्री नें डी ला ट्रेमाइल को देशनिकाला दिया था और काउन्ट डी आबिग्नी उस्सै मेल रखता था इसपर एक दिन चौथे हेन्री नें डी आबिग्नी सें कहा कि "तुम अबतक डी ला ट्रेमाइल की मित्रता कैसे नहीं छोडते"? डी आबिग्नी नें जवाब दिया कि "मैं ऐसी हालत में उस्की मित्रता नहीं छोड सक्ता क्योंकि मेरी मित्रता के उपयोग करनें का काम तो उस्को अभी पडा है"

पृथ्वीराज महोबेकी लड़ाई में बहुत घायल होकर मुर्दों के शामिल पडे थे और सजमराय भी उन्के बराबर उसी दशा में पडा था उस्समय एक गिद्ध आके पृथ्वीराज की आख निकालनें लगा पृथ्वीराजको उसके रोकनेंकी सामर्थ्य न थी इसपर सजमराय पृथ्वीराजको बचानेंके लिये अपने शरीर का मास काट, काट कर गिद्धके आगे फैंकने लगा जिस्सै पृथ्वीराजकी आखें बच गई और थोडी देरमें चन्द वगैरे आ पहुचे

हेनरी रिचमन्ड पीटरके भयसै ब्रीटनी छोड कर फ्रान्सको भागने लगा उस्समय उस्के सेवक सीमारने उस्के वस्त्र पहन कर उस्की जोपी अपने सिर ली और उस्को साफ निकाल दिया.

क्या इस्तरहसै मैं मदनमोहन की कुछ सहायता इस्समय नहीं कर सक्ता ! यदि इस काममें मेरी जान भी जाती रहे तो

कुछ चिन्ता नहीं जब मैं उन्को अनसमझ जान कर उन्के कहने
उन्हें छोड आया तो मैंनें कौन्सी बुद्धिमानी की ? पर मैं रह
क्या करता ? हां मैं हां मिला कर रहना रोगी को कुपथ्य देने
कम न था और ऐसे अवसर पर उन्का नुक्सान देख कर चुप
रहना भी स्वार्थ परता सैं क्या कम था ? मेरा विचार सदैव
यह रहता है कि काम करना तो विधी पूर्वक करना, न होवे
तो चुप ही रहना, वेगार तक को वेगार न समझना परन्तु
तो मेरे वाजवी कहनें सैं उल्टा असर होता था और दिनपर
जिद्द बढ़ती जाती थी मैंने बहुत धैर्य सैं उन्को राह पर लाने
अनेक उपाय किये पर उन्नें किसी हालत मैं अपनी हद्द सैं
बढना मंजूर न किया

असल तो ये है कि अब मदनमोहन बच्चे नहीं रहे उन्की
पक गई, किसीका दबाव उन्पर नहीं रहा लोगोंने हा मैं हां मि
कर उन्की भूलों को और दृढ कर दिया रुपे के कारण उ
अपनी भूलों का फल न मिला और संसारके दु ख सुखका
भव भी न होनें पाया बस रंग पक्का होगया विदुरजी कहते
कि "सन्त असन्त तपस्वी चोर। पापी सुकृती हृदय कठो
तैसो होय बसै जिहि संग। जैसो होत बसन मिल रंग ॥" *

यदि वह सावधान हों तो अंगद हनुमान की तरह उ
आज्ञा पालन करने मैं सब कर्तव्य संपादन हो जाते हैं पर
जहां ऐसा नहीं होता वहां बडी कठिनाई पडती है, सकडी ग
मैं हाथी नहीं चलता तब महावत कूद जाता है वृन्द कहते

---

* यदि सन्तं सेवति यद्यसन्तं तपस्विनं यदि वा स्तेनमेव ॥

कि "ताकों त्यों समझाइये जो समझे जिंहि बानि ॥ बैन कहत मग अन्धकों अरु बहरेको पानि ॥" जिस तरह सुग्रीव भोग विलास मैं फंस गया तब रघुनाथजी केवल उस्को धमकी देकर राह पर ले आए थे इस तरह लाला मदनमोहन के लिये क्या कोई उपाय नहीं होसक्ता ? हे जगदीश ! इस कठिन काम मैं तूं मेरी सहायता कर.

लाला ब्रजकिशोर इन्बातों के विचार मैं ऐसे डूबे हुए थे कि उन्को अपना देहानुसन्धान न था एक बार वह सहसा कलम उठा कर कुछ लिखने लगे और किसी जगह को पूरा महसूल देकर एक जरूरी तार तत्काल भेज दिया परन्तु फिर उन्हीं बातों के सोच विचार मैं मग्न होगए इस्समय उन्के मुखसै अनायास कोई, कोई शब्द बेजोड निकल जाते थे जिन्का अर्थ कुछ समझ मैं नहीं आता था एक बार उन्नें कहा "तुलसीदासजी सच कहते हैं "पट्रस बहु प्रकार ब्यंजन कोउ दिन अरु रैन बखाने ॥ बिन बोले सन्तोष जनित सुख खाय सोई पै जाने ॥" थोडी देर पीछै कहा "मुझको इस्समय इस वचन पर बरताव रखना पडेगा (बृन्द) झूंटहु ऐसो बोलिये साच बराबर होय ॥ जो अंगुरी सों भीत पर चन्द्र दिखावे कोए ॥" परन्तु पानी जैसा दूध सै मिल जाता है तेल सै नहीं मिल्ता विक्रमोर्वशी नाटक मैं उर्वशी के मुख सै सच्ची प्रीति के कारण पुरुषोत्तम की जगह पुरूरवा का नाम निकल गया था इसी तरह मेरे मुख सै कुछका कुछ निकल गया तो क्या होगा ? थोडी देर पीछै कहा "लोक निन्दा सै डरना तो वृथा है जब वह लोग जगत जननी जनक नन्दिनी की झूंटी निन्दा किये बिना नहीं रहे ! श्रीकृष्णचन्द्र को जाति वालों के अपवाद

का उपाय नारदजी से पूछना पडा ! तो हम जैसे तुच्छ मनुष्यों की क्या गिन्ती है ? सादीने लिखा है "एक विद्वान से पूछा गया था कि कोई मनुष्य ऐसा होगा जो किसी रूपवान सुन्दरी के साथ एकात में वैठा हो दरवाजा वन्द हो, पहरे वाला सोता हो मन ललचा रहा हो काम प्रवल हो + + और वह अपने शम दम के वल से निर्दोष वच सके ?" उसने कहा कि "हा वह रूपवान सुन्दरी से वच सक्ता है परन्तु निन्दकों की निन्दासे नहीं वच सक्ता" फिर लोक निन्दा के भय से अपना कर्तव्य न करना वडी भूल हे धर्म औरो के लिये नही अपने लिये और अपने लिये भी फल की इच्छा से नही, अपना कर्तव्य पूरा करने के लिये करना चाहिये परन्तु धर्म अधर्म होजाय, नेकी करते वुराई पल्ले पडे, औरों को निकालती वार आप गोता खाने लगे तो कैसा हो ? रुपेका लालच वडा प्रवल है और निर्धनोंको तो उन्के काम निकालने की चावी होने के कारण वहुत ही ललचाता है" थोडी देर पीछे कहा "हलधरदास ने कहा है "विन काले मुख नहि पलाश को अरुणाई है ॥ विन वूडे न समुद्र काहू मुक्ता पाई है ॥ इसी तरह गोल्ड स्मिथ कहता है कि "साहस किये विना अलभ्य वस्तु हाथ नही लग सक्ती" इसलिये ऐसे साहसी कामों मे अपनी नीयत अच्छी रखनी चाहिये यदि अपनी नीयत अच्छी होगी तो ईश्वर अवश्य सहायता करेगा और डूव भी जाँयगे तो अपनी स्वरूप हानि न होगी."

प्रकरण २१.

पतिव्रता.

पतिके संग जीवन मरण पति हर्षे हर्षाय
स्नेहमई कुलनारि की उपमा लखी न जाय †

शारंगधरे

लाला ब्रजकिशोर न जानें कब तक इसी भँवर जाल में फसे रहते परन्तु मदनमोहन की पतिव्रता स्त्री के पास सै उस्के दो नन्हें, नन्हें बच्चों को लेकर एक बुढिया आ पहुची इस्सै ब्रजकिशोर का ध्यान बट गया

उन बालकों की आखों में नींद घुलरही थी उन्को आतेही ब्रजकिशोर नें बडे प्यार सै अपनी गोद में बिठा लिया और बुढिया सै कहा "इन्को इस्समय क्यों हैरान किया? देख इन्की आखों में नींद घुल रही है जिस्सै ऐसा मालूम होता है कि मानो यह भी अपनें बाप के काम काज की निर्बल अवस्था देखकर उदास हो रहे हैं" उन्को छाती सै लगा कर कहा "शाबास! बेटे शाबास! तुम अपनें बाप की भूल नहीं समझते तोभी उदास मालूम होते हो परन्तु वह सब कुछ समझता है तोभी तुम्हारी हानि लाभ का कुछ बिचार नहीं करता झूटी जिद अथवा हठधर्मी सै तुम्हारा वाजबी हक खोए देता है तुम्हारे बाप को लोग बडा

† जीवति जीविते नार्ये मृतेमृता या मुदिता हर्षिते ॥
सहजस्नेह रसाला कुलवनिता केन तुल्या स्यात् ॥

उदार और दयालु बताते हैं परन्तु वह कैसा कठोर चित्त है कि अपनें गुलाब जैसे कोमल, और गंगाजल जैसे निर्मल बालकों के साथ विश्वासघात करके उन्को जन्म भर के लिये दरिद्री बनाए देता है वह नहीं जान्ता कि एक हकदार का हक छीन कर मुफ्त-खोरों को लुटा देनें मैं कितना पाप है। कहो अब तुम्हारे वास्ते क्या मंगवायँ ?"

"खिलोंनें" (खिलोनें) छोटे नें कहा "बप्फी" (बर्फी) बडे बोले और दोनों ब्रजकिशोर की मूछें पकड कर खेंचनें लगे ब्रजकिशोर नें बडे प्यार से उन्के गुलाबी गालों पर एक, एक मीठी चूमी लेली और नौकरों को आवाज देकर खिलोनें और बरफी लानें का हुक्म दिया

"जी! इन्की मानें ये बच्चे आप के पास भेजे हैं" बुढ़िया बोली "और कह दिया है कि इन्को आप के पाओं मैं डाल कर कह देना कि मुझ को आप के क्रोधित होकर चले जानें का हाल सुन्कर बडी चिन्ता हो रही है मुझ को अपनें दु ख सुख का कुछ विचार नही मैं तो उन्के साथ रहनें मैं सब तरह प्रसन्न हूं परन्तु इन छोटे, छोटे बच्चों की क्या दशा होगी ? इन्को विद्या कौन पढायगा ? नीति कौन सिखायगा ? इन्की उमर कैसे कटेगी ? मैं नहीं जान्ती कि आप को इस कठिन समय मैं अपना मन मार कर उन्की बुद्धि सुधारनी चाहिये थी अथवा उन्को अधर धार मैं लटका कर चले जाना चाहिये था ? खैर! आप उन्पर नहीं तो अपनें कर्तव्य पर दृष्टि करें, अपनें कर्तव्य पर नहीं तो इन छोटे, बच्चों पर दया करें ये अपनी रक्षा आप नहीं कर सक्ते बोझ आपके सिर है आप इन्की खबर न लेंगे तो संसार

में इन्का कहीं पता न लगेगा और ये बिचारे योंही झुर कर मर जायँगे ?"

यह बात सुनकर व्रजकिशोर की आखें भर आई थोडी देर कुछ नहीं बोला गया फिर चित्त स्थिर कर के कहनें लगे "तुम बहन सें कह देना कि मुझको अपना कर्तव्य अच्छी तरह याद है परन्तु क्या करू ? मैं विवस हु काल की कुटिल गति सें मुझ को अपनें मनोर्थ के विपरीति आचरण (बरताव) करना पडता है तथापि वह चिन्ता न करे. ईश्वर का कोई काम भलाई सें खाली नहीं होता उस्ने इसमें भी अपना कुछ न,कुछ हित ही सोचा होगा" लडकों की तरफ देखकर कहा "बेटे ! तुम कुछ उदास मत हो जिस तरह सूर्य चन्द्रमा को ग्रहण लग जाता है इसी तरह निर्दोष मनुष्यों पर भी कभी, कभी अनायास विपत्ति आपडती है परतु उस समय उन्हें अपनी निर्दोषता का विचार कर के मन में धैर्य रखना,चाहिये"

उन अनसमझ बचों को इन बातों की कुछ परवा न थी बरफी और खिलोनों के लालच सें उन्की नींद उड गई थी इस वास्तें वह तो हरेक चीज को उठाया करी में लग रहे थे और व्रजकिशोर पर तकाजा जारी था

थोडी देर में बरफी और खिलोनें भी आपहुचे इस्समय उन्की खुशी की हद न रही व्रजकिशोर दोनों को बरफी बाटा चाहते थे इतने में छोटा हाथ मार कर सब ले भागा और बडा उस्सें छीन्नें लगा तो सब की सब एकबार मुह में रख गया मुह छोटा था इसलिये वह मुह में नहीं समाती थी परन्तु यह खुशी भी कुछ थोडी न थी कनअखियों से बडे की तरफ देखकर

मुस्कराता जाता था और नाचता जाता था वह भोली, भ
सूरत, ठुमक, ठुमक कर नाचना, छिप, छिप कर बडे की त
देखना, सैन मारना. उस्के मुस्करानें में दूध के छोटे
दातों की मोती की सी झलक देखकर थोडी देर के लिये
किशोर अपनें सब सारा विचार भूल गए परन्तु इस्को ना
कूदता देखकर अब लडा मचल पडा उस्नें सब खिलोनें
कब्ज़े में कर लिये और ठिनक, ठिनक कर रोनें लगा ब्रजकि
उसको बहुत समझाते थे कि "वह तुम्हारा छोटा भाई है तुम
हिस्से की बरफी खाली तो क्या हुआ ? तुम ही जानें
परन्तु यहां इन्बातों की कुछ सुनाई न थी इधर छोटे खिल
की छीना झपटी में लग रहे थे ! निदान ब्रजकिशोर को
के वास्ते बरफी और छोटे के वास्तै खिलोनें फिर मगानें
जब दोनों की रजामन्दी हो गई तो ब्रजकिशोर नें बडे प्या
दोनों की एक, एक मिट्टी (मीट्टी चूमी) लेकर उन्हें बिदा कि
और जाती बार बुढिया को समझा दिया कि "बहन को अ
तरह समझा देना वह कुछ चिन्ता न करे"

परन्तु बुढिया मकान पर पहुंची जितने वहा की तो
ही बदल गई थी मदनमोहन के साले जगजीवनदास अपनी
को लिवा लेजानें के लिये मेरठ से आए थे वह अपनी मा अ
(मदनमोहन की सास) की तबियत अच्छी नहीं बताते थे
आज ही रात की रेल मैं अपनी बहनको मेरठ लिवा ले जाने
तैयारी करा रहे थे मदनमोहन की स्त्री के मनमैं इस्समय म
न को अकेले छोड़ कर जाने की बिल्कुल न थी परन्तु

मा की मादगीका मामला था तीसरे मदनमोहन हुक्म दे चुके थे इस लिये लाचार होकर उसे दो, एक दिन के वास्ते जानें की तैयारी की थी

मदनमोहन की स्त्री अपने पतिकी सच्ची प्रीतिमान, शुभचितक, दु ख सुखकी साथन, और आज्ञा में रहने वाली थी और मदनमोहन भी प्रारभ में उस्सै बहुत ही प्रीति रखता था परन्तु जबसै वह चुन्नीलाल और शिभूदयाल आदि नए मित्रोंकी सगति में बैठने लगा नाचरग की धुनलगी, वेश्याओंके झू टे हावभाव देखकर लोट पोट होगया ? "अय ! सुभानअल्लाह ! क्या जोबन खिलरहा है !" "वल्लाह ! क्या बहार आरही है ?" "चश्म बद्दूर क्या भोली, भोली सूरत है !" "अय ! परे हटो !" "मैं सदके ! गै क़ुर्बान मुझे न छेडो !" "ख़ुदाकी कसम ! मेरी तरफ तिरछी नजर सै न देखो !" बस यह चोचलेकी बातें चित्तमें चुभगई किसी बातका अनुभव तो था ही नहीं तरुणाई की तरग, शिभूदयाल और चुन्नीलाल आदिकी संगति, द्रव्य और अधिकार के नशे मे ऐसा चकचूर हुआ कि लोक परलोक की कुछ खबर न रही

यह बिचारी सीधी सादी सुयोग्य स्त्री अब गवारी मालूम होने लगी पहले, पहले कुछ दिन यह बात छिपी रही परन्तु प्रीति के फूलमें कीडा लगे पीछै वह रस कहा रहसका है ? उस्समय परस्पर के मिलाप से किसी का जी नहीं भरताथा, बातोंकी गुत्थी कभी सुलझने नहीं पातीथी, आधी बात मुख में और आधी होटोंही में रो जातीथी, आखसैं आंख मिल्तेही दोनोंको अपने आप हँसी आजाती थी केवल हँसी नहीं उस हँसी में धूप छाया

मुस्कराता जाता था और नाचता जाता था वह भोली, भोली सूरत, ठुमक, ठुमक कर नाचना, छिप, छिप कर वडे की तरफ देखना, सैन मारना उस्के मुस्करानें मैं दूध के छोटे, छोटे दातों की मोती की सी झलक देखकर थोडी देर के लिये ब्रजकिशोर अपनें सब चारा विचार भूल गए परन्तु इस्को नाचता कूदता देखकर अब लडा मचल पडा उस्नें सब खिलोने अपनें कब्जे मैं कर लिये और ठिनक, ठिनक कर रोनें लगा. ब्रजकिशोर उस्को बहुत समझाते थे कि "वह तुम्हारा छोटा भाई है तुम्हारे हिस्से की बरफी खाली तो क्या हुआ? तुम ही जानें दो" परन्तु यहा इन्बातों की कुछ सुनाई न थी इधर छोटे खिलोनों की छीना झपटी मैं लग रहे थे। निदान ब्रजकिशोर को वडे के वास्ते बरफी और छोटे के वास्ते खिलोनें फिर मगानें पडे. जब दोनों की रजामन्दी हो गई तो ब्रजकिशोर नें बडे प्यार से दोनों की एक, एक मिट्ठी (मीट्ठी चूमी) लेकर उन्हें विदा किया और जाती बार बुढिया को समझा दिया कि "बहन को अच्छी तरह समझा देना वह कुछ चिन्ता न करे"

परन्तु बुढिया मकान पर पहुची जितनें वहा की तो रगत ही बदल गई थी मदनमोहन के साले जगजीवनदास अपनी बहन को लिवा लेजाने के लिये मेरठ से आए थे वह अपनी मा अर्थात् (मदनमोहन की सास) की तबियत अच्छी नहीं बताते थे और आज ही रात की रेल मैं अपनी बहनको मेरठ लिवा ले जाने की तैयारी करा रहे थे मदनमोहन की स्त्री के मनमैं ... ...न को अकेले छोड कर जानें की बिल्कुल न थी ... अपनें भाई से लज्जाके मारे कुछ नहीं

मा की मांदगीका मामला था तीसरे मदनमोहन हुक्म दे चुके थे इस लिये लाचार होकर उसने दो, एक दिन के वास्ते जाने की तैयारी की थी.

मदनमोहन की स्त्री अपने पतिकी सच्ची प्रीतिमान, शुभचित-क, दु ख सुखकी साथन, और आज्ञा में रहने वाली थी और मद-नमोहन भी प्रारभ में उस्सै बहुत ही प्रीति रखता था परन्तु जबसै वह चुन्नीलाल और शिभूदयाल आदि नए मित्रोंकी सगति में बैठ-ने लगा नाचरग की धुनलगी, वेश्याओंके झूटे हावभाव देखकर लोट पोट होगया ! "अयं ! सुभानअल्लाह ! क्या जोवन खिल-रहा है !" "वल्लाह ! क्या बहार आरही है ?" "चश्म बद्दूर क्या भोली, भोली सूरत है !" "अय ! परे हटो !" "मैं सदकै ! मै क़ुर्बान मुझे न छेड़ो !" "खुदाकी कसम ! मेरी तरफ तिरछी नजर से न देखो !" बस यह चोचलेकी बातें चित्तमें चुभगईं किसी बातका अनुभव तो था ही नही तरुणाई की तरग, शिभू-दयाल और चुन्नीलाल आदिकी सगति, द्रव्य और अधिकार के नशे मे ऐसा चकचूर हुआ कि लोक परलोक की कुछ खबर न रही.

यह बिचारी सीधी सादी सुयोग्य स्त्री अब गवारी मालम होने लगी पहले, पहले कुछ दिन यह बात छिपी रही परन्तु प्रीति के फूलमें कीडा लगे पीछे वह रस कहा रहसक्ता है ? उस्समय परस्पर के मिलाप से किसी का जी नहीं भरताथा, बातोंकी गुल-झटी कभी सुलझने नहीं पातीथी, आधी बात मुख में और आधी होटोंही में हो जातीथी, मिल्नेही दोनोंको अप-आप हंसी आजाती थी [illegible] उस हंसी में घुप

की तरह आधी प्रीति और आधी लज्जाकी झलक दिखाई देती थी और सच्ची प्रीतिके कारण संसारकी कोई वस्तु सुन्दरतामैं उस्सै अधिक नहीं मालूम होती थी. एककी गुप्त दृष्टि सदा दूसरे की ताक झाक मैं लगी रहती थी क्या चित्रपट देखने मैं, क्या रमणीक स्थानों की सैर करने मैं, क्या हँसी दिल्लगी की बातों मै कोई मौका नोक झोक सै खाली नहीं जाताथा और संसार के सब सुख अपने प्राण जीवन बिना उन्को फीके लगते थे परन्तु अब वह बातें कहां हैं ? उस्की स्त्री अबतक सब बातों मैं वैसीही दृढ है बल्कि अज्ञान अवस्था की अपेक्षा अब अधिक प्रीति रखती है परन्तु मदनमोहन का चित्त वह न रहा वह उस बिचारी से कोसों भागता है उस्को आफत समझता है क्या इन् बातों से अनसमझ तरुणों की प्रीति केवल आखों मैं नहीं मालूम होती ? क्या यह उस्की बेकदरी और झूटी हिर्सका सबसै अधिक प्रमाण नहीं है ? क्या यह जाने पीछे कोइ बुद्धिमान ऐसे अनसमझ आदमियों की प्रतिज्ञाओंका विश्वास कर सक्ता है ? क्या ऐसी पवित्र प्रीतिके जोड़े मैं अंतर डालनेंवालों को वाल्मीकि ऋषि का शाप + भस्म न करेगा ? क्या एक हकदार की सच्ची प्रीति के ऐसे चोरों को परमेश्वर के यहां से कठिन दंड न होगा ?

मदनमोहन की पतिव्रता स्त्री अपने पतिपर क्रोध करना तो सीखीही नहीं है मदनमोहन उस्की दृष्टि मैं एक देवता है वह अपनें ऊपर के सब दुखों को मदनमोहन की सूरत देखते ही भूल जाती है और मदनमोहन के बड़े से बड़े अपराधों को सदा

+ मानिषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः ॥
यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ॥

जाना न जाना करती रहती है मदनमोहन महीनों उस्की याद नहीं करता परन्तु वह केवल मदनमोहन को देखकर जीती है वह अपना जीवन अपनें लिये नहीं, अपनें प्राणपति के लिये समझती है जब वह मदनमोहन को कुछ उदास देखती है तो उस्के शरीर का रुधिर सूख जाता है जब उस्को मदनमोहन के शरीर में कुछ पीड़ा मालूम होती है तो वह उस्की चिन्ता सै बावली बन जाती है मदनमोहन की चिन्ता सै उस्का शरीर सूखकर कांटा हो गया है उस्को अपनें खानें पीनें की बिल्कुल लालसा नहीं है परन्तु वह मदनमोहन के खानें पीनें की सब सैं अधिक चिन्ता रखती है वह सदा मदनमोहन की बडाई करती रहती है और जो लोग मदनमोहन की ज़रा भी निन्दा करते हैं वह उन्की शत्रु बन जाती है वह सदा मदनमोहन को प्रसन्न रखनें के लिये उपाय करती है उस्के सन्मुख प्रसन्न रहती है अपना दुःख उस्को नहीं जताती और सच्ची प्रीति से बड़प्पन का विचार रखकर भय और सावधानी के साथ सदा उस्की आज्ञा प्रतिपालन करती रहती है

थोडे खर्च मे घर का प्रबन्ध ऐसी अच्छी तरह कर रक्खा है कि मदनमोहन को घर के कामों में ज़रा परिश्रम नहीं करना पड़ता जिसपर फुर्सत के समय खाली बैठकर और लोगों की पंचायत और स्त्रियों के गहनें गांठे की थोथी बातों के बदले कुछ, कुछ लिखने पढ़ने, कसीदा काढनें और चित्रादि बनानें का अभ्यास रखती है बच्चे बहुत छोटे हैं परंतु उनको खेल ही खेल में अभी से नीति के तत्व समझाए जाते हैं और बेतान्दन रीति से धीरे, धीरे हरेक वस्तु का ज्ञान बढ़ाकर पढ़ानें की

स्वाभाविक रुचिको उत्तेजन दिया जाता है परन्तु उन्के मनपर किसी तरह का बोझ नहीं डाला जाता उन्के निर्दोष खेलकूद और हसने बोलने की स्वतन्त्रता में किसी तरहकी बाधा नहीं होने पाती.

मदनमोहन की स्त्री अपने पतिको किसी समय मौकेसै नेक सलाह भी देती है परन्तु बडोंकी तरह दबाकर नही, बराबर वालों की तरह झगड कर नहीं, छोटों की तरह अपने पतीकी पदवीका विचार करके, उन्के चित्त दुखित होनेका विचार करके, अपनी अज्ञानता प्रगट करके, स्त्रिओंकी ओछी समझ जता कर धीरजसै अपना भाव प्रगट करती है परन्तु कभी लोटकर जवाब नही देती, विवाद नहीं करती वह बुद्धिमती चुन्नीलाल और शिभूदयाल इत्यादि की स्वार्थपरतासै अच्छी तरह भेदी है परन्तु पतिकी तायेदारी करना अपना कर्तव्य समझ कर समयकी बाट देख रही है और ब्रजकिशोर को मदनमोहनका सच्चा शुभ चितक जान्कर केवल उसी सै मदनमोहनकी भलाईकी आशा रखती है वह कभी ब्रजकिशोर सै सन्मुख होकर नही मिली परन्तु उस्को धर्म्मका भाई मान्ती है और केवल अपने पतिकी भलाईके लिये जो कुछ नया वृतान्त कहलाने के लायक मालूम होता है वह गुपचुप उस्सै कहला भेजती है ब्रजकिशोर भी उसको धर्म्म की बहन समझता है इस कारण आज ब्रजकिशोरके अनायास क्रोध करके चले जाने पर उस्ने मदनमोहनके हकमें ब्रजकिशोरकी दया उत्पन्न करने के लिये इस्समय अपने नन्हें बच्चोंको टहलनीके साथ ब्रजकिशोरके पास भेज दिया था परन्तु वह लोटकर आए जितने अपनी ही मेरठ जाने की तैयारी होगई इस्से रातों रात वहां जाना पडा.

प्रकरण २२.

संशय

अज्ञपुरुष श्रद्धा रहित संशय युत विनशाय ॥
बिनाश्रद्धा दुहु लोकमैं ताको सुख न लखाय ॥ *

श्रीमद्भगवद्गीता ॥

लाला ब्रजकिशोर उठकर कपडे नहीं उतारने पाए थे इतने मैं हरकिशोर आ पहुंचा पढ़ो आश्चर्य था इसी वास्ते न

"क्यों ! भाई क्या का था, तुमको बावला बता हु कैसैं लड़ आए ?" ब्रजकिशोर ने मनकी प्रीतिमें कुछ अ

"इस्सै आपको क्या रते हो कि जिस्सै सच प जल गए होंगे" हरकिशोरने जबाब दिय। करना चाहि

"मेरे हा घीके दिये जलने से ? क्या र बात थी ?" ब्रजकिशोरने पूछा प्रीति

"आप हमारी मित्रता देखकर सदैव जला करते थे आज वह जलन मिट गई"

"क्या तुह्मारे मनमैं अबतक यह झूटा वहम समा रहा है ?" ब्रजकिशोरने पूछा

"इसमैं कुछ संदेह नहीं" हरकिशोर हुज्जत करने लगा. "मैं ठेठसै देखता आता हूं कि आप मुझको देखकर जलते हैं मेरी

---

* अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति ॥
नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः ॥

और मदनमोहनकी मित्रता देखकर आपकी छातीपर साप लोटता है आपने हमारा परस्पर विगाड करानेके लिये कुछ थोडे उपाय किये ? मदनमोहनके पिताको थोडा भड़काया ? जिस दिन मेरे लडके की बरातमें शहरके सब प्रतिष्ठित मनुष्य आए थे उन्को देखकर आपके जीमें कुछ थोडा दु ख हुआ ? शहरके सब प्रतिष्ठित मनुष्योंसे मेरा मेल देखकर आप नहीं कुढते ? आप मेरी तारीफ सुनकर कभी अपने मनमें प्रसन्न हुए ? आपने किसी काममें मुझको सहायता दी जब मैंने अपने लडके के विवाहमें मजलिस की थी आपने मजलिस कर-ने से मुझे देता, विवाद नहीं करतो ने मुझको बावला नहीं बताया ? व याल इत्यादि की स्वार्थपरतासे अ मदनमोहनका मेरा बिगाड सुन ी तावेदारी करना अपना कर्तव्य छोडगए और दो घटे एकांतमें बैठ ी है और ब्रजकिशोर को ? सार पट्टी पढ़ा दी परन्तु मुझको इन र केवल उसी से ा है ? आप और वह दोनों मिलकर मेरा क्या क ह कभी न ? मैं स समझलूंगा"

लाला ब्र...किशोर ये बातें सुन, सुनकर मुस्कराते जाते थे वह अब धीरज से बोले "भाई ! तुम वृथा वहम का भूत बनाकर इतना डरते हो इस वहमका कुछ ठिकाना है ? तुम तत्काल इन बातोंकी सफाई करते चलेजाते तो मनमें इतना वहम सर्वथा नहीं रहता क्या स्वच्छ अ त करण का यही अर्थ है ? मुझको जलन किस बात पर होती ? तुम अपना सब काम छोड़कर दिन भर लोगोंकी हाज़री साधते फिरोगे, उन्की चाकरी करोगे, तोहफा तहायफ दोगे ? दस, दस बार मसाल लेकर बुलाने जाओगे तो वह क्यो न आवेंगे ? अपनें गांठ की

दौलत खर्च करके उन्को नाच दिखाओगे तो वह क्यों न तारीफ करेंगे ? परन्तु यह तारीफ कितनी देरकी, वाह वाह कितनी देर की ? कभी तुमपर आफत आ पडेगी तो इन्मेंसे कोई तुह्मारी सहायता को आवेगा ? इस खर्चसे देशका कुछ भला हुआ ? तुह्मारा कुछ भला हुआ ? तुह्मारी सतान का कुछ भला हुआ ? यदि इस फिजूल खर्चीके बदले लडके के पढाने लिखाने में यह रुपया लगाया जाता, अथवा किसी देश हितकारी काममें खर्च होता तो निस्सदेह बडाई की बात थी परन्तु मैं इस्में क्या तारीफ करता, क्या प्रसन्न होता क्या सहायता करता मुझको तुह्मारी भोली, भोली बातों पर बडा आश्चर्य था इसी वास्ते मैंने तुमको फिजूल खर्ची रोका था, तुमको बावला बताया था परन्तु तुह्मारी तरफकी मेरी मनकी प्रीतिमें कुछ अतर कभी नही आया, क्या तुम यह विचारते हो कि जिस्से सबध हो उस्की उचित अनुचित हरेक बातका प्रशंसा करना चाहिये ? इन्साफ अपने वास्ते नही केवल औरोंके वास्ते है ? क्या हाथ में डिम-डिमी लेकर सब जगह डोडी पीटे बिना सच्ची प्रीति नही मालूम होती ? इन सब बातोंमें कोइ बात तुह्मारी बडाईके लायक हो तो घर फूक तमाशा देखना है इसी तरह इन सब बातोंमें कोई बात मेरे प्रसन्न होने लायक हो तो तुमको प्रसन्न देखकर प्रसन्न होना है मैं यह नहीं कहता कि मनुष्य ऐसे कुछ काम न करे समय, समय पर अपने बूते मूजिब सबकाम करने योग्य हैं परंतु यह मामूली काररवाई है जितना वैभव अधिक होता है उतनी ही धूमधाम बढ जाती है इस लिये इस्में कोई खास बात नहीं पाई जाती है मैं चाहता हू कि तुम से कोई देश हितैषी ऐसा

काम बनें जिस्मैं मैं अपनें मन की उमग निकाल सकूं मनुष्य को जलन उस मौके पर हुआ करती है जब वह आप उस लायक न हो परन्तु तुम को जो बडाई बडे परिश्रम सै मिली है वह ईश्वर की कृपा सै मुझ को बेमहनत मिल रही है फिर मुझ को जलन क्यों हो ? तुम्हारी तरह खुशामद कर के मदनमोहन सै मेल किया चाहता तो मैं सहज मैं करलेता परन्तु मैंनें आप यह चाल पसंद न की तो अपनी इच्छा सै छोडी हुई बातो के लिये मुझ को जलन क्यों हो ? जलन की वृत्ति परमेश्वर नें मनुष्य को इसलिये दी है कि वह अपनें सै ऊंची पदवी के लोगों को देखकर उचित रीति सै अपनी [illegible] उद्योग करे परन्तु जो लोग जलन के मारे औरों का नुक्सान कर [illegible] उन्हें अपनी बराबर का बनाया चाहते है वह मनुष्य के नाम को धब्बा लगाते हैं मुझ को तुम सै केवल यह शिकायत थी और इसी विषय मैं तुम्हारे विपरीत चर्चा [illegible] पडी थी कि तुमनें मदनमोहन सै मित्रता कर के मित्र के करनें का काम न किया तुम को मदन-मोहन के सुधारनें का उपाय करना चाहिये था परन्तु मैंनें तुम्हारे बिगाड की कोई बात नहीं की. हा इस बहम का क्या ठिकाना है ? खाते, पीते, बैठते, उठते, बिना जानें ऐसी सैंकडों बातें बन जाती हैं कि जिन्का विचार किया करें तो एक दिन मैं बावले बन जायँ. आए तो आए क्यों, गए तो गए क्यों, बैठे तो बैठे क्यों हँसे तो हँसे क्यों, फलानें सै क्या बात की फलानें सै क्यों मिले ? ऐसी निरर्थक बातों का विचार किया करें तो एक दिन काम न चले. कुटम्बमैं ऐसे सैकडों बातें बीच की बीच मैं [illegible]कर नित्य लडाई करा दिया करें पर नहीं अपनें मन को

सदैव दृढ रखना चाहिये निर्वल मन के मनुष्य जिस तरह की जरा जरासी वातों मे विगड खडे होते हैं दृढ मन के मनुष्य को वैसी वातों की खवर भी नही होती इसलिये छोटी, छोटी वातों पर विशेष विचार करना कुछ तारीफ की वात नहीं है और निश्चय किए विना किसी की निंदित वातों पर विश्वास न करना चाहिये. किसी वात में सदेह पड जाय तो स्वच्छ मन से कह सुन-कर उसकी तत्काल सफाई कर लेनी अच्छी है क्योंकि ऐसे झूटे, झूटे वहम सदेह और मन कल्पित वातों से अवतक हजारों घर विगड चुके हैं „

"खैर ! और वातों में आप चाहें जो कहें परन्तु इतनी वात तो आप भी अगीकार करते हैं कि मदनमोहन की और मेरी मित्रता के विषय मे आप नें मेरे विपरीत चर्चा की वस इतना प्रमाण मेरे कहनें की सचाई प्रगट करनें के लिये वहुत है" हर-किशोर कहनें लगा "आप का यह वरताव केवल मेरे सग नहीं है वल्कि सव ससार के सग है आप सव की नुक्तचीनी किया करते हैं"

"अव तो तुम अपनी वात को सव ससारके साथ मिलानें लगे परन्तु तुम्हारे कहनें से यह [illegible] अंगीकार नहीं हो सक्ती जो मनुष्य आप जैसा होता है वैसा [illegible] सव ससार को समझता है मैंनें अपना कर्तव्य समझकर अपनें मन के सच्चे, सच्चे विचार तुम से कह दिए अव उनको मानों या न मानों तुम्हें अधिकार है" लाला व्रजकिशोर नें स्वतन्त्रता से कहा

"आप सची वात के प्रगट होनें मे कुछ सकोच न करें स्त्री हो अथवा विगाना हो जिस्सें अपनी स्वार्थ हानि

उस्सै मन मैं अन्तर तो पडही जाता है" हरकिशोर कहनें लगा" स्यमन्तक मणि के सन्देह पर श्रीकृष्ण बलदेव जैसे भाईयों में भी मन चाल पड गई ब्रह्मसभा में अपमान होने पर दक्ष और महादेव (ससुर जँवाई) के बीच भी विरोध हुए बिना न रहा"

"तो यों साफ क्यों नही कहते कि मेरी तरफ सै अबतक तुम्हारे मन में वही विचार बन रहे हैं, मुझको कहना था वह कह चुका अब तुम्हारे मन में आवे जैसे समझते रहो" लाला ब्रजकिशोर नें बेपरवाई सै कहा.

"चालाक आदमियों की यह तो रीति ही होती है कि वह जैसी हवा देखते हैं वैसी बात करते हैं. अबतक मदनमोहन सै आप की अनबन रहती थी अब मुकदमों का समय आते ही मेल हो गया! अबतक आप मदनमोहन से मेरी मित्रता छुडानें का उपाय करते थे अब मुझको मित्रता रखनें के लिये समझानें लगे! सच है बुद्धिमान मनुष्य जो करना होता है वही करता है परन्तु औरों का ओल्भा मिटानें के लिये उन्के सिर सुकृत का छप्पर जरूर धर देता है. अच्छा! आप को लाला मदनमोहन की नई मित्रता के लिये बधाई है और आप के मनोर्थ सफल करने का उपाय बहुत लोग कर रहे हैं" हरकिशोर ने भरसा भरमी कहा

"यह तुम क्या बकते हो मेरा मनोर्थ क्या है? और मैंने हवा देखकर कौन्सी चाल बदली?" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "जैसे नाव में बैठने वाले को किनारे के वृक्ष चलते दिखाई देते हैं इसी तरह तुम्हारी चाल बदल जानें सै तुमको मेरी चाल मैं अन्तर मालूम पडता है तुम्हारी तबियत को जाचनें के लिये तुमनें पह से कुछ नियम स्थिर कर रक्खे होते तो तुमको ऐसी भ्रान्ति -

होती मैं ठेठ से जिस्तरह मदन मोहन को चाहता था, जिस तरह तुमको चाहता था, जिस्तरह तुम दोनों की परस्पर प्रीति चाहता था उसी तरह अब भी चाहता हू परन्तु तुम्हारी तबियत ठिकाने नही है इस्से तुम को बारबार मेरी चाल पर सन्देह होता है सो खैर ! मुझे तो चाहै जैसा समझते रहो परन्तु मदनमोहन के साथ बैर भाव मत रक्खो तुच्छ बातों पर कलह करना अनुचित है और बैरी सै भी बैर बढाने के बदले उस्के अपराध क्षमा करने मैं बडाई मिल्ती है "

" जी हा ! पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन गोरीको क्षमा करके जैसी बडाई पाई थी वह सब को प्रगट है " हरकिशोर नें कहा.

" आगे को हानि का सन्देह मिटे पीछे पहले के अपराध क्षमा करने चाहियें परन्तु पृथ्वीराज नें ऐसा नही किया था इसी सै धोका खाया और—"

" बस, बस यहीं रहने दीजिये मेरा मतलब निकल आया आप अपनें मुख से ऐसी दशा मैं क्षमा करना अनुचित बता चुके उस्सै आगै सुन्कर मैं क्या करूगा ? " यह कह कर हरकिशोर, ब्रजकिशोर के बुलाते, बुलाते उठ कर चला गया

और ब्रजकिशोर भी इनही बातों के सोच विचार मैं वहा सै उठ कर पलगपर जा लेटे

प्रकरण २३.

प्रामाणिकता

"एक प्रामाणिक मनुष्य परमेश्वर की सर्वोत्कृष्ट रचना है" ×

पोप

ब्रजकिशोर कौन हैं? मदनमोहन की क्यों इतनी सहानुभूति (हमदर्दी) करते हैं?

अच्छा! अब थोडी देर और कुछ काम नहीं है जितनें थोडा सा हाल इन्का सुनिये

लाला ब्रजकिशोर गरीब मा बाप के पुत्र हैं परन्तु प्रामाणिक, सावधान, विद्वान और सरल स्वभाव हैं इन्की अवस्था छोटी है, तथापि अनुभव बहुत है यह जो कहते हैं उसी के अनुसार चलते हैं इन्की बहुत सी बातें अब तक इस पुस्तक में आचुकी हैं इसलिये कुछ विशेष लिखनें की जरूरत नहीं है तथापि इतना कहे बिना नहीं रहा जाता कि यह परमेश्वर की सृष्टि का एक उत्तम पदार्थ हैं यह वकील हैं परन्तु अपनी तरफ के मुकद्मेवालों का झूटा पक्षपात नहीं करते झूटे मुकद्मे नहीं लेते बूते से ज्याद काम नहीं उठाते, परन्तु जो मुकद्मे लेते हैं उन्की पैरवी वाजवी तौर पर बहुत अच्छी तरह करते हैं और बहुधा अन्याय से सताए हुए गरीबों के मुकद्मो में वे महन्ताना लिये पैरवी किया

× An honest man is the noblest work of God

करते हैं हाकिम और नगरनिवासियों को इन्की बात पर बहुत विश्वास है यह स्वतन्त्र मनुष्य हैं परन्तु स्वेच्छाचारी और अहंकारी नहीं हैं अपनी स्वतन्त्रता को उचित मर्यादा से आगे नहीं बढने देते परमेश्वर और स्वधर्म पर दृढ विश्वास रखते हैं. बात सच कहते हैं परन्तु ऐसी चतुराई से कहते हैं कि इन्का कहना किसी को बुरा नहीं लगता और किसी की हक तल्फी भी नहीं होनें पाती यह थोथी बातों पर विवाद नहीं करते और इन्के कर्तव्य में अन्तर न आता हो तो ये दूसरे की प्रसन्नता के लिये अकारण भी चुप हो रहते हैं अथवा केवल संकेत सा कर देते हैं जहां तक औरों के हक में अन्तर न आय, ये अपने उपर दु:ख उठा कर भी परोपकार करते हैं वैरी से सावधान रहते हैं परन्तु अपनें मन में उस्की तरफ का वैर भाव नहीं रखते अपनी ठसक किसी को नहीं दिखलाया चाहते यह मध्यम भाव से रहनें को पसन्द करते हैं और इन्की भलमनसात से सब लोग प्रसन्न हैं परन्तु मदनमोहन को इन्की बातें अच्छी नहीं लगतीं और लोगों से यह केवल इतनी बात करते हैं जिस्में वह प्रसन्न रहें और इन्हें झूट न बोलनी पडे परन्तु मदनमोहन से ऐसा सम्बन्ध नहीं है. उस्की हानि लाभ को यह अपनी हानि लाभ से अधिक समझते हैं इसी वास्ते इन्की उस्से नहीं बन्ती यह कहते हैं कि "जब तक कुछ काम न हो, अपने पल्ले में किसी तरह का [illegible] लगाए बिना हर तरह के आदमी से अच्छी तरह मिल[illegible] सक्ती है परन्तु काम पडे पर उचित रीति बिना [illegible]

यह अपनी भूल जान्ते ही प्रसन्नता से [illegible]
उस्के सुधारने का उद्योग करते हैं इसी

जान्ते उस्में अपनी झूंटी निपुणता दिखाने पर काम पडनें पर उस्का अभ्यास करके जेम्सवाट की तरह अपनी सच्ची सावधानी सै लोगों को आश्चर्य में डालते हैं

(बहुधा लोग जान्ते होंगे कि जेम्सवाट कलों के काम मैं एक प्रसिद्ध मनुष्य हो गया है उस्के समान काल मैं उस्की अपेक्षा बहुत लोग अधिक विद्वान् थे परन्तु अपने ज्ञान को काम मैं लानें के वास्ते जेम्सवाट नें जितनी महनत की उतनी और किसी ने नही की उस्नें हरेक पदार्थ की बारीकियों पर दृष्टि पहुचाने के लिये खूब अभ्यास बढाया वह बढई का पुत्र था जब वह बालक था तब ही अपनें खिलोनों मैं सै नया विषय ढूंड निकालता था. उस्के बाप की दुकान मैं ग्रहों के देखने की कलें रक्खी थी जिस्सै उस्को प्रकाश और जोतिष विद्या का व्यसन हुआ उस्के शरीर मै रोग उत्पन्न होनें सै उस्को वैद्यक सीखनें की रुचि हुई, और बाहर गाव मैं एकान्त फिरनें की आदत सै उस्ने बनस्पति विद्या और इतिहास का अभ्यास किया. गणित शास्त्र के औजार बनाते, बनाते उस्को एक आर्गन बाजा बनानें को फ़र्मायश हुई परन्तु उस्को उस्समय तक गाना नही आता था इसलिये उस्ने प्रथम संगीत विद्या का अभ्यास करके पीछे सै एक आर्गन बाजा बहुत अच्छा बना दिया इसी तरह एक बाफ की कल उस्की दुकान पर सुधरनें आई तब उस्नें गर्मी और बाफ विषयक वृतान्त सीखनें पर मन लगाया और किसी तरह की आशा अथवा किसी के उत्तेजन बिना इस काम मैं दस बरस परिश्रम करके बाफ की नई कल ढूंड निकाली जिस्सै उस्का नाम सदा के लिये

लाला ब्रजकिशोर को ससारी सुख भोगने की तृष्णा नही है और द्रव्य की आवश्यकता यह केवल सासारिक कार्य निर्वाह के लिये समझते हैं इस्वास्ते ससारी कामों की जरूरत के लायक परिश्रम और धर्म से रुपया पैदा किये पीछे बाकी का समय यह विद्याभ्यास और देशोपकारी बातों में लगाते हैं.

इन्के निकट उन गरीबों की सहायता करने में सच्चा पुन्य है जो सचमुच अपना निर्वाह आप नही कर सक्ते, या जिन रोगियों के पास इलाज कराने के लिये रुपया अथवा सेवा करने के लिये कोइ आदमी नही होता ये उन अनसमझ बच्चों को पढाने लिखाने में, अथवा कारीगरी इत्यादि सिखा कर कमाने खाने के लायक बना देने में, सच्चा धर्म समझते हैं जिन्के मा बाप दरिद्रता अथवा मूर्खता से कुछ नही कर सक्ते. ये अपने देश में उपयोगी विद्याओं की चर्चा फैलाने, अच्छी, अच्छी पुस्तकों का और भाषाओं से अनुवाद करवा कर अथवा नई बनवा कर अपने देश में प्रचार करने, और देश के सच्चे शुभचिन्तक और योग्य पुरुषों को उत्तेजन देने, और कलों की अथवा खेती आदि की सच्ची देश हितकारी बातों के प्रचलित करने में सच्चा धर्म समझते हैं परन्तु शर्त यह है कि इन सब बातों में अपना कुछ स्वार्थ न हो, अपनी नामवरी का लालच न हो, किसी पर उपकार करने का बोझ न डाला जाय बल्कि किसी को खबर होने न पाय.

इसी थोडी आमद से अपने घरका प्रबन्ध बहुत अच्छा बाँध रक्खा है इन्की आमदनी मामूली नहीं है तथापि जितनी आमदनी आती है उस्से खर्च कम किया जाता है और उसी खर्च में

भावी विवाह आदि का खर्च समझ कर उन्के वास्तै क्रम, क्रम सै, सीगेवार रकम जमा होती जाती है विवाहादि के खर्चों का मामूल बन्ध रहा है उन्में फिजूल खर्ची सर्वथा नही होने पाती परन्तु वाजवी बातोंमैं कसर भी नही रहती, इन्के सिवाय जो कुछ थोड़ा बहुत बचता है वह बिना विचारे खर्च और नुक्सानादि के लिए अमानत रक्खा जाता है और विश्वास योग्य फायदे के कामों मै लगानैं सैं उस्की वृद्धि भी की जाती हैं

इन्के दो छोटे भाइयो के पढाने लिखाने का बोझ इन्के सिर है इस लिये ये उन्को प्रचलित विद्याभ्यास की रूढी के सिवाय उन्के मानसिक विचारों के सुधारने पर सब से अधिक दृष्टि रखते हैं. ये कहते हैं कि "मनुष्य के मनके विचार न सुधरे तो पढ़ने लिखने से क्या लाभ हुआ ?" इन्नें इतिहास और वर्तमान काल की दशा दिखा, दिखा कर भले बुरे कामों के परिणाम और उन्की बारीकी उन्के मन पर अच्छी तरह बैठा दी है तथापि ये अपनी दूर दृष्टि से अपनी सम्हाल मैं गफलत नहीं करते उन्हैं कुसगति में नही बैठने देते. यह उन्के सग ऐसी युक्ति सै वरत॰ ते हैं जिस्मैं न वो उद्धत होकर ढिठाई करने योग्य होनें पावैं न भय सै उचित बात करने मैं सकोच करैं ये जान्ते हैं कि बचों के मनमैं गुरु के उपदेश सै इतना असर नही होता जितना अपने बडों का आचरण देखने से होता है इस लिये ये उन्को मुखसे उपदेश देकर उतनी बात नही सिखाते जितनी अपनी चाल चलन सैं उनके मन पर बैठाते हैं

ब्रजकिशोर की सच्ची सावधानी सैं हरेक काममैं सहायता ...ई सच्ची सावधानी मानों परमेश्वरकी तरफसै इन्को

हरेक कामकी राह बताने वाली उपदेष्टा है परन्तु लोग सच्ची सावधानी और चालाकीका भेद नहीं समझते क्या सच्ची सावधानी और चालाकी एक है ?

मनुष्यकी प्रकृतिमें बहुतसी उत्तमोत्तम वृत्ति मोजूद हैं परन्तु सावधानीके बराबर कोई हितकारी नहीं है. सावधान मनुष्य केवल अपनी तबियत पर ही नहीं औरोंकी तबियत पर भी अधिकार रखसक्ता है वह दूसरेसै बात करते ही उसका स्वभाव पहचान जाता है और उस्सै काम निकालने का ढग जान्ता है यदि मनुष्यमें और गुण साधारण हों और सावधानी अधिक हो तो वह अच्छी तरह काम चला सक्ता है परन्तु सावधानी बिना और गुणोंसे काम निकालना बहुत कठिन है.

जिस्तरह सावधानी उत्तम पुरुषोंके स्वभावमें होती है इसी तरह चालाकी तुच्छ और कमीने आदमियोंकी तबियतमें पाई जाती है सावधानी हमको उत्तमोत्तम बातें बताती है और उन्के प्राप्त करने के लिये उचित मार्ग दिखाती है वह हर कामके परिणाम पर दृष्टि पहुचाती है और आगे कुछ बिगाड़की सूझ मालूम हो तो झू टे लालचके कामों को प्रारंभ सै पहले ही अटका देती है परन्तु चालाकी अपने आसपास की छोटी, छोटी चीजों को देख सक्ती है और केवल वर्तमान समयके फायदोंका बिचार रखती है वह सदा अपने स्वार्थ की तरफ झुकती है और जिस तरह हो सके, अपने काम निकाल लेने पर दृष्टि रखती है सावधानी आदमी की दृढ बुद्धिको कहते हैं और वह जों, जों लोगोंमें प्रगट होती जाती है, सावधान मनुष्यकी प्रतिष्ठा बढती जाती है परन्तु चालाकी प्रगट हुए पीछै उसकी बातका असर नहीं रहता.

चालाकी होशियारीकी नकल है और वह बहुधा जान्वरों की सी प्रकृतिके मनुष्योंमे पाई जाती है इस लिये उसमें मनुष्य जन्मको भूषित करने के लायक कोई बात नही है वह अज्ञानियोंके निकट ऐसी समझी जाती है जैसे ठट्ठेबाजी, चतुराई और भारी भरकम पना बुद्धिमानी समझी जाय.

लाला ब्रजकिशोर सच्ची सावधानी के कारण किसी के उपकार का बोझ अपने ऊपर नही उठाया चाहते, किसी से सिफारश आदि की सहायता नही लिया चाहते, कोई काम अपने आग्रह से नहीं कराया चाहते, किसी को कच्ची सलाह नही देते, ईश्वर के सिवाय किसी भरोसे पर काम नही उठाते, अपने अधिकार से बढकर किसी काम में दस्तदाजी नही करते औरों की मारफत मामला करने के बदले रोबरू बातचीत करने को अधिक पसद करते हैं वह लेनदेन में बडे खरे हैं परंतु ईश्वर के नियमानुसार कोई मनुष्य सब के उपकारो से उऋण नहीं हो सक्ता ईश्वर, गुरु और माता पितादि के उपकारों का बदला किसी तरह नही दिया जा सक्ता परतु ब्रजकिशोर पर केवल इन्ही के उपकार का बोझ नहीं हैं वह इस्से सिवाय एक और मनुष्य के उपकार में भी बँध रहे हैं

ब्रजकिशोर का पिता अत्यत दरिद्री था अपने पास से फीस देकर ब्रजकिशोर को मदरसे मे पढाने की उस्की सामर्थ्य न थी और न वह इतने दिन खाली रखकर ब्रजकिशोर को विद्या में निपुण किया चाहता था परन्तु मदनमोहन के पिता नें ब्रजकिशोर की बुद्धि और आचरण देखकर उसे अपनी तरफ से ऊचे दर्जे तक विद्या पढाई थी उस्की फीस अपने पास से दी थी

उस्की पुस्तकें अपने पास सें ले दी थीं बल्कि उस्के घर का खर्च तक अपने पास सें दिया था और यह सब बातें ऐसी गुप्त रीति सें हुईं कि इन्का हाल स्पष्ट रीति सें मदनमोहन को भी मालूम न होने पाया था ब्रजकिशोर उसी उपकार के बधन सें इस्समय मदनमोहन के लिये इतनी कोशिश करते हैं

प्रकरण २४.

हाथसे पैदा करनें वाले
और पोतडों के अमीर

अमिल द्रव्यहू यत्नते मिले सु अवसर पाय।
संचितहू रक्षाबिना स्वत नष्ट होजाय॥*

हितोपदेशे

मदनमोहन का पिता पुरानी चाल का आदमी था वह अपना बूता देखकर काम करता था और जो करता था वह कहता नहीं फिरता था उस्नें केवल हिन्दी पढ़ी थी वह बहुत सीधा सादा मनुष्य था परन्तु व्यापार में बडा निपुण था साहूकारे में उस्की बडी साख थी वह लोगों की देखा देखी नहीं; अपनी बुद्धि सें व्यापार करता था उस्नें थोडे व्यापार में अपनी सावधानी सें

---

* अलब्धमिच्छेद्दोद धीमादद्म माजिर्ने ॥ [illegible]

[illegible] निधे [illegible] ॥

बहुत दौलत पैदा की थी इस्समय जिस्तरह बहुधा मनुष्य तरह, तरह की बनावट और अन्याय सै औरों की जमा मारकर साहूकार बन बैठते हैं सोनें चान्दी के जगमगाहट के नीचे अपनें घोर पापों को छिपाकर सज्जन बन्नें का दावा करते हैं धनको अपनी पाप वासना पूरी करनें का एक साधन समझते हैं ऐसा उस्नें नही किया था. वह व्यापार मैं किसी को कसर नहीं देता था पर आप भी किसी सै कसर नही खाता था. उन दिनों कुछ तो मार्ग की कठिनाई आदि के कारण हरेक धुने जुलाहे को व्यापार करनें का साहस न होता था इसलिये व्यापार मैं अच्छा नफ़ा था दूसरे वह वर्तमान दशा और होनहार बातों का प्रसंग समझकर अपनी सामर्थ्य मूजिब हरबार नए रोजगार पर दृष्टि पहुंचाया करता था इसलिये मक्खन उस्के हाथ लग जाता था, छाछ मैं और रह जाते थे कहते हैं कि एकबार नई खानके पन्नेंकी खड़ बाजार मैं बिकनें आई परन्तु लोग उस्की असलियत को न पहचान सके और उस्सै खरीद कर नगीना बनवानें का किसी को हौसला न हुआ परन्तु उस्की निपुणाई सै उस्की दृष्टि मैं यह माल जच गया था इसलिये उस्नें बहुत थोडे दामों मैं खरीद लिया और उस्के नगीनें बनवाकर भलीभांत लाभ उठाया उसी समय सै उस्की जडजमी और पीछै वह उसै और, और व्यापार मैं बढ़ाता गया, परन्तु वह आप कभी बढकर न चला. वह कुछ तकलीफ सै नही रहता था परन्तु लोगों को झूटी भडक दिखानें के लिये फिजूलखर्ची भी नहीं करता था उस्की सवारी मैं नागोरी, बैलोंका एक सुशोभित तागा था — खासे मलमल सै बढ़कर कभी [illegible] स्थान

को झाड़ पोंछकर स्वच्छ रखता था परन्तु झाडफनूस आदि को फिज़ूलखर्ची मैं समझता था उस्के हा मकान और दुकानपर बहुत थोडे आदमी नोकर थे परन्तु हरेक मनुष्य का काम बट रहा था इसलिये बड़ी सुगमता मै सब काम अपनें अपनें समय पर होता चला जाता था वह अपनें धर्म्म पर दृढ था ईश्वर मैं बडी भक्ति रखता था प्रतिदिन प्रात काल घटा डेढ़ घटा कथा सुन्ता था और दरिद्री, दुखिया, अपाहजों की सहायता करनें मे बडी अभिरुचि रखता था परन्तु वह अपनी उदारता किसी को प्रगट नही होनें देता था वह अपनें काम धदे मैं लगा रहता था इसलिये हाकिमों और रईसों से मिलनें का उसे समय नही मिल सका था परन्तु वह वाजबी राह से चल्ता था इसलिये उसै बहुधा उन्सै मिलनें की कुछ आवश्यकता भी न थी क्योंकि देशोन्नतिका भार पुरानी रूढी के अनुसार केवल राजपुरुषों पर समझा जाता था. वह महन्ती था इसलिये तन्दुरुस्त था वह अपनें काम का बोझ हरगिज औरों के सिर नही डालता था, हा यथाशक्ति वाजबी बातों मै औरों की सहायता करनें को तैयार रहता था

परन्तु अब समय बदल गया इससमय मदनमोहन के विचार और ही होरहे हैं, जहा देखो, अमीरी ठाठ, अमीरी कारखानें, बागकी सजावट का कुछ हाल हम पहले लिख चुके हैं मकान मैं कुछ उस्सै अधिक चमत्कार दिखाई देता है, बैठक का मकान अग्रेजी चालका बनवाया गया है उसमैं बहुमूल्य शीशे बरतन के सिवाय तरह, तरह का उम्दा से उम्दा सामान मिसल सै लगा हुआ है सहन इत्यादि मैं चीनीकी ईंटोंका सुशोभित फर्श कश्मीर

के ग़लीचोंको मात करता है. तवेलेमें अच्छी से अच्छी विलायती गाडियें और अरवी, केप, वेलर, आदिकी उम्दा उम्दा जोडिये अथवा जीनसवारी के घोडे बहुतायत से मौजूद हैं. साहब लोगों की चिठियें नित्य आती जाती हैं. अंग्रेजी तथा देसी अखबार और मासिकपत्र बहुतसे लिये जाते हैं और उन्में से खबरें अथवा आर्टिकलों को कोई देखे या न देखे परन्तु सौदागरों के इश्तहार अवश्य देखे जाते हैं, नई फैशन की चीजें अवश्य मंगाई जाती हैं, मित्रोंका जल्सा सदैव बना रहता है और कभी कभी तो अंग्रेजों को भी बाल दिया जाता है, मित्रोंके सत्कार करने में यहां किसी तरह की कसर नहीं रहती और जो लोग अधिक दुनियादार होते हैं उन्की तो पूजा बहुतही विश्वास पूर्वक की जाती है। मदनमोहन की अवस्था पच्चीस, तीस बरस से अधिक न होगी वह प्रगट में बडा विवेकी और विचारवान मालूम होता है नए आदमियों से बडी अच्छी तरह मिलता है उस्के मुखपर अमीरी झलकती है वह वस्त्र सादे परन्तु बहुमूल्य पहनता है उस्के पिता को ब्यापारी लोगोंके सिवाय कोई नहीं जान्ता था परन्तु उस्की प्रशंसा अखबारों में बहुधा किसी न किसी बहाने छपती रहती है और वह लोग अपनी योग्यता से प्रतिष्ठित होने का मान उन्हें देते हैं

अच्छा! मदनमोहन ने उन्नति की अथवा अवनति की इस्के विषय में हम इस्समय विशेष कुछ नहीं कहा चाहते परन्तु मदनमोहन ने यह पदवी कैसे पाई? पिता पुत्र के स्वभाव में इतना अन्तर कैसे होगया? इस्का कारण इस्समय दिखाया चाहते हैं.

मदनमोहन का पिता आप तो हरेक बात को बहुत अच्छी तरह समझता था परन्तु अपने बिचारों को दूसरे के मन मैं (उस्का स्वभाव पहिचान कर) बैठादेनें की सामर्थ्य उसे न थी उस्नें मदनमोहन को बचपन मैं हिन्दी, फारसी, और अंग्रेजी भाषा सिखानें के लिये अच्छे, अच्छे उस्ताद नौकर रख दिये थे परन्तु वह क्या जान्ता था कि भाषा ज्ञान विद्या नहीं, विद्या का दरवाजा है विद्या का लाभ तो साधारण रीति सै बुद्धि के तीक्ष्ण होनें पर और मुख्य कर के बिचारों के सुधरनें पर मिलता है जब उस्को यह भेद प्रगट हुआ उस्नें मदनमोहन को धमका कर राह पर लानें की युक्ति बिचारी परन्तु वह नहीं जान्ता था कि आदमी धमकानें सै आख और मुख बन्द कर सक्ता है, हाथ जोड सक्ता है, पैरों मैं पड सक्ता है, कहो जैसे कह सक्ता है, परन्तु चित्त पर असर हुए बिना चित्त नहीं बदलता और सत्सग बिना चित्त पर असर नहीं होता जब तक अपनें ... हालत सुधारनें की अभिलाषा न हो औरों ... साहसी पुरु... लाभ हो सक्ता है? मदनमोहन का पिता मन्द ... था अन... कर उस्के चित्त का असर देखनें के लिये कुछ दिन चुप हो... था परन्तु मदनमोहन के मन दुखनें के विचार सै आप प्रबन्ध न करता था और इस देरदार का असर उल्टा होता था हरकिशोर, शिम्भूदयाल, चुन्नीलाल, वगैरे मदनमोहन की बाल्यावस्था को इसी झमेल मैं निकाला चाहते थे क्योंकि एक तो इस अवकाश मैं उन लोगों के सग का असर मदनमोहन के चित्त पर दृढ होता जाता था दूसरे मदनमोहन की अवस्था के सग उस्की स्वतन्त्रता बढती जाती थी इसलिये मदनमोहन के सुधरनें का

यह रस्ता न था. मदनमोहन के विचार प्रति दिन दृढ होते जाते थे परन्तु वह अपनें पिता के भय सै उन्हें प्रगट न करता था. खुलासा यह है कि मदनमोहन के पिता नें अपनी प्रीति अथवा मदनमोहन की प्रसन्नता के विचार सै मदनमोहन के बचपन मैं अपनें रक्षक भाव पर अच्छी तरह बरताव नहीं किया अथवा यों कहो कि अपना कुदरती हक छोड दिया इसलिये इन्के सभाव मैं अन्तर पड़नें का मुख्य ये ही कारण हुआ.

ब्रजकिशोर ठेठ सै मदनमोहन के विरुद्ध समझा जाता था ब्रजकिशोर को वह लोग कपटी, चुग़ल, द्वेषी और अभिमानी बताते थे उन्के निकट मदनमोहन के पिता का मन बिगाडनें वाला वह था. चुन्नीलाल और शिंभूदयाल उसकी सावधानी सै डर कर मदनमोहन का मन उस्की तरफ़ सै बिगाडते रहते थे और सुचड़ी भी उस्पर पिता की कृपा देखकर भीतर सै जल्ता था यह चल सा. जैसे मुह फट तो कुछ, कुछ भरमा भरमी उस्को सुलोगोंके सिखाया करते थे परन्तु वह उचित जवाब देकर चुप हो जाता था और अपनी निर्दोष चाल के भरोसे निश्चिन्त रहता था हा उस्को इन्की चाल अच्छी नहीं लगती थी और इन्के मन का पाप भी मालूम था इसलिये वह इन्सै अलग रहता था इन्का वृत्तान्त जान्नें सै जान बूझ कर बेपरवाई करता था उस्नें मदनमोहन के पिता सैं इस विषय मैं बात चीत करना बिल्कुल बन्द कर दिया था मदनमोहन के पिता का परलोक हुए पीछे निस्सन्देह उस्को मदनमोहन के सुधारनें की चटपटी लगी उस्नें मदनमोहन को राह पर लानें के लिये समझानें मैं कोई बात

बाकी नहीं छोडी परन्तु उस्का सब श्रम व्यर्थ गया उस्के समझानें सें कुछ काम न निकला

अब आज हरकिशोर और ब्रजकिशोर दोनों इज्ज़त खोकर मदनमोहन के पास सै दूर हुए हैं इन्में से आगै चलकर देखें कौन् कैसा बरताव करता है ?

प्रकरण १८.

साहसी पुरुष

सानुबन्ध कारज करे सब अनुबन्ध निहार
करे न साहस, बुद्धि बल पंडित करे विचार †

विदुरप्रजागरे

हम प्रथम लिख चुके हैं कि हरकिशोर साहसी पुरुष था और दूर के सम्बन्ध में ब्रजकिशोर का भाई लगता था अब तक उस्के काम उस्की इच्छानुसार हुए जाते थे वह सब कामों में बडा उद्योगी और दृढ दिखाई देता था उस्का मन बढता जाता था और वह लडाई झगडे वगैरे के भय कर और साहसिक कामों में बडी कारगुजारी दिखलाया करता था वह हरेक काम के अग प्रत्यग पर दृष्टि डालने या सोच विचार के कामों में माथा खाली करने और परिणाम सोचने या कागज़ी और दिमागी

---

† अनुबन्धानवेक्षेत सानुबन्धेषु कर्मसु ।
सम्प्रधार्य च कुर्वीत न वेगेन समाचरेत् ॥

मामलों मैं मन लगानें के बदले ऊपर, ऊपर सै इन्को देख भाल कर केवल बडे, बडे कामों मैं अपने ताईं लगाये रखनें और बडे आदमियों मैं प्रतिष्ठा पानें की विशेष रुचि रखता था उस्नें हरेक अमीर के हां अपनी आवा जाई कर ली थी और वह सबसै मेल रखता था. उस्के स्वभाव मैं जल्दी होनें के कारण वह निर्मूल बातों पर सहसा विश्वास कर लेता था और झट पट उन्का उपाय करने लगता था उस्के बिना विचारे कामों सैं जिस्तरह बिना विचारा नुक्सान होजाता था इसी तरह बिना विचारे फायदे भी इतने हो जाते थे जो विचार कर करने सैं किसी प्रकार सभव न थे जब तक उस्के काम अच्छी तरह सम्पन्न हुए जाते थे, उस्को प्रति दिन अपनी उन्नति दिखाई देती थी, सब लोग उस्की बात मान्ते थे, उस्का मन बढ़ता जाता था और वो अपना काम सम्पन्न करने के लिये अधिक, अधिक परिश्रम करता था परन्तु जहा किसी बात मैं उस्का मन रुका उस्की इच्छानुसार काम न हुआ किसीने उस्की बात दुलख दी अथवा उस्को शाबासी न मिली वहा वह तत्काल आग हो जाता था हरेक काम को बुरी निगाह सै देखनें लगता था उस्की कारगुजारी मैं फर्क आजाता था और वह नुकसान सैं खुश होनें लगता था इसलिये उस्की मित्रता भय सै खाली न थी.

कोई साहसी पुरुष स्वार्थ छोड कर ससार के हितकारी कामों मैं प्रवृत्त हो तो कोलम्बसकी तरह बहुत उपयोगी होसक्ता है और अब तक ससार की बहुत कुछ उन्नति ऐसे ही लोगों सैं हुई है इस लिये साहसी पुरुष परित्याग करनें के लायक नहीं

है परन्तु युक्ति से काम लेने के लायक हैं हा। ऐसे मनुष्यों से काम लेने में उन्का मन बराबर बढाते जाय तो आगे चल कर काबू से बाहर होजाने का भय रहता हे इसलिये कोई बुद्धिमान तो उन्का मन ऐसी रीति से घटाते बढाते रहते है कि न उन्का मन बिगडने पावै न हद्‌से आगे बढनें पावै कोई अनुभवी मध्यम प्रकृति के मनुष्यों को बीचमैं रखते हैं कि वह उन्को बाजबी राह बताते रहैं परन्तु लाला मदनमोहन के यहा ऐसा कुछ प्रबन्ध न था दूसरे उस्के विचार मूजिब मदनमोहन नें अपनें झूटे अभिमान सैं भलाई के बदले जान बूझ कर उस्की इज्जत ली थी इस्कारण हरकिशोर इस्समय क्रोध के आवेश में लाल होरहा था और बदला लेनेंके लिये उस्के मनमें तरगें उठती थी उस्नें मदनमोहन के मकान सें निकलते ही अपने जी का गुबार निकालना आरम्भ किया.

पहलै उस्को निहालचन्द मोदी मिला उस्ने पूछा "आज कितने की बिक्री की ?"

"खरीदारी की तो यहा कुछ हद ही नही है परन्तु माल बेच कर दाम किससैं लें जिस्को बहुत नफे का लालच हो वह भले ही बेचें मुझको तो अपनी रकम डबोनी मञ्जूर नहीं" हरकिशोरनें जवाब दिया

"हैं। यह क्या कहते हो ? लाला साहब की रकम में कुछ धोका है ?"

"धोके का हाल थोडे दिन में खुल जायगा मेरे जान तो होना था वह हो चुका"

"तुम यह बात क्या समझ कर कहते हो ?" मोदीने घबरा

तो सेरीज है परन्तु साहब का कर्जा बहुत बडा है जो साहब की इस रकम में कुछ धोका हुआ तो साहब का काम चलना कठिन हो जायगा." ये कहकर मिस्टर ब्राइट का मुन्शी घर जानें के बदले साहब के पास दोड़ गया.

लाला हरकिशोर आगे बढ़े तो मार्ग में लाला मदनमोहन की पचपनसो की ख़रीद के तीन घोडे लिये हुए आगाहसनजान लाला मदनमोहन के मकान की तरफ जाता मिला उसको देख-कर हरकिशोर कहनें लगे "ये ही घोडे लाला मदनमोहन नें कल ख़रीदे थे मोल तो बडे फायदे से बिका पर दाम पट जाय तब जानिये."

"दामों को क्या है ? हमारा हजारों रुपे का काम पहले पड चुका है' आगाहसनजान नें जबाब दिया और मन में कहा "हमारी रकम तो अपनें लालच से चुन्नीलाल और शिभूदयाल घर बैठे पहुचा जायगे"

"वह दिन गए आज लाला मदनमोहन का काम डिगमिगा रहा है उस्के ऊपर लोगों का तगादा जारी है जो तुम किसी के भरोसे रहोगे तो धोका खाओगे जो काम करो, अच्छी तरह सोच समझकर करना"

"कल शाम को तो लाला साहब नें हमारे यहां आकर ये घोडे पसंद किये थे फिर इतनी देर में क्या होगया ?"

जब तेल चुक जाता है तो दिये बुझनें में क्या देर लगती है ? चुन्नीलाल, शिभूदयाल सब तेल चाट गए ऐसे चूहों की घात लगे पीछे भला क्या बाकी रह सक्ता था ?"

"मैं जान्ता हूं कि लाला साहब का बहुतसा रुपया लोग

खागए परंतु उन्के काम बिगडनें की बात मेरे मन मैं अबतक नही बैठती तुमने' यह हाल किस्सै सुना है ?"

"मै आप 'वहा सें आया हू मुझको झूट बोलने सें क्या फायदा है ? मैं तो अभी जाकर नालिश करता हू निहालचन्द मोदी नालिश करनें को तैयार है ब्राइट साहब का मुन्शी अभी सब हकीकत निश्चय करके साहब के पास दौडा गया है तुमको भरोसा न हो निस्सदेह न मानो तुम न मानोगे इस्सै मेरी क्या हानि होगी" यह कहकर हरकिशोर वहा से चल दिया "

पर अब मदनमोहन की तरफ सें आगाहसनजान को धैर्य न रहा असल रुपे का लालच उस्को पीछै हटाता था और नफेका लालच आगे बढाता था पहले रुपे के विचार मैं तबियत और भी घबराई जाती थी निदान यह राह ठैरी कि इससमय घोडों को फेर ले चलो मदनमोहन का काम बना रहैगा तो पहले रुपे वसूल हुए पीछे ये घोडे पहु चा देंगे नहीं तो कुछ काम नहीं."

इधर हरकिशोरको मार्गमैं जो मिलता था उस्सै वह मदनमोहन के दिवाले का हाल बराबर कहता चला जाता था और यह सब बातैं बाजार मैं होती थीं इसलिये एक सें कहनें में पाच और सुन लेते थे और उन पाच के मुख से पचासों को यह हाल तत्काल मालूम हो जाता था फिर पचास सैं पाच सौ मैं और पाच सौ सै पाच हजार मै फैल्ते क्या देर लगनी थी ? और अधिक आश्चर्य की बात यह थी कि हरेक आदमी अपनी तरफ सें भी कुछ, न कुछ नोंन मिर्च लगाही देता था , जिस्को एक के कहनें सें भरोसा न आया दो के कहनें सैं आगया, दो के कहनेंसै

न आया चार के कहनें सै आगया मदनमोहन के चाल चलन सैं अनुभवी मनुष्य तो यह परिणाम पहले ही सै समझ रहे थे जिस्पर मास्टर शिभूदयाल नें मदनमोहन की तरफ सै एक दो जगह उधार लेनें की बात चीत की थी इसलिये इस चर्चा में किसी को संदेह न रहा. बारूद बिछ रही थी बत्ती दिखाते ही तत्काल भभक उठी.

परन्तु लाला मदमोहन या ब्रजकिशोर वगैरे को अबतक इस्का कुछ हाल मालूम न था.

प्रकरण २६.

दिवाला.

कीज समझ, न कीजिए बिन बिचार ब्यवहार ॥
आय रहत जानत नहीं ? सिरको पायन भार ॥

वृंद.

लाला मदनमोहन प्रात काल उठते ही कुतब जानें की तैयारी कर रहे थे साथ जानेंवाले अपनें, अपनें कपडे लेकर आते जाते थे इतनें में निहालचन्द मोदी कई तकाजगीरों को साथ लेकर आ पहुंचा.

इस्नें हरकिशोर से मदनमोहन के दिवाले का हाल सुना था उसी समय सें इस्को तलामली लग रही थी कल कई बार यह मदनमोहन के मकान पर आया पर किसी नें इस्को मदनमोहन के पास तक न जानें दिया और न इस्के आनें की इत्तला की.

सन्ध्या समय मदनमोहन के सवार होनें के भरोसे वह दरवाजे पर बैठा रहा परन्तु मदनमोहन सवार न हुए इस्सै इस्का सन्देह और भी दृढ़ होगया. शहर मैं तरह, तरह की हजारों बातें सुनाई देती थी इस्सै वह आज सवेरे ही कई लेनदारों को साथ लेकर एकदम मदनमोहन के मकान मैं घुस आया और पहुंचते ही कहने लगा "साहब! अपना हिसाब करके जितने रुपे हमारे बाकी निकलें हम को इसी समय दे दीजिये हमें आप का लेन देन रखना मंजूर नहीं है कल से हम कई बार यहां आए परन्तु पहरे वालों नें आप के पास तक नहीं पहुंचनें दिया".

"हमारा रुपया खर्च करके हमारे तकाजे सै बचनें के लिये यह तो अच्छी युक्ति निकाली!" एक दूसरे लेनदार नें कहा "परन्तु इस्तरह रकम नहीं पच सकती नालिश करके दमभर मैं रुपया धरा लिया जायगा"

"बाहर पहरे चौकी का बन्दोबस्त करके भीतर आप असबाब बांध रहे हैं!" तीसरे मनुष्य नें कहा "जो दो, चार घडी हम लोग और न आते तो दरवाजे पर पहरा ही पहरा रह जाता लाला साहब का पता भी न लगता"

"इस्मैं क्या सन्देह है? कल रात ही को लाला साहब अपनें बाल बच्चों को तो मेरठ भेज चुके हैं" चौथे नें कहा "इन्सालवन्सी के सहारे सै लोगों को जमा मारनें का ढंग, दिनों दिन बहुत फैलता होगया है"

"क्या इस जमानें मैं रुपया पैदा करने का लोगों ने यही ढंग समझ रक्खा है" एक और मनुष्य कहनें लगा "पहले अपनी साहूकारी, मातबरी, और रसाई दिखाकर लोगों के चित्त मैं

विश्वास वैठाना, अन्त में उन्की रक़म मारकर एक किनारे हो वैठना "

"मेरी तो जन्म भर की कमाई यही है मैंने समझा था कि थोडीसी उमर बाकी रही है सो इस्में आराम से कट जायगी परंतु अब क्या करूं ?" एक बुड्ढा आखों में आसू भरकर कहनें लगा "न मेरी उमर महनत करनें की है न मुझको किसी का सहारा दिखाई देता है जो तुम से मेरी रकम न पटेगी तो मेरा कहा पता लगेगा ?"

"हमारे तो पाच हजार रुपे लेनें हैं परन्तु लाओ इस्समय हम चार हजार में फैसला करते हैं" एक लेनदार नें कहा.

औरों की जमा मारकर सुख भोगनें मे क्या आनन्द आता होगा ?" एक और मनुष्य बोल उठा.

इतनें में और बहुतसे लोगों की भीड आगई. वह चारों तरफ से मदनमोहन को घेरकर अपनी, अपनी कहनें लगे. मदनमोहन की ऐसी दशा कभी काहे को हुई थी ? उस्के होश उड गए चुन्नीलाल, शिभूदयाल वगैरे लोगों को धैर्य देनें की कोशिश करते थे परतु उन्को कोई बोलनें ही नही देता था जब कुछ देर खूब गडबड हो चुकी लोगों का जोश कुछ नरम हुआ तब चुन्नीलाल पूछनें लगा "आज क्या है ? सब के सब एक एक ऐसी तेजी में कैसे आ गए ? ऐसी गडबड सै कुछ भी लाभ न होगा जो कुछ कहना हो धीरे से समझा कर कहो"

"हम को और कुछ नहीं कहना हम तो अपनी रकम चाहते हैं" निहालचन्द नें जवाब दिया.

"हमारी रकम हमारे पल्ले डालो फिर हम कुछ गड़बड़ न करेंगे" दूसरे नें कहा.

"तुम पहले अपने लेने का चिट्ठा बनाओ, अपनी अपनी दस्तावेज दिखाओ, हिसाब करो, उस्समय तुम्हारा रुपया तत्काल चुका दिया जायगा" मुन्शी चुन्नीलाल नें जवाब दिया.

"यह लो हमारे पास तो यह रुक्का है" "हमारा हिसाब यह रहा" "इस रसीद को देखिये" "हमने तो अभी रकम भुगताई है" इस तरह पर चारों तरफ सै लोग कहने लगे

"देखो जी! तुम बहुत हल्ला करोगे तो अभी पकड़ कर कोतवाली मैं भेज दिए जाओगे और तुम पर हतक इज्जत की नालिश की जायगी नहीं तो जो कुछ कहना हो धीरज सै कहो" मास्टर शिभूदयाल ने अवसर पाकर दबाने की तजवीज की

"हम को लडने झगडने की क्या जरूरत है? हम तो केवल जवाब चाहते हैं जवाब मिले पीछे आप सै पहले हम नालिश कर देंगे" निहालचन्द ने सब की तरफ सै कहा.

"तुम वृथा घबराते हो हमारा सब माल मता तुम्हारे साम्हनें मौजूद है हमारे घर मैं घाटा नहीं है ब्याज समेत सब की कौडी, कौडी चुका दी जायगी" लाला मदनमोहन ने कहा

"कोरी बातोंसै जी नहीं भरता" निहालचन्द कहने लगा "आप अपना वही खाता दिखादें क्या लेना है? क्या देना है? कितना माल मौजूद है? जो अच्छी तरह हमारा मन भर जायगा तो हम नालिश नहीं करेंगे"

"कागज तो इस्समय तैयार नहीं है" लाला मदनमोहन नें लजा कर कहा

"तो खातरी कैसे हो? ऐसी अंधेरी कोठरी में कोन रहे? (वृन्द) जो पहले कारये जतन तो पीछे फल होय। आग लगे खोदे कुआ कैसे पावे तोय॥ इस काठ कवाड के तो समय पर रुपे में दो आनें भी नही उठते" एक लेनदार नें कहा.

"ऐसे ही अनसमझ आदमी जल्दी करके वेसवव दूसरों का काम विगाड़ दिया करते हैं" मास्टर शिभूदयाल कहने लगे.

इतनें में हरकिशोर अदालत के एक चपरासी को लेकर मदनमोहन के मकान पर आ पहुंचे और चपरासी नें सम्मन पर मदनमोहन सै कायदे मूजिब इत्तला लिखा ली

उस्को गए थोडी देर न वीतनें पाई थी कि आगा हसनजान के वकील की नोटिस आ पहुंची उस्मैं लिखा था कि 'आगा हसनजान की तरफ सें मुझको आपके जताने के लिये यह फर्मायश हुई है कि आप उस्के पहले की खरीद के घोडों की क़ीमत का रुपया तत्काल चुका दें और कल की खरीद के तीन घोडों की कीमत चोवीस घन्टे के भीतर भेज कर अपने घोडे मंगवालें जो इस मयाद के भीतर कुल रुपया न चुका दिया जायगा तो ये घोडे नीलाम कर दिये जायँगे और इन्की कीमत में जो कमी रहेगी पहले की बाकी समेत नालिश करके आप सै वसूल की जायगी"

थोडी देर पीछे मिस्टर ब्राइट का सम्मन और कच्ची कुरकी एक साथ आ पहुंची इस्सै लोगों के घबराहट की कुछ हद न रही घर में मामला होने की आशा जाती रही सवको अपनी, अपनी रकम गलत मालूम होने लगी और सब नालिश करनें के लिये कचहरी को दोड गए.

"यह क्या है ? किस दुष्ट की दुष्टता सै हम पर यह गजब का गोला एक साथ आ पडा ?" लाला मदनमोहन आखों मैं आसू भर कर बडी कठिनाई सै इतनी बात कह सके

"क्या कहू ? कोई बात समझ मैं नहीं आती" मुन्शी चुन्नीलाल कहने लगे "कल लाला ब्रजकिशोर यहा सै ऐसे बिगड कर गए थे कि मेरे मन मैं इसी समय खटका हो गया था शायद उन्हीं ने यह बखेडा उठाया हो बाजे आदमियों को अपनी बात का ऐसा पक्ष होता है कि वह औरों की तो क्या ? अपनी बरबादी का भी कुछ विचार नहीं करते. परमेश्वर ऐसे हटीलों सै बचाय हरकिशोर का ऐसा होसला नहीं मालूम होता और वह कुछ बखेडा करता तो उस्का असर कल मालूम होना चाहिये था अब तक क्यों न हुआ ?"

प्रथम तो निहालचन्द कल सै अपने मन मैं घबराहट होनेंका हाल आप कह चुका था, दूसरे हरकिशोर की तरफ से नालिश दायर होकर सम्मन आगया, तीसरे चुन्नीलाल ब्रजकिशोर के स्वभाव को अच्छी तरह जान्ता था इस्लिये उस्के मन मैं ब्रजकिशोर की तरफ सै जरा भी सदेह न था परन्तु वह हरकिशोर की अपेक्षा ब्रजकिशोर सै अधिक डरता था इसलिये उस्नें ब्रजकिशोर ही को अपराधी ठैराने का विचार किया अफ़सोस ! जो दुराचारी अपने किसी तरह के स्वार्थ सै निर्दोष और धर्मात्मा मनुष्यों पर झूटा दोष लगाते हैं अथवा अपना कसूर उन्पर बरसाते हैं उन्के बराबर पापी ससार मैं और कौन होगा ?

लाला मदनमोहन के मन मैं चुन्नीलाल के कहने का पूरा विश्वास होगया उस्नें कहा "कि मैं अपने मित्रों को रुपे की

सहायता के लिये चिट्ठी लिखता हूं मुझको विश्वास है कि उन्की तरफ़ से पूरी सहायता मिलेगी परन्तु सब से पहले ब्रजकिशोर के नाम चिट्ठी लिखूंगा कि अब वह मुझको अपना काला मुह जन्म भर न दिखलाय" यह कह कर लाला मदनमोहन चिट्ठियां लिखने लगे.

प्रकरण २७.

लोक चर्चा (अफ़वाह)

निन्दा, चुगली, झूठ अरु पर दुखदायक बात।
जे न करहिं तिन पर द्रवहिं मधुवर बहुभात॥ +

विष्णुपुराणे.

उस तरफ़ लाला ब्रजकिशोर ने प्रात काल उठ कर नित्य नियम से निश्चिन्त होतेही मुन्शी हीरालाल को बुलाने के लिये आदमी भेजा

हीरालाल मुन्शी चुन्नीलाल का भाई है यह पहले बदोबस्त के महकमे में नौकर था जब से वह काम पूरा हुआ, इस्की नौकरी कहीं नहीं लगी थी.

"तुमने इतने दिन से आकर सूरत तक नहीं दिखाई घर बैठे क्या किया करते हो?" हीरालाल को आते ही ब्रजकिशोर कहनें

+ परापवादपैशुन्य मनृतं च न भाषते।
अन्योद्वेगकर चापि तोष्यते तेन केशव॥

लगे " दफ्तर में जाते थे जब तक तो खैर अवकाश ही न था परन्तु अब क्यों नहीं आते ? "

" हुजूर ! मैं तो हरवक्त हाजिर हू परन्तु बेकाम आनें में शर्म आती थी आज आपने याद किया तो हाजिर हुआ फरमाइये क्या हुक्म है ? " हीरालाल नें कहा

" तुम खाली बैठे हो इस्की मुझे बडी चिन्ता है तुह्मारे विचार सुधरे हुए हैं इस्सै तुमको पुराने हक का कुछ खयाल हो या न हो (!) परन्तु मैं तो नहीं भूल सक्ता तुह्मारा भाई जवानी की तरंग में आकर नौकरी छोड गया परन्तु मैं तो तुम्हैं नहीं छोड सक्ता. मेरे यहा इन दिनों एक मुहर्रिर की चाह थी सब सें पहले मुझको तुह्मारी याद आई (मुस्करा कर) तुह्मारे भाई को दस रुपे महीना मिल्ता था परन्तु तुम उस्सै बड़े हो इसलिये तुम को उस्सै दूनी तनख्वाह मिलेगी "

" जी हा ! फिर आप को चिन्ता न होगी तो और किस्को होगी ? आप के सिवाय हमारा सहायक कौन है ? चुन्नीलाल ने निस्सदेह मूर्खता की परन्तु फिर भी तो जो कुछ हुआ आप ही के प्रताप सें हुआ "

" नहीं मुझको चुन्नीलाल की मूर्खता का कुछ विचार नहीं है मैं तो यही चाहता हू कि वह जहा रहै प्रसन्न रहै हा मेरी उपदेश की कोई, कोई बात उस्को बुरी लगती होगी परन्तु मैं क्या करू ? जो अपना होता है उस्का दर्द आता ही है "

" इस्में क्या सन्देह है ? जो आप को हमारा दर्द न होता तो आप इस समय मुझको घर सें बुलाकर क्यों इतनी कृपा कर ते ? आपका उपकार मान्नें के लिये मुझ को कोई शब्द नहीं

मिल्ते परन्तु मुझ को चुन्नीलाल की समझ पर बडा अफसोस आता है की उस्नें आप जैसे प्रतिपालक के छोड जानें की ढिठाई की. अब वह अपनें किये का फल पावेगा तब उस्की आखें खुलेंगी"

"मैं उस्के किसी, किसी काम को निस्सन्देह नापसन्द कर-ता हूं परन्तु यह सर्वथा नहीं चाहता कि उस्को किसी तरह का दु ख हो"

"यह आप की दयालुता है परन्तु कार्य कारण के सम्बन्ध को आप कैसे रोक सक्ते हैं? आज लाला मदनमोहन पर तका-जा होगया. जो ये लोग आप का उपदेश मान्ते तो ऐसा क्यों होता?"

"हाय! हाय! तुम यह क्या कहते हो? मदनमोहन पर तकाज़ा होगया! तुमने यह बात किस्से सुनी? मैं चाहता हूं कि परमेश्वर करे यह बात झूट निकले" लाला ब्रजकिशोर इतनी बात कह कर दु ख सागर में डूब गए उन्के शरीर में बिज-ली का सा एक झटका लगा, आखों में आसू भर आए, हाथ पाव शिथिल होगए मदनमोहन के आचरण से बडे दु ख के साथ वह यह परिणाम पहले हीं समझ रहे थे इस लिये उन्को उस्का जित-ना दु ख होना चाहिये पहले होचुका था तथापि उन्को ऐसी जल्दी इस दुखदाई खबर के सुन्नें की सर्वथा आशा न थी इस लिये यह खबर सुन्ते ही उन्का जी एक साथ उमड आया परन्तु वह थोडी देर में अपनें चित्तका समाधान करके कहने लगे -

"हा! कल क्या था! आज क्या होगया!! शृङ्गाररसका सुहावना समा एका एक करुणा से बदलगया! बेलजिअम की

राजधानी ब्रसेलस पर नैपोलियन नें चढाई कीथी उस्समय की दुर्दशा इस्समय याद आती है, लार्डबायरन लिखता है –

"निशि मे बरसेलस गाजि रह्यो ॥
बल, रूप बढाय विराजि रह्यो
अति रूपवती युवती दरसैं ॥
बलवान सुजान जवान लसैं
सब के मुख दीपनसों दमकैं ॥
सब के हिय आनँद सों धमकैं
बहुभाति विनोद प्रमोद करैं ॥
मधुरे सुर गाय उमग भरैं
जब रागन की मृदु तान उडैं ॥
प्रियप्रीतम नैनन सैन जुडैं
चहु ओर सुखी सुख छायरह्यो ॥
जनु ब्याहन घट निनाद भयो
पर मौनगहो ! अविलोक इतै ! ॥
यह होत भयानक शब्द कितै ?
डरपौ जिन चचल वायु बहै ॥
अथवा रथ दौरत आवत है
प्रिय ! नाचहु, नाचहु ना ठहरो ॥
अपनें सुख की अवधी न करो
जब जोवन और उमग मिलैं ॥
सुख लुटन को दुहु दौर चलैं
तब नींद कहा निशआवत है ? ॥
कुछ औरहु बात सुहावत है ?

पर कान लगा , अब फेर सुनो ॥
यह शब्द भयानक है दुगनो !
घनघोरघटा गरजी अब ही ॥
तिहँ गूंज मनो दुहराय रही
यह तोप दनादन आवत हैं ॥
ढिग आवत भूमि कँपावत हैं
"सब शस्त्रसजो, सब शस्त्रसजो" ॥
घबराट बढो सुख दूर भजो
दुखसों बिलपैं कलपैं सबही ॥
तिनकी करुणा नहि जाय कही
निज कोमलता सुनि लाज गए ॥
सुकपोल ततक्षण पीत भए
दुखपाय कराहि वियोग लहैं ॥
जनु प्राण वियोग शरीर सहैं
किहिं भांति करों अनुमान यह ॥
प्रिय प्रीतम नैन मिलैं कबहू ?
जर वा सुख चैनहिं रात गई ॥
इहि भांत भयंकर प्रात भई ! ! !" ×
हा यह खबर तुमनें किस्से सुनी ?"

× There was a sound of revelry by night,
And Belgium's capital had gathered then
Her Beauty and her Chivalry and bright
The lamps shone o'er fair women and brave men,
A thousand hearts beat happily, and when
Music arose with its voluptuous swell,

"चुन्नीलाल अभी घर भोजन करने आया था वह कहता था"

"वह अबतक घर हो तो उसे एक बार मेरे पास भेज देना हम लोग खुशी प्रसन्नतामें चाहे जितने लड़ते झगड़ते रहें परन्तु दुःख दर्द सबमें एक हैं तुम चुन्नीलाल, से कह देना कि मेरे पास आने में कुछ सकोच न करे मैं उस्से जरा भी अप्रसन्न नहीं हूं"

Soft eyes look'd love to eyes which spake again,
And all went merry as a marriage bell,
But, hush! hark! a deep sound strikes like a rising knell!
Did ye not hear it?—No 't was but the wind,
Or the car rattling o'er the stony street
On with the dance! let joy be unconfined,
No sleep till morn, when, Youth and Pleasure meet
To chase the glowing hours with flying feet-
But hark! that heavy sound breaks in once more,
As if the clouds its echo would repeat,
And nearer, clearer, deadlier than before!
Arm! arm! it is it is the cannon's opening roar!
Ah! then and there was hurrying to and fro,
And gathering tears and tremblings of distress,
And cheeks all pale which but an hour ago
Blush'd at the praise of their own loveliness
And there were sudden partings, such as press
The life from out young hearts, and choking sighs
Which ne'er might be repeated who would guess
If ever more should meet those mutual eyes,
Since upon night so sweet such awful morn should rise!

Lord Byron.

"राम, राम! यह हजूर क्या फरमाते हैं? आप की अप्रसन्नता का विचार कैसे हो सक्ता है? आप तो हमारे प्रतिपालक हैं, मैं जाकर अभी चुन्नीलाल को भेजता हूं वह आकर अपना अपराध क्षमा करायगा और चला गया होगा तो शामको हाजिर होगा" हीरालालनें उठते उठते कहा

"अच्छा! तुम कितनी देर मैं आओगे?"

"मैं अभी भोजन करके हाजिर होता हूं" यह कह कर हीरालाल रुखसत हुआ.

लाला ब्रजकिशोर अपने मनमैं विचारने लगे कि "अब चुन्नीलाल सै सहज मैं मेल हो जायगा परन्तु यह तकाजा कैसे हुआ? कल हरकिशोर क्रोधमैं भर रहा था इस्सै शायद उसीनें यह अफवा फैलाई हो उस्नें ऐसा किया तो उस्के क्रोधनें बडा अनुचित मार्ग लिया और लोगोंने उस्के कहने मैं आकर बडा धोका खाया

"अफवा यह भयकर वस्तु है जिरसै बहुत से निर्दोष दूषित बन जाते हैं बहुत लोगोंके जीमैं रज पड जाते हैं बहुत लोगों के घर बिगड जाते हैं. हिन्दुस्थानियोंमैं अबतक बिद्याका ब्यसन नहीं है समय की कदर नहीं है भले बुरे कामों की पूरी पहचान नहीं है इसी सै यहांके निवासी अपना बहुत समय औरों के निज की बातों पर हाशिया लगानें मैं और इधर उधरकी जटल हाकने मैं खो देतेहैं जिस्से तरह, तरह की अफवाएं पैदा होती हैं और भलेमानसोंकी झूटी निंदा अफवाकी जहरी पवन मैं मिल्कर उन्के सुयशको धूं बला करती है इन अफवा फैलानें वालोंमैं कोई, कोई दुर्जन खाने कमानें वाले हैं कोई कोई दुष्ट बैर और जलन सै

औरों की निन्दा करने वाले हैं और कोई पापी ऐसे भी हैं जो आप किसी तरह की योग्यता नहीं रखते इस लिये अपना भरम बढाने को बडे बडे योग्य मनुष्यों की साधारण भूलों पर टीका करके आप उनके बराबर के बना चाहते हैं अथवा अपना दोष छिपाने के लिये दुसरे के दोष ढुंडते फिरते हैं या किसी की निंदित चर्चा सुनकर आप उससे जुदे बनने के लिये उसकी चर्चा फैलाने में शामिल होजाते हैं या किसी लाभदायक वस्तु से केवल अपना लाभ स्थिर रखने के लिये औरों के आगे उसकी निंदा किया करते हैं पर बहुतसे ठिलुए अपना मन बहलाने के लिये औरों की पचायत ले बैठते हैं बहुतसे अनसमझ भोले भावसे बात का मर्म जाने बिना लोगोकी बनावट में आकर धोका खाते हैं जो लोग औरों की निंदा सुनकर कापते हैं वह आप भी अपनें अजानपनें में औरोंकी निंदा करते हैं। जो लोग निर्दोष मनुष्यों की निंदा सुनकर उनपर दया करते हैं वह आप भी धीरे से, कान में झुककर, औरों से कहने के वास्ते मने करकर, औरोंकी निंदा करते हैं। जिन लोगोंके मुख से यह वाक्य सुनाई देते हैं कि "बडे खेद की बात है" "बडी बुरी बात है" बड़ी लज्जा की बात है" "यह बात मानें योग्य नहीं" "इसमें बहुत सदेह है" "इनबातों से हाथ उठाओ' वह आप भी औरों की निंदा करते हैं। वह आप भी अफवाह फैलानें वालोंकी बात पर थोडा बहुत विश्वास रखते हैं। झूटी अफवासे केवल भोले आदमियों के चित्त पर ही बुरा असर नहीं होता वह सावधान से सावधान मनुष्यों को भी लगती है उसका एक, एक शब्द भले मानसों की इज्जत लूटता है कल्पद्रुम में कहा है "होत कुसंग ससर्ग ते सज्जन मनहु विकार ॥

कमल गध वाही मलिन धूर उड़ावत व्यार ॥ १ *" जो लोग असली बात निश्चय किये बिना केवल अफवाके भरोसे किसी के लिये मत बाध लेते हैं वह उसके हक मैं बडी बेइन्साफी करते हैं अफवा के कारण अबतक हमारे देशको बहुत कुछ नुक्सान हो चुका है नादिरशाहसैं हारमान्कर मुहम्मदशाह उसै दिल्ली मैं लिवा लाया तब नगर निवासियोंने यह झूटी अफवा उडा दी की नादिरशाह मरगया नादिरशाह ने इस झूटी अफवा को रोकने के लिये बहुत उपाय किये परन्तु अफवा फैले पीछे कब रुक सक्ती थी! लाचार होकर नादिरशाहनें क़तल बोल दिया. दोपहरके भीतर भीतर लाख मनुष्यों सैं अधिक मारे गए! तथापि हिन्दुस्थानियों की आख न खुली.

"हिन्दुस्थानियों को आज कल हर बात मैं अंग्रेजों की नकल करने का चसका पड रहा है तो वह भोजन वस्त्रादि निरर्थक बातों की नकल करने के बदले उन्के सच्चे सद्गुणों की नकल क्यों नहीं करते? देशोपकार, कारीगरी और व्यापारादि मैं उन्की सी उन्नति क्यों नहीं करते? अपना सभाव स्थिर रखने मैं उन्का दृष्टांत क्यों नहीं लेते? अंग्रेजों की बात चीत मैं किसी की निजकी बातों का चर्चा करना अत्यंत दूषित समझा जाता है. किसीकी तनख़ाह या किसी की आमदनी, किसी का अधिकार या किसी का रोज़गार, किसी की सन्तान या किसी के घर का वृतान्त पूछनें मैं, पूछा होय तो कहनें मैं कहा होय तो सुन्नें मैं वह लोग आनाकानी करते हैं और किसी समय तो किसी का

* गुणनाना मपि ह्रदय विद्यापरिचयकानि न सिद्ध भवति।
पवन पराग्वाही रथ्यासुवदन् रजस्वनी भवति॥

नाम, पता और उम्र पूछना भी ढिठाई समझा जाता है अपने निज के सम्बन्धियों की निज की बातों से भी अजान रहना वह लोग बहुधा पसद करते हैं रेल मे, जहाज में खाने पीने के जलसों में, पास बैठने में और बात चीत करने में जान पहचान नहीं समझी जाती वह लोग किराए के मकान में बहुत दिन पास रहने पर बल्कि दु ख दर्द में साधारण रीति से सहायता करने पर भी दूसरे की निज बातों से अजान रहते हैं जबतक जान पहचान स्थिर रखने के लिये दूसरे की तरफ से सवाल न हो, अथवा किसी तीसरे मनुष्य ने जान पहचान न कराई हो, नित्य की मिला भेटी और साधारण रीति से बात चीत होने पर भी जान पहचान नही समझी जाती और जान पहचान हुए पीछे भी मित्रता होने में बडी देर लगती है क्योंकि वह लोग सभाव पहचाने बिना मित्रता नही करते पर मित्रता हुए पीछे भी दूसरे की निज की बातों से अजान रहना अधिक पसन्द करते हैं उन्के यहा निज की बातो के पूछनें की रीति नहीं है उन्को देश सम्बन्धी बातें करने का इतना अभ्यास होता है कि निज के वृतान्त पूछने का अवकाश ही नहीं मिलता परन्तु निज की बातों से अजान रहने के कारण उन्की प्रीति मे कुछ अन्तर नही आता मनुष्य का दुराचार साबित होने पर वह उसे तत्काल छोड देते हैं परन्तु केवल अफवा पर वह कुछ ख्याल नहीं करते बल्कि उस्का अपराध साबित न हो जबतक वह उस्को अपना बचाव करने के लिये पूरा अवकाश देते हैं और उचित रीति से उस्का पक्ष करते हैं" ।

प्रकरण २८.

फूटका काला मुह.

फूट गए हीरा की बिकानी कनी हाट, हाट ॥
काहू घाट मोल काहू बाढ मोल को लयो ॥
टूट गई लंका फूट मिल्यो जो विभीषण है ॥
रावन समेत बस आसमान को गयो ॥
कहे कविगंग दुर्योधन सो छत्रधारी ॥
तनक के फूटते गुमान वाको नै गयो ॥
फूटते नर्द उठ जात बाजी चौपर की ॥
आपस के फूटे कहु कौन को भलो भयो ॥ १ ॥

गंग.

थोड़ी देर पीछे मुन्शी चुन्नीलाल आ पहुंचा परन्तु उस्के चहरे का रंग उड़ रहा था लाज से उस्की आंख ऊंची नहीं होती थी प्रथम तो उस्की सलाह से मदनमोहन का काम बिगडा दूसरे उस्की कृतघ्नता पर ब्रजकिशोर ने उस्के साथ ऐसा उपकार किया इसलिये वह सकोच के मारे धरती में समाया जाता था.

"तुम इतने क्यों लजाते हो? मैं तुम से जरा भी अप्रसन्न नहीं हूं बल्कि किसी, किसी बात में तो मुझको अपनी ही भूल मालूम होती है मैं लाला मदनमोहनकी हरेक बातपर हद्दसे ज्यादा जिद करने लगता था परन्तु मेरी वह ज़िद अनुचित थी हरेक मनुष्य अपने विचार का आप धनी है मैं चाहता हूं कि आगे को ऐसी सूरत न हो और हम सब एक चित्त होकर रहैं परन्तु मैंनें

तुम को इस्समय इस सलाह के लिये नहीं बुलाया इस विषय में तो जब तुम्हारी तरफ से चाहना मालूम होगी देखा जायगा" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "इस्समय तो मुझको तुम से हीरा-लाल की नौकरी बाबत सलाह करनी है यह बहुत दिन से खाली है और मुझको अपने यहां इस्समय एक मुहर्रिर की जरूरत मालूम होती है तुम कहो तो इन्हें रख लू ?"

"इस्में मुझ से क्या पूछते हैं ? इसके लिये आप मालिक हैं" मुन्शी चुन्नीलाल कहने लगा "मेरी तो इतनी ही प्रार्थना है कि आप "मेरी मूर्खता पर दृष्टि न करें अपने बडप्पन का विचार रक्खें पहली बातों के याद करने से मुझको अत्यन्त लज्जा आती है आप नें इस्समय लाला हीरालाल को नौकर रखकर मुझे मात कर दिया '

"मैं तुम को लज्जित करने के लिये यह बात नहीं कहता मैंने अपने मन का निज भाव तुम को इसलिये समझा दिया है कि तुम मुझे अपना शत्रु न समझो" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "हिन्दुस्थान के सत्यानाश की जड प्रारम्भ से यही फूट है इसी के कारण कौरव पांडवों का घोर युद्ध हुआ, इसी के कारण नन्द वंश की जड उखडी, पृथ्वीराज और जयचन्द की फूट से हिन्दु-स्थान में मुसल्मानों का राज आया और मुसल्मानों का राज भी अन्त में इसी फूट के कारण गया सौ सवा सौ बरस से लेकर अबतक हिन्दुस्थानमें कुछ ऐसे अप्रबन्ध, फूट और स्वेच्छाचारता रही चली कि बहुधा लोग आपस में कट मरे. महाजी ने ईस्ट इन्डियन कंपनी को देवी कोटे का किला और जिला देकर उस्के द्वारा अपने भाई प्रताप सिंह से तंजोर का राज छीन

बंगाल के सूबेदार सिराजुद्दोला सें अधिकार छीन्नें के लिये उस्के बख़शी मीर जाफर और दीवान राय दुर्लभ आदि नें कंपनी को दक्षिण काल्पी तक की जमींदारी एक किरोड रुपया नक़द और कलकत्ते के अंग्रेजों को पचास लाख, फौज को पचास लाख और और लोगों को चालीस लाख अनुमान दे़ने किये. जब मीर जाफर सूबेदार हुआ तब उस्सें अधिकार छीन्नें के लिये उस्के जँवाई कासम अलीखा नें कंपनी को वर्द्दवान मेदनीपुर, चट गांव के ज़िले, पांच लाख रुपे नक़द, और कौन्सिल वालों को बीस लाख रुपे दे़नें किये. जब कासम अलीखा सूबेदार होगया और महसूल बाबत उस्का कंपनी सें बिगाड हुआ तब मीर जाफर नें कंपनी को तीस लाख रुपे नक़द और बारह हजार सवार और बारह हजार पैदलों का खर्च देकर फिर अपना अधिकार जमा लिया उधर अवध का सूबेदार शुजाउद्दौला कंपनी को चालीस लाख रुपे नक़द और लडाई का खर्च देना करके उस्की फौज रुहेलों पर चढा लेगया दखन में बालाजी राव पेशवा के मरते ही पेशवाओं के घरानें में फूट पडी दो थोक होगए अब तक पंजाब बच रहा था रणजीतसिंह की उन्नत्ति होती जाती थी परन्तु रणजीतसिंह के मरते ही वहां फूटनें ऐसे पांव फैलाए कि पहले सब झगडों को मात कर दिया. राजा ध्यानसिंह मन्त्री और उस्के बेटे हीरासिंह आदि की स्वार्थपरता, लहनासिंह और अजीतसिंह सिंधा वालों का छल अर्थात् कुंवर शेरसिंह और राजा ध्यानसिंहके जी में एक दूसरे की तरफ़ सें सन्देह डालकर विरोध बढाना, और अन्त में दोनों के प्राण लेना राजकुमार पद्दसिंह उसका बेटा नोनिहालसिंह

राजकुमार शेरसिह उस्का वेटा प्रतापसिह आदिकी अनसमझी सै आपस मैं वह कटमकटा हुई कि पाच वरस के भीतर भीतर उस्के वश मैं सिवाय दिलीपसिह नामी एक वालक के कोई न रहा और उस्का राज भी कपनी के राज मैं मिलगया किसी नें सच कहा है, "अल्पसार हु वहुत मिल करैं वडो सो जोर ॥ जों गजको वधन करे तृणकी निर्मित डोर ॥" + इसलिये मैं आपस की फूटको सर्वथा अच्छी नही समझता तुम मेरे पास सै गए थे इसलिये मुझ को तुह्मारे कामों पर विशेष दृष्टि रखनी पडती थी परन्तु तुम अपने जीमैं कुछ और ही समझते रहे चलो खैर! अव इन वातों की चर्चा करने सै क्या लाभ है"

"आप यह क्या कहते हैं? आप मेरे वडे हैं मैं आप का वरताव और तरह कैसे समझ सका था?" चुन्नी लाल कहनें लगा "आप नें वचपन सै मेरा पालन किया, मुझ को पढा लिखा कर आदमी वनाया इस्सै वढ कर कोई क्या उपकार करेगा? मैं अच्छी तरह जान्ता हु कि आप नें मुझ सै जो कुछ भला वुरा कहा, मेरी भलाई के लिये कहा क्या मैं इतना भी नही जान्ता कि दगा करनें सै मा अपनें वालक को मारती है दूसरे सै कुछ नहीं कहती यदि आप को हमारे प्रतिपालन की चिन्ता मन सै न होती तो ऐसे कठिन समय मैं लाला हीरा लाल को घर सै वुला कर क्यों नौकर रखते?"

"भाई! अव तो तुम नें वही खुशामद की लच्छेदार वातैं छेड दीं" लाला व्रजकिशोर नें हँस कर कहा

+ वहूनामप्य साराणा समवायोहि दुर्जय ॥
तृणैं विधीयते रज्जुर्वध्यन्ते दन्तिनस्तया ॥

"आप के जी मैं मेरी तरफ का सदेह हो रहा है इस्सै आप को ऐसा ही भ्यासता होगा परन्तु इन्मैं सै कौन्सी बात आप को खुशामद की मालूम हुई ?"

"मनुस्मृति मैं कहा है " आकृति, चेष्टा, भाव, गति, वचन रीति, अनुमान ॥ नैन सेन, मुसकाति लख मन की रुचि पहिचान ॥ १ ‡" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "तुम कहते हो कि " आप नें जो कुछ भला बुरा कहा मेरी भलाई के लिये कहा" परन्तु उस्समय तुम यह सर्वथा नहीं समझते थे तुम्हारे कामों सै यह स्पष्ट जाना जाता था कि तुम मेरी बातोंसै अप्रसन्न हो और तुह्मारा अप्रसन्न होना अनुचित न था क्योंकि मेरी बातों सै तुह्मारा नुक्सान होता था मुझको इस्बातका पीछे विचार आया मुझको इस्समय इन बातों के जताने की जरूरत न थी परन्तु मैंनें इसलिये जतादी कि मैं भी सच झूट को पहचान्ता हूं सचाई बिना मुझ से सफाई न होगी "

" आप की मेरी सफाई क्या ? सफाई और बिगाड बराबर वालों मैं हुआ करता है, आप तो मेरे प्रतिपालक हैं आप की बराबरी मैं कैसे कर सक्ता हूं ? " मुन्शी चुन्नीलाल ने गम्भीरता सै कहा.

यह तो बहाने साजी की बातैं हैं सफाई के ढंग और ही हुआ करते हैं मुझको तुम्हारा सब भेद मालूम है परन्तु तुमनें अबतक कौन्सी बात खुल के कही ?" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "मैं पूछता हूं कि तुमने मदनमोहन के यहां सै सिवाय तन-

---

‡ आकारैरिङ्गितैर्गत्या चेष्टया भषितेन च ॥
नेत्रवक्त्रविकारैश्च गृह्यतेन्तर्गतंमनः ॥

ब्याह के और कुछ नहीं लिया तो तुम्हारे पास आठ दस हजार रुपे कहां से आगए ? मिस्टर ब्राइट इत्यादि से तुम जो कमीशन लेते हो उस्का हाल मैं उन्के मुख से सुन चुका हूँ तुम्हारी और शिभूदयाल की हिस्सा पत्ती का हाल मुझे अच्छी तरह मालूम है हरकिशोर और निहालचन्द गली, गली तुम्हारी धूल उडाते फिरते हैं. मैं नहीं जान्ता कि जब इस्की चर्चा अदालत तक पहुचेगी तो तुम्हारे लिये क्या परिणाम होगा ? मैंनें केवल तुम से सलाह करनें के लिये यह चर्चा छेडी थी परन्तु तुम इस्के छिपानें मैं अपनी सब अक़लमन्दी खर्च करनें लगे तो मुझको पूछनें से क्या प्रयोजन है ? जो कुछ होना होगा समय पर अपने आप हो रहैगा"

"आप क्रोध न करें मैंनें हर काम मैं आप को अपना मालिक और प्रतिपालक समझ रक्खा है मेरी भूल क्षमा करें और मुझको इससमय से अपना सच्चा सेवक समझते रहैं" मुन्शी चुन्नीलाल नें कुछ, कुछ डरकर कहा "आप जान्ते हैं कि कुन्बे का बडा खर्च है इस्के वास्ते मनुष्य को हजार तरह के झूट सच बोलनें पडते हैं (वृन्द) "उदर भरन के कारनें प्राणी करत इलाज ॥ नाचे, बाचे, रणभिरे, राचे काज अकाज ॥"

"संसार की यही रीति है प्रसंग रत्नावली मैं लिखा है "ज्ञान वृद्ध तपवृद्ध अरु बयके वृद्ध सुजान ॥ धनवानन के द्वार कों सेवैं भृत्य समान ॥ + " लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "तुमको मेरी एकाएक राय पलटनेंका आश्चर्य होगा परन्तु आश्चर्य न करो जिस

+ वयोवृद्धास्तपोवृद्धः ज्ञानवृद्धा सदापरे ॥
तेसर्वे धनवृद्धस्य द्वारि तिष्ट ति किंकरा

तरह शतरज में एक, एक चाल चलनेंसे बाजीका नक्शा पलटता जाता है इसी तरह ससार में हरेक बात में काम काज की रीति भाति बदलती रहती है अबतक यह समझता था कि मुझको मदन-मोहनसे अवश्य इन्साफ मिलेगा परंतु वह समय निकल गया अब मैं फ़ायदा उठाऊ या न उठाऊं मदनमोहन को फायदा पहुंचाना सहज नहीं. मेरा हाल तुम अच्छी तरह जान्ते हो मैं केवल अपनी हिम्मत के सहारे सब तरह का दुःख झेल रहा हूं परन्तु मेरे कर्त-व्य काम मुझको जरा भी नही उभरनें देते. कहते हैं कि अत्यत विपत्तिकाल मैं महर्षि विश्वामित्र नें भी चडाल के घर सै कुत्ते का मास चुराया था। फिर मैं क्या करू ? क्या न करूं कुछ बुद्धि काम नही करती"

"समय बीते पीछे आप इन सब बातों की याद करते हैं अब तो जो होना था हो चुका यदि आप पहले इन बातों को विचार करते तो केवल आप को ही नहीं आप के कारण हम लोगों को भी बहुत कुछ फायदा हो जाता"

"तुम अपने फायदे के लिये तो वृथा खेद करते हो!" लाला ब्रजकिशोर नें हस कर जवाब दिया "अलबत्ता मैं मदनमोहन सै साफ जवाब पाए बिना कुछ नहीं कर सका था क्योंकि मुझ को प्रतिज्ञा भग करना मजूर न था क्या तुम को मेरी तरफ सैं अब तक कुछ सदेह है ?"

"जी नहीं, आप की तरफ का तो मुझ को कुछ सदेह नही है परन्तु इतना ही विचार है कि खल में से तेल आप किस तरह निकालेंगे!" मुन्शी चुन्नीलाल नें जीमें सदेह कर के

"इस्की चिन्ता नहीं, ऐसे काम के लिये लोग यह समय बहुत अच्छा समझते हैं"

"बहुत अच्छा ? अब मै जाता हू परन्तु ——— —"मुन्शी चुन्नीलाल कहते, कहते रुक गया

"परन्तु क्या ? स्पष्ट कहो, मैं जान्ता हू कि तुम्हारे मन का सन्देह अब तक नही गया. तुम्हारी हजार वार राजी हो तो तुम सफाई करो नहीं तो न करो अभी कुछ नही बिगडा मेरा कौन्सा काम अटक रहा हैं ? तुम अपना नफा नुक्सान आप समझ सक्ते हो"

"आप अप्रसन्न न हों, मुझको आपपर पूरा भरोसा है मैं इस कठिन समय मैं केवल आप पर अपनें निस्तार का आधार समझता हू मेरी लायकी, नालायकी मेरे कामों से आप को मालूम हो जायगी परतु मेरी इतनीही विनती है कि आप भी जरा नरम ही रहैं इन्को वातों मैं वढावा देकर इन्से सब तरह का काम ले सक्ते हैं पर तु इन पर एतराज करनें से यह चिड जाते हैं. कल के झगडे के कारण आजके तकाजे का सन्देह इन्को आप पर हुआ है परन्तु अब मैं जाते ही मिटा दूं गा" मुशी चुन्नीलाल नें बात पलटकर कहा और उठकर जानें लगा

"तुम किया चाहोगे तो सफाई होनी कौन कठिन है ? (वृन्द) प्रेरक ही ते होत है कारज सिद्ध निदान ॥ चढे धनुष हू ना चले बिना चलाए बान ॥ १ सुजन नीच पर दुहू को हरत सलह रस पूर ॥ करत देहरी दीप ज्यों घर आगन तम दूर ॥ २" यह कहकर लाला ब्रजकिशोर नें चुन्नीलाल को रुखसत किया

चुन्नीलाल के चित्त पर ब्रजकिशोर की कहन और हीरालाल

की नौकरी सै वडा असर हुआ था परन्तु अवतक व्रजकिशोर की तरफ सै उस्का मन पूरा साफ न था यह वातें व्रजकिशोर के स्वभाव सै इतनी उल्टी थी कि व्रजकिशोर के इतनें समझानें पर भी चुन्नीलाल का मन न भरा वह सन्देह के झूले मैं झोटे खारहा था और वडा विचार करके उस्नें यह युक्ति सोची थी कि "कुछ दिन दोनों को दम मैं रक्खूं, व्रजकिशोर को मदनमोहन की सफाई की उम्मेद पर ललचाता रहूं और इस काम की कठिनाई दिखा, दिखाकर अपना उपकार जताता रहूं. मदनमोहन को अदालत के मुकद्दमों मैं व्रजकिशोर सै मदद लेने की पट्टी पढाऊं पर वेपरवाई जतानें के वहानें सै दोनों मैं परस्पर काम की वात खुल कर न होनें दूं जिस्मैं दोनों का मिलाप होता रहै उन्के चित्त को धैर्य मिलनें के लिये सफाई के आसार, शिष्टाचार की वातें दिन, दिन वढ़ती जाय परन्तु चित्त की सफाई न होनें पाए, और दोनों की कुंजी मेरे हाथ रहै"

व्रजकिशोर चुन्नीलाल की मुखचर्या सै उस्के मन की धुकड़ पुकड़ पहचान्ता था इसलिये उस्नें जाती वार हीरालाल के भेजनें की ताकीद कर दी थी वह जान्ता था कि हीरालाल वेरोजगारी सै तंग है वह अपनें स्वार्थ सै चुन्नीलाल को सच्ची सफाई के लिये विवस करेगा और उस्की जिद के आगे चुन्नीलाल की कुछ न चलेगी. निदान ऐसाही हुआ हीरालाल नें व्रजकिशोर की सावधानी दिखाकर चुन्नीलाल को वनावट के विचार सै अलग रक्खा, व्रजकिशोर की प्रामाणिकता दिखाकर उसै व्रजकिशोर सै सफाई रखनें के वास्तै पक्का किया, मदनमोहन के काम विगडनें की सूरत वताकर आगे को व्रजकिशोर का ठिकाना वनानें की

सलाह दी और समझाकर कहा कि "एक ठिकाने पर बैठे हुए दस ठिकानें हाथ आ सक्ते हैं जैसे एक दिया जल्ता हो तो उस्सै दस दिये जल सक्ते हैं परन्तु जब यह ठिकाना जाता रहैगा तो कहीं ठिकाना न लगेगा" अदालत मैं मदनमोहन पर नालिश होनें सैं चुन्नीलालके भेद खुलनें का भय दिखाया और अन्त मैं ब्रजकिशोर सैं चुन्नीलाल नें सच्ची सफाई न की तो हीरालाल नें आप ब्रजकिशोर के साथ होकर चुन्नीलाल की चोरी साबित करनें की धमकी दी और इन बातों सैं परबस होकर चुन्नीलाल को ब्रजकिशोर सैं मन की सफाई रखनें के लिये दृढ प्रतिज्ञा करनी पडी

परन्तु आज ब्रजकिशोर की वह सफाई और सचाई कहा है ? हरकिशोर का कहना इस्समय क्या झूट है ? इस्के आचरण सैं इस्को धर्मात्मा कौन बता सक्ता है ? और जब ऐसे खर्तल मनुष्यका अन्तमैं यह भेद खुला तो संसार मैं धर्मात्मा किस्को कह सक्ते हैं ? काम, क्रोध, लोभ, मोह का बेग कौन रोक सक्ता है ? परन्तु हैरे ! जिस मनुष्य के जाहिरी बरताव पर भी हि इतना धोका खा गए कि सवेरे तक उस्को मदनमोहन का मनमोहन समझते रहे हर जगह उस्की सावधानी, योग्यता, चित्त सफाई, और धर्मप्रवृत्ति की बडाई करते रहे उस्के चित्त मैं और कितनी बातें गुप्त होंगी यह बात सिवाय परमेश्वर के और कौन जान सक्ता है ? और निश्चय जानें बिना हमलोगों को पक्की राय लगाने का क्या अधिकार है ?

प्रकरण २६.

—(*)—

बात चीत.

सीख्यो धन धाम सब कामके उधारिवेको
सीख्यो अभिराम धाम राखत हजूरमैं ॥
सीख्यो सराजाम गढकोटके गिराइवेको
सीख्यो समसेर बांधि काटि अरि उरमे ॥
सीख्यो कुल जंत्र मंत्र तंत्रहूकी बात
सीख्यो पिंगल पुरान सीख बढ्यौ जात क्रूरमैं ॥
कहै कृपाराम सब सीखबो गयो निकाम
एक बोलबो न सीख्यो गयो धूरमैं ॥

शृंगार संग्रह.

"आज तो मुझ सैं एक बडी भूल हुई" मुन्शी चुन्नीलाल नें लाला मदनमोहन के पास पहुंचते ही कहा "मैं समझा था कि यह सब बखेड़ा लाला ब्रजकिशोर ने उठाया है परन्तु वह तो इस्सैं बिल्कुल अलग निकले यह सब करतूत तो हरकिशोर की थी क्या आपने लाला ब्रजकिशोर के नाम चिट्ठी भेज दी ?"

"हां चिट्ठी तो मैं भेज चुका" मदनमोहन नें जवाब दिया

"यह बडी बुरी बात हुई जब एक निरपराधी को अपराधी समझ कर दंड दिया जायगा तो उस्के चित्त को कितना दुःख होगा" मुन्शी चुन्नीलाल ने दया करके कहा (!)

"फिर क्या करें ? जो तीर हाथ सैं छुट चुका वह लौटकर नहीं आसक्ता" लाला मदनमोहन ने जवाब दिया.

"निस्सन्देह नहीं आसकता परन्तु जहां तक हो सके उस्का बदला देना चाहिये" मुन्शी चुन्नीलाल कहने लगा "कहते हैं कि महाराज दशरथ नें धोके से श्रवण के तीर मारा परन्तु अपनी भूल जान्ते ही बडे पस्तावे के साथ उस्सै अपना अपराध क्षमा कराया उसै उठाकर उस्के माता पिता के पास पहुचाया उन्को सब तरह धैर्य दिया और उन्का शाप प्रसन्नता सै अपने सिर चढा लिया"

"ब्रजकिशोर की यह भूल हो या न हो परन्तु उस्ने पहले जो ढिटाई की है वह कुछ कम नहीं है. गई बला को फिर घर मैं बुलाना अच्छा नहीं मालूम होता जो कुछ हुआ सो हुआ चलो अब चुप हो रहो" मास्टर शिभूदयाल नें कहा

"इस्समय ब्रजकिशोर सै मेल करना केवल उन्की प्रसन्नताके लिये नहीं है बल्कि उन्सै अदालत मैं बहुत काम निकल्ने की उम्मेद की जाती है" मुन्शी चुन्नीलाल ने मदनमोहन को स्वार्थ दिखाकर कहा.

"कल तो तुमनें मुझ सै कहा था कि उन्की विकालत अपनें लिये कुछ उपकारी नहीं हो सक्ती" मदनमोहन ने याद दिलाई

यह बात सुन्कर चुन्नीलाल एकबार ठिठका परंतु फिर तत्काल सम्हल कर बोला "वह समय और था यह समय और है मामूली मुकद्दमों का काम हम हरेक वकील सै ले सक्ते थे परन्तु इस्समय तो ब्रजकिशोर के सिवाय हम किसी को अपना विश्वासी नहीं बना सक्ते"

"यह तुम्हारी लायकी है परन्तु ब्रजकिशोर का दाप .

वह तुम को घडी भर जीता न रहनें दे" मास्टर शिभूदयाल नें कहा.

"मैं अपनें निज के सम्बन्ध का विचार करके लाला साहब को कच्ची सलाह नही दे सक्ता" चुन्नीलाल खरे बनें

"अच्छा तो अब क्या करें ? ब्रजकिशोर को दूसरी चिट्ठी लिख भेजें या यहा बुलाकर उन्की खातिर कर दें ?" निदान लाला मदनमोहन ने चुन्नीलाल की राह सें राह मिलाकर कहा

"मेरे निकट तो आप को उन्के मकान पर चलना चाहिये और कोई कीमती चीज तोहफा में देकर ऐसें प्रीति बढानी चाहिये जिस्से उन्के मनमें पहली गाठ बिल्कुल न रहै और आप के मुकद्दमों में सच्चे मन से पैरवी करें ऐसे अवसर पर उदारता से बडा काम निकलता है सादी ने कहा है "द्रव्य दीजिये वीर कों तासों दे वह सीस ॥ प्राण बचावेगी सदा बिनपाये बख शीस ॥" + मुन्शी चुन्नीलाल ने कहा.

"लाला साहब को ऐसी क्या गरज पडी है जो ब्रजकिशोर के घर जाय और कल जिसे बेइज्जत करके निकाल दिया था आज उस्की खुशामद करते फिरें ?" मास्टर शिभूदयाल बोले.

"असल में अपनी भूल है और अपनी भूलपर दूसरे को सताना बहुत अनुचित है" मुन्शी चुन्नीलाल संकेत सें शिभूदयाल को धमकाकर कहने लगा "बैठने उठने, और आने जाने की साधारण बातोंपर अपनी प्रतिष्ठा, अप्रतिष्ठा का आधार समझना संसार मैं अपनी बराबर किसी को न गिन्ना, एक तरह का

+ जरबिदह मर्दे सिपाहीरा तासर बिदिहद ॥
व गरश नदिही सर बनिहद दरआलम ॥

जगली विचार है. इस्की निस्बत सादगी और मिलनसारी से रहनें को लोग अधिक पसन्द करते हैं लाला ब्रजकिशोर कुछ ऐसे अप्रतिष्ठित नही हैं कि उन्के हा जानें से लाला साहब की स्वरूप हानि हो"

"यह तो सच है परन्तु मैंने उन्का दुष्ट स्वभाव समझ कर इतनी बात कही थी" मास्टर शिभूदयाल चुन्नीलाल का संकेत समझ कर बोले.

"ब्रजकिशोरके मकान पर जाने में मेरी कुछ हानि नही है परन्तु इतना ही विचार है कि मेलके बदले कही अधिक बिगाड न हो जाय" लाला मदनमोहनने कहा

"जी नही, लाला ब्रजकिशोर ऐसे अनसमझ नहीं हैं मैं जानता हू कि वह क्रोधसे आग हो रहे होंगे तो भी आपके पहुचते ही पानी हो जायगे क्योंकि गरमीमें धूपके सताए मनुष्य को छाया अधिक प्यारी होती है" मुन्शी चुन्नीलाल ने कहा

निदान सबकी सलाहसे मदनमोहनका ब्रजकिशोरके हा जाना ठैर गया चुन्नीलालनें पहलेसे खबर भेजदी, ब्रजकिशोर यह खबर सुन्कर आप आनें को तैयार होते थे इतने मैं चुन्नीलाल के साथ लाला मदनमोहन वहा जा पहुचे ब्रजकिशोर ने बडी उमगसे इन्का आदर सत्कार किया

इस छोटीसी बात से मालूम हो सक्ता है कि लाला मदन मोहन की तबियत पर चुन्नीलाल का कितना अधिकार था

"आपनें क्यों तकलीफ की ? मैं तो आप आने को था" लाला ब्रजकिशोर ने कहा

 "मैं आज आप के नाम एक

भूल सै भेज दी गई थी इसलिये लाला साहव चलाकर यह वात कहने आए हैं कि आप उस्का कुछ खयाल न करें" मुन्शी चुन्नीलाल नें कहा.

"जो वात भूल सै हो और वह भूल अंगीकार कर ली जाय तो फिर उस्में खयाल करने की क्या वात है ? और इस छोटेसे काम के वास्तै लाला साहव को परिश्रम उठाकर यहां आने की क्या जरूरत थी ?" लाला ब्रजकिशोर ने कहा.

"केवल इतना ही काम न था मुझ सै कल भी कुछ भूल हो गई थी और मै उस्का भी एवज दिया चाहता था" यह कह-कर लाला मदनमोहन नें एक बहुमूल्य पाकटचेन (जो थोडे दिन पहले हमल्टन कंपनी के हां सै फर्मायशी वनकर आई थी) अपनें हाथ सै ब्रजकिशोर की घडीमे लगा दी

"जी ! यह तो आप मुझ को लज्जित करते हैं मेरा एवज तो मुझ को आप के मुख सै यह वात सुन्ते ही मिल चुका मुझ को आपके कहने का कभी कुछ रंज नहीं होता इस्के सिवाय मुझे अवसर पर आप की कुछ सेवा करनी चाहिये थी सो मैं उल्टा आप सै कैसे लूं ? जिस मामले में आप अपनी भूल वताते हैं केवल आपही की भूल नहीं है आप सै वढ़कर मेरी भूल हे और मैं उस्के लिये अंतःकरणसै क्षमा चाहता हूं" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "मैं हर वात में आप से अपनी मर्जी मूजिव काम करानेके लिये आग्रह करता था परंतु वह मेरी वडी भूल थी वृन्दनें सच कहा हे "सवको रसमैं राखिये अंत लीजिये नाहिं ॥ विष निकस्यो अति मथनते रत्नाकरहू माहि ॥" मुझको विकालतके कारण वढाकर वात करनेंकी आदत पड गई है और

मैं कभी, कभी अपना मतलब समझानेंके लिये हरेक बात इतनी बढाकर कहता चला जाता हूं कि सुन्नें वाले उकता जाते हैं. मुझको उस अवसरपर जितनी बातें याद आती हैं मैं सब कह डालता हूं परन्तु मै जान्ता हु कि यह रीति बात चीतके नियमों सें विपरीति है और इन्का छोडना मुझ पर फर्ज है बल्कि इन्हें छोडने के लिये मैं कुछ, कुछ उद्योग भी कर रहा हू "

" क्या बातचीत के भी कुछ नियम हैं ? " लाला मदनमोहन ने आश्चर्य सें पूछा-

" हा ! इस्को बुद्धीमानो ने बहुत अच्छी तरह बरणन किया है " लाला ब्रजकिशोर कहने लगे " सुलभा नाम तपस्विनी ने राजा जनक सें बचन के यह लक्षण कहे हैं अर्थ सहित, सशय र- हित, पूर्वापर अविरोध ॥ उचित, सरल, सक्षित पुनि कहों बचन परिशोध ॥ १ ॥ प्राय कठिन अक्षर रहित, घृणा, अमगल हीन ॥ सत्य, काम, धर्मार्थयुत शुद्धनियम आधीन ॥ २ ॥ न्यून कूट न अरुचिकर, सरस, युक्ति दरसाय ॥ निष्कारण अक्षर रहित खडि- तह न लखाय ॥ ३ ॥ * "ससार मैं देखा जाता है कि कितनें ही मनुष्यों को थोडीसी मामूली बातें याद होती हैं जिन्हें यह अदल

---

* उपेतार्थ मभिन्नार्थं न्यायवृत्त न चाधिक ॥
न श्लक्ष्ण नच संदिग्ध वक्ष्यामि परमंतत १ ॥
न गुरूक्षर संयुक्त पराङमुख मुखनच ॥
नानृत नत्रिवर्गेण विरुद्ध नाप्यसंस्कृतम् २ ॥
न न्यून कष्टशब्द वा व्युत्क्रमाभिहितनच ॥
नशेषनानुकल्पेन निष्कारणमहेतुकम् ३ ॥

बदलकर सदा सुनाया करते हैं जिस्से सुन्नेवाला थोडी देरमैं उकता जाता है बातचीत करनें की उत्तम रीति यह है कि मनुष्य अपनी बातको मौकेसै पूरी करके उस्पर अपना अपना, विचार प्रगट करनें के लिये औरोंको अवकाश दे और पीछैसै कोई नई चर्चा छेड़े. और किसी विषय में अपना विचार प्रगट करे तो उसका कारण भी साथही समझाता जाय, कोई बात सुनी सुनाई होतो वह भी स्पष्ट कहदे हँसीकी बातों मैं भी सचाई और गभीरता को न छोडे, कोई बात इतनी दूरतक खैंचकर न ले जाय जिस्सै सुन्नें वालों को थकान मालूम हो धर्म, दया, और प्रबन्ध की बातों में दिल्लगी न करे. दूसरेके मर्मकी बातोंको दिल्लगी मैं जबान पर न लाय. उचित अवसर पर वाजवी राह सै पूछ पूछ कर साधारण बातों का ज्ञान लेना कुछ दूषित नहीं है परन्तु टेढे और निरर्थक प्रश्न करके लोगों को तंग करना अथवा बकवाद करके औरोंके प्राण खा जाना, बहुत बुरी आदत है. बातचीत करनें की तारीफ यह है कि सबका स्वभाव पहिचान कर इस ढबसैं बात कहै जिस्मैं सब सुन्नें वाले प्रसन्न रहैं जची हुई बात कहना मधुर भाषण सै बहुत बढकर है खासकर जहां मामलेकी बात करनी हो शब्द विन्यास के बदले सोच विचार कर बातचीत करना सदैव अच्छा समझा जाता है और सवाल जवाब बिना मेरी तरह लगातार बात कहते चले जाना कहने वाले की सुस्ती और अयोग्यता प्रगट करता है इसी तरह असल मतलब पर आने के लिये बहुतसी भूमिकाओं सै सुन्नें वालेका जी घबरा जाता है परन्तु थोडी सी भूमिका बिना भी बातका रंग नहीं जमता इसलिये अन्त मैं बहुतसी भूमिकाओं के बदले आप सै प्रयोजन

मात्र कहता हूं कि आप गई बीती बातोंका कुछ ख्याल न करें ?"

"जो कुछ भी ख्याल होता तो लाला साहब इस तरह उठकर क्या चले आते ? अब तो सब का आधार आप की कारगुजारी (अर्थात् कार्य कुशलता) पर है" मुंशी चुन्नीलाल ने कहा

"मेरे ऐसे भाग्य कहा ?" लाला ब्रजकिशोर प्रेम विवस होकर बोले

"देखो हरकिशोर ने कैसा नीचपन किया है !" लाला मदनमोहन ने आंसू भरकर कहा.

"इस्से बढकर और क्या नीचपन होगा ?" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "मैंनें कल उस्के लिये आप को समझाया था इस्से मैं बहुत लज्जित हूं मुझको उस्समय तक उस्के यह गुन मालूम न थे अब ये अफवा किसी तरह झूंट हो जाय तो मैं उसै मजा दिखाऊं"

"निस्सन्देह आप की तरफ सै ऐसीही उम्मेद है ऐसे समय मैं आप साथ न दोगे तो और कौन् देगा ?" लाला मदनमोहन नें करुणा सै कहा

"इस्समय सब सै पहले अदालत की जवाब दिहीका बंदोबस्त होना चाहिये क्योंकि मुकद्दमों की तारीखें बहुत पास, पास लगी हैं" मुन्शी चुन्नीलाल नें कहा

"अच्छा ! आप अपना कागज तैयार करानें के वास्तै तीन चार गुमाश्ते तत्काल बढा दें और अदालत की कार्रवाई के वास्ते मेरे नाम एक मुखत्यार नामा लिखते जायं बस फिर मैं समझ लूंगा" लाला ब्रजकिशोर नें कहा

निदान लाला मदनमोहन ब्रजकिशोर के नाम मुख्त्यार नामा लिखकर अपनें मकान को रवानें हुए.

प्रकरण ३०.

नैराश्य (नाउम्मेदी).

फलहीन महीरह कों खगवृन्द तजे वन को मृग भस्म भए।
मकरन्द पिए अरविन्द मिलिन्द तजे सर सारस सूख गए॥
धन हीन मनुष्य तजें गणिका नृपकों सठ सेवक राज हए।
बिन स्वारथ कौन सखा जग मैं ? सब कारज के हित हीत भए॥ +

भर्तृहरि.

सन्ध्या समय लाला मदनमोहन भोजन करनें गए तब मुंशी चुन्नीलाल और मास्टर शिंभूदयाल को खुलकर बात करनें का अवकाश मिला वह दोनों धीरे, धीरे बतलानें लगे

"मेरे निकट तुमने ब्रजकिशोरसे मेल करनें मैं कुछ बुद्धिमानी नहीं की. वैरी के हाथ मैं अधिकार देकर कोई अपनी रक्षा कर सक्ता है ?" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा.

"क्या करू ? इस्समय इस युक्ति के सिवाय अपनें बचाव का कोई रस्ता न था लोगों की नालिशें हो चुकी, अपनें भेद

+ वृक्षं क्षीणफलं त्यजन्ति विहगा दग्धं वनान्तं मृगाः ।
पुष्पं पीतरसं त्यजन्ति मधुपा शुष्कं सरः सारसाः ॥
निर्द्रव्यं पुरुषं त्यजन्ति गणिका भ्रष्टं नृपं मन्त्रिणः ।
सर्वं कार्यवशाज्जनो ऽभिरमते [illegible] ॥

खुलनें का समय आगया. ब्रजकिशोर सब बातों से भेदी थे इसलिये मैंनें उन्हीं के जिम्मे इन बातों के छिपानें का बोझ डाल दिया कि वह अपनें विपरीति कुछ न करनें पाय !" मुन्शी चुन्नी लाल ने हीरालाल की बात उड़ा कर कहा

"परन्तु अब ब्रजकिशोर तुम्हारा भेद खोल दें तो तुम कैसे अपना बचाव करो ? हर काम में आदमी को पहले अपनें निकास का रस्ता सोचना चाहिये अभिमन्यु की तरह धुन बाध कर चक्रावू में घुसे चले जाओगे तो फिर निकलना बहुत कठिन होगा पतंग उड़ाकर डोर अपनें हाथ न रक्खोगे तो उस्के हाथ लगनेंकी क्या उम्मेद रहेगी ?" मास्टर शिभूदयाल नें कहा

"मैंनें अपने निकास की उम्मेद केवलब्रजकिशोरके बिश्वास पर बाधी है परन्तु उन्की दो एक बातों सै मुझको अभी सन्देह होंने लगा प्रथम तो उन्होंनें इस गए बीते समय मैं मदन-मोहन से मेल करनें में क्या फायदा विचारा ? और महन्तानें के लालच से मेल किया भी था तो ऐसी जलदी कागज़ तैयार करनें की क्या जरूरत थी ? मैं जान्ता हू कि वह नालिश कर-नेंवालों से जवाबदिही करनें के वास्तै यह उपाय करते होंगे परन्तु जब वह जवाबदिही करेंगे तो नालिश करनेंवालो की तरफ़ सै हमारा भेद अपनें आप खुल जायगा और जिस बात को हम दूर फेंका चाहतें हैं वही पास आजावेगी" मुन्शी चुन्नीलाल नें कहा

"वकीलों के यही तो पेच होते हैं जिस बात को वह अपनी तरफ सै नहीं कहा चाहते उस्टे सीधे सवाल करके दूसरे के मुख से कहा लेते हैं और आप भलेके भले बने रहते हैं ।

तो सही हमनें ब्रजकिशोर के साथ कौन्सी भलाई की है जो वह हमारे साथ भलाई करेंगे? वकीलों के ढग चडे पेंचीदा होते हैं वह एक मुकद्दमे मैं तुह्मारे वकील वनते हैं तो दूसरे मैं तुम्हारे वैरी के वकील वन जाते हैं परन्तु अपना मतलव किसी तरह नहीं जानें देते."

"सच है इस काम मैं लाला ब्रजकिशोर की चाल पर अवश्य सन्देह होता है परन्तु क्या करें? अपने वकील न करेंगे तो वह प्रतिपक्षी के वकील हो जायँगे और अपना भेद खोलने मैं किसी तरह की कसर न रक्खेंगे" मुन्शी चुन्नीलाल कहनें लगा "असल तो यह है कि अव यहा रहनें मैं कुछ मजा नही रहा प्रथम तो आगे को कोई सुर्त नही दिखाई देती फिर जिन लोगों से हजारों रुपे खाए पीए हैं उन्ही के सामने होकर विवाद करना पडेगा और जब हम उन्से विवाद करेंगे तो वह हमसे मुलाहजा क्यों रक्खेंगे, हमारा भेद क्यों छिपावेंगे? कभी, कभी हम उन्से लाला साहव के हिसाव मैं लिखाकर वहुतसी चीजें घर लेगए हैं इसी तरह उन्के यहा जमा कराने के वास्तें लाला साहव से जो रुपे लेगए थे वह उन्के यहा जमा नहीं कराए ऐसी रकमों की वावत पहले, पहले तो यह विचार था कि इससमय अपना काम चला लें फिर जहाकी तहा पहुंचा देंगे परन्तु पीछे से न तो अपनें पास रुपे की समाई हुई न कोई देखनें भालने वाला मिला वस सव रकमें जहा की तहा रह गई अव अदालत मैं यह भेद खुलेगा तो कैसी आफत आवेगी? और हम लाला साहव की तरफ से विवाद करेंगे तो यह भेद कैसे छिप सकेगा? क्या करें? कोई [illegible] रस्ता नहीं [illegible]"

यदि ऐसै ही पाप करके लोग बच जाया करते तो संसार में पाप पुण्यका विचार काहेको रहता ?

"मुझको तो अब सीधा रस्ता यही दिखाई देता है कि जो हाथ लगे , ले लिवा कर यहा से रफूचक्कर हो ब्रजकिशोर तुह्मारे भाग्य सैं इस्समय आफसा है इस्के सिर मुफ्त का छप्पर रख कर अलग हो बैठो" मास्टर शिभूदयाल कहने लगा "जिस तरह अलिफलैला में अबुलहसन और शम्सुलनिहार के परस्पर प्रेम निबस हुए पीछे बखेडा उठने की सूरत मालूम हुई तब उन्का मध्यस्थ इब्नतायर उन्को छिटकाकर अलग हो बैठा और एक जौहरी नें मुफ्त में वह आफत अपनें सिर लेकर अपने आप को जंजाल में फसा दिया इसी तरह इस्समय तुह्मारी और ब्रजकिशोर की दशा हे ब्रजकिशोर को काम सौंप कर तुम इस्समय अलग हो जाओ तो सब बदनामी का ठीकरा ब्रजकिशोर के सिर फूटेगा और दूध मलाई चखने वाले तुम रहोगे ! "

" यह तो बडे मजे की बात है ब्रजकिशोर पर तो हम यह बोझ डालेंगे कि तुह्मारे लिये हम अलग होते हैं पीछे से हमारा भेद न खुलने पाय लेनदारों सै यह कहेंगे कि तुह्मारे वास्ते लाला साहब सै हमारी तकरार होगई उन्होंने हमारा कहा नही माना बस तुम भी कही हमको धोका न देना " मुन्शी चुन्नीलाल ने कहा.

" आज तो दोनों में बड़ी घूट, घूट कर बातें हो रही हैं " लाला मदनमोहन ने आतेही कहा " तुह्मारी सलाह कभी पूरी नहीं होती न जानें कौनसे किले लेनेका विचार किया करते हो ! "

जी हुजूर ! कुछ नहीं, मिस्टर रसल के मामले की चर्चा थी उस्की जायदाद के नीलाम की तारीख में केवल दो दिन बाकी हैं परन्तु अब तक रुपे का कुछ बंदोबस्त नहीं हुआ " मुन्शी चुन्नीलाल ने तत्काल बात पलट कर कहा.

"इस बिना विचारी आफत का हाल किस्को मालूम था? तुम उन्हें लिख दो कि जिस तरह होसके थोडे दिन की मुहलत लेलें. हम उस्के भीतर, भीतर रुपे का प्रबन्ध अवश्य कर देंगे" लाला मदनमोहन ने कहा.

"मुहलत पहले कई बार लेचुके हैं इस्से अब मिलनी कठिन है परन्तु इस्समय कुछ गहना गिरवी रख कर रुपे का प्रबन्ध कर दिया जाय तो उस्की जायदाद बनी रहै और धीरे, धीरे रुपया चुका कर गहना भी छुडा लिया जाय " मास्टर शिंभूदयाल ने जाते जाते सिप्पा लगाने की युक्ति की उस्का मनोर्थ था कि यह रकम हाथ लगजाय तो किसी लेनदार को देकर भली भांति लाभ उठायें. अथवा मदनमोहन मांगने योग्य न रहै तो सबकी सब रकम आप ही प्रसाद कर जायें अथवा किसी के यहां गिरवी भी धरें तो लेनदारों को कुर्की कराने के लिए उस्का पता बता कर उनसे भली भांति हाथ रंगें अथवा माल अपने नीचे दबे. पीछे और किसी युक्ति से भर पूर फायदे की सूरत निकाले परन्तु मदनमोहन के सौभाग्य से इस्समय लाला ब्रजकिशोर आ पहुंचे इस लिये उस्की कुछ दाल न गली.

" क्याहै ? किस काम के लिये गहना चाहते हो ? " लाला ब्रजकिशोर ने शिंभूदयाल की उड़तीसी बात सुनी थी इसपर आतेही पूछा

"जी कुछ नहीं, यह तो मिस्टर रसल की चर्चा थी " मुन्शी चुन्नीलाल नें बात उडाने के वास्ते गोल कहा.

" उस्का क्या देनलेन है ? उस्का मामला अब तक अदालत में तो नहीं पहुंचा ? "लाला ब्रजकिशोर पूछने लगे.

" यह एक नीलका सौदागर है और उस्पर बीस, पचीस हजार रूपे अपनें लेने हैं इस्समय उस्की नीलकी कोठी और कुछ विस्वे बिस्वान्सी दूसरे की डिक्री में नीलाम पर चढे हैं और नीलाम की तारीख में केवल दो दिन बाकी हैं नीलाम हुए पीछे अपनें रुपे पटने की कोई सूरत नहीं मालूम होती इस लिये ये लोग कहते थे कि गहना गिरवी रखकर उस्का कर्ज चुका दो परन्तु इतना बंदोबस्त तो इस्समय किसी तरह नहीं होसक्ता " लाला मदनमोहन ने लजाते, लजाते कहा

" अभी आप को अपने कर्जका प्रबन्ध करना है और यह मामला केवल मुहल्त लेने से कुछ दिन टल सक्ता है " लाला ब्रजकिशोर ने अपने मनका सदेह छिपाकर कहा

" मैं जान्ता हू कि मेरा कर्ज चुकाने के लिये तो मेरे मित्रों की तरफ से आज कल में बहुत रुपया आ पहुचेगा " लाला मदनमोहन ने अपनी समझ मूजिब जवाब दिया.

"और मुहलत कई बार लेली गई है इस्से अब मिलनी कठिन है " मास्टर शिभूदयाल बोले

" मैं खयाल करता हू कि अदाल्त के बिश्वास योग्य कारण बता दिया जायगा तो मुहलत अवश्य मिलजायगी " लाला ब्रज किशोर ने कहा

"और जो न मिली ? " शिभूदयाल हुज्जत करने लगा

"तो मैं अपनी जामिनी देकर जायदाद नीलाम न होने दूगा" ब्रजकिशोर ने जवाब दिया और अब शिभूदयाल को बोलने की कोई जगह न रही.

" कल कई मुकद्दमों की तारीखैं लगरही हैं और अबतक मैं उन्के हाल सै कुछ भेदी नहीं हु' तुमको अवकाश हो तो लाला साहब सै आज्ञा लेकर थोडी देरके लिये मेरे साथ चलो " लाला ब्रजकिशोर नें मुन्शी चुन्नीलाल सै कहा.

" हा, हां, तुम साथ जाकर सब बातें अच्छी तरह समझ आओ " लाला मदनमोहन नें मुन्शी चुन्नीलाल को हुक्म दिया

" आप इस्समय किसी काम के लिये किसीको अपना गहना न दें ऐसे अवसरपर ऐसी बातों में तरह, तरहका डर रहता है " लाला ब्रजकिशोर नें जाती बार मदनमोहन से संकेत में कहा और मुन्शी चुन्नीलाल को साथ लेकर रुख्सत हुए.

आज लाला मदनमोहन की सभा मैं वह शोभा न थी केवल चुन्नीलाल शिभूदयाल आदि दो चार आदमी दृष्टि आते थे परन्तु उन्के मनभी बुझे हुए थे. हँसी चुहल की बातें किसी के मुखसै नहीं सुनाई देती थी खास्कर ब्रजकिशोर और चुन्नीलाल के गए पीछे तो और भी सुस्ती छागई मकान सुन्सान मालूम होने लगा. शिभूदयाल ऊपर के मन सै हँसी चुहल की कुछ, कुछ बातें बनाता था परन्तु उन्मैं मोमके फूलकी तरह कुछ रस न था निदान थोडी देर इधर, उधर की बातें बनाकर सब अपने, अपने रस्ते लगे और लाला मदनमोहन भी मुर्झाए चित्तसै पलगपर जा लेटे

प्रकरण ३१.

चालाक की चूक

छलदिखाय दुख दीजिये खलसों लरियेकाहि
जो गुर दीयेही मरे क्यों विष दीजे ताहि ?

वृन्द

"लाला मदनमोहन का लेन देन किस्तरह पर है ?" ब्रज किशोर नें मकान पर पहुचते ही चुन्नीलाल सैं पूछा

"विगत वार हाल तो कागज तैयार होनें पर मालूम होगा परन्तु अंदाज यह है कि पचास हजार के लगभग तो मिस्टर ब्राइट के देने होंगें, पंदरह बीस हजार आगाहसनजान महम्मद जान वगैरे खेरीज सौदागरों के देने होंगे, दस बारह हजार कलकत्ते, मुंबई के सौदागरों के देनें होंगे, पचास हजार में निहालचंद, हरकिशोर वगैरे बाजार के दुकानदार और दिसावरोंके आढतिये आ गए मुन्शी चुन्नीलाल नें जवाब दिया

और लेने किस, किस पर हैं ? " ब्रजकिशोर ने पूछा.

"बीस पचीस हजार तो मिस्टर रसल की तरफ बाकी होंगे, दस बारह हजार आगरे के एक जौहरी में जवाहरात की बिक्रीके लेने हैं, दस पंदरह हजार यहाके बाजारवालों में और दिसावरोंके आढतियो में लेनें होंगे पाच, सात हजार रंगीन लोगों में और नौकरों में बाकी होंगे आठ दस हजारका ब्यापार सीसे का माल मौजूद है, पाच हजार रुपे अलीपुर रोडके ठे

वावत सरकार से मिलनेवाले हैं और रहनेंका मकान, बाग, सवारी, सर सामान वगैरे सब इन्से अलग है" मुन्शी चुन्नी लालनें जवाव दिया.

"इस तरह अटकल पच्चू हिसाब बतानें से कुछ काम नही चल्ता जबतक लेनें देनें का ठीक हाल मालूम नही फैस्ला किस तरह किया जाय? तुम सवेरे लाला जवाहरलाल को मेरे पास भेज देना मैं उस्से सब हाल पूछ लूंगा ऐसे अवसरपर असावधानी रखनें से देना सिरपर बना रहता है और लेना मिट्टी हो जाता है," ब्रजकिशोरनें कहा.

"कागज बहुत दिनोंका चढ रहा है और बहुत से जमा खर्च होनें बाकी हैं इस लिये कागज से कुछ नही मालूम हो सक्ता" मुन्शी चुन्नीलालने बात उडाने की तजवीज की

"कुछ हर्ज नही, मैं लोगों से जिरहके सवाल करके अपना मतलब निकाल लूंगा मुझको अदालत में हर तरहके मनुष्यों सै नित्य काम पडता है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "तुमनें आज सवेरे मुझ सै सफ़ाई करनें की बात की थी परन्तु अभी सै उस्मैं अंतर आनें लगा मैं वहां पहुंचा उस्समय तुम लोग लाला साहब सै गहना लेने की तजवीज कर रहे थे परन्तु मेरे पहुंचते ही वह बात उडानें लगे मुझको कुछ का कुछ समझाने लगे सो मैं ऐसा अन्समझ नही हूं यदि मेरा रहना तुमको असह्य है, मेरे मेलसै तुम्हारी कमाई में फर्क आता है, मेरे मेल करानेंका तुमको पछतावा होता है तो मैं तुम्हारी मारफत मेल कर के तुम्हारा नुक्सान हरगिज नही किया चाहता, लाला साहब सै मेल नहीं रक्खा चाहता तुम अपना बंदोबस्त आप कर लेना."

"आप वृथा खेद करते हैं. मैंनें आप से छिप कर कोनसा काम किया ? आप के मेल सै मेरी अप्रसन्नता कैसे माऌम हुई ? आप पहुंचे जब निस्सदेह शिंभूदयालने मिस्टर रसलके लिये गहनें की चर्चा छेडी थी परन्तु वह कुछ पक्की वात न थी और आपकी सलाह विना किसी तरह पूरी नहीं पड सक्ती थी आपसै पहले वात करनें का समय नहींमिला था इसी लिये आपके साम्ने वात करनें मैं इतना सकोच हुआ था परन्तु आप को हमारी तरफ सै अब तक इतना सदेह बन रहा है तो आप लाला साहबके छोडने का विचार क्यों करते हैं आप के लिये हमहीं अपनी आवाजाई बन्द कर देंगे" मुन्शी चुन्नीलाल नें कहा.

सादो नें सच कहा है "वृद्धा वेश्या तपस्विनी न होय तो और क्या करे ? उतरा सेनक किसीका क्या विगाडकर सक्ता है कि साधु न बनें ?" * लाला ब्रजकिशोर मुस्कराकर कहनें लगे "मैं किसी काम मैं किसी का उपकार नहीं सहा चाहता यदि कोई मुझपर थोडा सा उपकार करे तो मैं उस्से अधिक करनें की इच्छा रखता हू फिर मुझको इस थोथे काम मैं किसी का उपकार उठानें की क्या जरूरत है ? जो तुम महरवानी करके मेरा पूरा महन्ताना मुझको दिवा दोगे तो मैं इसी मैं तुह्मारी वडी सहायता समझू गा और प्रसन्नता सै तुह्मारा कमीशन तुह्मारी नजर करू गा" लाला ब्रजकिशोर इस वात चीत मैं ठेठ सै अपनी सच्ची सावधानी के साथ एक दाव खेल रहे थे

* कहवण पीर बज़ नावकारी चे कुनद कि तोबा नकुद ? व यहनए माजूल बज़ मर्दुन आजारी

प्रकरण ३२.

अदालत.

काम परेही जानिये जो नर जैसो होय ॥
बिन ताये खोटो खरो गहनो लखै न कोय ॥

वृन्द.

अदालत हाकिम कुर्सीपर बैठे इजलास कर रहे हैं. सब अहलकार अपनी, अपनी जगह बैठे हैं निहालचंद मोदी का मुकद्दमा हो रहा है उस्की तरफ से लतीफ हुसैन वकील हैं. मदनमोहनकी तरफ से लाला ब्रजकिशोर जवाबदिही करते हैं. ब्रजकिशोर नें बचपन में मदनमोहन के हा बैठकर हिंदी पढी थी इस वास्तै वह सराफी कागज की रीति भाति अच्छी तरह जान्ता था और उस्नें मुकद्दमा छिडनें से पहले मामूली फीस देकर निहालचंद के वही खाते अच्छी तरह देख लिए थे इस मुकद्दमें मैं कानूनी बहस कुछ न थी केवल लेन देनका मामला था

ब्रजकिशोर नें निहालचंदको गवाह ठैराकर उस्सै जिरहके सवाल पूछनें शुरू किये "तुम्हारा लेन देन रुक्के पर्चों सै है !"

जवाब "नही"

"तो तुम किस तरह लेन देन रखते हो ?

ज० "नोकरों की मारफत"

"तुमको कैसे मालूम होता है कि यह आदमी लाला मदनमोहन की तरफ सै माल लेनें आया है और उन्हीके हा ले ।"

"हम यह नही जान सक्ते परतु लाला साहब का हुक्म हे कि वह लोग जो,जो सामान मागें तत्काल दे दिया करो"

"अच्छा ? वह हुक्म दिखाओ !"

ज० "वह हुक्म लिखकर नही दिया था जबानी है"

"अच्छा ! वह हुक्म किस्के आगे दिया था-?" "किस किसके लिये दिया था!" "कितनें दिन हुए ?"-"कौन्सा समय था ?" "कौन्सी जगह थी ?" "क्या कहा था ?"

"बहुत दिनकी बात है मुझको अच्छी तरह याद नहीं"

"अच्छा ? जितनी बात याद हो वही बतलाओ !"

ज० "मैं इस्समय कुछ नहीं कह सका"

"तो क्या किसीसे पूछकर कहोगे ?"

ज० "जी नहीं याद करके कहूगा"

"अच्छा ! तुम्हारा हिसाब होकर बीच में बाकी निकल चुकी है ?

ज० "नही"

"तो तुमनें सालकी साल बाकी निकालकर ब्याजपर ब्याज कैसे लगा लिया ?"

"साहूकारेका दस्तूर यही है,"

"साहूकारेमें तो सालकी साल हिसाब होकर ब्याज लगाया जाता है फिर तुमने हिसाब क्यों नहीं किया ?"

ज० "अवकाश नहीं मिला"

"तुम्हारी बहियोंमें उदरत खाते से क्या मतलब है ?"

"लाला मदनमोहनके लेन देन सिवाय आप और किसी खातेका सवाल न करें" निहालचदके वकीलनें कहा

"मुझको इस से लाला मदनमोहन के लेन देनका विशेष सबंध मालूम होता है इसी सै मैंने यह सवाल किया है" लाला ब्रजकिशोरनें जवाब दिया, और परिणाम मैं हाकिम के हुक्म सै यह सवालपूछा गया,

"जो रकमें यही खाते मैं हिसाब पक्का करके लिखी जानेंके लायक होती हैं और तत्काल उन्का हिसाब पक्का नहीं हो सक्ता वह रकमे हिसावकी सफाई होनें तक इस खाते मैं रहती हैं और सफाई होनें पर जहाकी तहा चली जाती हैं" निहालचदनें जवाब दिया,

"अच्छा! तुम्हारे हा जिन मितियों मैं बहुत करके लाला मदनमोहन के नाम बडी, बडी रकमें लिखी गई हैं उनहीं मितियों मैं उदरत खाते कुछ रकम जमा की गई है और फिर कुछ दिन पीछे उदरत खाते नाम लिखकर वह रकमें लोगोंको हाथों हाथ दे दी गई हैं या उन्के खाते मैं जमा कर दी गई हैं इस्का क्या सबब है?" लाला ब्रजकिशोरनें पूछा।

"मैं पहले कह चुका हू कि जिन लोगों की रकमें अलल हिसाब आती जाती हैं या जिन्का लेन देन थोड़े दिनके वास्तै हुआ करता है उन्की रकम कुछ दिनके लिये इस तरह पर उदरत खाते मैं रहती है परतु मैं किसी खास रकमका हाल वही देखे बिना नहीं बता सक्ता," निहालचदनें जवाब दिया।

"और यह भी जरूर है कि जिस दिन लाला मदनमोहन का काम पडे उस दिनकी यह काररवाई अयोग्य समझी जाय?" निहालचदके वकीलनें कहा

"तो ये क्या जरूर है कि जिस मितीमैं लाला मदनमोहनके

नाम रंडी रकम लिखी जाय उसी मितीमैं कुछ रकम उदरत खाते जमा हो और थोडे दिन पीछे वह रकम जैसीकी तैसी लोगों को बाट दी जाय ?" लालाब्रजकिशोरनें जवाब दिया।

"देखो जी ! इस मुकद्दमेमें किसी तरह का फरेब साबित होगा तो हम उसे तत्काल फौजदारी सुपुर्द कर देंगे" हाकिमनें सदेह करके कहा

"हजूर हमको एक दिनकी मुहल्त मिल जाय हम इन सब बातोंके लिये लाला ब्रजकिशोर साहबकी दिलजमई अच्छी तरह कर देंगे" निहालचदके वकीलनें हाकिम से अर्ज की और ब्रजकिशोरनें इस बातको खुशी से मजूर किया

उदरत खाते से लाला मदनमोहनके नोकरों की कमीशन वगैरे का हाल खुलता था जहा रकम जमा थी किस्से आई ? किस बाबत आई इसका कुछ पता न था परतु जहा रकम दी गई मदनमोहनके नोकरोंका अलग, अलग नाम लिखा था और हिसाब लगानें से उसका भेद भाव अच्छी तरह मिल सक्ता था। जिन नोकरोंके खाते थे उन्के खातोंमें यह रकमें जमा हुई थीं और कानूनके अनुसार ऐसे मामलोंमें रिश्वत लेनें देनें वाले दोनों अपराधी थे परतु ब्रजकिशोरके मनमें इन्के फंसाने की इच्छा न थी वह केवल नमूना दिखाकर लेनदारों की हिम्मत घटाया चाहता था उस्नें ऐसी लपेटसें सवाल किये थे कि हाकिम को भारी न लगे और लेनदारोंके चित्तमें गढ जाय सो ब्रजकिशोर की इतनी ही पकडसें बहुतसे लेनदारोंके छक्के छूट गए।

कितनें ही छिपे लुच्चे मदनमोहनकी बेपरवाी और कागज अधेर, लेनदारोंका हुल्लड, मुकद्दमोंके झटपट हो जानेकी

मदनमोहनके नोकरोंकी स्वार्थपरता के भरोसे पर कुछ कु
बढाकर दावे कर बैठे थे यह सूरत देखतेही उन्के पाव तले
जमीन निकल गई। मिस्टर ब्राइट की कुर्की में सब म
अस्बावके कुर्क हो जाने से लेनदारोंको अपनी रकमके पटने
सदेह तो पहलेही हो गया था, अब किसी तरहकी लपेट आज
पर अपनी इज्जत खो बैठनेका डर मालुम होने लगा "नमाज
गए थे रोजे गले पड़े"।

सिवायमें यह चर्चा सुनाई दी कि मदनमोहन को और, ब
दिसावरोंका बहुत देना है यदि सब माल जायदाद नील
होकर हिस्सै रसदी सब लेनदारोंको दिया गया तो भी ब
थोडी रकम पल्ले पडेगी, ब्रजकिशोरसे लोग इस्का हाल पू
थे तब वह अजान बन्कर अलग हो जाता था इस्से लोगों
ओर भी छाती बैठी जात । जिसतरह पलभरमें मदनमोह
दिवालेकी चर्चा चारों तरफ फैल गई थी इसी तरह अब
सब बातें अफवाकी जहरी हवामें मिलकर चारों त
उडने लगी।

मोदीके मुकद्में सिवाय आज कोई पेचदार मुकद्मा अ
लतमें न हुआ जिन्के मुकद्मोंमें आजकी तारीख लगी थी उ
भी निहालचंदके मुकद्में का परिणाम देखनेके लिये अ
मुकद्में एक, एक दो, दो दिन आगे बढ़वा दिये।

जब इस कामसे अवकाश मिला तो लाला ब्रजकिशो
अदालतसे अर्ज करके मिस्टर रसलकी जायदाद नीलाम होने
तारीख आगे बढवा दी परन्तु यह बात ऐसी सीधी थी कि इ
लिये कुछ विशेष परिश्रम न उठाना पड़ा।

'लाला ब्रजकिशोर की चाल देखकर बडा आश्चर्य होता है। सब लेनदार चारों तरफसे निराश होकर उस्के पास आते हैं परन्तु वह आप उस्से अधिक निराश मालूम होता है वह उन्के साथ बडी बेपरवाई से बातचीत करता है उन्को हर तरहके चढाव उतार दिखाता है जब वह लोग अपना पीछा छुटानें के लिये उस्से बहुत आधीनता करते हैं तो वह बडी बेपरवाईसे उन्के साथ लगाव की बात करता है परन्तु जब वह किसी बात पर जमते हैं तो वह आप कच्चा पक्का होनें लगता है उल्टी सीधी बात करके अपनी बातसे निकला चाहता है और जब कोई बात मंजूर करता है तो बडी आनाकानीसे जबान निकलनेंके कारण उस्को यह बोझ उठाना पडता हो ऐसा रूप दिखाई देता है। कचहरी से लौटती बार उस्ने घंटे डेढ घंटे मिस्टर ब्राइटसे एकांतमें बातचीत की। अदालतके कामोंमे उस्का वैसाही उद्योग दिखाई देता है परन्तु दरअसल वह किसी अत्यंत कठिन काममें लग रहा हो ऐसा ढंग मालूम होता है उस्के पहले सब काम नियमानुसार दिखाई देते थे परन्तु इस समय कुछ क्रम नहीं रहा इस्समय उस्के सब काम परस्पर विपरीत दिखाई देते हैं इसलिये उस्का निज भाव पहचान्ना बहुत कठिन है परन्तु हम केवल इतनी बातपर संतोष बांध बैठे हैं कि जब उस्की काररवाईका परिणाम प्रकट हो जायगा तो वह अपना भाव सर्व साधारण की दृष्टिसे कैसे गुप्त रख सकेगा?'

प्रकरण ३३.

मित्रपरीक्षा ।

धन न भयेहू मित्रकी सज्जन करत सहाय ॥
मित्र भाव जांचे बिना कैसे जान्यो जाय ॥ †

विदुरप्रजागर.

आज तो लाला ब्रजकिशोर की बातोंमैं लाला मदनमोहन की बात ही भूल गए थे !

लाला मदनमोहन के मकानपर वैसी ही सुस्ती छा रही है केवल मास्टर शिम्भूदयाल और मुन्शी चुन्नीलाल आदि तीन, चार आदमी दिखाई देते हैं परन्तु उन्का भी होना न होना एकसा है वह भी अपने निकासका रस्ता ढूंढ रहे हैं हम अबतक लाला मदनमोहनके बाकी मुसाहबोंकी पहचान करानेके लिये अवकाश देख रहे थे इतनेमैं उन्नें मदनमोहन का साथ छोडकर अपनी पहिचान आप बतादी हरगोविन्द और पुरुषोत्तमदासनें भी कलसै सूरत नहीं दिखाई थी बाबू बैजनाथ को बुलाने के लिये आदमी गया था परन्तु उन्हें आने का अवकाश न मिला लाला हरदयाल साहबके नाम कुछ दिन के लिये थोड़े रुपे हाथ उधार देने को लिखा गया था परन्तु उन्का भी जबाब नहीं आया लाला मदनमोहन का ध्यान सबसै अधिक डाककी तरफ़ लग रहा था उन्को

† अचयेंद्य मित्राणि सत्रिवासत्रिवा धने
नानर्थं यत् प्रजानाति मित्राणां सारफल्गुता ॥

विश्वास था कि मित्रों की तरफसे अवश्य अवश्य सहायता मिलेगी बल्कि कोई, कोई तो तारकी मारफत रुपे भिजवायंगे.

"क्या करें ? बुद्धि काम नहीं करती" मास्टर शिभूदयालने समय देखकर अपने मतलब की बात छेडी "इन्ही दिनोंमें यहा काम है और इन्ही दिनों मदरसे में लडकोंका इमतहान है कल मुझको वहा पहु चने में पाव घण्टे की देर हो गई थी इसपर हेड-मास्टर सिर होगए वहा न जाय तो रोजगार जाता है यहा न रहूँ तो मन नही मान्ता (मदनमोहनसे) आप आज्ञा दें जैसा किया जाय ?"

"खैर ? यहाका तो होना होगा सो हो रहैगा तुम अपना रोजगार न खोओ" लाला मदनमोहनने रुखाई से जवाब दिया.

क्या करू ? लाचार हू" मास्टर शिभूदयाल बोले "यहां आए बिना तो मन नहीं माने गा परन्तु हा कुछ कम आना होगा आठ पहर की हाजरी न सध सकेगी मेरी देह मदरसेमें रहेगी परन्तु मेरा मन यहा लगा रहेगा"

"बस आपकी इतनी ही महरबानी बहुत है" लाला मदनमोहनने जोर देकर कहा

निदान मास्टर शिभूदयाल मदरसे जाने का समय बताकर रुखसत हुए

"आज निहालचन्दका मुकद्मा है देखें ब्रजकिशोर कैसी पैरवी करते हैं" मुन्शी चुन्नीलालने कहा" कल आपके पास्टचेन देनेसें उनका मन बहुत बढ़गया परन्तु वह उसे अपने महन्ताने में न समझें मेरे निकट अब, उनका महन्ताना तत्काल भेज देना चाहिये जिस्सें उनको यह संदेह न रहे और मन लगाकर ..

मुकद्मों मैं अच्छी जवाब दिही करैं. मैं इन्के पास रहकर देख चुका हूं कि यह अपने मुख सै तो कुछ नहीं कहते परन्तु इन्के साथ जो जितना उपकार करता है यह उस्सै बढकर उस्का काम कर देते हैं"

"अच्छा! तो आज शाम को कोई कीमती चीज इन्के मह न्ताने मैं दे देंगे और काम अच्छा किया तो शुकाना जुदा देंगे" लाला मदनमोहनने कहा

इतने मैं डाक आई उस्मैं एक रजिस्ट्री चिट्ठी मेरठसै एक मित्रकी आई थी जिस्मैं दस हजार की दर्शनी हुंडी निकली और यह लिखा था कि "जितने रुपे चाहिये और मगा लेना आपका घर है" लाला मदनमोहन यह चिट्ठी देखते ही उछल पडे और अपने मित्रों की बडाई करने लगे हुंडी तत्काल सकराने को भेज दी परन्तु जिस्के नाम हुंडी थी उस्ने यह कहकर हुंडी सिकारने सै इन्कार किया कि जिस साहूकार के हा सै लाला मदनमोहनके पास हुंडी आई है उसीने तार देकर मुझको हुंडी सिकारने की मनाई की है इस्सै सब भेद खुल गया असल बात यह थी कि जिससमय मदनमोहन की चिट्ठी उस्के पास पहुंची उस्को मदनमोहनके बिगडने का जरा भी संदेह न था इसलिये मदनमोहन की चिट्ठी पहुंचते ही उस्ने सच्ची प्रीति दिखाने के लिये दस हजार की हुंडी खामदी परन्तु पीछेसै और लोगोंकी जबानी मदनमोहन के बिगडने का हाल सुन्कर घबराया और तत्काल तार देकर हुंडी पडी रखवादी.

लाला मदनमोहन इस तरह अपने एक मित्रके छलसै निराश होकर तीसरे पहर अपने शहरके मित्रोंसै सहायता मागने के

लिये आप सवार हुए. पहले रस्ते में जो लोग झुक, झुक कर सलाम करते थे वही आज इन्हें देखकर मुख फेरने लगे बल्कि कोई, कोई तो आवाज़े कसने लगे. मदनमोहन को सबसे अधिक विश्वास लाला हरदयाल का था इसलिये वह पहले उसीके मकानपर पहुचे

हरदयाल को मदनमोहनके काम बिगडने का हाल पहले मालूम हो चुका था और इसी वास्ते उस्नें मदनमोहन की चिट्ठी का जवाब नही भेजा था अब मदनमोहनके आने का हाल सुन्ते ही वह जरासी देरमें मदनमोहन के पास पहुचा और बडे सत्कारसे मदनमोहनको लिवा लेजा कर अपनी बैठकमें बिठाया.

लाला मदनमोहनने कल सहायता मागनेके लिये चिट्ठी भेजी थी उस्को पहले उस्ने हसीकी बात ठैराई और जवाब न भेजने का भी यही कारण बताया परन्तु जब मदनमोहनने वह बात सच्ची बताई और उस्के पीछे का सब वृत्तान्त कहा तो लाला हरदयाल अत्यन्त दुखित हुए और बडी उमगसें अपनी सब दौलत लाला मदनमोहन पर न्योछावर करने लगे लाला हर-दयाल, की यह बाते केवल कहने के लिये न थी वह दौडकर अपने गहने का कलमदान उठा लाए और उस्में से एक, एक रकम निकाल कर, लाला मदनमोहन को देने लगे इतने में एका-एक दरवाजा खुला हरदयालका पिता भीतर पहुचा और वह हरदयाल को जवाहरातकी रकमें मदनमोहनके हाथमें देते देख कर क्रोध सें लाल हो गया

"अभागे हटधर्मी ! मैंने तुझको इतनी बार बरजा परन्तु त अपना हट नहीं छोडता आजकल के कपूत लड़के इतनी

सच्ची स्वतंत्रता समझते हैं कि जहा तक हो सके बडों का निरा दर और अपमान किया जाय, उन्को मूर्ख और अनसमझ बताया जाय, परन्तु मैं इन बातों को कभी नहीं सहूंगा मेरे बैठे तुझको घर बरबाद करनें का क्या अधिकार है? निकल यहासैं काला मुहकर तेरी इच्छा होय जहा चला जा मेरा तेरा कुछ सम्बन्ध नही रहा" यह कह कर एक तमाचा जड दिया और गहना सम्हाल, सम्हालकर संदूक में रखनें लगा. थोडी देर पीछे लाला मदनमोहन की तरफ देखके कहा. "ससारके सब काम रुपे सैं चलते हैं फिर जो लोग अपनी दौलत खोकर बैरागी बन बैठें और औरों की दौलत उडाकर उन्को भी अपनी तरह बैरागी बनाना चाहें वह मेरे निकट सर्वथा दया करनें के योग्य नही है और जो लोग ऐसे अज्ञानियों की सहायता करते हैं वह मेरे निकट ईश्वर का नियम तोडते हैं और संसारी मनुष्यों के लिये बडी हानिका काम करते हैं मेरे निकट ऐसे आदमियों को उन्की मूर्खताका दण्ड अवश्य होना चाहिये जिस्सैं और लोगों की आखें खुलैं क्या मित्रता का यही अर्थ है कि आप तो डूबें सो डूबें अपने साथ औरों को भी ले डूबें! नहीं, नहीं आप ऐसे विचार छोड दीजिये और चुपचुपाते अपनें घर की राह लीजिये यह समय अपने मित्रोंको देने का है अथवा उल्टा उन्से लेने का है?"

बुरे वक्तमें एक मित्रका जी दुखाना, और दयाके समय क्रूरता करनी, किसी की दुखती चोटपर हँसना, एक गरीब को उस्की गरीबीके कारण तुच्छ समझना, अथवा उस्की गरीबी को याद दिवाकर उसे सताना, दूसरेका बदला भुगताती बार अपने ... का खयाल करना, कैसा ओछापन और घोर पाप है

जहा सज्जन धनवानों की खुशामद से दूर रहकर गरीबों का साथ देनें और सहायता करने में सची सज्जनता समझते हैं कठोर वचन दो तरह से कहा जाता है जो लोग अपनायत की रीति से कहते हैं उन्की कहनसे तो अपने चित्तमें वफादारी और आधीनता बढती है पर जो अभिमान की राहसे दूसरे को तुच्छ बनाते हैं उन्की कहनमें चित्तमें क्रोध और धिःकार बढता जाता है हर तरह का घाव ओषधिसे अच्छा होसक्ता है परन्तु मर्म बेधी बात का नासूर किसी तरह नहीं रुझता विदुरजी ने सच कहा है "नालक सर धनु तीर काढे कढत शरीरते ॥ कुवचन तीर गभीर कढत न क्यों हु उर गढे ॥ १"

निदान लाला मदनमोहन को यह कहना अत्यन्त असह्य हुई वह तत्काल उठकर वहा से चल दिये परतु बैठक से बाहर जाते, जाते उन्हें पीछेसे हरदयाल का यह वचन सुन्कर बडा आश्चर्य हुआ कि "चलो यह स्वाग (अभिनय) हो चुका अब अपना काम करो"

लाला मदनमोहन वहा से चलकर एक दूसरे मित्रके मकान पर पहु चे और उस्से अपने आनेंकी खबर कराई वह उस्समय कमरे में मौजूद था परतु उस्नें लाला मदनमोहन को थोडी देर अपनें दरवाजे पर बाट दिखानें में और अपनें कमरे को जरा मेज कुरसी, किताब, अखबार आदि से सजाकर मिलनें में अधिक शोभा समझी इस लिये कहला भेजा कि "आप ठैरें लाला साहब भोजन करने गए हैं अभी आकर आप से मिलेंगे" देखिये आजकल्के सुधरे विचारोंका नमूना यह है ! थोडी देर पीछे वह लाला मदनमोहनको लिवानें आया और बडे शिष्टाचार से [illegible]

ले जाकर उन्हें तकियेके सहारे बिठाया लाला मदनमोहनको थोडी देर उस्की बाट देखनी पडी थी इस्की क्षमा चाही और इधर उधरकी दो चार बातें करके मानों कुछ चिठ्ठिया अत्यन्त आवश्यकीय लिखनी बाकी रह गई हों इस्तरह चिट्ठी लिखने लगा परतु दो चार पल पीछे फिर कलम रोककर बोला "हा यह तो कहिये आपने इस्समय किस्तरह परिश्रम किया ?"

"क्यो भाई ! आने जाने का कुछ डर है ? क्या मैं पहले कभी तुम्हारे यहा नहीं आया ? या तुम मेरे यहां नहीं गए ?" लाला मदनमोहनने कहा

"आपनें यह तो बडी कृपा की परन्तु मेरे पूछनें का मतलब यह था कि कुछ तावेदारी बताकर मुझे अधिक अनुग्रहीत कीजिये" उस मनुष्यने अजानपनें मैं कहा.

"हा कुछ काम भी है मुझको इस्समय कुछ रुपे की जरूरत है मेरे पास बहुत कुछ माल अस्वाव मौजूद है परन्तु लोगोंनें वृथा तकाजा करके मुझको घवरा लिया" लाला मदनमोहन भोले भाव सै बोले

"मुझको बडा खेद है कि मैंनें अपना रुपया अभी एक और काम मैं लगा दिया यदि मुझको पहले सै कुछ सूचना होती तो मैं सर्वथा वह काम न करता" उस मनुष्यनें जवाब दिया.

"अच्छा ! कुछ चिन्ता नहीं आप मेरे लेनदारोंकी जमायातर ज़रा अपनी तरफ सै कर दें"

"इस्सैं हमारी स्वरूपहानि है हम जामनी करें तो हमको रुपया उसी समय देना चाहिये" उस पुरुषनें जवाब दिया और लाला मदनमोहन वहां सै भी निराश होकर रवाने हुए.

रस्ते में एक और मित्र मिले वह दूर ही से अजानकी तरह दृष्टि बचाकर गलीमें जानें लगे परन्तु लाला मदनमोहननें आवाज देकर उन्हें ठैराया और अपनी वग्गी खडी की इस्सें लाचार होकर उन्हें ठैरना पडा परन्तु उनके मनमें पहली सी उमंग नाम को न थी.

"आप प्रसन्न हैं ? मुझको इस्समय एक बडा जरूरी काम था इस्सें मैं लपका चला जाता था मुझको आपकी वग्गी दृष्टि न आई, माफ करें मै किसी समय आपके पास हाजिर होऊ गा" यह कहकर वह मनुष्य जानें लगा परन्तु मदनमोहननें उसै फिर रोका और कहा "हा भाई ! अब तुमको अपनें जरूरी कामोंके आगे मुझसें मिलनें का अवकाश क्यों मिलनें लगा था ? अच्छा ? जाओ हमारा भी परमेश्वर रक्षक है"

इस तानें से लाचार होकर उसै ठैरना पडा और उसके ठैरने पर लाला मदनमोहन नें अपना वृत्तान्त कहा

"यह हाल सुन्कर मुझको अत्यन्त खेद हुआ परमेश्वर आप पर कृपा करे वह सर्वशक्तिमान दीनदयाल सब का दु ख दूर करता है उस्पर विश्वास रखनें से आप के सब दु ख दूर हो जायगे आप धैर्य रक्खें मुझको इस्समय सचमुच बहुत जरूरी काम है इस लिये मैं अधिक नहीं ठैर सका परन्तु मैं आजकल में आपके पास हाजिर होऊ गा और सलाह करके जो बात मुना सिब मालूम होगी उस्के अनुसार बरताव किया जायगा" यह कह कर वह मनुष्य तत्काल वहा से चल दिया

लाला मदनमोहन और एक मित्रके मकानपर पहु चे बाहर खबर मिली मकान के भीतर हैं" भीतर से जवा

कि "बाहर गए" लाचार मदनमोहन को वहां से भी खाली हाथ फिरना पडा. और अब और मित्रोंके यहां जानें का समय नहीं रहा इस लिये निराश होकर सीधे अपनें मकान को चले गए.

प्रकरण २४.

हीनप्रभा (बदरोबी)

नीचन के मन नीति न आवै। प्रीति प्रयोजन हेतु लखावै॥
कारज सिद्ध भयो जब जानें। रंचकहू उर प्रीति न मानें॥
प्रीति गए फलहू बिनसावै। प्रीति विषै सुख नेक न पावै॥
जादिन हाथ कछू नहीं आवै। भाखि कुबात कलंक लगावै॥
सोइ उपाय हिये अवधारै। जासु बुरो कछु होत निहारै॥
रंचक भूल कछू तस पावै। भांति अनेक विरोध बढावै॥ +

बिदुरप्रजागरे.

लाला मदनमोहन मकान पर पहुंचे उस्समय ब्रजकिशोर वहां मोजूद थे.

लाला ब्रजकिशोर ने अदालत का सब वृत्तान्त कहा उसमें मदनमोहन मोदी के मुकदमे का हाल सुन्कर बहुत प्रसन्न हुए उस्समय चुन्नीलाल ने संकेत में ब्रजकिशोर के महन्तानें की याद

+ निवर्तमाने सौहार्दे प्रीतिर्नीचे प्रणश्यति।
या चैव फलनिर्वृत्तिः सौहृदे चैव यत्सुखम्॥
यतते चापवादाय यत्नमारभते क्षये।
अल्पेऽप्यपकृते मोहान्न शान्तिमधिगच्छति॥

दिखाई जिसपर लाला मदनमोहन नें अपनी अगुली से हीरे की एक बहुमूल्य अगूठी उतार कर ब्रजकिशोर को दी और कहा "आप की महनत के आगे तो यह महन्ताना कुछ नही है परन्तु अपना पुराना घर और मेरी इस दशा का विचार करके क्षमा करिये"

यह बात सुन्ते ही एक बार लाला ब्रजकिशोर का जी भर आया परन्तु फिर तत्काल सम्हल कर बोले "क्या आपने मुझ को ऐसा नीच समझ रक्खा है कि मैं आप का काम महन्ताने के लालच से करता हू ? सच तो यह है कि आप के वास्ते मेरी जान जाय तो भी कुछ चिन्ता नही परन्तु मेरी इतनी ही प्रार्थना है कि आपनें अगूठी दे कर मुझसे अपना मित्र भाव प्रगट किया सो मैं आपकी बराबर का नहीं बना चाहता मैं आपको अपना मालिक समझता हू इसलिये आप मुझे अपना 'हल्क बगोश' (सेवक) बनाय"

"यह क्या कहते हो ! तुम मेरे भाई हो क्यों कि तुमको पिता सदा मुझसे अधिक समझते थे हा तुम्हें बाली पहर्नें की इच्छा हो तो यह लो मेरी अपेक्षा तुम्हारे कानमें यह बहुमूल्य मोती देखकर मुझको अधिक सुख होगा परन्तु ऐसे अनुचित बचन मुझसे न कहो" यह कह कर लाला मदनमोहननें अपनें कानकी बाली ब्रजकिशोरको दे दी।

"कल हरकिशोर आदि के मुकद्दमें होंगे उन्की जवाबदिही का विचार करना है कागज तैयार करा कर उन्से रद्द (बदर) छाटनी है इसलिये अब आज्ञा हो" यह कह कर ब्रजकिशोर रुख़सत हुए और लाला मदनमोहन भोजन करनें गए।

लाला मदनमोहन भोजन करके आए उस्समय मुन्शी चुन्नीलालनें अपनें मतलब की बात छेडी।

"मुझको हर बार अर्ज करनेंमैं बडी लज्जा आती है परन्तु अर्ज किये बिना भी काम नहीं चल्ता" मुन्शी चुन्नीलाल कहनें लगा "ब्याहका काम छिड गया परन्तु अबतक रुपेका कुछ बन्दोबस्त नहीं हुआ आपनें दो सौके नोट दिये थे वह जाते ही चटनी हो गए। इस्समय एक हजार रुपयेका भी बन्दोबस्त हो जाय तो खैर कुछ दिन काम चल सक्ता है नहीं तो काम नहीं चल्ता"

"तुम जान्ते हो कि मेरे पास इस्समय नगद कुछ नहीं है और गहना भी बहुतसा काममें आचुका है" लाला मदनमोहन बोले "हां मुझको अपनें मित्रों की तरफ सै सहायता मिलनें का पूरा भरोसा है और जो उन्की तरफ सै कुछ भी सहायता मिला तो मैं प्रथम तुम्हारी लडकी के ब्याहका बन्दोबस्त कर दूंगा।

"और जो मित्रों सै सहायता न मिली तो मेरा क्या हाल होगा ?" मुन्शी चुन्नीलालनें कहा "ब्याह का काम किसी तरह नहीं रुक सक्ता और बड़े आदमियो की नोकरी इसी वास्ते तन तोड कर की जाता है कि ब्याह शादी मे सहायता मिले, बराबरवालोंमें प्रतिष्ठा हो परन्तु मेरे मन्द भाग्य सै यहां इस्समय ऐसा मोका नहीं रहा इसलिये मैं आपको अधिक परिश्रम नहीं दिया चाहता। अब मेरी इतनी ही अर्ज है कि आप मुझको कुछ दिनकी रुख्सत देदें जिस्से मैं इधर उधर जाकर अपना कुछ सुभता करूं"

"तुमको इस्समय रुखसत का सवाल नहीं करना चाहिये मेरे सब कामों का आधार तुम पर है फिर तुम इस्समय धोका दे कर चले जाओगे तो काम कैसे चलेगा ?" लाला मदनमोहनने कहा

"वाह ! महाराज वाह ! आपनें हमारी अच्छी कदर की !" मुन्शी चुन्नीलाल तेज होकर कहनें लगा "धोका आप देते हैं या हम देते हैं ? हम लोग दिन रात आपकी सेवा में रहें तो व्याह शादी का खर्च लेनें कहा जाय ? आपने अपनें मुख से इस व्याह में भली भांति सहायता करनें के लिये कितनी ही वार आज्ञा की थी, परन्तु आज वह सब आस टूट गई तो भी हमनें आपको कुछ ओलभा नहीं दिया आप पर कुछ बोझ नहीं डाला केवल अपनें कार्य निर्वाह के लिये कुछ दिन की रुख्सत चाही तो आपके निकट वडा अधर्म हुआ। खैर ! जब आपके निकट हम धोकेबाज ही ठरे तो अब हमारे यहा रहनें से क्या फायदा है ? यह आप अपनी तालिया लें और अपना अस्वाव सहाल लें पीछे घटे बढेगा तो मेरा जिम्मा नही है। मैं जाता हूं।" यह कह कर तालियोंका झूमका लाला मदनमोहनके आगे फेंक दिया और मदनमोहन के ठंडा करते करते क्रोध की सूरत बना कर तत्काल वहा से चल खडा हुआ।

सच है नीच मनुष्य के जन्म भर पालन पोषण करने पर भी एक वार थोडी कमी रहजानें से जन्म भर का किया कराया मट्टी में मिल जाता है लोग कहते हैं कि अपनें प्रयोजन में किसी तरह का अन्तर आनें से क्रोध उत्पन्न होता है अपनें काम

पात्रथे उनका तनतना तो बहुतही बढ रहा था उन्के सब अपरा धोंसे जान बूझकर दृष्टि बचाई जाती थी. वह लोग सब कामों मैं अपना पाव अडाते थे और उन्के हुक्म की तामील सबको करनी पडती थी यदि कोई अनुचित समझकर किसी काम मैं उज्र करता तो उस्पर लाला साहब का कोप होताथा और इस दुफसली काररवाई के कारण सब प्रवन्ध बिगड रहा था (बिहारी)" दुसह दुराज प्रजान को क्यों न बढै दु:ख दुंद ॥ अधिक अंधेरो जग करै मिल मावस रवि चंद ॥" ऐसी दशा मैं मदनमोहन की आंखके पीछे चुन्नीलाल और शिभूदयाल के छोड जाने पर सब माल मतेकी लूट होने लगे जो पदार्थ जिस्के पास हो वह उस्का मालिक बन बैठे इसमैं कौन आश्चर्य है ?



प्रकरण ३५.

स्तुति निन्दाका भेद

थिनसत यार न लागही ओछे जनकी प्रीति ॥
अनर डंवर साझके घर बारूकी भींति ॥

सभाविलास

दूसरे दिन सवेरे लाला मोदनमोहन नित्य कृत्य सैं निवटकर अपनें कमरे मैं इकले बैठे थे मन मुर्झा रहा था किसी काम मैं जी नहीं लगता था एक, एक घडी एक, एक बरस के बराबर बीतती थी इतने मैं अचानक घडी देखने के लिये मेजपर दृष्टि गई तो घडी का पता न पाया हैं! यह क्या हुआ! रातको सोती बार जेबसैं निकालकर घडी रक्खी थी फिर इतनी देर मैं कहा चली गई! नौकरों सैं बुलाकर पूछा तो उन्होंने साफ जबाब दिया कि "हम क्या जानें आपने कहा रक्खी थी? जो मौकूफ करना हो तो यौं ही करदें वृथा चोरी क्यों लगाते हैं" लाचार मदनमोहन को चुप होना पडा क्योंकि आप तो किसी जगह आनें जानें लायक ही न थे सहायता को कोई आदमी पास न रहा लाला जवाहरलाल की तलाश कराई तो वह भी घर सैं अभी नही आए थे लाला मदनमोहनको अपाहजों की तरह अपनी पराधीन दशा देखकर अत्यत दु:ख हुआ परन्तु क्या कर सक्ते थे? उन्के भाग्य सैं उन्का दु:ख घटानें के लिये इस्समय बाबू बैजनाथ आ पहुंचे उन्को देखकर लाला मदनमोहन के शरीर मैं प्राण आगया.

लाला मदनमोहननें आखों से आंसू बहाकर उन्से अपना सब दु:ख कहा और अंत में अपनी घडी जानें का हाल कह कर इस काम में सहायता चाही.

"आपका हाल सुन्कर मुझको बहुत खेद होता है मुझे चुन्नी-लाल आदि की तरफ से सर्वथा ऐसा भरोसा न था इसी तरह आप अपनें काम काज से इतनें बे खबर होंगे यह भी उम्मेद न थी" बाबू बैजनाथ नें काम बिगडे पीछे अपनी आदत मूजिब सबकी भूल निकालकर कहा "मैंनें तो अख़बारों में आपके नाम की धूम मचा दी थी परन्तु आप अपनें काम ही की सम्हाल न रक्खें तो मैं क्या करूं ? महाजनी काम मुझको नही आता और इतना अवकाश भी नही मिलता. मैं घडीका पता लगानें के लिए उपाय करता परन्तु आजकल रेल पर काम बहुत है इस्से मैं लाचार हूं मेरे निकट इस्समय आपके लिये यही मुनासिब है कि आप इन्साल्वन्ट होनें की दरख़ास्त दे दें."

"अच्छा ! बाबू साहब ! आपसे और कुछ नही हो सक्ता तो आप केवल इतनीही कृपा करें कि मेरी घडी जानें कि रपट कोतवाली में लिखाते जायँ" लाला मदनमोहननें गिड़गिडाकर कहा.

"मैं रेलवे कम्पनी का नौकर हूं इस वास्ते कोतवाली में रिपोर्ट नहीं लिखा सक्ता बल्कि प्रगट होकर किसी काम में आप को कुछ सहायता नहीं दे सक्ता मुझ से निज में आपकी कुछ सहायता हो सकेगी तो मैं बाहर नही हूं परन्तु आप मुझ से किसी जाहरी काम के वास्ते कहकर मुझे अधिक लज्जित न करें . अंत में मैं आपको इतनी ही सलाह देता हूं कि "आप

लाला ब्रजकिशोर पर विश्वास रखकर उस्के वसमें न हो जायँ बल्कि उसको अपनें वस में रखकर अपना काम आप करते रहैं"

"सच है यह समय किसी पर विश्वास रखनें का नहीं है जो लोग अपने मतलब की बार सच्चे मित्र बनकर मेरे पसीनेंकी जगह खून डालने को तैयार रहते थे मतलब निकल जाने सैं आज उन्की छाया भी नहीं दिखाई देती सत्सम्मति देना तो अलग रहा मेरे पास खडे रहने तक के साथी नहीं होते, जो लोग किसी समय मेरी मुलाकात के लिये तरस्ते थे वह अब तीन, तीन बार बुलाने सैं नहीं आते मेरे पास आने जाने सै जिन् लोगों की इज्जत बढती थी वह आज मुझ सैं किसी तरह सबंध रखने मैं लजाते हैं" लाला मदनमोहनने भरमा भरमी इतनी बात कहकर अपनी छाती का बोझ हल्का किया,

"यह तो सच है जिसका प्रयोजन होता है उसै उचित अनुचित बातोंका कुछ विचार नहीं रहता" बाबू बैजनाथने जैसे का तैसा जवाब दिया और थोडी देर इधर उधर की बातें करके रुखसत हुआ

लाला मदनमोहन बडे चकित थे कि हे! परमेश्वर! यह क्या भेद है मेरी दशा बदलते ही सब संसार के विचार कैसे बदल गए और जिन्सै मेरा किसी तरहका संबंध न था वह भी मुझ को अकारण क्यों तुच्छ समझने लगे? मेरे नर्म होने पर भी बेप्रयोजन मुझ सैं क्यों लडाई झगड़ा करने लगे? जिन लोगों को मेरी योग्यता और सावधानी के सिवाय अब तक कुछ नहीं दिखाई देता था उन्को अब क्यों मेरे दोष दृष्टि आने लगे? लाला मदनमोहन इन बातों का विचार कर रहे थे इतने मैं

व्रजकिशोर वहा जा पहुंचे और मदनमोहन नें अपनें मन का सब संदेह उन्हें कह सुनाया.

"एक तो जो लोग प्रथम स्वार्थवस प्रीति करते हैं उन्की कलई ऐसे अवसर पर खुल जाती है. दूसरे साधारण लोगों की स्तुति-निन्दा कुछ भरोसे लायक़ नही होती वह किसी बात का तत्व नहीं जान्ते प्रगट में जैसी दशा देखते हैं वैसा ही कहनें लगते हैं बल्कि उसीके अनुसार बरताव करते हैं इस्सै साधारण लोगों की प्रतिष्ठा योग्यताके अनुसार नहीं होती द्रव्य अथवा जाहरदारी के अनुसार होती है और द्रव्य अथवा जाहरदारीके परदे तले घोर पापी अपनें पापोंको छिपाकर क्रम, क्रम सै प्रतिष्ठित लोगों में मिल सकता है बल्कि प्रतिष्ठित लोगों में मिलना क्या ? कोई पूरा चालाक मनुष्य हो तब तो वह द्रव्य के भरम और जाहरदारी के बरताव सै द्रव्य तक पैदा कर सकता है। ऐसा मनुष्य पहले अपनें द्रव्य अथवा योग्यता का झूटा प्रपंच फैला कर लोगोंके मनमें अपना विश्वास बैठाता है और विश्वास हुए पीछै कमाई की अनेक राह सहज में उस्के हाथ आ जाती है लोग उस्को अपनें आप घीरनें लगते हैं कभी, कभी ऐसे मनुष्य अपनी धूर्तता सै सच्चे योग्य अथवा धनवानों सै बढकर काम बना लेते हैं यद्यपि अंत में उन्की कलई बहुधा खुल जाती है परन्तु साधारण लोग केवल वर्तमान दशा पर द्रृष्टि रखते हैं जिस्समय जिसकी उन्नति देखते हैं उन्नति का मूल कारण निश्चय किये बिना उस्की बडाई करनें लगते हैं उस्के सब काम बुद्धिमानी के समझते हैं इसी तरह जब किसी की प्रगट में अवनति दिखाई दे तो वह उस्की मूर्खता समझते हैं और उस्के गुणों में भी

दोषारोप करनें लगते हैं ! उस्समय उन्को उस्की भूलही भूल द्रृष्टि आती है सो आप प्रत्यक्ष देख लीजिये कि जब तक सर्व साधारणको प्रगट में आपकी उन्नतिका रूप दिखाई देता था, आपका द्रव्य, आपका वैभव, आपका यश, आपकी उदारता, आपका सीधापन, आपकी मिलन्सारी, देखकर वह आपका आचरण अच्छा समझते थे आपकी बुद्धिमानीकी प्रशंसा करते थे आपसें प्रीति रखते थे. जब आपको यह झटका लगा प्रगट में आपकी अवनति का सामान दिखाई देनें लगा झट उन्की राह बदल गई आपके बडप्पन के बदले उन्के मन में धिक्कार उत्पन्न हुआ आप की अतिव्ययशीलता, अदूरद्रृष्टि, अप्रबन्ध, और आत्मसुखपरायणता आदि दोष उन्को दिखाई देनें लगे. आपके बने रहने पर उन लोगोंको आप से जो, जो आशाऐं थीं और उन आशाओं के कारण आपसें स्वार्थपरता की जितनी प्रीति थी वह उन आशाओं के नष्ट होते ही सहसा छाया के समान उन्के हृदयसें जाती रही बल्कि आशा भंग होने का एक प्रकार खेद हुआ फिर जब साधारण लोगों का यह अभिप्राय हो, मुन्शी चुन्नीलाल, शिभूदयाल आदि आपको यों अकेला छोडकर चले जाय तब आपके छोटे नौकर निडर होकर आपके मालकी लूट मचाने लगे जो चीज जिस्के पास हो वह उस्का मालिक बन बैठे इस्में कौन आश्चर्य है ?

"अच्छा ! अब आगे के लिये आप कहें जेसे करू इस्का कुछ प्रबन्ध तो अवश्य होना चाहिये" लाला मदनमोहन ने गिड-गिडा कर कहा.

इसपर घर के सब नौकरों को बन्

बडे क्रोधसै कहनें लगे "आज सवेरे सैं इस कमरे के भीतर कौन, कौन आया था उन सबके नाम लिखवाओ मैं अभी कोत वाली को रुक्का लिखता हूं वह सब हवालात मैं भेज दिये जायगे और उन्के मकानों की उन्के सबन्धियों समेत तलाशी ली जायगी जिन्के घर सैं कोई चीज चोरी की निकलेगी या जिनपर और किसी तरह चोरी का अपराध साबित होगा उन्को ताजी रात हिन्द की दफै ४०८ के अनुसार सात बरस तक की कैद और जुर्माने का दण्ड भी हो सकेगा"

"अजी महाराज! एक मनुष्य के अपराध सै सबको दण्ड हो यह तो बडा अनर्थ है" बहुतसे नौकर गिडगिडा कर कहने लगे" हम लोग अबतक लाला साहब के यहां बेटा बेटी की तरह पले हैं इस्सै अब ऐसी ही मर्जी हो तो हमको मौकूफ कर दीजिये परन्तु बदनामी का टीका लगा कर और जगह के कमाने खाने का रस्ता तो बन्द न कीजिये"

"हा हा यह तो सफाई सैं निकल जाने का अच्छा ढंग है परन्तु इस्तरह तुम्हारा पीछा नहीं छुटेगा जो तुम लाला साहब के यहा बेटा बेटी की तरह पले हो तो तुमको इस्समय यह बात कहनी चाहिये? तुम इस्समय लाला साहब सै अलग होने मैं अपना लाभ समझते हो परन्तु यह तुम्हारी भूल है इस्मैं तुम उल्टे फस जाओगे" लाला ब्रजकिशोर नें सिंह की तरह गर्ज कर कहा

"अच्छा! हम को सांझ तककी छुट्टी दीजिये हमसै होसकेगा जहा तक हम घडी का पता लगावेंगे" नौकरोंनें जवाब

"तुम लोग यह बहाना करके अपने घर सैं चोरी
दूर किया चाहते हो परन्तु में घडी का पता लगाये विना
कभी ढोला नहीं छोड़ूगा, मैं अभी कोतवाली को
लिखता हू" यह कह कर लाला ब्रजकिशोर सचमुच
लिखने लगे

जिन लोगोंने सवेरे मदनमोहन की बात पर कुछ ध्य
दिया था वही इस्समय ब्रजकिशोर की जरा सी धमकी सैं
मोहन के पाव पकड कर रोने लगे. तुलसी दासजी ने
कहा है "शूद्र गमार ढोल पशु नारी। सकल ताडनाके
कारी ॥"

"भाई ! इन्को साझ तक अवकाश दे दो जो तुम अव
चाहते हो साझ को कर लेना" लाला मदनमोहन ने पिगल
अथवा किसी गुप्त कारण सैं दब कर कहा

"आप को किसीकी रिआयत हो तो आप निज मैं म
उन्को कुछ इनाम दे दें परन्तु प्रवन्ध के कामों मैं इस तरह
राधियों पर दया करके अपने हाथ सैं प्रवन्ध न विगाडे ये
आपका क्या कर सक्ते हैं ? मनुस्मृति मैं कहा है "दंड
सभ्रम भये वर्ण दोष हे जाय। मचे उपद्रव देश मैं सब म
नसाय ॥" * सादी कहते हैं "पापिन माहि दया है ऐसी। स
सग क्रूरता जैसी ॥" † लाला ब्रजकिशोर ने कहा.

"खैर ! कुछ हो आज का दिन तो इन्को छोड दीजिये" ला
मदनमोहन ने दबा कर कहा

---

* दुष्ये यु सवचर्णा च भिद्येरन् सवसेतव ।
पच भवेद्दण्डस्य विभ्रमात् ॥

"बहुत अच्छा ! जैसी आप की मर्जी" ब्रजकिशोर नें रखाई सै जवाब दिया.

"मुझको मित्रों की तरफ सै सहायता मिलनें का विश्वास है परन्तु दैवयोग सै न मिली तो क्या इन्साालवन्ट होनें की दरख्वास्त देनी पड़ेगी" लाला मदनमोहननें पूछा.

"अभी तो कुछ जरूरत नहीं मालूम होती परन्तु ऐसा विचार किया भी जाय तो आपके लेन देन और माल अस्बाब का कागज कहां तैयार है ?" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया, और कचहरी जाने के लिये मदनमोहन सै रुख्सत होकर रवानें हुए.

प्रकरण ३६.

धोके की टट्टी

विपत बराबर सुख नहीं जो थोरे दिन होय
इष्ट मित्र बन्धू जिते जान परे सब कोय ॥

लोकोक्ति,

लाला ब्रजकिशोर के गए पीछे मदनमोहन की फिर वही दशा होगई दिन पहाड़ सा मालूम होनें लगा खास कर डाक की बड़ी तला मली लगरही थी निदान राम, राम करके डाक का समय हुआ डाक आई उस्में दो तीन चिट्ठी और कई अखबार थे

एक चिट्ठी आगरे के एक जौहरी की आई थी जिस्में जवा- की बिक्री बाबत लाला साहब के रुपे लेने थे और वह

यों भी लाला साहब से बडी मित्रता जताया करता था उस्ने लाला साहब की चिट्ठी के जवाब में लिखा था कि "आप की जरूरत का हाल मालूम हुआ मैं बड़ी उमग से रुपे भेज कर इस्समय आपकी सहायता करता परन्तु मुझको बडा खेद है कि इन दिनों मेरा बहुत रुपया जवाहरात पर लग रहा है इसलिये मैं इस्समय कुछ नहीं भेज सक्ता आपने मुझको पहले से क्यों न लिखा ? अब जिस्समय मेरे पास रुपया आवेगा मैं प्रथम आपकी सेवा में जरूर भेजूंगा मेरी तरफ से आप भलीभाति विश्वास रखना और अपने चित्त को सर्वथा अधैर्य न होने देना परमेश्वर कुशल करेगा" यह चिट्ठी उस कपटी ने ऐसी लपेट से लिखी थी कि अज्ञान आदमी को इस्के पढने से लाला मदनमोहन के रुपे लेने का हाल सर्वथा नही मालूम होसका था वह अच्छी तरह जान्ता था कि लाला मदनमोहनका काम बिगड़ जायगा तो मुझसे रुपे मागने वाला कोई न रहैगा इस वास्ते उस्ने केवल इतनी ही बात पर सन्तोष न किया बल्कि वह गुप्त रीति से मदनमोहन के बिगडने की चर्चा फैलाने, और उस्के बडे, बडे लेनदारों को भडकाने का उपाय करने लगा हाय ! हाय ! इस असार ससार में कुछ दिन की अनिश्चित आयु के लिये निर्भय होकर लोग कैसे घोर पाप करते हैं ! ! !

दुसरी चिट्ठी मदनमोहन के और एक मित्र (!) की थी यह हर साल आकर महीने बीस रोज मदनमोहन के पास रहते थे इसलिये तरह, तरह की सोगात के सिवाय उन्की खातिरदारी में मदनमोहन के पांच सात सौ रुपे सदैव खर्च होजाया करते थे उन्ने लिखा था कि "मैंने बहुत सस्ता समझ कर इस्समय

गाव साठ हजार रुपे में खरीद लिया है मेरे पास इस्समय पचास हजार अन्दाज मोजूद हैं इसलिये मुझको महीने डेढ महीने के वास्ते दस हजार रुपे की जरूरत होगी जो आप कृपा करके यह रुपया मुझको साहूकारी ब्याजपर दे देंगे तो मैं आपका वहुत उपकार मानूंगा" यह चिट्ठी लाला मदनमोहन की चिट्ठी पहुचते ही उस्ने अगमचेती करके लिख दी थी और मिती एक दिन पहलेकी डाल दी थी कि जिस्सै भेद न खुलने पावे—

मदनमोहन के तीसरे मित्र की चिट्ठी वहुत संक्षेप थी उसमें लिखा था कि "आपकी चिट्ठी पहुची उस्के पढने सै वडा खेद हुआ. मैं रुपे का प्रवन्ध कर रहा हू यदि हो सकेगा तो कुछ दिन मैं आपके पास अवश्य भेजूंगा" इस्के पास पत्र भेजने के समय रुपया मोजूद था परन्तु इस्ने यह पेच रक्खा था मदनमोहन का काम बना रहैगा तो पीछे सै उस्के पास रुपया भेज कर मुफ्तमें अहसान करेंगे और काम विगड जायगा तो चुप हो रहैंगे अर्थात् उस्को रुपे की जरूरत होगी तो कुछ न देगे और ज़रूरत न होगी तो जबरदस्ती गले पडेंगे।

इस्के पीछे लाला मदनमोहन एक अखवार खोलकर देखनें लगे तो उसमें एक यह लेख दृष्टि आया—

"सुसभ्यता का फल"

"हमारे शहरके एक जवान सुशिक्षित रईसकी पहली उठान देखकर हमको यह आशा होती थी वल्कि हमने अपनी यह आशा प्रगट भी कर दी थी कि कुछ दिनमें उस्के कामोंसै कोई देशोपकारी वात अवश्य दिखाई देगी परन्तु खेद है कि हमारी वह " विल्कुल नष्ट हो गई वल्कि उस्के विपरीत भाव प्रतीत होनें

लगा गिन्ती के दिनोंमें तीन चार लाख पर पानी फिरगया वला
यत में डरमोडी नामी एक लडका ऐसा तीक्षण बुद्धि हुआ था
कि वह नो वर्ष की अवस्था में और विद्यार्थियों को ग्रीक और
लाटिन भाषाके पाठ पढ़ाता था परन्तु आगे चलकर उस्का चाल
चलन अच्छा नहीं रहा इसी तरह यहां प्रारम्भ से परिणाम विप-
रीत हुआ. हिन्दुस्थानियों का सुधरना केवल दिखाने के लिये है
वह अपनी रीति भांति बदलने में सब सुसभ्यता समझते हैं परन्तु
असल में अपने स्वभाव और विचारोंके सुधारने का कुछ उद्योग
नहीं करते बचपन में उन्की तबियत का कुछ, कुछ लगाव इस
तरफ को मालूम होता भी है तो मदरसा छोडे पीछे नाम को
नहीं दिखाई देता दरिद्रियों को भोजन वस्त्र की फिकर पडती है
और धनवानों को भोग विलास से अवकास नहीं मिलता फिर
देशोन्नति का विचार कौन करे ? विद्या और कला की चर्चा
कौन फैलाय ? हमको अपने देश की दीन दशा पर दृष्टि करके
किसी धनवान का काम विगडता देख कर बडा खेद होता है
परन्तु देश के हित के लिये तो हम यही चाहते हैं कि इसतरह पर
प्रगट में नए सुधारे की झलक दिखा कर भीतर से दीये तले
अन्धेरा रखने वालों का भंडा जल्दी फूट जाय जिस्से और लोगों
की आखें खुलें और लोग सिंहका चमडा ओढने वाले भेडिये को
सिंह न समझें" इस अखबार के ऐडीटर को पहले लाला मदनमो
हन से अच्छा फ़ायदा हो चुका था परन्तु बहुत दिन बीत जानें
से मानों उस्का कुछ असर नहीं रहा जिस तरह हरेक चीज के
पुराने पडने से उस्के बन्धन ढीले पडते जाते हैं इसी तरह ऐसे
स्वार्थपर मनुष्यों के चित्त में किसी के उपकार पर, लेन

प्रीति व्यवहार पर, बहुत काल बीत जानें सै मानों उस्का असर कुछ नहीं रहता जब उन्के प्रयोजनका समय निकल जाता है तब उन्की आखैं सहसा बदल जाती हैं जब वह किसी लायक होते हैं तब उन्के हृदय पर स्वेच्छाचार छा जाता है जब उन्के स्वार्थ मैं कुछ हानि होती है तब वह पहले के बड़े सैं बड़े उपकारों को ताक पर रख कर बैर लेनें के लिये तैयार हो जाते हैं सादी नें कहा है "करत खुशामद जो मनुष्य सो कछु दे बहु लेत । एक दिवस पावै न तो टो सै दूषण देत ॥+" इस अखबार का एडीटर विद्वान था और विद्या निस्सन्देह मनुष्य की बुद्धि को तीक्ष्ण करती है परन्तु स्वभाव नहीं बदल सक्ती. जिस मनुष्यको विद्या होती है पर वह उस्पर बरताव नहीं करता वह बिना फल के वृक्षकी तरह निकम्मा है.

लाला मदनमोहन इन लिखावटों को देख कर बडा आश्चर्य करते थे परन्तु इस्सै भी अधिक आश्चर्य की बात यह थी कि बहुत लोगोंनें कुछ भी जवाब नही भेजा उन्मैं कोई, कोई तो ऐसे थे कि बडों की लकीर पर फकीर बनें बैठे थे यद्यपि उन्के पास कुछ पूंजी नहीं रही थी उन्का कार व्योहार थक गया था उन्का हाल सब लोग जान्ते थे इस्सै आगे को भी कोई बुर्द हाथ लगनें की आशा न थी परन्तु फिर भी वह खर्च घटानें मैं बेइज्जती समझते थे सन्तान को पढाने लिखाने की कुछ चिन्ता न थी परन्तु ब्याह शादियोंमैं अब तक उधार लेकर द्रव्य लुटाते थे उन्सै इस अवसर पर सहायता की क्या आशा थी? कितनें ही ऐसे

+ बन्दा गा ज्यामबी दह मजुन गीए कि बन्दक माय नफए बजतो दारद ॥
अगर रोजे मुराद बर नयारी दौमद चन्दा बयूबत बर शमारद ॥

थे जिन्हों नें केवल अपनें फायदे के लिये धनवानों का सा ठाठ बना रक्खा था इस वास्तै वह मदनमोहन के मित्र न थे उस्के द्रव्यके मित्र थे वह मदनमोहन पर किसी न किसी तरहका छप्पर रखनें के लिये उस्का आदर सत्कार करते थे इस लिये इस अवसर पर वह अपना पर्दा ढकनें के हेतु मदनमोहन के बिगाडने में अधिक उद्योग न करें इसी में उन्का विशेष अनुग्रह था इस्सै अधिक सहायता मिलनें की उन्सै क्या आशा हो सकती थी ? कोई, कोई धनवान ऐसे थे जो केवल हाकमों की प्रसन्नता के लिये उन्की पसन्दके कामों में अपनी अरुचि होनें पर भी जी खोलकर रुपया दे देते थे परन्तु सच्ची देशोन्नति और उदारताके नाम फूटी कौडी नहीं खर्चो जाती थी वह केवल हाकमों सै मेल रखनें में अपनी प्रतिष्ठा समझते थे परन्तु स्वदेशियों के हानि लाभ का उन्हें कुछ विचार न था, केवल हाकमों में आने जानें वाले रईसों से मेल रखते थे और हाकमों की हा में हा मिलाया करते थे इसवास्तै साधारण लोगों की दृष्टि में उन्का कुछ महत्व न था हाकमों में आनें जानें के हेतु मदनमोहन की उन्सै जान पहचान हो गई थी परन्तु वह मदनमोहन का काम बिगडनें मैं प्रसन्न थे क्योंकि वह मदनमोहन की जगह कमेटी इत्यादि में अपना नाम लिखाया चाहते थे इस वास्तै वह इस अवसर पर हाकमों सै मदनमोहन के हक में कुछ उलट पुलट न जडते यही उनकी बडी कृपा थी - इस्सै बढ कर उन्की तरफ सै और क्या सहायता हो सकी थी ? कोई, कोई मनुष्य ऐसे भी थे जो उनकी रकम में कुछ जोखों न हो तो वह मदनमोहन को सहारा देनें के लिये तैयार थे परंतु अपने ऊपर

कर इस डूबती नाव का सहारा लगानें वाला कोई न था. विष्णु पुराण के इस वाक्य सै उन्के सब लक्षण मिल्ते थे "जाचत हैं निज मित्र हित करैं न स्वारथ हानि । दस कौड़ी है की कसर खायँ न दुखिया जानि ॥×"

निदान लाला मदनमोहन आज की डाक देखे पीछे वाहर के मित्रों की सहायता सै कुछ, कुछ निराश हो कर शहर के बाकी मित्रों का माजना देखनें के लिये सवार हुए

प्रकरण ३७.

विपत्तमैं धैर्य.

प्रिय वियोग को मूढजन गिनत गडी हिय भालि ॥
ताही कों निकरी गिनत धीरपुरुष गुणशालि ॥ *

रघुवन्शे.

लाला ब्रजकिशोर नें अदालत मैं पहुंचकर हरकिशोर के मुकद्दमे मैं बहुत अच्छी तरह विवाद किया. निहालचन्द आदि के कई छोटे, छोटे मामलों मे राजीनामा होगया जब ब्रजकिशोर को अदालत के काम सै अवकाश मिला तो वह वहां सै सीधे मिस्टर ब्राइट के पास चले गए.

× यथापि तोपि सुहृदा स्वार्थहानिं न मानव ॥
पणार्धार्धमात्रेण करिष्यति सदा द्विज ॥

* ध्वगच्छति मूढचेतन प्रियनाशं हृदिशल्य मर्पितम् ॥
स्थिरधी स्तमदेव मन्यते कुशलद्वारतया समुद्धृतम् ॥

हरकिशोर नें इस अवकाश को बहुत अच्छा समझा तत्काल अदालत मैं दरख्वास्त की कि "लाला मदनमोहन अपनें बाल-बच्चों को पहले मेरठ भेज चुके हैं उन्के सब माल अस्वाब पर मिस्टर ब्राइट की कुर्की हो रही है और अब वह आप भी रूपोश (अतर्धान) हुआ चाहते हैं मैं चाहता हूं कि उन्के नाम गिर-फ्तारी या वारन्ट जारी हो." इस बात पर अदालत मैं बडा विवाद हुआ जबाब दिही के वास्तै लाला ब्रजकिशोर बुलाए गए परन्तु उन्का कहीं पता न लगा हरकिशोर के वकील नें कहा कि लाला ब्रजकिशोर झूंट बोलनें के भय सै जान बूझकर टल गए हैं. निदान हरकिशोर के हलफी इजहार (अर्थात शपथ पूर्बक वर्णन करनें पर हाकम को विवस होकर वारन्ट जारी करनें का हुक्म देना पडा हरकिशोर नें अपनी युक्ति सै तत्काल वारन्ट जारी करा लिया और आप उस्की तामील करनें के लिये उस्के साथ गया मदनमोहन सै जिन लोगों का मेल था उन्मैं सै कोई, कोई मदनमोहन को खबर करनें के लिये दौडे परन्तु मन्द भाग्य सै मदनमोहन घर न मिले

हा मदनमोहन की स्त्री अभी मेरठ सै आई थी वह यह खबर सुन्कर घबरा गई उस्नें चारों तरफ को आदमी दौडा दिये. मेरठ में मदनमोहन के बिगडनें की खबर कल सै फैल रही थी परन्तु उस्के दु ख का विचार करके उस्के आगे यह बात करनें का किसी को साहस न हुआ आज सवेरे अनायास यह बात उस्के कान पड गई बस इस बात को सुन्ते ही वह मच्छी की तरह तड़पनें लगी, रेल्के समय में दो घंटे की देर थी यह उसै दो जुग सै अधिक बीते उस्के घरके बहुत कुछ धैर्य देते थे

उसै किसी तरह कल नही पडती थी, जब वह दिल्ली पहुंची तो उस्नें अपनें घरका और ही रङ्ग देखा न लोगों की भीड़, न हँसी दिल्लगी की बातें, सब मकान सूना पडा था और उस्में पाव रखते ही डर लगता था जिस्पर विशेष यह हुआ कि आते ही यह भयङ्कर खबर सुनी जब सै उस्नें यह ख़बर सुनी, उस्के आसू पल भर नही बन्द हुए वह अपनें पतिके लिये प्रसन्नता सै अपना प्राण देनें को तैयार थी

इधर लाला मदनमोहन अपनें स्वार्थपर मित्रों सै नए, नए बहानों की बातें सुन्ते फिरते थे इतनें मैं एकाएक कान्सटेबल नें कोचमैंन को पुकार कर बग्गी खड़ी कराई और नाजिर नें पास पहुचतेही सलाम करके वारन्ट दिखाया, लाला मदनमोहन उस्को देखते ही सफ़ेद होगए, सिर झुका लिया, चहरेपर हवाइया उडनें लगी, मुखसै एक अक्षर न निकला. हरकिशोर नें एक खखार मारी परन्तु मदनमोहन की आख उस्के सामनें न हुई. निदान मदनमोहन नें नाज़िर को सकेत सैं अपनी पर्दा. धीन्ता दिखाई इस्पर सबलोग कचहरी को चले.

मदनमोहन अदाल्त में हाकम के सामनें खडे हुए उस्समय लाजसै उन्की आंख ऊंची नही होती थी हाकम को भी इसबात का अत्यत खेद था परन्तु वह कानून सैं परवस थे,

"हमको आपकी दशा देखकर अत्यत खेद है और इस हुक्म के जारी करनें का बोझ हमारे सिर आपड़ा इस्सें हमको और भी दु ख होता है परन्तु हमारे आपके निजके सबन्ध को हम अदालत के काम में शामिल नहीं कर सक्ते ताजकी वफ़ादारी, ईमान्दारी, मुल्क का इन्तजाम सब लोगों की हरकसी,

और हरेक आदमीके फायदे के लिये इन्साफ करना वहुत जरूरी है" हाकम ने कहा "आपसे सीधे सादे आदमियोंको अपने भोलेपन सै इतनी तक्‌लीफ उठानी पडे यह वडे खेदकी वात है और मेरा जी यह चाहता है कि मुझसै हो सके तो मैं अपने निज सैं आपके कर्ज का इन्तजाम करके आपको छोड दूं परतु यह वात मेरे वूते सैं वाहर है क्या आपके कोई ऐसे दोस्त नहीं हैं जो इस्समय आपकी सहायता करें ? या आप इन्सालवन्सी वगैरे की दुरख्वास्त रखते हैं।

लाला मदनमोहन के मुख सैं कुछ अक्षर न निकले इस वास्ते थोडी देर पीछे हारकर उन्को हवालात में भेजना पड़ा

इतने में लाला ब्रजकिशोर आ गए उन्का स्वभाव बडा गभीर था परतु विना वादलके इस विजली गिरनें सै तो वह भी सहम गए उन्को इतनें तूल हो जानें का स्वप्न में भी खयाल न था इस लिये वह थोडी देर कुछ न समझ सके वह कभी इन्सालवन्सी का विचार करते थे कभी हरकिशोर कि डिग्री का रुपया दाखिल करके मदनमोहन को तत्काल छुडा लिया चाहते थे परतु इन वातों सैं उनके और प्रवन्ध में अन्तर आता था इसलिये इन्में सै कोई वात उस्समय न कर सके। वह समझे कि "ईश्वर की कोई वात युक्ति सून्य नहीं होती यदाचित इसी में कुछ हित समझा हो ईश्वर की अपार महिमा है सेबाअस्तनी का हेन्‌री नामी अमीर वडा दुष्ट, क्रूर और अन्याइ था उस्के स्वेच्छाचारसै सव प्रजा त्राहि, त्राहि कर रही थी इसलिये उस्को भी प्रजासै वडा भय रहता था एकवार वह कुछ दुष्कर्म करके निद्रावस हुआ उस्समय उस्नें यह स्वप्न देखा कि

का ग्राम्य देवता उस्की ओर कुछ क्रोध और दयाकी दृष्टिसैं देख रहा है और यह कह रहा है कि "ले अधम पुरुष ! तेरे लिये यह आज्ञा हुई है" यह कहकर उस ग्राम देवतानें एक लिपटा हुआ कागज़ हेन्‌री की तरफ़ फेंक दिया और आप अन्तर्धान हो गया हेनरीनें कागज खोलकर देखा तो उसमें ये शब्द लिखेथे कि "छ.के पश्चात्" हेनरीनें जगकर निश्चय समझा कि मैं छ.पहर, छ दिन, छ अठवाड़े, छ मास या छ वर्षमें अवश्य मरजाऊंगा इस्सै हेनरी को अपनें दुष्कर्मों का बड़ा पछतावा हुआ और छ महिने तक मृत्यु भयसैं अत्यत व्याकुल रहा परतु फिर मृत्यु की अवधि छटे वर्ष समझकर समाधानी सैं सत्कर्म करनें लगा अपनें कुकर्मों के लिये सच्चे मनसैं ईश्वर की क्षमा चाही और उस्सैं पीछे केवल सत्कर्म करके प्रजा की प्रीति प्रतिदिन बढाता गया उस्की पहली चालसैं वह कडुआ फल उस्को मिला था कि जिस्सै बेचैन होकर वह गुमराह हुआ जाता था उस्के बदले इस्समयके आनन्दके मिठास सै उस्का चित्त प्रफुल्लित रहनें लगा और जैसे, जैसे वह पहले के कडुआपनसैं इस्समयके मिठासका मुकाबला करता गया वैसे वैसे उस्का आनन्द विशेष बढता गया उस्के चित्तमैं कोई बात छिपानें के लायक नही रही इस्सैं उस्के मन पर किसी तरह का बोझ न मालूम होता था लोगों के जीमैं उस्का विश्वास एक साथ बढ गया बडे, बड़े राजा उस्को अपना मध्यस्थ करनें लगे और छ वर्ष पीछे जब वो अपने मरने की घडी समझता था ईश्वर की कृपा सै उसी स्वप्न के कारण वह जर्मनी का राज करने के लिये सबसैं योग्य पुरुष समझा जाकर राज सिंहासन पर बैठाया गया ! ! !" इस

लिये अब यह सूरत हो चुकी है तो लाला मदनमोहन के चित्तपर इस्का पुरा असर हो जाना चाहिये क्योंकि जो वात सौ वार समझाने से समझमें नही आती वह एक वार की परीक्षा सै भली भाति मनमैं बैठ जाती है और इसी वास्तै लोग "परीक्षा (को) 'गुरु' मान्ते हैं" वस इतनी वात समझमैं आते ही लाला ब्रजकिशोर मदनमोहन को धैर्य देने के लिये उस्के पास हवालात मैं गए उस्का मु ह उतर गया था, आसू डवडवा रहे थे, लज्जाके मारे आख ऊ ची नहीं होती थी

"आप इतने अधैर्य न हों इस विना विचारी आफत आनेसै मुझको भी वहुत खेद हुआ परन्तु अव गई वीती वातोंके याद करने सैं कुछ फायदा नही मालूम होता लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "हर वात के वन्ते विगडते रहनें सै मालूम होता है कि सर्व शक्तिमान परमेश्वरको इच्छा ससार का नकशा एकसा वनाये रखनें की नही है देवताओं को भी दैत्योंसै दु ख उठाना पडता है, सूर्य चन्द्रमा को भी ग्रहण लगता है, महाराज रामचन्द्रजी और राजा नल, राजा हरिश्चन्द्र, राजा युधिष्ठिर आदि वडे वडे प्रतापियो को भी हद्दसै वढकर दु ख झेलने पडे हैं अभी तीन सौ साडे तीन सौ वर्ष पहलै दिल्ली के वादशाह महम्मद वावर और हुमायू ने कैसी, कैसी तक्लीफें उठाई थीं कभी वह हिन्दुस्थान के वादशाह हो जाते थे कभी उन्के पास पानी पीने तकको लोटा नही रहता था और वलायतों मैं देखो फ्रान्स का सुयोग्य वादशाह चोथा हेनरी एक वार भूखों मरने लगा तव उस्ने एक पादरी सै गवैयों मैं नौकर रखने की प्रार्थना की परन्तु उस्के मन्द भाग्यसै वह भी नामंजूर हुई फ्रान्सके सातवें लूईने "

अपना बूट गाठनें के लिये एक चमारको दिया तब उस्की गठवाईके पैसे उस्की जेबमें न निकले इस्से उसे लाचार होकर वह बूट चमारके पास छोड देना पड़ा. अरस्ततालीस नें लोगों के जुल्मसे विष पीकर अपनें प्राण दिये थे और अनेक विद्वान बुद्धिमान राजा महाराजाओं को कालचक्र की कठिनाई सै अनेक प्रकार का असह्य क्लेश झेल, झेल कर यह असार संसार छोडना पडा है इसलिये इस दु:ख सागर मैं जो दु:ख न भोगना पड़े उसी का आश्चर्य है जब अपनें जीनेका पलभर का भरोसा नही तो फिर कौन्सी बातका हर्ष विषाद किया जाय यदि संसार मैं कोई बात विचार करनें के लायक है तो यह है कि हमारी इतनी आयु वृथा नष्ट हुई इस्मैं हमने कौन्सा शुभ कार्य किया ? परन्तु इस विषय मैं भी कोरे पछतावे के निस्बत आगे के लिये समझ कर चलना अच्छा है क्योंकि समय निकला जाता है तुलसी दास जी विनय पत्रिकामे लिखते हैं "लाभ कहा मानुष तन पाये। काय वचन मन सपने हु कबहु क घटत न काज पराये। जो सुख सुर पुर नरक गेह बन आवत बिनहि बुलाये। तिह सुख कहु बहु यत्न करत मन समुझत नही समुझाये। परदारा पर द्रोह मोहबस किये मूढ मन भाये। गर्भ वास दुखरासि जातना तीव्र विपति बिसराये। भय निद्रा मैथुन अहार सबके समान जग जाये। सुरदुर्लभ तन धरिन भजे हरि मद अभिमान गवाये। गई न निज पर बुद्धि शुद्धि ह्वै रहे राम लयलाये। तुलसि दास यह अवसर बीते का पुनके पछताये ॥?" धर्म का आधार केवल द्रव्य पर नहीं है हरेक अवस्था मैं मनुष्य धर्म कर सक्ता है पहले उस्को अपना स्वरूप यथार्थ जान्ना चाहिये यदि

अपनें सरूप जाल्में मैं भूल रह जायगी तो धर्म अधर्म हो जायगा और व्यर्थ दुख उठाना पडेगा विपत्तिके समय घबराहटकी बराबर कोई वस्तु हानिकारक नहीं होती विपत्ति भवर के समान है जों, जों मनुष्य बल करके उस्सै निकला चाहता है अधिक फसता है और थक कर विवस होता जाता है परन्तु धैर्य सै पानी के बहावके साथ सहज में बाहर निकल सक्ता है. ऐसे अवसर पर मनुष्य को धैर्य से उपाय सोचना चाहिये और परमदयालु भगवान की कृपा दृष्टि पर पूर्ण विश्वास रखना चाहिये उसको सब सामर्थ है"

"यह सब सच है परन्तु विपत्तिके समय धैर्य नहीं रहता" लाला मदनमोहन ने आसू भर कर कहा

"विपत्ति मनुष्य की कसोटी है नीति शास्त्र में कहा है."दूरहि सौं डरपत रहैं निकट गए तें शूर। विपत पडे धीरज गहैं सज्जन सब गुण पूर ॥*" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "महाभारत मैं लिखा है कि राजा बलि देवताओं सै हार कर एक पहाड की कन्दरा में जा छिपे तब इन्द्र नें वहा जाकर अभिमान सै उन्को लज्जित करने का विचार किया इस्पर बलि शान्तिपूर्वक बोले "तुम इस्समय अपना वैभव दिखाकर हमारा अपमान करते हो परन्तु इस्मैं तुह्मारी कुछ भी बडाई नहीं है हारे हुए के आगे अपनी ठसक दिखाने सै पहली निर्बलता मालूम होती है जो लोग शत्रुको जीत कर उस्पर दया करते हैं वही सच्चे वीर समझे जाते हैं जीत और हार किसी के हाथ नहीं है यह दोनों सम

* महतो दूरभीरुत्वं मासन्ने शूरता गुण ।
[illegible] हि महात्मनां धीरता मत्ता[illegible]

याधीन हैं प्रथम हमारा राज था अब तुह्मारा हुआ आगे किसी और का हो जायगा दुःख सुख सदा अदलते बदलते रहते हैं होनहार को कोई नहीं मेट सक्ता तुम भूल सै इस वैभव को अप ना समझते हो यह किसी का नहीं हैं. पृथु, ऐल, मय, और भीम आदि बहुत सें प्रतापी राजा पृथ्वी पर होगए हैं परन्तु कालने. किसी को न छोडा इसी तरह तुह्मारा समय आवेगा तब तुम भी न रहोगे इसलिये मिथ्याभिमान न करो. सज्जन सुख दु.ख सै कभी हर्ष विषाद नहीं करते वह सब अवस्थाओं मैं परमेश्वर का उपकार मान कर सन्तोषी रहते हैं ++ और सब मनुष्यों को अपना समय देख कर उपाय करना चाहिये सो यह समय हमारे बल करने का नहीं है सहन करनेंका है इसीसै हम तुह्मारे कठोर बचन सहन करते हैं दु ख के समय धैर्य रखना बहुत आवश्यक है क्योंकि अधैर्य होने सै दु ख घटता नहीं बल्कि बढ़ता जाता है इसलिये हम चिन्ता और उद्वेग को अपने पास नहीं आने देते" ऐसे अवसर पर मनुष्य के मन को स्थिर रखने के लिये ईश्वर नें कृपा करके आशा उत्पन्न की है और इसी आशा सै ससार के सब काम चल्ते हैं इसलिये आप निराश न हों परमेश्वर पर विश्वास रख कर इस दु ख की निवृत्ति का उपाय सोचें. यह विपत्ति आप पर किस तरह एकाएक आपडी इस्का कारण ढूंढें ईश्वर शीघ्र कोई सुगम मार्ग दिखावेगा"

"मुझको तो इस्समय कोई राह नहीं दिखाई देती तुह्मैं अच्छा लगे सो करो" लाला मदनमोहन नें जबाव दिया.

इतने में लाला ब्रजकिशोर सें आकर एक चपरासी ने कहा कि "आप को कोई बाहर बुलाता है" इस्पर वह बाहर चले गए

प्रकरण ३८.

सच्ची प्रीति.

धीरज धर्म्म मित्र अरु नारी ॥
आपतिकाल परखिये चारी ॥

तुलसीदत

लाला ब्रजकिशोर बाहर पहुंचे तो उन्को कचहरी सें कुछ दूर भीड भाडसें अलग वृक्षों की छाया में एक सेजगाडी दिखाई दी. चपरासी उन्हें वहां लिवा ले गया तो उस्में मदनमोहन की स्त्री बच्चों समेत मालूम हुई. लाला मदनमोहन की गिरफ्तारी का हाल सुन्ते ही वह बिचारी घबरा कर यहां दौड आई थी उस्की आखों सें आसू नहीं थमते थे और उस्को रोती देख कर उस्के छोटे, छोटे बच्चे भी रो रहे थे ब्रजकिशोर उन्की यह दशा देख कर आप रोने लगे. दोनों बच्चे ब्रजकिशोर के गले सें लिपट गए, और मदनमोहन की स्त्रीने अपना और अपने बच्चोंका गहना ब्रजकिशोर के पास भेज कर यह कहला भेजा कि "आपके आगे उन्की यह दशा हो इस्सें अधिक दु:ख और क्या है ? खैर ! अब यह गहना लिजिये और जितनी जल्दी होसके उन्को हवालात सें छुडानें का उपाय करिये"

"वह समझवार होकर अनसमझ क्यों बन्ती हैं ? इस घबराहट सें क्या लाभ है ? वह मेरठ गई जब उन्हों नें आप कहवाया था कि ऐसी सूरत में इन अज्ञान बालकों की

होगी ? फिर वह आप इस बात को कैसे भूली जाती हैं ? उन्को अपनें लिये नहीं तो इन छोटे, छोटे बच्चों के लिये हिम्मत रखनी चाहिये" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "इग्लैंड के बादशाह पहले जेम्स की बेटी इलेक्टर पेलेटीन के साथ ब्याही थी. उन्नें अपनें पति को बोहोमिया का बादशाह बनानेंकी उमग में इन्की तरह अपना सब जेवर खो दिया इस्सें अन्तमें उस्को अपनें निर्वाहके लिये भेप बदलकर भीख मागनी पडी थी"

"अपनें पति के लिये भीख मागनी पडी तो क्या चिन्ता हुई ? स्त्री को पति से अधिक संसार में और कौन है ? जगत माता जानकीजीनें राज सुख छोड कर पति के सग बनमें रहना बहुत अच्छा समझा था। और यह वाक्य कहा था" देत पिता परिमित सदा परिमित सुत और भ्रात। देत अमित पति ताहु-पद नहीं पूजहि किहि भांति ? ॥+" सती शिरोमणि सावित्रीनें पतिके प्राण वियोग पर भी वियोग नहीं सहा था मनुस्मृति में लिखा है " शील रहित पर नारि रत होय सकल गुण हानि। तदपि नारि पूजै पति हि देव सदृश जिय जानि ॥ १ नारिन को व्रत यज्ञ तप और न कछु जगमाहि। केवल पति पद पूज नित सहज स्वर्ग में जाहिं ॥ २ " पति के लिये गहना क्या ? प्राण

+ मित ददाति हि पिता मित भ्राता मितं सुत।
अमितस्यच दातारं भर्तारं का न पूजयेत् ॥

१ विशील कामवृत्तो वा गुणैर्वा परिवर्जित।
उपचर्य्य स्त्रिया साध्व्या सततं देववत्पति ॥

२ नास्ति स्त्रीणां पृथग्यज्ञो न व्रतंनाप्युपोषितम्।
पतिं शुश्रूषते येन तेन स्वर्गे महीयते ॥

तक देने पड़ें तो मैं बहुत प्रसन्न हूं हाय ! वह कैद रहैं और मैं गहने का लालच करू ?, वह दु:ख सहें और मै चैन करू ? हम लोगों की ज़बान नहीं है इस्सै क्यो हमारे हृदय भी प्रीति शून्य हैं क्या कहूं ? इस्समय मेरे चित्त को जो दु:ख है वह मै ही जान्ती हूं हे धरती माता ! तू क्यों नही फटती जो मैं अभागी उस्मैं समा जाऊं ?" लाला मदनमोहन की स्त्री गद्गद स्वर और रुके हुए कण्ठ सै भीतर बैठी हुई बहुत धीरे, धीरे बोली ! भाई ! मे तुमसै आज तक नहीं बोली थी परन्तु इस्समय दु:ख की मारी बोल्ती हूं सो मेरी ढिठाई क्षमा करना मुझसै यह दु:ख नही सहा जाता मेरी छाती फटी जाती है मुझको इस्समय कुछ नहीं सूझता जो तुम अपनी बहन के और इन छोटे, छोटे बच्चों के प्राण बचाया चाहते हो तो यह गहना लो और हो सके जैसे इसी समय उन्को छुड़ा लाओ नहीं तो केवल मैं ही नहीं मरूगी मेरे पीछे ये छोटे, छोटे बालक भी झुर, झुर कर—"

"बहन ! क्या इस्समय तुम बावली होगई हो तुम्हैं अपने हानि लाभका कुछ भी विचार नही है ?" लाला ब्रजकिशोर बाहर सै समझाने लगे "देखो शकुन्तला भी पतिव्रता थी परन्तु जब उस्के पतिने उस्को झूटा कलंक लगाकर परित्याग करने का विचार किया तब उसैं भी क्रोध आए बिना नहीं रहा क्या तुम उस्सैं भी बढकर हो जो अपने छोटे, छोटे बच्चोंके दु:ख का कुछ विचार नहीं करती ? थोडी देर धैर्य रक्खो धीरे, धीरे सब, होजायगा"

"भाई ! धैर्य तो पहलेही बिदा होचुका अब मैं क्या करू ? तुम बार, बार बाल बच्चों की याद दिवाते हो परन्तु मेरे

तुम्हारे कहनें पर पूरा विश्वास है परन्तु मैं एकबार अपनी आख से भी उन्हें देख सक्ती हू ?" मदनमोहन की स्त्री नें रोकर कहा

"इस्समय तो कचहरी मैं हजारो आदमियोंकी भीड हो रही है सन्ध्या को मौका होगा तो देखा जायगा" ब्रजकिशोरनें जवाब दिया.

"तो क्या सन्ध्या तक भी वह—"मदनमोहन की स्त्री के मुख सै पूरा वचन न निकल सका कंठ रुक गया और उस्को रोते देख कर उस्के बच्चे भी रोने लगे.

निदान बडी कठिनाई सै समझा कर ब्रजकिशोरनें मदनमोहन की स्त्री को घर भेजा परन्तु वह जाती बार जबरदस्ती अपना सब गहना ब्रजकिशोर को देती गई और उस्के बच्चे भी ब्रजकिशोर को छोडकर घर न गए जब ब्रजकिशोरके साथ कचहरी मैं जाते थे तब उन्की दृष्टि एकाएक मदनमोहन पर जा पडी और वह उस्को वहा देखतें ही उस्सै जाकर लिपट गए

"क्यों जी ! यह कहा से आए ?" मदनमोहननें आश्चर्यसै पूछा

"इन्की माके साथ ये अभी मेरठसै आए हैं वह विचारी आप का यह हाल सुन्कर यहा दौड आई थी सो मैंने उसे बडी मुश्किल्सै समझा बुझाकर घर भेजा है" ब्रजकिशोरने जवाब दिया

"लाला जी घर क्यों नहीं चल्ते ? यहा क्यों बैठे हो ?" एक लडकेने गले मैं लिपट कर कहा

"मै तो तुम्हारे संग (सग) आज हवा खाने चलूंगा और

अपनें बाग में चलकर मच्छियों का तमाछा (तमाशा) देखूंगा" दूसरा लडका गोदमें बैठकर कहने लगा.

"लाला जी तुम बोल्ते क्यों नहीं ? यहा इकले क्यों बैठे हो ? चलो छैल (सैर) करने चलें" एक लडका हात पकड कर खेंचने लगा.

"जाने चुन्नीआल (लाल) कहा है ? चिन्नें (उन्होंने) हमें एक तछवीर (तस्वीर) देनी कही थी लाला जी ! तुम उछे (उसे) चोकटमें लगवा दोगे ?" दूसरे लडकेने कहा

"छैल (सैर) करनें नहीं चल्ते तो घर ही चलो, अम्मा आज सवेरे सें न जाने क्यों रोरही है और चिन्नें आज कुछ भोजन भी नहीं किया" एक लडका बोला

"लाला जी ! तुम बोल्ते क्यों नहीं ? गुछा (गुस्सा) हो ? चलो, घर चलो हम मेरठ छे (से) खिलौनें लाए हैं छो (सो) तुम्हें दिखावेंगे" दूसरा ठोडी पकड कर कहने लगा.

"तुम तो दगा करते हो चलो हमारे साथ चलो हम तुमको बरफी मगादेंगे यहा लालाजी को कुछ काम है" ब्रजकिशोरने कहा.

"आ आ हमतो लालाजी के छग (सग) छैल को जायंगे बाग में मच्छियोंका तमाछा देखेंगे हमको बफ्फी (बरफी) नहीं चाहिये हम तुम्हारे छंग नहीं चल्ते" दोनों लडके मचल गए

"चलो हम तुम्हें पीतल की एक, एक ऐसी मछली खरीद देंगे जो लोहेकी सलाई दिखाते ही तुम्हारे पास दौड आया करेगी" लाला ब्रजकिशोरने कहा

"हम यों नहीं [illegible] लालाजीके छंग [illegible]"

"और जबतक लालाजी घर नहीं जायगे हम भी नहीं जायंगे" यह कहकर दोनों लडके मदनमोहन के गलेसे लिपट गए और रोनें लगे उस्समय मदनमोहन की आखों सै आंसू टपक पड़े और ब्रजकिशोर का जी भर आया.

"अच्छा ! तो तुम लालाजीके पास खेल्ते रहोगे ? मैं जाउं?" लाला ब्रजकिशोरनें पूछा.

"हा हा तुम भलेंई जाओ, हम अपने लालाजी के पाछ (पास) खेला करेंगे" एक लडकेने कहा.

"और भूक लगी तो ?" ब्रजकिशोरनें पूछा.

"यह हमें वप्फी मगा देंगे" छोटा लडका अगुली सै मदन-मोहन को दिखाकर मुस्करा दिया,

"महाकवि कालिदास नें सच कहा है वे मनुष्य धन्य हैं जो अपनें पुत्रों को गोद में लेकर उन्के शरीर की धूल सै अपनी गोद मैली करते हैं और जब पुत्रों के मुख अकारण हसी सै खुल जाते हैं तो उन्के उज्ज्वल दातों की शोभा देखकर अपना जन्म सफल करते हैं" लाला ब्रजकिशोर बोले और उन लडकों के पास उन्के रखवाले को छोडकर आपअपनें काम को चले गए.

बच्चे थोडी देर प्रसन्नता सै खेल्ते रहे परन्तु उन्को भूक लगी तब वह भूकके मारे रोनें लगे पर वहा कुछ खानें को मौजूद न था इसलिये मदनमोहन का जी उस्समय बहुत उदास हुआ

इतनें में सन्ध्या हुई इस्सै हवालात का दरवाज़ा बन्द करनें के लिये पोलिस आ पहुंची अबतक उस्नें दीवानी की हवालात और मदनमोहन ब्रजकिशोर आदि का काम समझकर विशेष

रोक टोक नही की थी परन्तु अब करनी पड़ी वह छोटे छोटे, बच्चे मदनमोहन के साथ घर जानें की जिद करते थे और जबर-दस्ती हटानें से फूटफूटकर रोते थे लोगोंके हाथों सै छूट, छूट कर मदनमोहन के गले सै जा लिपटते थे इसलिये इस्समय ऐसी करुणा छा रही थी कि सब की आखो सै टप, टप आसू टपकनें लगे.

निदान उन बच्चों को बडी कठिनाई से रखवाले के साथ घर भेजा गया और हवालात का दरवाजा बन्द हुआ



प्रकरण ३६.

प्रेत भय.

पियत रुधिर वेताल बाल निशिचरन साथ पुनि ॥
करत वमन विकराल मत्त मन मुदित घोर ध्वनि ॥
सब मांस कर लिये भयकर रूप दिखावत ॥
रुधिरासव मद मत्त पूतना नाचि डरावत ॥
मांस मेद वस निरस मन जोगन नाचहिं विविध गति ॥
वीर जनन की वीरता यहु विध वरणा मन्द मति ॥ —

रसिकजीवने'

सन्ध्या का समय है कचहरी के सब लोग अपना काम बन्द [illegible]के घर को चले जाते हैं सूर्य के प्रकाश के साथ [illegible] मदनमोहनके छूटने की आशा भी कम होती जाती [illegible] ने अब तक कुछ उपाय नही किया. कचहरी बन्द [illegible] पीछे कल तक कुछ न हो सकेगा रात को इसी छोटीसी कोठरी [illegible] अंधेरे के बीच जमीन पर दुपट्टा बिछा कर सोना पडेगा. कहा मित्र मिलापियों के वह जल्से! कहा पानी प्याने के लिये एक खिदमतगार तक पास न हो! इन बातों के विचार से लाला

' [illegible] मत्ता [illegible] पिबति [illegible] [illegible]
[illegible] नव्य [illegible] प्रणृत्यति मुदितो मत्तवेताल[illegible]
[illegible] मधिन् रुधिर मधुवशात् पूतना [illegible]

मदनमोहन का व्याकुल चित अधिक, अधिक अकुलानें लगा.

इसी विचार में सन्ध्या हो गई चारों तरफ अंधेरा फैल गया मकान मनुष्य शून्य होगया आस पास की सब चीज़ें दिखनी बन्द हो गई.

लाला मदनमोहन के मानसिक विचारों का प्रगट करना इस्समय अत्यन्त कठिन है जब वह अपनें बालकपन सै लेकर इस्समय तक के वैभव का विचार करता है तो उस्की आखों के आगे अन्धेरा आ जाता है! लाला हरदयाल आदि रंगीले मित्रों की रंगीली बातें, चुन्नीलाल, शिभूदयाल आदि की झूटी प्रीति, रात के एक, एक बजे तक गाने नाचने के जल्से, खुशामदियों का आठ पहर घेरे रहना, हर बात पर हा मैं हा, हर बात पर वाह वाह, हर काम मैं प्राण देने की तैयारी के साथ अपनी इस्समय की दशा का मुकाबला करता है और उन लोगों की इन दिनों की कृतघ्नता पर दृष्टि पहुंचाता है तो मन मैं दु:ख की हिलोरैं उठने लगती हैं! संसार केवल धोके की टट्टी मालूम होता है जिन्के ऊपर अपनें सब कार्य व्यवहार का आधार था, जिन्को बारबार हजारों रुपे का फायदा कराया गया था, जो हर बात मैं पसीनें की जगह खून डालनें को तैयार रहते थे वह सब इस्समय कहा हैं? क्या उन्मैं सै इस थोडे से कर्ज को चुकानें के लिये कोई भी आगे नहीं आ सक्ता? जिन्की झूटी प्रीति मैं आ कर अपनी पतिव्रता स्त्री की प्रीति भूल गया, अपनें छोटे, छोटे बच्चों के लालन पालन का कुछ विचार नहीं

वह मुफ्त मैं ...ले इस्समय कहा हैं?

"मेरी इज्जत गई, मेरी दौलत गई, मेरा आराम गया, मेरा नाम गया, मैं लज्जा सै किसी को मुख नहीं दिखा सक्ता, किसी सै बात नहीं कर सक्ता, फिर मुझको संसार मैं जीनें सै क्या लाभ है? ईश्वर मोत दे तो इस दु:ख सै पीछा छुटे परन्तु अभागे मनुष्य को मोत क्या मांगेसै मिल सक्ती है? हाय! जब मुझको तीस वर्ष की अवस्था मैं यह संसार ऐसा भयङ्कर लगता है तो साठ वर्ष की अवस्था मैं न जानें मेरी क्या दशा होगी?

"हा! मोत का समय किसी तरह नहीं मालूम हो सक्ता सूर्य के उदय अस्त का समय सब जान्ते हैं, चन्द्रमा के घटनें बढनें का समय सब जान्ते हैं, ऋतुओं के बदलनें का, फूलों के खिलनें का, फलों के पकनें का समय सब जान्ते हैं परन्तु मोत का समय किसी को नहीं मालूम होता. मोत हर वक्त मनुष्य के सिर पर सवार रहती है उस्के अधिकार करनें का कोई समय नियत नहीं है कोई जन्म लेते ही चल बसता है कोई हर्ष विनोद मैं, कोई पढनें लिखनें मैं, कोई खानें कमानें मैं, कोई जवानी की उमंग मैं कोई मित्रों के रस रंग मैं अपनी सब आशाओं को साथ लेकर अचानक चल देता है परन्तु फिर भी किसी को मोत की याद नहीं रहती कोई परलोक का भय करके अधर्म नहीं छोडता? क्या देखत भूली का तमाशा ईश्वर नें बना दिया है!"

लाला मदनमोहन के चित्त मैं मोत का विचार आते ही भूत प्रेतादि का भय उत्पन्न हुआ यह अन्धेरी रात, छोटी सी कोठरी, एकान्त जगह, चित्त की व्याकुलता मैं यह विचार आते ही सब सुधरे हुए विचार हवा मैं उड गए छाती धडकनें लगी, रोमाञ्च

हो आए, जी दहल गया और मोत की कल्पना शक्ति नें अपना चमत्कार दिखाना शुरू किया

कोई प्रेत उन्की कोठरी मैं मोजूद है उस्के चलनें फिरनें की आवाज सुनाई देती है वल्कि कभी, कभी वह अपनी लाल, लाल आखों सै क्रोध करके मदनमोहन को घुरकता है, कभी अपना भट्टीसा मूंह फैला कर मदनमोहन की तरफ दौडता है, कभी गुस्सेसै दांत पीस्ता है, कभी अपना पहाडसा शरीर वढाकर वोझसै मदनमोहन को पीस डाला चाहता है कभी कानके पर्दे फाड डालने वाले भयकर स्वरसै खिल खिलाकर हस्ता है, कभी नाचता है, कभी गाता है, कभी ताली वजाता है, और कभी जम-दूत की तरह मदनमोहन को उस्के कुकर्मों के लिये अनेक तरहके दुर्वचन कहता है। लाला मदनमोहनने पुकारने का वहुत उपाय किया परन्तु उन्के मुखसै भयके मारे एक अक्षर न निकल सका वह प्रेत मानों उन्की छातीपर सवार होकर उन्का गला घोटने लगा उस्के भयसै मदनमोहन अव मरे होगए उन्होंने हाथ पाव चलाने का वहुत उद्योग किया परन्तु कुछ न हो सका इस्समय लाला मदनमोहन को परमेश्वर की याद आई.

जो मदनमोहन परमेश्वर की उपासना करने वालों को और धर्मकी चर्चा करने- वालोंको नास्तिक भावसै हसा करता था और मनुष्य देह का फल केवल ससारी सुख वताता था किन्नी तरह सै छल छिद्र करके अपना मतलव निकाल लेने को बुद्धि-मानी समझता था वही मदनमोहन इस्समय सव तरफसै निराश होकर ईश्वर की सहायता मागता है! हा! आज इस् गंगी-जवानकी क्या दशा हो गई! इस्का अभिमान कहा जाता •

जब इस्का कुछ बस न चल सका तो यह मूर्छित होकर पृथ्वीपर गिर पडा और कुछ देर यों ही पडा रहा.

जब थोडी देर पीछे इसे होश आया चित्त का उद्वेग कुछ कम हुआ तो क्या देखता है कि उस भयकर प्रेतकेबदले एक स्त्री इस्का सिर अपने गोदमें लिये बैठी हुई धीरे धीरे इस्के पावदवा रही है अ धेरेके कारण उस्का मुख नहीं दिखाई देता परन्तु उस्की आखोंसे गरम, गरम आंसुओं की बूदें उस्के मुखपर गिर रहीं हैं और इन आसुओंहीसे मदनमोहन को चेत हुआ है.

इस्समय लाला मदनमोहनके व्याकुल चित्त को दिलासा मिलने की बहुत जरूरत थी सो यह स्त्री उन्हें दिलासा देनेंके लिये यहा आ पहु ची परन्तु मदनमोहन को इस्से कुछ दिलासा न मिला वह इसे देखकर उल्टे डरगए.

"प्राणनाथ कैसे हो ! आपके चित्तमें इस्समय अत्यंत व्याकुलता मालूम होती है इसलिये अपने चित्तका जरा समाधान करो, हिम्मत बाधो मैं आपके लिये भोजन लाई हू सो कुछ भोजन करकें दो घूंट पानी के पिओ जिस्से आपके चित्तका समाधान हो इस छोटीसी कोठरीमें अधेरेके बीच आपको जमीन पर लेटे देखकर मेरा कलेजा फटता है" उस स्त्रीने कहा.

" यह कौन ? वही मेरी पतिव्रता स्त्री है जिस्ने मुझसे सब तरह का दु ख पाने पर भी कभी मन मैला नहीं किया ! आवाजसे तो वैसीही मालूम होती है परन्तु उस्का आना सभव नहीं रातके समय कचहरी के बन्द मकान में पुलिस की पहरे चोकी बीच वह बिचारी कैसे आ सकेंगी ! मैं जान्ताहू कि मुझको

कोई छलावा छलता है" यह कहकर लाला मदनमोहन ने फिर आखें बन्द करलीं.

"मेरे प्राण पतिके लिये यहां क्या ? मुझको नर्कमें भी जाना पडे तो क्या चिंता है ? सच्ची प्रीतिका मार्ग कोई रोक सका है ? स्त्रीको पतिके संग कैद, जंगल, या समुद्रादि मैं जाने सै कुछ भी भय नहीं है परन्तु पतिके बिना सब संसार सूना है यदि सुख दु ख के समय उस्की बिवाहिता स्त्री उस्के काम न आवैगी तो और कोन आवैगा ? " उस स्त्रीने कहा.

लाला मदनमोहन सै थोडी देर कुछ नही बोला गया न जानें उन्के चित्तमैं किसी तरहका भय उत्पन्न हुआ, अथवा किसी बात के सोच विचार मैं अपना आपा भूलगए, अथवा लज्जा सै कुछ न बोलसके, और लज्जा थी तो अपनी मूर्खता सै इस दशा मैं पहुचने की थी, अथवा अपनी स्त्रीके साथ ऐसे अनुचित ब्याव-हार करने की थी ? परन्तु लाला मदनमोहन के नेत्रों से आसू निस्सदेह टपकते थे वह उस स्त्रीकी गोद मैं सिर रख, फूट, फूटकर रो रहे थे

"मेरे प्राण प्रीतम ! आप उदास न हों जरा हिम्मत रक्खो जो आप की यह दशा होगी तो हम लोगोंका पता कहा लगेगा ! दु ख सुख वायु के समान सदा अदल्ते बदल्ते रहते हैं इसलिये आप अधैर्य न हों आप के चित्त की स्थिरता पर हम सब का आधार है" उस स्त्री नें कहा.

"मुझ सै इस्समय तेरे सामनें आख उठाकर नहीं देखा जाता, एक अक्षर नहीं बोला जाता, मैं अपनी करनी सै अत्यन्त लज्जित हू जिस्पर तू अपनी लायकी सै मेरे घायल हृदय को

अधिक घायल करती है ? मुझको इतना दु:ख उन कृतघ्न मित्रों की शत्रुता से नहीं होता जितना तेरी लायकी और आधीनता से होता है तू मुझको दु:खी करने के लिये यहां क्यों आई ? तैंनें मेरे साथ ऐसी प्रीति क्यों की ? मैंनें तेरे साथ जैसी क्रूरता की थी वैसी ही तैंनें भी मेरे साथ क्यों न की ? मैं निस्संदेह तेरी इस प्रीति लायक नहीं हूं फिर तू ऐसी प्रीति करके क्यों मुझको दुखी करती है ?" लाला मदनमोहन नें बडी कठिनाई से आसू रोककर कहा.

"प्यारे प्राणनाथ ! मैं आप की हू और अपनी चीज पर उस्के स्वामी को सब तरह का अधिकार होता है जिसपर आप इतनी कृपा करते हैं यह तो बडे ही सौभाग्य की बात है" वह स्त्री मदनमोहन की इतनी सी बात पर न्योछावर होकर बोली "महाभारत मैं एक कपोती नें एक वधिक के जाल मैं अपनें पतिके फसे पीछे उस्के मुख से अपनी बडाई सुन्कर कहा था कि "आहा ! हम मैं कोई गुण हो या नहो जब हमारे पति हम से प्रसन्न होकर हमारी बडाई करते हैं तो हमारे बड भागिनी होनें मैं क्या सदेह है ? जिस स्त्री से पति प्रसन्न नही रहते वह झुल्सी हुई बेलके समान सदा मुर्झाई रहती है.'

"तेरी ये ही तो बातें हृदय विदीर्ण करनेंवाली हैं मुझको क्षमा कर मेरे पिछले अपराधों को भूल जा. मैं जानता हू कि मुझसे अबतक जितनी भूलें हुई हैं उन्मैं सब से अधिक भूल तेरे हक मैं हुई है मैं एक हीरा को कंकर समझा, एक बहुमूल्य हार को सर्प समझकर मैंनें अपनें पास से दूर फैंक दिया, मेरी अज्ञानता का पर्दा छा गया परन्तु अब क्या करूं ?

अब तो पछतानें के सिवाय मेरे हाथ और कुछ भी नहीं है" लाला मदनमोहन आसू भरकर बोले

"मुझको तो ऐसी कोई बात नही मालूम होती जिस्सै मेरे लिये आपको पछताना पडे मैं आपकी दासी हू फिर ऐसे सोचा विचार करनें की क्या जरूरत है ? और मैं आपकी मर्जी नहीं रख सकी उस्मैं तो उल्टी मेरी ही भूल पाई जाती है" उस स्त्रीनें रुके कठ सै कहा.

"सच है सोने की पहचान कसोटी लगाये विना नहीं होती परन्तु तू यहा इस्समय कैसै आ सकी ? किस्के साथ आई ? कैसै पहरेवालों ने तुझे भीतर आनें दिया ? यह तो समझाकर कह" लाला मदनमोहन ने फिर पूछा

"मैं अपनी गाडी मैं अपनी दो टहलनियों के साथ यहा आई हू और मुझको मेरे भाई के कारण यहा तक आनें मैं कुछ परिश्रम नहीं हुआ मैं विशेष कुछ नही कह सकी घर आप आकर अभी आप सै सब वृत्तान्त कहूँगे" यह कहते, कहते वह स्त्री दरवाजे के पास जाकर अन्तर्धान होगई ! ! !



प्रकरण ४०.

सुधरनें की रीति.

कठिन कलाहू आय है करत करत अभ्यास ॥
नट ज्यों चालतु बरत पर साधे बरस छमास ॥

वृन्द.

लाला मदनमोहन बड़े आश्चर्य मैं थे कि यह क्या भेद है जगजीवनदास यहां इस्समय कहा सै आए? और आए भी तो उन्के कहने सै पुलिस कैसे मान गई। क्या उन्हों नें मुझको हवालात सै छुडाने के लिये कुछ उपाय किया? नहीं उपाय करनें का समय अब कहां है? और आते तो अब तक मुझसै मिले बिना कैसे रह जाते?

इतने मैं दूर सै एका एक प्रकाश दिखाई दिया और लाला ब्रजकिशोर पास आ खड़े हुए

"हैं! आप इस्समय यहां कहां! मैंने तो समझा था कि आप अपने मकान मैं आराम सै सोते होंगे" लाला मदनमोहन ने कहा

"यह मेरा मन्द भाग्य है जो आप ऐसा समझते हैं क्या मुझ को भी आपने उन्हीं लोगों मैं गिन लिया?" लाला ब्रजकिशोर बोले

"नहीं, मैं आप को सच्चा मित्र समझता हूं परन्तु समय आए बिना फल नहीं होता"

"यदि यह बात आपनें आपनें मन सें कही है तो मेरे लिये भी आप वैसाही धोका खाते हैं जैसा औरोंके लिये खाते थे. मैं पहले कहचुका हूं कि मनुष्य का स्वभाव उस्की बातों से नहीं मालूम होता उस्के कामों सें मालूम होता है फिर आपने मुझको किसतरह सच्चा मित्र समझ लिया ?" लाला ब्रजकिशोर पूछनें लगे. "मैंने आपके मुकद्मों मैं पैरवी की जिस्के बदले भर पेट महन्ताना ले लिया यदि आपके निकट उन्के मेरे चाल चलन मैं कुछ अन्तर हो तो इतना ही होसक्ता है कि वह कच्चे खिलाडी थे जरा सी हल चल होते ही भग निकले मैं अपना फायदा समझ कर अब तक ठैरा रहा"

"जो लोग फायदा उठा कर इस्समय मेरा साथ दें उन्को भी मैं कुछ बुरा नहीं समझता क्योंकि जिन् पर मुझको बडा विश्वास था वह सब मुझे अधर धार मैं छोड कर चले गए और ईश्वरने मुझको किसी लायक न रक्खा" लाला मदनमोहन रो कर कहनें लगें

"ईश्वर को सर्वथा दोष न दो वह जो कुछ करता है सदा अपनें हितही की बात करता है" "लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे श्रीमद्भागवत में राजा युधिष्ठिर से श्रीकृष्णचन्द्रनें कहा है "जा नर पर हम हित करें ताको धन हर लेहिं। धन दुख दुखिया को स्वत सकल बन्धु तज देहिं ॥ *" सो निस्सन्देह सच है क्योंकि उद्योग की माता आवश्यकता है इसी तरह अनुभव सें उपदेश मिल्ता है सादी नें गुलिस्ता मैं लिखा है कि "एक बादशाह अपने

* यस्याहमनुगृह्णामि तस्य वित्त हराम्यहम्
तताधन त्यजन्त्यस्य स्वजनादु खदु खितम् ।

एक गुलामको साथ लेकर नाव में बैठा. वह गुलाम कभी नाव में नही बैठा था इस लिये भय से रोनें लगा धैर्य और उप देशकी बातों से उस्के चित्त का कुछ समाधान न हुआ. निदान बादशाह से हुक्म लेकर एक बुद्धिमान नें (जो उसी नाव में बैठा था) उसै पानी में डाल दिया और दो, चार गोते खाए पीछे नाव पर ले लिया जिस्में उस्के चित्तकी शान्ति हो गई. बादशाह नें पूछा इस्मैं क्या युक्ति थी? बुद्धिमान नें जवाब दिया कि पहले यह डूबनेका दु ख और नावके सहारे बचनें का सुख नहीं जान्ता था सुखकी महिमा वही जान्ता है जिस्को दु.ख का अनुभव हो"

"परन्तु इस्समय इस अनुभव से क्या लाभ होगा घोडा बिना चाबुक वृथा है" लाला मदनमोहननें निराश होकर कहा

"नहीं, नहीं ईश्वरकी कृपा से कभी निराश न हो वह कोई बात युक्ति शून्य नहीं करता" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "मि० पारनेलने लिखा है कि "एक तपस्वी जन्म से वन में रह-कर ईश्वराराधन करता था एक बार धर्मात्माओंको दुखी और पापियोंको सुखी देख कर उस्के चित्त में ईश्वर के इन्साफ बिषै शंका उत्पन्न हुई और वह इस बातका निर्धार करनें के लिये बस्ती की तरफ चला रस्ते में उस्को एक जवान आदमी मिला और वह दोनों साथ, साथ चलनें लगे सन्ध्या समय इन्को एक ऊंचा महल दिखाई दिया और वहा पहुंचे जबउस्के मालिकनें इन दोनोंका हद्द से ज्यादः सत्कार किया प्रात काल जब ये चलने लगे तो उस जवाननें एक सोनेका प्याला चुरा लिया. थोड़ी दूर आगे बढे इतने में घनघोर घटा चढ आई और मेह

वरसनें लगा इसमें यह दोनों एक पासकी झोपडी मैं सहारा लेने गए. उस झोपडीका मालिक अत्यन्त डरपोक और निर्दय था इसलिये उस्नें वडी कठिनाईसे इन्हें थोडी देर ठैरने दिया, अनादर से सूखी रोटी के थोडेसे टुकडे खाने को दिये और वरसात कम होते ही चल्ने का सकेत किया. चलती वार उस जवानने अपनी वगल सें सोनेका प्याला निकाल कर उसै दे दिया. जिस्पर तपस्वी को जवान की यह दोनों वातें वडी अनुचित मालूम हुई खैर! आगे वढे सन्ध्या समय एक सद्-गृहस्थ के यहा पहु चे जो मध्यम भाव सैं रहता था और वडाई-का भी भूका न था उस्ने इन्का भलीमाति सत्कार किया और जव ये प्रात काल चलने लगे तो इन्को मार्ग दिखाने के लिये एक अगुआ इन्के साथ कर दिया पर यह जवान सवकी दृष्टि वचा कर चलती वार उस सद् गृहस्थ के छोटेसे वालक का गला घोंट कर उसैं मारता गया! और एक पुल पर पहु च कर उस अगुए को भी धका दे नदीमें डाल दिया! इन्वातों सैं अव तो इस तपस्वी के धि कार और क्रोध की कुछ हद्द न रही वह उस्को दुर्वचन कहा चाहता था इतने मैं उस जवानका आकार एकाएक वदल गया उस्के मुखपर सूर्य का सा प्रकाश चमकने लगा और सव लक्षण देवताओंकेसे दिखाई दिये. वह वोला "मैं परमेश्वरका दूत हू और परमेश्वर तुम्हारी भक्ति सै प्रसन्न हैं इसलिये परमेश्वरकी आज्ञा सैं मैं तुम्हारा सशय दूर करने आया हूं. जिस काम मैं मनुष्यकी वुद्धि नहीं पहु चती उस्को वह युक्ति शून्य समझनें लगता है परन्तु यह उस्की केवल मूर्खता है. इसी मेरे यह सव काम तुमको उल्टे मालूम पडते

एक गुलाम को साथ लेकर नाव में बैठा. वह गुलाम कभी नाव मैं नही बैठा था इस लिये भय से रोनें लगा धैर्य और उपदेशकी बातों से उस्के चित्त का कुछ समाधान न हुआ. निदान बादशाह से हुक्म लेकर एक बुद्धिमान नें (जो उसी नाव मैं बैठा था) उसै पानी मैं डाल दिया और दो, चार, गोते खाए पीछे नाव पर ले लिया जिस्मैं उस्के चित्तकी शान्ति हो गई. बादशाह नें पूछा इस्मैं क्या युक्ति थी ? बुद्धिमान नें जवाब दिया कि पहले यह डूबनेका दु:ख और नावके सहारे बचनें का सुख नही जान्ता था सुखकी महिमा वही जान्ता है जिस्को दु:ख का अनुभव हो"

"परन्तु इस्समय इस अनुभव से क्या लाभ होगा घोड़ा बिना चाबुक वृथा है" लाला मदनमोहननें निराश होकर कहा.

"नहीं, नहीं ईश्वरकी कृपा से कभी निराश न हो वह कोई बात युक्ति शून्य नही करता" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "मि० पारनेलने लिखा है कि "एक तपस्वी जन्म से बन मै रहकर ईश्वराराधन करता था एक बार धर्मात्माओंको दुखी और पापियोंको सुखी देख कर उस्के चित्त मैं ईश्वर के इन्साफ विषैं शंका उत्पन्न हुई और वह इस बातका निर्धार करनें के लिये बस्ती की तरफ चला रस्ते मैं उस्को एक जवान आदमी मिला और यह दोनों साथ, साथ चलनें लगे सन्ध्या समय इन्को एक ऊंचा महल दिखाई दिया और वहां पहुंचे जबउस्के मालिकनें इन दोनोंका हद से ज्याद सत्कार किया प्रात:काल जब ये चलने लगे तो उस जवाननें एक सोनेका प्याला चुरा लिया. थोड़ी दूर आगे बढ़े इतने मैं घनघोर घटा चढ आई और मेह

वरसने लगा इससे यह दोनों एक पासकी झोपडी में सहारा लेने गए. उस झोपडीका मालिक अत्यन्त डरपोक और निर्दय था इसलिये उसने बडी कठिनाईसे इन्हें थोडी देर ठैरने दिया, अनादर से सूखी रोटी के थोडेसे टुकडे खाने को दिये और बर-सात कम होते ही चलने का सकेत किया. चलती बार उस जवानने अपनी बगल से सोनेका प्याला निकाल कर उसे दे दिया जिस्पर तपस्वी को जवान की यह दोनों बातें बडी अनुचित मालूम हुई खैर! आगे बढे सन्ध्या समय एक सद्-गृहस्थ के यहा पहुचे जो मध्यम भाव से रहता था और बडाई-का भी भूका न था. उस्ने इन्का भलीभाति सत्कार किया और जब ये प्रात काल चल्ने लगे तो इन्को मार्ग दिखाने के लिये एक अगुआ इन्के साथ कर दिया पर यह जवान सबकी दृष्टि बचा कर चलती बार उस सद् गृहस्थ के छोटेसे बालक का गला घोंट कर उसे मारता गया! और एक पुल पर पहुच कर उस अगुए को भी धक्का दे नदीमें डाल दिया! इन्बातों से अब तो इस तपस्वी के धि कार और क्रोध की कुछ हद न रही वह उस्को दुर्वचन कहा चाहता था इतने में उस जवानका आकार एकाएक बदल गया उस्के मुखपर सूर्य का सा प्रकाश चमकने लगा और सब लक्षण देवताओंकेसे दिखाई दिये वह बोला "मैं परमेश्वरका दूत हू और परमेश्वर तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न हैं इसलिये परमेश्वरकी आज्ञा से मैं तुम्हारा सशय दूर करने आया हू". जिस काम में मनुष्यकी बुद्धि नहीं पहुचती उस्को वह युक्ति शून्य समझने [illegible]ना है परन्तु यह उस्की केवल मूर्खता है देखो मेरे [illegible] तुमको उल्टे [illegible]

होंगे परन्तु इन्हीं सै उस्के इन्साफ का विचार करो. जिस मनुष्य का प्याला मैंने चुराया वह नाम-वरी का लालच करके हद्द सै ज्याद. अतिथि सत्कार करता था और इस रीति सै थोडे दिनमैं उस्के भिखारी होजाने का भय था इस कामसै उस्की वह उमग कुछ कम होकर मुना-सिब हद्द पर आगई. जिस्को मैंने प्याला दिया वह पहले अत्यन्त कठोर और निठुर था इस फायदे सैं उस्को अतिथि सत्कार की रुचि हुई जिस सद्गृहस्थ का पुत्र मैंने मारडाला उस्को मेरे मारने का वृत्तान्त न मालूम होगा परन्तु वह इन दिनों सन्तानकी प्रीतिमैं फस कर अपने और कर्तव्य भूलने लगा था इस्सैं उस्की बुद्धि ठिकाने आगई जिस मनुष्य को मैंने अभी उठा कर नदीमैं डाल दिया वह आज रात को अपने मालिक की चोरी करके उसै नाश किया चाहता था इसलिये परमेश्वर के सब कामों पर विश्वास रक्खो और अपना चित्त सर्वथा निराश न होने दो"

"मुझको इस्समय इस्यात सै अत्यन्त लज्जा आती है कि मैंने आपके पहले हितकारी उपदेशों को वृथा समझ कर उन्पर कुछ ध्यान नहीं दिया" लाला मदनमोहनने मनसै पछतावा करके कहा.

"उन सब बातोंका खुलासा इतना ही है कि सब पहले विचार कर हरेक काम करना चाहिये क्योंकि संसारमैं स्वार्थपर विशेष दिखाई देते हैं" लाला ब्रजकिशोरने कहा.

"मैं आपके आगे इस्समय सच्चे मनसैं प्रतिज्ञा करता हूं कि मैं अब कभी स्वार्थ पर मित्रोंका मुख नहीं देखूंगा झूटी ठसक दिखाने का विचार न करूंगा झूटे पक्षपात को अपने पास न

आनें दूगा और अपने सुखके लिये अनुचित मार्ग पर पाव न रक्खूगा" लाला मदनमोहनने बडी दृढतासै कहा

"इस्समय आप यह बाते निस्सदेह मनसै कहते हैं परन्तु इस तरह प्रतिज्ञा करने वाले बहुत मनुष्य परीक्षाके समय दृढ नहीं निकल्ते मनुष्य का जातीय स्वभाव (आदत) बडा प्रबल है तुलसीदासजीने भगवान सै यह प्रार्थना की है —

"मेरो मन हरिजू हठ न तजै॥ निशिदिन नाथ देउ सिख बहुविध करत सुभाव निजै॥ ज्यों युवति अनुभवति प्रसव अति दारुण दुख उपजै॥ व्है अनुकूल विसारि शूलशठ पुनि खल पतिहि भजै॥ लोलुप भ्रमत गृह पशू ज्यों जहं तह पदत्राण बजैं॥ तदपि अधम विचरत तेहि मारग कबहु न मूढलजै॥ हौं हार्यों करि यत्न विविधि विधि अतिशय प्रबल अजै॥ तुलसिदास बस होइ तबहि जब प्रेरक प्रभु बरजै॥" आदतकी यह सामर्थ्य है कि वह मनुष्य की इच्छा न होनें परभी अपनी इच्छानुसार काम करा लेती है, धोका दे, देकर मनपर अधिकार करलेती है, जब जैसी बात करानी मंजूर होती है तब वैसीही युक्ति बुद्धि को सुझाती है, अपनी घात पाकर बहुत काल पीछे राख में छिपीहुई अग्निके समान सहसा चमक उठती है मैं गई बीती बातों की याद दिवाकर आपको इस्समय दुखित नहीं किया चाहता परन्तु आपको याद होगी कि उस्समय मेरी ये सब बातें चिकनाई पर बूंदके समान कुछ असर नहीं करती थीं इसी तरह यह समय निकल जायगा तो मैं जान्ता हूं कि यह सब विचार भी वायु की तरह तत्काल पलट लोगों का लखोटिया ज्ञान है वह आगके पास जाने है परन्तु

फिर कठोर होजाता है इस दशा मैं जब इस्समय का दु ख भूल· कर हमारा मन अनुचित सुख भोगने की इच्छा करे तब हमको अपनी प्रतिशा के भय सै वह काम छिपकर करने पडें, और उन्को छिपाने के लिये झूटी ठसक दिखानी पडे झूटी ठसक दिखाने के लिये उन्हीं स्वार्थपर मित्रोंका जमघट करना पडे, और उन स्वार्थ पर मित्रोंका जमघट करनें के लिये वही झूटा पक्षपात करना पडे तो क्या आश्चर्य है ?" लाला ब्रजकिशोर नें कहा

"नही, नहीं यह कभी नहीं हो सक्ता मुझको उन लोगो सै इतनी अरुचि हो गई है कि मैं वैसी साहूकारी सै ऐसी ग़रीबी को बहुत अच्छी समझता हूं क्या अपनी आदत कोई नहीं बदल सक्ता ? लाला मदनमोहन नें जोर देकर पूछा.

"क्यों नही बदल सक्ता ? मनुष्य के चित्त सै बढकर कोई वस्तु कोमल और कठोर नहीं है वह अपनें चित्त को अभ्यास करके चाहे जितना कम ज्याद कर सक्ता है कोमल सै कोमल चित्त का मनुष्य कठिन सै कठिन समय पडनें पर उसे भी झेल· है और धीरे, धीरे उस्का अभ्यासी हो जाता है इसी तरह कोई मनुष्य अपनें मनमैं किसी बातकी पक्की ठान ले और हर वक्त ध्यान बना रक्खे उस्पर अन्त तक दृढ रहे तो कठिन कामों को सहज मैं कर सक्ता है परन्तु पक्का विचार बिना कुछ नही हो सक्ता" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे —

"इटली का प्रसिद्ध कवि पीट्रार्क लोरा नामी एक परस्त्री पर मोहित हो गया इसलिये वह किसी न किसी बहानें से उस्के ॥ और अपनी प्रीतिभरी दृष्टि उस्पर डाल्ता

स्को पतिव्रतापन सै उस्के आगे अपनी प्रीति प्रगट नहीं कर सक्ता था. लोरानें उस्के आकार सै उस्का भाव समझकर उस्को अपनें पास सै दूर रहनें के लिये कहा और पीट्रार्क नें भी अपनें चित्त सै लोरा की याद भूलनें के लिये दूर देशका सफर किया परन्तु लोरा का ध्यान क्षणभर के लिये उस्के चित्त सै अलग न हुआ. एक तपस्वी नें बहुत अच्छी तरह उस्को अपना चित्त अपनें बस मैं रखनें के लिये समझाया परन्तु लोरा की एक दृष्टि देखते ही पीट्रार्क के चित्त सै वह सब उपदेश हवामैं उड गए. लोरा की इच्छा ऐसी मालूम होती थी कि पीट्रार्क उस्सै प्रीति रक्खे परन्तु दूरकी प्रीति रक्खे जब पीट्रार्क का मन कुछ बढनें लगता तो वह अत्यन्त कठोर हो जाती परन्तु जब उस्को उदास और निराश देखती तब कुछ कृपा दृष्टि करके उस्का चित्त बढा देती इस तरह अपनें पातिव्रत मैं किसी तरह का धब्बा लगाए बिना लोरानें बीस वर्ष निकाल दिये. पीट्रार्क वेरोना शहर मैं था उस्समय एक दिन लोरा उसैं स्वप्न में दिखाई दी और बडे प्रेमसै बोली कि "आज मैंनें इस असार संसार को छोड दिया एक निर्दोष मनुष्य को संसार छोडती बार सच्चा सुख मिलता है और मै ईश्वर की कृपा सै उस सुखका अनुभव करती हूं परन्तु मुझको केवल तेरे वियोग का दुःख है" "तो क्या तू मुझ से प्रीति रखती थी ?" पीट्रार्क नें पूछा "सच्चे मन सै" लोरानें जवाब दिया और उस्का उस दिन मरना सच निकला. अब देखिये कि एक कोमल चित्त स्त्री, अपनें प्यारे ... आधीनता पर बीस वर्ष तक प्रीतिकी अग्निको दबा सकी और उसे सर्वथा प्रबल न होनें दि...

आपका अवश्य मंगल करेगा" यह कहकर लाला ब्रजकिशोरने मदनमोहनको छाती से लगा लिया

प्रकरण ४१.

सुखकी परमावधि

जबलग मनके बीच कछु स्वारथको रस होय ॥
सद् सुधा कैसे पियै ? परे बीच मैं तोय ॥
सभाविलास.

"मैंने सुना है कि लाला जगजीवनदास यहां आए हैं ?" लाला मदनमोहनने पूछा.

"नहीं इस्समय तो नहीं आए आपको कुछ संदेह हुआ होगा लाला ब्रजकिशोरने जवाब दिया.

"आपके आने से पहले मुझको ऐसा आश्चर्य मालूम हुआ कि जाने मेरी स्त्री यहां आई थी परंतु यह संभव नहीं कदाचित् स्वप्न होगा"-लाला मदनमोहनने आश्चर्य सै कहा

क्या केवल इतनी ही बातका आपको आश्चर्य है ?, देखिये चुन्नीलाल और शिभूदयाल पहले बराबर आपकी निन्दा करके आपका मन मेरी तरफसै बिगाडते रहते थे बल्कि आपके लेनदारों को बहकाकर आपके काम बिगाडने तकका दोषारोप मुझपर हुआ था परंतु फिर उसी चुन्नीलालने आप सै मेरी बड़ाई की, मेरी सफ़ाई कराई, आपको मेरे मकान पर लिया लाया

आपकी तरफ सैं मुझसैं क्षमा मांगी मुझे फायदा पहुंचाकर प्रसन्न रखने के लिये आप को सलाह दी और अन्तमें मेरा आपका मेल करवाकर चुन्नीलाल और शिंभुदयाल दोनों अलग हो गए। उसी समय मेरठ सैं जगजीवनदास आकर आपके घरकों को लिवा लेगया। मैंने जन्म भर आप सैं रुपे का लालच नहीं किया था सो तीन दिन मैं ऐसे कठिन अवसर पर ठगोंकी तरह पाकटचेन, हीरेकी अगूठी और वाली ले ली। एक छोटेसे लेनदारकी डिक्री मैं आपको इतनी देर यहा रहना पडा क्या इन बातों सैं आपको कुछ आश्चर्य नहीं होता? इन्में कोई बात भेद की नहीं मालूम होती?" लाला ब्रजकिशोर ने पूछा

"आपके कहने से इस मामले में इस्समय निस्संदेह बहुत सी बातें आश्चर्य की मालूम होती हैं और किसी, किसी बात का कुछ, कुछ मतलब भी समझ में आता है परन्तु सब बातोंके जोड तोड पूरे नहीं मिल्ते और मनभरने के लायक कोई कारण समझ में नहीं आता यदि आप कृपा करके इनबातों का भेद समझा देंगे तो मैं आपका बडा उपकार मानूंगा" लाला मदन-मोहन नें कहा.

"उपकार मान्नेंके लायक मुझ से आपकी कौन्सी सेवा बन पडी है?" लाला ब्रजकिशोर ने जवाब दिया और अपनी बगल सैं बहुत से कागज और एक पोटली निकाल कर लाला मदन-मोहन के आगे रखदी. इन कागजों में मदनमोहन के लेनदारों की तरफ सैं अन्दाजन् पचास हजार रुपे के राजी नामे फारगती, और रसीद वगैरे थी और मिस्टर ब्राइट का फैसलनामा था जिस्में पैंतीस हजार पर उस्सैं फैसला हुआ था और मिस्टर

लिख लीं थीं वही यथा शक्ति कम की गई हैं और वह भी उन्की प्रसन्नता सैं कम की गईं हैं" लाला ब्रजकिशोर नें अपना बचाव किया.

"इन सब बातों सै मैं आश्चर्य के समुद्र मैं डूबा जाता हूं. भला यह पोटली कैसी है ?" लाला मदनमोहन नें पूछा.

"आपकी हवालात की खबर सुन्कर आपकी स्त्री यहां दौड आई थी और जिस्समय मैं आप सैं बातें कर रहा था उस्समय उसी के आनें की खबर मुझको मिली थी मैंनें उसै बहुत समझाया परन्तु वह आपकी प्रीति मैं ऐसी बावली हो रही थी कि मेरे कहनें सै कुछ न समझी, उस्नें आपको हवालात सै छुडानें के लिये यह सब गहना जबरदस्ती मुझै दे दिया. वह उस्समय सै पांच फेरे यहां के कर चुकी है उस्नें सवेरे सै एक दाना मुंहमें नहीं लिया उस्का रोना पलभर के लिये बन्द नहीं हुआ रोते, रोते उस्की आंखे सूज गई हा ! उस्की एक, एक बात याद करनें सै कलेजा फटता है और आप ऐसी सुपात्र स्त्री के पति होनें सै निस्सन्देह बडे भाग्य शाली हो" लाला ब्रजकिशोर नें आंसू भरकर कहा.

"भाई ! जब उस्ने उसी समय तुमको यह गहना देदिया था तो फिर मेरे छुडाने मैं देर क्यों हुई ?" लाला मदनमोहननें संदेह करके पूछा

"एक तो दो एक लेनदारों का फैसला जबतक नहीं हुआ था और हरकिशोर की डिक्री का रुपया दाखिल कर दिया जाता तो फिर उन्के घटनें की कुछ आशा न थी, दूसरे आपके चित्तपर अपनी भूलों के भली भांति प्रतीत होजाने के लिये भी कुछ ढील

की गई थी परन्तु कचहरी बरखास्त होने सै पहलै मैंने आप
छुडाने का हुक्म ले लिया था और इसी कारण सै मेरी धर्म
पहन आपकी सुशीला स्त्री को आपके पास आने मैं कुछ अडच
नहीं पडी थी हा मैंने आपका अभिप्राय जाने विना मिस्
ब्राइट सै उस्की चीजें फेरने का वचन कर लिया है यह बा
कदाचित् आपको बुरी लगी होगी" लाला ब्रजकिशोरने मदनमो
हन का मन देखने के लिये कहा

"हरगिज नहीं, इस बातको तो मैं मनसै पसन्द करता हैं
झूंटी भडक दिखाने मैं कुछ सार नहीं 'आई बहू आए काम गई
बहू गए काम' की कहावत बहुत ठीक है और मनुष्य अपने
स्वरूपानुरूप प्रामाणिक पने सै रहकर थोडे खर्च मैं भली भांति
निर्वाह कर सक्ता है" लाला मदनमोहनने संतोष करके कहा,

"अब तो आपके विचार बहुत ही सुधर गए एवडोलोमीन्स
को गरीबी सै एकायक साइडोनिया के सिंहासन पर बैठाया
गया तब उस्ने सिकन्दरसै यही कहा था कि "मेरे पास कुछ न
था जब मुझको विशेष आवश्यकता भी न थी अब मेरा वैभव
बढेगा वैसी ही मेरी आवश्यकता भी बढ जायगी" कच्चे मनके
मनुष्यों को अपने स्वरूपानुरूप बरताव रखने मैं जाहिरदारी की
झूटी झिझक रहती है इसी सै वह लोग जगह, जगह ठोकर खाते
हैं परन्तु प्रामाणिक पनेसै उचित उद्योग करके मनुष्य हर हालत
मैं सुखी रह सक्ता है" लाला ब्रजकिशोरने कहा,

"क्या अब चुन्नीलाल और शिम्भूदयाल आदिको उन्की बदच
लनी का कुछ मजा दिखाया जायगा?" लाला मदनमोहनने
पूछा

"बस आप इस विषय मैं और कुछ न कहैं. मुझको इस्समय जो मिला है उस्सै अधिक आप क्या दे सक्ते हैं? मैं रुपे पैसे के बदले मनुष्य के चित्त पर विशेष दृष्टि रखता हू और आपको देने ही का आग्रह हो तो मैं यह मागता हू कि आप अपना आचरण ठीक रखनें के लिये इस्समय जैसे मजबूत हैं वैसे ही सदा बनें रहैं और यह गहना मेरी तरफ़ सै मेरी पतिव्रता बहन और उस्के गुलाब जैसे छोटे, छोटे बालकों को पहनावें जिन्के देखनें सै मेरा जी हरा हो" लाला ब्रजकिशोर नें कहा

"परमेश्वर चाहेंगे तो आगे को आप की कृपा से कोई बात अनुचित न होगी" लाला मदनमोहन नें जवाब दिया

"ईश्वर आप को सदा भले कामों की सामर्थ्य दे और सब का मगल करे" लाला ब्रजकिशोर सच्चे सुख मैं निमग्न होकर बोले.

निदान सब लोग बडे आनन्द सें हिल मिलकर मदनमोहन को घर लिवा ले गए और चारों तरफ़ सै "बधाई" "बधाई" होनें लगी.

जो सच्चा सुख, सुख मिलनें की मृगतृष्णा सै मदनमोहन को अबतक स्वप्न मैं भी नहीं मिला था वही सच्चा सुख इस्समय ब्रजकिशोर की बुद्धिमानी सै परीक्षागुरु के कारण प्रामाणिक भाव सै रहनें मैं मदनमोहन को घर बैठे मिल गया ! ! !

